

वीर सेवा मन्दिर दिल्ली



क्रम संख्या

कालि नं०

खण्ड

The History of Rajputana-Vol. IV, Part II.

**THE
HISTORY OF THE JODHPUR STATE**

PART II.

**जोधपुर राज्य का इतिहास
द्वितीय खंड**

**ग्रन्थकर्त्ता
गौरीशंकर हीराचंद ओझा**

THE HISTORY OF RAJPUTANA

VOLUME IV, PART II.

HISTORY OF THE JODHPUR STATE

PART II.

BY

MAHĀMAHOPĀDHYĀYA RĀI BAHĀDUR
SĀHITYA-VĀCHASPATI

Dr. Gaurishankar Hirachand Ojha, D. Litt. (Hony.)

PRINTED AT THE VEDIC YANTRALAYA,
A J M E R.

(*All Rights Reserved*)

First Edition } 1941 A. D. { *Price Rs. 6/8.*

ब्यास एण्ड सन्स,
अजमेर.

PUBLISHED BY

Mahamahopadhyaya Rai Bahadur Sahitya-Vachaspati

Dr. Gaurishankar Hirachand Ojha, D. Litt.,

Ajmer.



This book is obtainable from:—

(i) **The author, Ajmer.**

(ii) **Vyas & Sons, Booksellers,
Ajmer.**

राजपूताने का इतिहास

चौथी जिल्द, दूसरा भाग

जोधपुर राज्य का इतिहास

द्वितीय खंड

ग्रंथकर्ता—

महामहोपाध्याय रायबहादुर साहित्यवाचस्पति
डॉक्टर गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्० (ऑनरेरी)

बाबू चांदमल चंडक के प्रबंध से
वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर में छपा

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण }

विक्रम संवत् १९६८

{ मूल्य रु० ६।।)

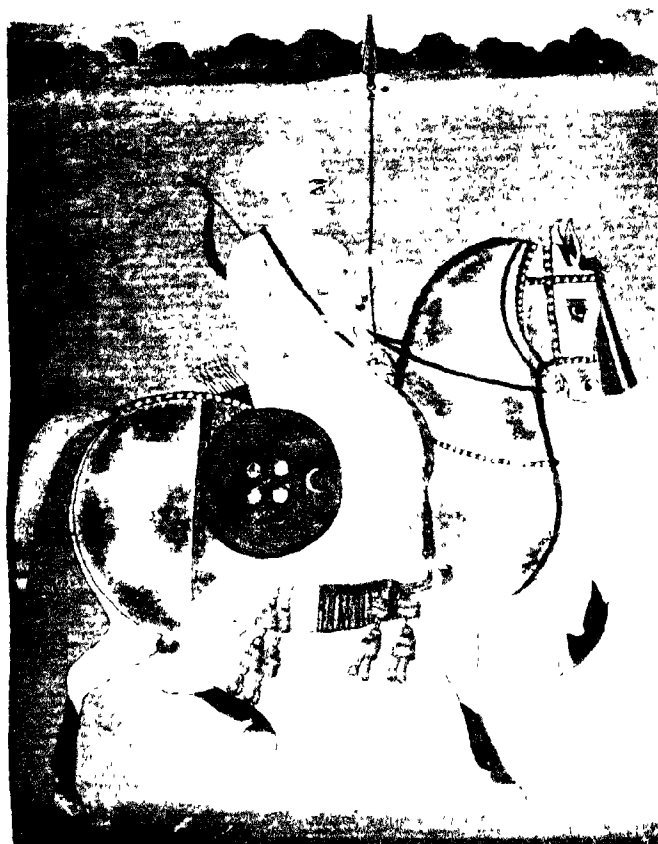
प्रकाशक—

महामहोपाध्याय रायबहादुर साहित्यवाचस्पति
डॉ० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्०, अजमेर.

यह ग्रन्थ निम्नांकित स्थानों से प्राप्य है—

(१) ग्रन्थकर्त्ता, अजमेर.

(२) व्यास एन्ड सन्स, बुकसेल्डर्स, अजमेर.



राठौड़ वीर दुर्गादास

जोधपुर राज्य के संरक्षक
परम राजनीतिज्ञ
अदम्य साहसी
निरभिमानी तथा निस्स्वार्थी
प्रसिद्ध वीर राठौड़ दुर्गादास
की
पवित्र स्मृति को
सादर समर्पित

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक मेरे राजपूताने के इतिहास के अन्तर्गत प्रकाशित जोधपुर राज्य के इतिहास का द्वितीय खंड है । पहले मेरा इरादा इस राज्य के इतिहास को केवल दो खंडों में समाप्त करने का था और ऐसा ही मैंने प्रथम खंड की भूमिका में लिखा भी था, परन्तु जोधपुर राज्य के इतिहास की सामग्री इतनी अधिक है कि यदि शेषांश को सिर्फ एक खंड में दिया जाता तो जिल्द बहुत बड़ी हो जाती; अतएव मैंने यही उचित समझा कि इसे तीन खंडों में निकाला जाय ।

द्वितीय खंड में महाराजा अजीतसिंह से लगाकर महाराजा मानसिंह तक का विस्तृत इतिहास है । महाराजा तख्तसिंह से लगाकर वर्तमान महाराजा सर उम्मेदसिंहजी तक का विस्तृत इतिहास, राजपूताना से बाहर के राठोड़ राज्यों का संक्षिप्त परिचय, जोधपुर राज्य के इतिहास का काल-क्रम, परिशिष्टों के अन्तर्गत अन्य ज्ञातव्य बातों का उल्लेख एवं वैयक्तिक तथा भौगोलिक अनुक्रमणिकाएं रहेंगी ।

राजपूताना के इतिहास में राठोड़ों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और उनमें अनेक वीर, विद्वान् एवं गुणग्राहक नरेश हो गये हैं । इस दृष्टि से उनके प्रधान और प्राचीन राज्य जोधपुर के इतिहास का द्वितीय खंड भी पाठकों को अवश्य मनोरंजक प्रतीत होगा ।

मैं उन ग्रंथकर्त्ताओं का, जिनके ग्रंथों से इस पुस्तक के लिखने में मुझे सहायता मिली है, अत्यंत अनुगृहीत हूं । उनके नाम यथाप्रसंग टिप्पणों में दे दिये गये हैं । विस्तृत पुस्तक-सूची तृतीय खंड के अंत में दी जायगी ।

अजमेर,
कार्तिकी पूर्णिमा,
वि० सं० १९६८

}

गौरीशङ्कर हीराचन्द्र ओझा.

विषय-सूची

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

विषय	पृष्ठाङ्क
महाराजा अजीतसिंह	४७७
जोधपुर खालसा करने के लिए बादशाह का सेना भेजना	४७७
लाहोर में कुंवरों का जन्म	४७८
बादशाह को कुंवरों के जन्म की खबर मिलना	४७९
बादशाह का कुंवरों को दिल्ली बुलाना	४८०
बादशाह का दिल्ली पहुंचना	४८०
जोधपुर के सरदारों का दिल्ली पहुंचना	४८०
राठोड़ सरदारों का बादशाह से मिलना	४८१
इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य दिया जाना	४८१
केसरीसिंह का ज़हर खाकर मरना	४८२
राजकुमारों को गुमरूप से बाहर करना	४८२
राठोड़ों का शाही सेना से लड़कर मारा जाना	४८४
राजकुमारों की खोज में शाही अफसरों की असफलता	४८६
बादशाह का जोधपुर पर और सेना भेजना	४८७
अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरखां के साथ राठोड़ों की लड़ाई	४८७
इन्द्रसिंह का वापस बुलाया जाना	४८८

विषय	पृष्ठाङ्क
राठोड़ों का अजीतसिंह को लेकर महाराणा के पास जाना	४८८
बादशाह का महाराणा से अजीतसिंह को मांगना ...	४८९
महाराणा पर बादशाह की चढ़ाई ...	४९०
शाहज़ादे अकबर का मारवाड़ में पहुंचना ...	४९१
शाहज़ादे अकबर का राजपूतों से मिल जाना ...	४९३
शाहज़ादे अकबर की औरंगज़ेब पर चढ़ाई ...	४९४
औरंगज़ेब का छुल और दुर्गादास का शाहज़ादे का साथ छोड़ना ...	४९६
दुर्गादास का शाहज़ादे अकबर को शरण में लेना और उसे लेकर शम्भा के पास जाना ...	४९७
अजीतसिंह का जाकर सिरोही राज्य में रहना ...	४९९
राठोड़ों का मुगल सेना को तंग करना ...	५००
दुर्गादास का दक्षिण से लौटना ...	५०४
राठोड़ सरदारों के समक्ष बालक महाराजा का प्रकट किया जाना ...	५०५
अजीतसिंह का कई सरदारों के यहाँ जाना ...	५०६
दुर्गादास का अजीतसिंह की सेवा में उपस्थित होना	५०७
दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंचने के बाद वहाँ की स्थिति	५०८
अजीतसिंह का छप्पन के पहाड़ों में जाना ...	५०९
जगह-जगह मुसलमानों और राठोड़ों में मुठभेड़ ...	५०९
अजमेर के सूबेदार से लड़ाई ...	५१०
अजमेर के सूबेदार की दुर्गादास पर चढ़ाई ...	५११
अलाकुली का जोधपुर के गांवों में बिगाड़ करना ...	५११
अकबर की पुत्री को सौंपने के विषय में मुगलों की दुर्गादास से बातचीत ...	५१२
मुगलों के साथ राठोड़ों की पुनः लड़ाइयाँ ...	५१२

विषय	पृष्ठाङ्क
अजीतसिंह का पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना ...	५१३
मारवाड़ में मुगल शक्ति का कम होना ...	५१३
शाही मुलाज़िमों का अजीतसिंह पर आक्रमण ...	५१३
अकबर के परिवार के लिए राठोड़ों से पुनः बातचीत होना	५१३
महाराजा के उदयपुर तथा देवलिया में विवाह ...	५१४
अकबर के पुत्र और पुत्री का बादशाह को सौंपा जाना	५१५
दुर्गादास को मनसब मिलना ...	५१८
अजीतसिंह का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना ...	५१८
दुर्गादास को मारने का प्रयत्न ...	५१९
महाराजा का दुर्गादास से मिलकर उपद्रव करना ...	५२२
कुंवर अभयसिंह का जन्म ...	५२२
अजीतसिंह को मेड़ता की जागीर मिलना ...	५२२
अजीतसिंह का मोहकमसिंह को हराना ...	५२४
दुर्गादास का पुनः शाही अधीनता स्वीकार करना ...	५२५
अजीतसिंह और दुर्गादास का पुनः विद्रोही होना ...	५२५
महाराजा और उदयपुर के महाराणा के बीच मनमुटाव	५२५
औरंगज़ेब की मृत्यु ..	५२७
अजीतसिंह का जोधपुर आदि पर अधिकार करना	५२७
दुर्गादास का अजीतसिंह के पास जाना ...	५२९
अजीतसिंह की बीकानेर पर असफल चढ़ाई ...	५२९
बहादुरशाह का राज्यासीन होना ...	५३१
सरद-गें-द्राग खड़े किये हुए फ़र्ज़ी दलथंभन को मरवाना	५३१
बादशाह बहादुरशाह का जोधपुर खालसा करना और अजीतसिंह का उसकी सेवा में जाना ...	५३२
अजीतसिंह और जयसिंह का बादशाह को सूचना दिये बिना चले जाना ...	५३४

विषय	पृष्ठाङ्क
अजीतसिंह आदि का देवलिया होते हुए उदयपुर जाना	५३५
अजीतसिंह का पुनः जोधपुर पर अधिकार होना ...	५३६
महाराजा अजीतसिंह आदि के आचरण के सम्बन्ध में महाराणा	
के नाम शाहजादे जहांदारशाह का निशान भेजना	५३७
अजीतसिंह की पुत्री का सम्बन्ध जयसिंह के साथ होना	५३६
अजीतसिंह और जयसिंह का सांभर पर आक्रमण करना	५३६
दुर्गादास का मारवाड़ से निर्वासित किया जाना ...	५४१
जयसिंह का आंबेर पर अधिकार होना ...	५४३
अजीतसिंह और जयसिंह के नाम उनके राज्यों का	
क्रमान होना	५४३
पाली के ठाकुर को छल से मरवाना ...	५४४
महाराजा का नागौर पर जाना ...	५४५
अजीतसिंह का अजमेर के सूबेदार पर आक्रमण करना	५४६
महाराजा का देवलिया में विवाह होना ...	५४७
महाराजा का बादशाह के पास हाज़िर होना ...	५४७
महाराजा का पुष्कर होते हुए जोधपुर जाना ...	५४६
देवगांव के स्वामी से पेशकशी वसूल करना ...	५४६
राजा राजसिंह पर महाराजा की चढ़ाई ...	५५०
महाराजा का नाहन के त्रिगोधी सरदारों पर जाना ...	५५०
बादशाह बहादुरशाह की मृत्यु ...	५५०
बादशाहत के लिए लड़ाई ...	५५१
बादशाह का सैयद बन्धुओं से विरोध होना ...	५५३
महाराजा का जूनिया के कर्णसिंह तथा जुभारसिंह को	
मरवाना	५५४
मोहकमसिंह को मरवाना ...	५५४
महाराजा पर शाही सेना की चढ़ाई ...	५५५

विषय	पृष्ठाङ्क
कुंवर अभयसिंह का बादशाह के पास जाना ...	५५६
महाराजा का अहमदाबाद जाना ...	५६०
इन्द्रकुंवरी का डोला दिल्ली जाना ...	५६१
बादशाह की बीमारी ...	५६२
बादशाह के साथ इन्द्रकुंवरी का विवाह होना ...	५६४
महाराजा का नागौर पर कब्ज़ा करना ...	५६५
महाराजा की द्वारिका-यात्रा ...	५६६
महाराजा का गुजरात की सूबेदारी से हटाया जाना ...	५६७
बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह को पकड़ने का असफल प्रयत्न ...	५६८
बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर महाराजा का दिल्ली जाना	५६९
अजीतसिंह को क़त्ल करने का प्रयत्न ...	५७२
हुसेनअलीखां का दक्षिण से रवाना होना ...	५७३
बादशाह का अजीतसिंह से माफ़ी मांगना ...	५७४
अजीतसिंह को "राजेश्वर" का खिताब मिलना ...	५७४
अजीतसिंह का सरबुलंदखां से मिलना ...	५७५
हुसेनअलीखां का दिल्ली पहुँचना तथा महाराजा जयसिंह का वहाँ से अपने देश भेजा जाना ...	५७५
सैयदों और महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मुलाक़ात करना ...	५७६
बादशाह फ़र्रुख़सियर का कैद किया जाना ...	५७७
हिन्दुओं पर से जज़िया हटाया जाना ...	५८०
फ़र्रुख़सियर का मारा जाना ...	५८०
मुग़ल साम्राज्य की स्थिति ...	५८१
महाराजा का दिल्ली छोड़ने का इरादा करना ...	५८२
रफ़ीउद्दौला की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना	५८३

विषय	पृष्ठाङ्क
विद्रोही निकोसियर का गिरफ्तार होना ...	५८३
महाराजा अजीतसिंह की पुत्री का उसको सौंपा जाना	५८४
महाराजा का मथुरा जाना	५८५
रफ़ीउद्दौला की मृत्यु तथा मुहम्मदशाह का बादशाह होना	५८५
महाराजा अजीतसिंह को अजमेर तथा अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना	५८६
अजीतसिंह के नायब अनूपसिंह का गुजरात में जुल्म करना	५८७
अजीतसिंह का जोधपुर जाना	५८८
मारवाड़ के निकट के गुजरात के प्रदेश पर महाराजा का क्रब्ज़ा करना	५८८
सैयद बन्धुओं का पतन और मारा जाना ...	५८९
महाराजा का अजमेर जाकर रहना	५९१
महाराजा से अहमदाबाद का सूबा हटाये जाने पर भंडारी अनूपसिंह का वहां से भागना	५९१
महाराजा का अजमेर छोड़ना	५९३
महाराजा का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना ...	५९४
महाराजा की अर्ज़ी के उत्तर में फ़रमान जाना ...	५९५
नाहरखां का अजमेर का दीवान नियत होना ...	५९५
नाहरखां एवं खुल्लाखां का मारा जाना ...	५९६
इरादतमंदखां का महाराजा अजीतसिंह पर भेजा जाना	५९७
गढ़ बीटली पर शाही सेना का अधिकार होना ...	५९८
महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मेल करना ...	५९९
महाराजा अजीतसिंह के बनवाये हुए भवन आदि ...	५९९
महाराजा का मारा जाना	६००
राणियां तथा सन्तति	६०१
महाराजा अजीतसिंह का व्यक्तित्व	६०२

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा बख्तसिंह तक

विषय	पृष्ठाङ्क
महाराजा अभयसिंह	६०५
जन्म तथा जोधपुर का राज्य मिलना ...	६०५
कुछ सरदारों का अप्रसन्न होकर महाराजा का साथ छोड़ना	६०५
आनंदसिंह तथा रायसिंह का ईडर पर अधिकार करना	६०६
भंडारी रघुनाथ आदि का कैद किया जाना ...	६०६
महाराजा का जोधपुर पहुँचना	६०७
महाराजा का नागोर पर कब्जा करना ...	६०८
बख्तसिंह का आनंदसिंह एवं रायसिंह के विरुद्ध जाना	६०८
बख्तसिंह को "राजाधिराज" का तिताब और नागोर मिलना	६०८
महाराजा का दिल्ली जाना	६०८
बख्तसिंह का किशोरसिंह को भगाना ...	६०९
आनन्दसिंह तथा रायसिंह को ईडर का इलाका मिलना	६०९
किशोरसिंह का पोकरण-फलोदी में उत्पात करना ...	६११
महाराजा को गुजरात की सूबेदारी मिलना ...	६११
गुजरात के पहले सूबेदार सरबुलन्दखां के साथ लड़ाई	६१३
सरबुलन्दखां के साथ मुलह होना	६१८
महाराजा का भद्र के किले में प्रवेश करना ...	६१९
बख्तसिंह को पाटण की हाकिमी मिलना ...	६२०
बाजीराव के साथ महाराजा की मुलाकात ...	६२०
बख्तसिंह का नागोर जाना	६२२
महाराजा का अहमदाबाद के लोगों पर जुल्म करना	६२२
महाराजा का पीलाजी गायकवाड़ को छुल से मरवाना	६२३
महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना ...	६२५

विषय	पृष्ठसंख्या
उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई ...	१२५
बादशाह के पास से महाराजा के लिए खिलअत जाना	१२८
शाज़ीउद्दीनखां से धन वसूल करना ...	१२८
सुलतानसिंह को मरवाना ...	१२८
महाराजा का गुजरात से जोधपुर जाना ...	१२९
जादोजी की महाराजा के नायब भंडारी रत्नसिंह पर चढ़ाई	१२९
बड़ीदे पर मरहटों का अधिकार होना ...	१३०
बक़्तसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई ...	१३१
बीकानेर पर पुनः अधिकार करने का बक़्तसिंह का विफल प्रयत्न ...	१३२
राजपूत राजाओं का एकता का प्रयत्न ...	१३४
देवलिया का ठिकाना रघुनाथसिंह को देना ...	१३५
गढ़ बीटली की मांग पेश करना ...	१३६
दक्षिणियों के खिलाफ़ महाराजा का शाही सेना के साथ जाना	१३६
रत्नसिंह भंडारी का लड़ाई में बहरामखां को मारना	१३७
रत्नसिंह के भय से मोमिनखां का संभ्रात जाना ...	१३९
रत्नसिंह और रंगोजी की लड़ाई ...	१४०
प्रतापराव की मृत्यु ...	१४२
रत्नसिंह भंडारी के जुल्म ...	१४२
महाराजा से गुजरात का सूया हटाया जाना ...	१४३
महाराजा का जोधपुर जाना ...	१४७
बक़्तसिंह तथा बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह में मेल होना	१४८
महाराजा अभयसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई ...	१४८
अभयसिंह की बीकानेर पर दूसरी चढ़ाई ...	१५०
जयसिंह के साथ सन्धि होना ...	१५४
अपने भाई से मेलकर बक़्तसिंह का जयसिंह पर चढ़ाई करना	१५५

विषय	पृष्ठाङ्क
जोधपुर पर ऋज्जा करने का जयसिंह का विफल प्रयत्न	६५६
महाराजा का अजमेर पर ऋज्जा करना ...	६६०
कोटा के महाराव दुर्जनसाल का अभयसिंह से सहायता मांगना	६६१
जोधपुर की सहायता से अमरसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई	६६२
बादशाह का महाराजा और उसके भाई को दिल्ली बुलवाना	६६५
बख्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलना ...	६६५
बख्तसिंह का बीकानेर के गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना	६६७
जयपुर के माधोसिंह की सहायतार्थ सेना भेजना ...	६६८
महाराजा की बीमारी और मृत्यु ...	६६९
राणियां तथा सन्तति ...	६७०
महाराजा के बनवाये हुए स्थान ...	६७०
महाराजा की गुणग्राहकता ...	६७१
महाराजा का व्यक्तित्व ...	६७२
रामसिंह , ...	६७४
जन्म तथा गद्दीनशीनी ...	६७४
बख्तसिंह का रामसिंह के पास टीका भेजना ...	६७५
महाराजा का अपने सरदारों के साथ दुर्य्यवहार करना और	
रीयां के ठाकुर से उसके चाकर को मांगना ...	६७५
महाराजा के रीयां जाने पर शेरसिंह का बिजिया को	
उसे सौंपना ...	६७७
बख्तसिंह और रामसिंह के बीच लड़ाई होना ...	६७८
मुसलमानों की सहायता से बख्तसिंह का जोधपुर पर चढ़ाई	
करना ...	६७९
बख्तसिंह की मेढ़ता पर चढ़ाई ...	६८३
बख्तसिंह का जोधपुर पर अधिकार होना ...	६८४
महाराजा रामसिंह का व्यक्तित्व ...	६८६

विषय	पृष्ठाङ्क
दक्षिणी आंवाजी के विरुद्ध सेना भेजना	७२६
कुंवर फ़तहसिंह का देहान्त	७२७
बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर में विरोध की उत्पत्ति	७२७
विरोधी सरदारों का दमन करना	७२७
महाराजा विजयसिंह का उमरकोट पर क़ब्ज़ा होना	७२८
बीकानेर के कुंवर राजसिंह का जोधपुर जाना	७३३
महाराजा विजयसिंह का जोधपुर में टकसाल खोलना	७३४
महाराजा गजसिंह का राजसिंह को बीकानेर बुलाकर कैद करना	७३४
राजसिंह के बीकानेर का स्वामी होने पर उसके छोटे भाइयों का जोधपुर जाना	७३४
महाराजा विजयसिंह का जयपुर के महाराजा की सहायता करना	७३५
अजमेर पर राठोड़ों का अधिकार होना	७३८
रूपनगर तथा कृष्णगढ़ के विरुद्ध सेना भेजना	७३९
बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के लिए टीका भेजना	७३९
इस्माइलबेग की दक्षिणियों से लड़ाई	७४०
बादशाह को भूठी हुंडियां देना	७४१
कुछ सरदारों का महाराजा से भीमराज की शिकायत करना	७४१
किशनगढ़ के स्वामी से दंड लेना	७४२
इस्माइलबेग पर मरहटों की चढ़ाई	७४२
महाराजा का अंग्रेज़ सरकार के साथ पत्र-व्यवहार	७४३
पाटण और मेड़ते की लड़ाइयां	७४६
कुछ सरदारों का विरोधी होना	७४४
सरदारों का चूककर पासवान गुलाबगय को मरवाना	७४६
सरदारों का समझाकर भीमसिंह को गढ़ से हटाना	७४७
महाराजा का भीमसिंह के पीछे सेना भेजना	७४८

विषय	पृष्ठाङ्क
अखैराज सिंघवी को भेजकर विरोधी ठिकानों से दंड लेना	७५८
कुंवर ज़ालिमसिंह को परबतसर का परगना देना ...	७५९
महाराजा की बीमारी और मृत्यु	७५९
राणियां तथा सन्तति	७६०
महाराजा का व्यक्तित्व	७६१
महाराजा भीमसिंह	७६३
जन्म तथा गद्दीनशीनी	७६३
साहामल का दमन करना	७६५
सिंघवी अखैराज का उपद्रव के स्थानों का प्रबन्ध करना	७६६
महाराजा का अपने भाइयों को मरवाना ...	७६६
लकवा दादा की मारवाड़ पर चढ़ाई ...	७६६
भंडारी शोभाचन्द्र का घाणेरव पर भेजा जाना ...	७६७
जालोर पर सेना भेजना	७६७
मानसिंह की फ़ौज से जोधपुर की सेना की लड़ाई ...	७६९
महाराजा का पुष्कर जाकर जयपुर के महाराजा की बहिन से	
विवाह करना	७६९
मानसिंह का पाली लूटना	७६९
रायकीय सेना का उपद्रवी सरदारों का दमन करना	७७१
उपद्रवी सरदारों का चूककर जोधराज को छुल से मरवाना	७७२
महाराजा की सेना का जालोर पर क़ब्ज़ा करना ...	७७२
महाराजा की मृत्यु	७७३
महाराजा का व्यक्तित्व	७७३
महाराजा मानसिंह	७७५
महाराजा का जन्म और गद्दीनशीनी ...	७७५
चोपासणी से भीमसिंह की राणियों को बुलवाना ...	७७७
महाराजा का जोधपुर में गद्दी बैठना ...	७७८

विषय	पृष्ठाङ्क
महाराजा का सिंघवी जोरावरमल के पुत्रों को बुलाना	७७८
धोकलसिंह का जन्म	७७९
अंग्रेजों के साथ सन्धि की बातचीत होना	७७९
जसवंतराव होल्कर का मारवाड़ में जाना	७८०
महाराजा का पंचोली गोपालदास पर दंड लगाना	७८०
महाराजा का आयस देवनाथ को बुलाकर अपना गुरु बनाना	७८१
शेरसिंह आदि को मारनेवालों को मरवाना	७८१
कुछ सरदारों से दंड वसूल करना	७८१
महाराजा भीमसिंह के समय राज्य छोड़कर चले जानेवाले सरदारों को पीछा बुलाना	७८२
महाराजा का बीकानेर के गांव लाखासर के बहूतावरसिंह की पुत्री से विवाह होना	७८३
महाराजा का सिरोही पर सेना भेजना	७८३
महाराजा का घाणेराम पर सेना भेजना	७८४
महाराजा का सिरोही एवं घाणेराम के प्रबन्ध के लिए आदमी भेजना	७८५
सिंघवी जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि का क्रैद होना	७८५
महामन्दिर की प्रतिष्ठा होना	७८६
धोकलसिंह के पक्षपाती सरदारों का डीङ्बाणे में उपद्रव करना	७८६
महाराजा का सेना भेज शाहपुरा मोहनसिंह को दिलाना	७८७
उदयपुर की राजकुमारी कृष्णकुमारी के विवाह के लिए जयपुर और जोधपुर के राजाओं के बीच विवाद होना	७८७
धोकलसिंह के पक्षपाती	७८८
महाराजा का सेना भेजकर उपद्रवी सरदारों का दमन करना	७८९
मानसिंह और धोकलसिंह के पक्षपातियों के बीच लड़ाई होना	७८९

विषय	पृष्ठाङ्क
महाराजा का अमीरखां द्वारा छल से सवाईसिंह आदि को मरवाना	८०५
मानसिंह का सवाईसिंह के उत्तराधिकारी सालिमसिंह को गांव आदि देकर सन्तुष्ट करना ...	८०८
जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई ...	८०९
जोधपुर और बीकानेर में संधि होना ...	८१०
जयपुर के साथ सन्धि होना	८१३
कृष्णकुमारी का विष पीकर मरना	८१३
जोधपुर राज्य में भयंकर अकाल पड़ना ...	८१५
सिरोही पर सेना भेजना	८१५
जयपुर में महाराजा का विवाह होना	८१५
सिरोही के महाराव से धन वसूल करना ...	८१६
उमरकोट पर पुनः टालपुरियों का अधिकार होना ...	८१७
नवाब की सेना का जोधपुर जाना	८१७
अमीरखां का देवनाथ और इन्द्रराज को मरवाना ...	८१७
सिंघवी गुलराज का दीवान बनाया जाना ...	८१९
जोधपुर की सेना का सिरोही इलाक़े में लूट-मार करना	८२०
महाराजा मानसिंह का अपने कुंवर छत्रसिंह को राज्याधिकार देना	८२०
राज्य में नये अधिकारियों की नियुक्ति	८२१
सिंघवी चैनकरण का तोप से उड़ाया जाना ...	८२२
कई व्यक्तियों से रुपये वसूल करना	८२२
अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि होना	८२२
जोधपुर की सेना का सिरोही में लूट-मार करना ...	८२६
महाराजकुमार छत्रसिंह की मृत्यु	८२७
महाराजा से मिलने के लिए अंग्रेज़ सरकार का एक अधिकारी भेजना	८२८

विषय	पृष्ठाङ्क
सिंघवी फ़तहराज का जयपुर और फिर वहां से जोधपुर जाना	८२६
महाराजा का एकान्तवास त्यागना	८२६
राज्य की आय बढ़ाने के लिए सरदारों से एक-एक गांव लेना	८३०
कर्नल टॉड का जोधपुर जाना	८३०
महाराजा का अपने विरोधियों को निर्दयतापूर्वक मरवाना	८३१
महाराजा का अपने विरोधियों से रुपये वसूल करना	८३४
नये हाकिमों की नियुक्ति	८३४
नींबाज पर पुनः राजकीय सेना जाना	८३४
सन्धि के अनुसार दिल्ली में सवार सेना भेजना	८३५
उदयमन्दिर की स्थापना	८३५
हाकिमों में परस्पर अनैक्य होने पर उनसे दंड वसूल करना	८३६
ठिकानों के सम्बन्ध में सरदारों की अंग्रेज़ सरकार से बातचीत	८३६
जोधपुर की सेना का सिरोंही में बिगाड़ करना	८३६
महाराजा का प्रबन्ध के लिए मेरवाड़ा के गांव अंग्रेज़ सरकार को देना	८४०
महाराजा की पुत्री का बूंदी के रावराजा से विवाह	८४०
सिंघवी फ़तहराज का कैद किया जाना	८४१
सिंघवी इन्द्रमल का दावान बनाया जाना	८४२
महाराजा का डीडवाणे से धोकलसिंह का अधिकार हटाना	८४२
नागपुर के राजा का जोधपुर जाना	८४३
धोकलसिंह के सम्बन्ध में रेज़िडेन्ट का पड़ोसी राज्यों को लिखना	८४४
आयस लाडूनाथ की मृत्यु	८४४
कुछ सरदारों से रुपये वसूल करना	८४५

विषय	पृष्ठाङ्क
लार्ड विलियम बेंटिक का अजमेर जाना ...	८४५
किशनगढ़ के महाराजा का जोधपुर जाना ...	८४५
कर्नल लाकेट का जोधपुर होते हुए जैसलमेर जाना ...	८४७
बगड़ी और बूड़सू के उपद्रवी सरदारों को सज़ा देना	८४७
मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ना ...	८४८
अंग्रेज़ सरकार-द्वारा मंगवाये जाने पर पन्द्रह सौ सवार भेजना	८४८
बक्राया खिराज और फौज खर्च के सम्बन्ध में ठहराव होना	८४८
भाद्राजूष पर फ़ौजकशी करना ...	८४९
मेरवाड़ा के गांवों के सम्बन्ध के अहदनामे की अवधि बढ़ना	८५०
अंग्रेज़ सरकार का मालानी इलाक़ा अपने अधिकार में लेना	८५०
सवारों के पवज में रुपये देना निश्चित होना ...	८५२
पेरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से छावनी स्थापित होना	८५३
पाली में प्लेग का प्रकोप ...	८५३
भीमनाथ का दीवान उत्तमचंद को मरवाना ...	८५३
भीमनाथ का सरदारों आदि से रुपये वसूल करना ...	८५४
आयस भीमनाथ की मृत्यु ...	८५४
आयस लक्ष्मीनाथ का राज्य के ओहदों पर अपने आदमी नियत करना ...	८५४
कुञ्ज सरदारों का अजमेर जाना ...	८५५
कर्नल सदरलैंड का जोधपुर जाना ...	८५६
महाराजा के कुंवर सिद्धदानसिंह की मृत्यु ...	८५६
आसोप के बखेड़े का निर्णय होता ...	८५७
महाराजा के विरुद्ध सरकारी विज्ञप्ति प्रकाशित होना	८५७
राज्य-प्रबन्ध के लिए पंचायत मुक़रर होना ...	८६५
महाराजा को पीछा राज्याधिकार मिलना ...	८६६
नाथों आदि का राज्य में उपद्रव करना ...	८६६

विषय	पृष्ठाङ्क
कर्नल सदरलैंड का दुबारा जोधपुर जाना ...	८६७
नाथों और कतिपय विरोधी सरदारों का प्रबंध होना	८६७
अंग्रेज़ सरकार की आज्ञा से कई नाथों का गिरफ्तार होना	८६७
महाराजा का साधू का वेष धारण करना ...	८६६
पाल गांव में हैजे का प्रकोप होना ...	८६६
उत्तराधिकारी के विषय में महाराजा का एजेन्ट से कहना	८७०
महाराजा की मृत्यु ...	८७१
राणियां तथा सन्तति ...	८७१
महाराजा का विद्याप्रेम ...	८७२
महाराजा का व्यक्तित्व ...	८७५

चित्र-सूची

(१) राटोड़ दुर्गादास ...	समर्पण पत्र के सामने
(२) महाराजा अजीतसिंह ...	पृष्ठ ४७७ ,,
(३) महाराजा अभयसिंह ...	पृष्ठ ६०५ ,,
(४) महाराजा मानसिंह ...	पृष्ठ ७७५ ,,

**महामहोपाध्याय रायबहादुर
साहित्यवाचस्पति डॉ० गौरीशंकर हीराचंद ओझा,
डी० लिट्०, अजमेर-रचित तथा संपादित ग्रन्थ**

स्वतन्त्र रचनाएं—

	मूल्य
(१) प्राचीन लिपिमाला (प्रथम संस्करण) ...	अप्राप्य
(२) भारतीय प्राचीन लिपिमाला (द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण) ...	अप्राप्य
(३) सोलंकीयों का प्राचीन इतिहास—प्रथम भाग ...	अप्राप्य
(४) सिरौही राज्य का इतिहास ...	अप्राप्य
(५) बापा रावल का सोने का सिक्का ...	॥)
(६) वीरशिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह ...	॥=)
(७) * मध्यकालीन भारतीय संस्कृति ...	रु० ३)
(८) राजपूताने का इतिहास—पहली जिल्द (द्वितीय संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण) ...	रु० ७)
(९) राजपूताने का इतिहास—दूसरी जिल्द, उदयपुर राज्य का इतिहास—पहला खंड ...	अप्राप्य
उदयपुर राज्य का इतिहास—दूसरा खंड ...	रु० ११)
(१०) राजपूताने का इतिहास—तीसरी जिल्द, पहला भाग—डूंगरपुर राज्य का इतिहास ...	रु० ४)
दूसरा भाग—वांसवाड़ा राज्य का इतिहास ...	रु० ४॥)
तीसरा भाग—प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास ...	रु० ७)
(११) राजपूताने का इतिहास—चौथी जिल्द, जोधपुर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड ...	रु० ८)
जोधपुर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड ...	रु० ६॥)
जोधपुर राज्य का इतिहास—तृतीय खंड ...	अंशस्थ
(१२) राजपूताने का इतिहास—पांचवीं जिल्द, बीकानेर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड ...	रु० ६)
बीकानेर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड ...	रु० ९)

* प्रयाग की “हिन्दुस्तानी एकेडेमी” द्वारा प्रकाशित । इसका उर्दू अनुवाद भी उक्त संस्था ने प्रकाशित किया है । “गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी” (अहमदाबाद) ने इस पुस्तक का गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया है, जो वहां से १) रु० में मिलता है ।

	मूल्य
(१३) राजपूताने का इतिहास—दूसरा खंड ...	अप्राप्य
(१४) राजपूताने का इतिहास—तीसरा खंड ...	रु० ६)
(१५) राजपूताने का इतिहास—चौथा खंड ...	रु० ६)
(१६) भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री ...	॥)
(१७) ‡ कर्नल जेम्स टॉड का जीवनचरित्र ...	॥)
(१८) ‡ राजस्थान-ऐतिहासिक-दन्तकथा—प्रथम भाग (‘एक राजस्थान निवासी’ नाम से प्रकाशित) ...	अप्राप्य
(१९) × नागरी अंक और अक्षर ...	अप्राप्य

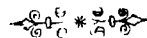
सम्पादित

(२०) * अशोक की धर्मलिपियां—पहला खंड (प्रधान शिलाभिलेख) ...	रु० ३)
(२१) * सुलेमान सौदागर ...	रु० १।)
(२२) * प्राचीन मुद्रा ...	रु० ३)
(२३) * नागरीप्रचारिणी पत्रिका (त्रैमासिक) नवीन संस्करण, भाग १ से १२ तक—प्रत्येक भाग ...	रु० १०)
(२४) * कोशोन्सव स्मारक संग्रह ...	रु० ३)
(२५-२६) ‡ हिन्दी टॉड राजस्थान—पहला और दूसरा खंड (इनमें विस्तृत सम्पादकीय टिप्पणियों-द्वारा टॉड-कृत ‘राजस्थान’ की अनेक ऐतिहासिक त्रुटियां शुद्ध की गई हैं) ...	रु० ४॥)
(२७) जयानक-प्रणीत ‘पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य सटीक ...	रु० ५)
(२८) जयसोम-रचित ‘कर्मचंद्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम्’ ...	यंत्रस्थ
(२९) मुंहणोत नैणसी की ख्यात—दूसरा भाग ...	रु० ४)
(३०) गद्य-रत्न-माला—संकलन ...	रु० १।)
(३१) पद्य-रत्न-माला—संकलन ...	रु० ॥।)

‡ खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर-द्वारा प्रकाशित ।

× हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग-द्वारा प्रकाशित ।

* काशी नागरीप्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित ।



ग्रन्थकर्ता-द्वारा रचित पुस्तकें ‘व्यास एण्ड सन्स’, बुकसेलर्स, अजमेर के यहां भी मिलती हैं ।



महाराजा अजीतसिंह

राजपूताने का इतिहास

चौथी जिल्द, दूसरा भाग

+++++

जोधपुर राज्य का इतिहास

द्वितीय खंड

—•—

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

महाराजा जसवंतसिंह और बादशाह औरंगज़ेब के बीच प्रायः विरोध
ही बना रहता था और बादशाह उससे सख्त नाराज़ रहता था। इसीसे
जोधपुर खालसा करने के
लिए बादशाह का
मेना भेजना
उसने उसको बहुत दूर जमरूद के थाने पर नियुक्त
किया था। महाराजा की मृत्यु का समाचार मिलते
ही, उसे उपयुक्त अवसर जानकर बादशाह ने
जोधपुर राज्य को खालसा कर ताहिरखां को
जोधपुर का फ़ौजदार, खिदमतगुज़ारखां को क़िलेदार, शेर अनवर को
अमीन और अब्दुर्रहीम को कोतवाल बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के

(१) एक स्थान पर डॉड ने लिखा है कि बादशाह ने जसवंतसिंह को विष
देकर मरवाया था (राजस्थान; जि० १, पृ० ४४१) ।

लिए भेजा'। इसपर महाराजा के साथ के सरदारों ने बादशाह से सुलह बनाये रखने के लिए वहां का सारा हिसाब-किताब मुसलमान अफसरों को समझा दिया और जोधपुर-स्थित सरदारों को लिखा कि बादशाही अफसरों के पहुंचने पर वे बिना किसी प्रकार का बिगाड़ किये वहां का अधिकार उन्हें सौंप दें। उन्हीं दिनों बादशाह ने मुलतान से शाहजादे अकबर, आगरे से शाहस्ताखां, गुजरात से मुहम्मद अमीनखां और उज्जैन से असदखां को भी जाने के लिए लिखा। साथ ही उसने दक्षिण से राव अमरसिंह के पौत्र इन्द्रसिंह को भी जोधपुर का राज्य देने के लिए बुलाया^१।

अनन्तर जोधपुर के सरदारों ने दोनों राणियों के साथ जमुर्द (जमरूद) से प्रस्थान किया। अटक नदी पर पहुंचने पर उनके पास शाही परवाना न होने के कारण अफसरों ने उन्हें रोका। लाहोर में कुंवरों का जन्म

तब उनसे लड़ाई कर राटोड़ दल अटक को पार कर लाहोर पहुंचा^२। वहां दोनों राणियों के कुछ घड़ियों के अन्तर से वि० सं० १७३५ चैत्र वदि ४ (ई० सं० १६७६ ता० १६ फरवरी) बुधवार को क्रमशः अजीतसिंह और दलधंभन नाम के दो पुत्र हुए^३।

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८०। वीरविनोद (भाग २, पृ० ८२८) में इन अफसरों के भेजे जाने का समय वि० सं० १७३५ फाल्गुन सुदि १३ (ई० सं० १६७६ ता० २६ जनवरी) दिया है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जिल्द २, पृ० १-२।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि जसवन्तसिंह के मरने पर सोजत और जैतारण बहाल रहने का क्रूरमान तथा अटक पार उतरने की सनद सरदारों के पास भेजी गई थी पर बीच में ही जब बादशाह से यह अर्ज़ की गई कि पठान मीरखां पहाड़ों में हैं और जोधपुर के लोगों के वापस आते ही पठान फिर उधर उपद्रव करने लगेंगे तो गुरज़बरदार जाकर अटक पार उतरने की सनद वापस ले आया। बाद में राजपूतों के निवेदन करने पर मीरखां ने वह सनद उन्हें दे दी। तब उन्होंने वहां से प्रस्थान किया (जि० २, पृ० ६-७)।

(४) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२८। खफीखां कृत 'मुंतखबुल्लुबाव' में लिखा है—“राजा की मृत्यु के बाद उसके मूर्ख सेवक उसके छोटी उम्र के दोनों पुत्रों—

हि० स० १०८६ ता० २० ज़िलहिज (वि० स० १७३५ फाल्गुन वदि ७ = ई० स० १६७६ ता० २३ जनवरी) को बादशाह ने अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में से ता० ६ मुहर्रम (फाल्गुन सुदि ८ = ता० ८ फरवरी) को उसने खानजहां बहादुर और हुसेनअलीखां आदि को भी सेना-सहित जोधपुर राज्य पर अधिकार करने के लिए भेजा। ता० १८ मुहर्रम (चैत्र वदि ५ =

बादशाह को कुंवरों के जन्म की खबर मिलना

अजीतसिंह और दलथंभन—को राणियों-सहित ले चले। औरंगज़ेब की आज्ञा तथा उस प्रांत के सूबेदार से परवाना प्राप्त किये बिना ही उन्होंने राजधानी की ओर प्रस्थान किया। अटक पहुंचने पर, जब उनके पास परवाना न निकला तो उन्हें वहां के अफसर ने आगे बढ़ने से रोका। इसपर उसे मार तथा उसके कुछ साथियों को घायल कर वे जबरन नदी पारकर दिल्ली की ओर अग्रसर हुए (इलिषद्; हिस्ट्री ऑफ इण्डिया; जि० ७, पृ० २६७)।”

(१) संभवतः यह जोधपुर राज्य की ख्यात में दिया हुआ बहादुरखां हो, जिसके विषय में उक्त ख्यात में लिखा है कि अजमेर पहुंचने पर बादशाह ने बहादुरखां को दस हजार फौज देकर जोधपुर पर भेजा। यह खबर पाते ही जोधपुर से राठोड़ रूपसिंह, भाटी राम (कुंभावत), राठोड़ नरसिंहदास आदि थोड़े आदिमियों के साथ सुलह करने के लिए उसके पास पहुंचे। बहादुरखां ने उनसे कहा कि सुलह करने की इच्छा थी तो सेना एकत्र कर बादशाह को चढ़ाई करने पर क्यों बाध्य किया। सरदारों ने कहा कि जो हो गया उसे जाने दें, अब तो हम बादशाह के सेवक हैं। तब नवाब- (बहादुरखां) सबको साथ ले मेड़ते गया, जहां एक दिन सबसे क़ौल-ज़गर लेकर उसने महाराजा के पुत्र होने पर उसे ही जोधपुर का राज्य दिलाने का वचन दिया और सरदारों को सिरोपाव दिये। पालासणी में चैत्र वदि १२ (ई० स० १६७६ ता० २७ फरवरी) को उसका डेरा होने पर उसे कुंवरों के जन्म की सूचना मिली। अनन्तर चैत्र सुदि ६ (ता० ८ मार्च) को उसने जोधपुर राज्य पर बादशाही अधिकार स्थापित किया। फिर विभिन्न स्थानों में शाही अफसरों की नियुक्ति कर वह जोधपुर के सरदारों के साथ अजमेर पहुंचा, पर उसके पहुंचने के पूर्व ही बादशाह का वहां से प्रस्थान हो चुका था। बहादुरखां को अजमेर में ही ठहरने का हुक्म था, अतएव उसने अपने पुत्र नौशेरखां के साथ सरदारों को दिल्ली भिजवाया और आप वहीं ठहर गया। उक्त ख्यात से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर के सरदारों ने बहादुरखां को २०००० रुपये देने का वचन दिया था, जिससे वह उनकी इतनी सहायता कर रहा था (जिल्द २, पृ० २-४)।

ता० २० फरवरी) को अजमेर पहुँचकर ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की ज़िया-
रत करने के अनन्तर बादशाह दौलतखाने में ठहरा। इसके एक सप्ताह
बाद भूतपूर्व महाराजा के वकील ने लाहोर में राजकुमारों के जन्म होने की
सूचना बादशाह के पास पहुँचाई।

लाहोर से चलकर राजपूत सरदार नवजात शिशुओं एवं राणियों
के साथ तूतीबाग, राजा का तालाब, फ़नियाबाद आदि स्थानों में ठहरते
हुए श्रावणादि १७३५ (चैत्रादि १७३६) चैत्र सुदि
११ (ई० स० १६७६ ता० १३ मार्च) को सतलज
पार कर गांव लेधाणा में ठहरे। वहाँ रहते समय
बादशाह का इस आशय का पत्र उनके पास पहुँचा कि मैं महाराजा के
पुत्रों के जन्म से अत्यन्त खुश हूँ। मैं अब अजमेर से दिल्ली जा रहा हूँ।
तुम लोग भी उन्हें लेकर वहाँ आओ ताकि मनसब आदि प्रदान कर उनका
उचित सम्मान किया जायें।

ता० ७ सफ़र (चैत्र सुदि ८ = ता० १० मार्च) को बादशाह ने अज-
मेर से प्रस्थान किया और ता० १ रबीउलअव्वल
(वैशाख सुदि ३ = ता० ३ अप्रैल) को वह दिल्ली पहुँचा।

इसके दो दिन बाद ही राजपरिवार और कुंवरों के साथ राजपूत
सरदार भी दिल्ली पहुँचे। वैशाख सुदि ७ (ता० ७
अप्रैल) को नौशेरखां के साथ भाटी रघुनाथ-
सिंह और पंचोली के सरासिंह आदि भी अजमेर
से दिल्ली पहुँच गये।

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८०-१।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कुंवरों के जन्म का समाचार मिलने
पर बादशाह ने हंसकर कहा कि बंदा क्या चाहता है और खुदा क्या करता है (जि० २
पृ० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४।

(३) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८२।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १५।

अनन्तर नौशेरखां वैशाख सुदि १४ (ता० १४ अप्रैल) को कतिपय सरदारों के साथ बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ । जोया रणछोड़दास गोयंददासोत (खैरवा) तथा राठोड़ सूरजमल नाहर-
 राठोड़ सरदारों का बाद-
 शाह से मिलना खानोत (आसोप), दीवान असदखां और बड़शी सर-
 बुलन्दखां के पास जाया करते थे। उन्होंने एक दिन उन (राठोड़ सरदारों) से कहा कि बादशाह महाराजा के पुत्रों को ५०० सवारों से चाकरी करने के एवज में सोजत और जैतारण देने को प्रस्तुत है। अन्य राजपूत सरदारों को अलग मनसब दिया जायगा; पर उक्त सरदारों ने यह शर्तें स्वीकार न कीं । बादशाह की तरफ से कोई आशा न देखकर राजपूत सरदारों ने बहादुरखां को लिखा । इसपर उसने बादशाह के पास अर्ज कराई कि यदि जोधपुर का राज्य वापस न किया गया तो मैं अपना मनसब त्याग दूंगा । बादशाह ने अपने अफसर कानुलीखां से कहा कि वह उस (बहादुरखां) को वहीं रहने के लिए लिखे, पर पीछे से कानुलीखां की सलाह के अनुसार उसने बहादुरखां को पीछा बुला लिया, जो द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को दिल्ली पहुंचा ।

ता० २५ रबीउस्सानी (द्वितीय ज्येष्ठ वदि १२ = ता० २६ मई) को बादशाह ने जसवंतसिंह के बड़े भाई नागोर के स्वामी अमरसिंह के पौत्र, रायसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य,
 इन्द्रसिंह को जोधपुर का
 राज्य दिया जाना राजा का खिताब, खिलअत, जड़ाउ साज की तल-
 वार, सोने के साज-सहित घोड़ा, हाथी, भेंडा और नक़ारा दिया । उसने भी बादशाह को छत्तीस लाख रुपये पेशकशी देना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १५-१६ । मुंशी देवीप्रसाद-कृत 'श्रीरंगजेबनामे' में द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को खानजहां बहादुर का जोधपुर से कई गाड़ियां मूर्तियों से भर ले जाना लिखा है । बादशाह ने उसकी बड़ी प्रशंसा की और मूर्तियां दरबार के जलूखाने (आंगन) तथा जुमामस्जिद की सीढ़ियों के नीचे डाली जाने की आज्ञा दी । मूर्तियां जड़ाऊ, सोने, चांदी, तांबे, पीतल, पत्थर आदि की बनी थीं (भाग २, पृ० ८३) ।

क्रबूल किया^१।

इसी बीच जब बादशाह ने राठोड़ों को राजी होते न देखा तो उसने उनसे हिसाब देने को कहा। हिसाब-किताब ठीक तो था ही नहीं, ऐसी दशा में जोधपुर के कर्मचारी पंचोली केसरसिंह ने अपने ऊपर इसका सारा भार ले लिया। जब वह भी हिसाब न दे सका तो बादशाह ने उसे कैद में डाल दिया, जहां वह २५ दिन बाद ज़हर खाकर मर गया^२।

जोधपुर के सारे राठोड़ सरदार राणियों और दोनों कुंवरो-सहित दिल्ली में किशनगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली^३ में ठहरे हुए थे। बादशाह की नीयत अपनी तरफ़ साफ़ न देखकर राठोड़ रणछोड़दास, भाटी रघुनाथ (सुरताणोत), राठोड़ रूपसिंह (परागदासोत), राठोड़ दुर्गादास (आसकरणोत) आदि ने सलाह कर सबसे कहा कि यहां रहकर मरने से कोई

(१) मुंशी देवीप्रसाद: श्रीरंगजेबनामा; भाग २, पृ० ८३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२८-९। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले सब राठोड़ सरदार जोधपुर की हवेली में ठहरे थे। इन्द्रसिंह को राज्य मिलने के बाद बादशाह की आज्ञा से वे वह हवेली खाली कर कृष्णगढ़ की हवेली में चले गये (जि० २, पृ० १७)।

(४) वीर दुर्गादास का नाम राठोड़ वंश के इतिहास में अमर रहेगा। उसने असामान्य वीरता और रण-चातुरी के अतिरिक्त आदर्श स्वामिभक्ति और देश-प्रेम का परिचय दिया। उसके पिता आसकरण ने, जो जसवन्तसिंह की चाकरी करता था, उसकी माता के साथ प्रेम न होने के कारण दोनों (पत्नी और पुत्र) को अलग कर दिया था। इसके बाद माता के साथ लूणावे गांव में ही रहकर लुटपन ही से वह होनहार बालक खेती-बारी करके उदर पोषण करने लगा। एक बार उसने कहा-सुनी हो जाने के कारण अपने खेत में से सांडनियां ले जाने पर सरकारी राइके को मार डाला। जब इसकी पुकार महाराजा के पास हुई तो इसके बारे में आसकरण से पूछा गया। उसने साफ़ कह दिया कि मेरे तो सब पुत्र राज की सेवा में उपस्थित हैं, गांव में मेरा कोई बेठा नहीं

लाभ नहीं, यदि जीते रहेंगे तो भगड़ा कर भूमि ले सकेंगे। ऐसे तो यहां पहरा बैठ जायगा और फिर हम निकल न सकेंगे। इस तरह बहुत समझा-बुझाकर उन्होंने राठोड़ सूरजमल, महेशदास के पौत्र राठोड़ संग्राम-सिंह (आऊवा), चांपावत उदयसिंह (लखधीरोत, सामूजा), जैतावत प्रतापसिंह (देवकर्णोत, बगड़ी), राठोड़ राजसिंह (बलरामोत) आदि बड़े-बड़े सरदारों और खोजा फ़रासत को जोधपुर को खाना कर दिया। अनन्तर दुर्गादास तथा चांपावत सोर्निंग (विट्ठलदासोत) आदि अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ चले गये।

है। तब महाराजा ने दुर्गादास को बुलाकर पूछा। उसने अपराध स्वीकार करते हुए कहा कि राठोड़ ने श्रीमानों के किले को धोला ढ़ंदा कहा और यह भी कहा कि उसपर छुजा (छप्पर) नहीं है। उसकी इस दिठाई के कारण मैंने उसकी हत्या कर दी। फिर यह जानकर कि वह आसकरण का ही पुत्र है महाराजा ने आसकरण से पूछा कि तुम तो कहते थे कि मेरा कोई बेटा नहीं है? आसकरण ने उत्तर दिया—“कपूत को बेटों में नहीं गिनते।” महाराजा ने कहा—“यह श्रम है। यही कभी डगमगाते हुए मारवाड़ को कंधा देगा।” इसके बाद उसने दुर्गादास को अपनी सेवा में रख लिया। पीछे से महाराजा के विश्वास को उसने सच्चा ही प्रामाणित किया। मारवाड़ का राज्य खालसा किये जाने पर उसने राठोड़ों की तरफ़ से और गज़ब से कई युद्ध कर मारवाड़ का राज्य सुरक्षित रखने में बड़ी मदद पहुंचवाई। उसकी प्रशंसा में मारवाड़ के कवियों आदि ने अनेक कवितायें भी की हैं। इस सम्बन्ध में राम नाम के एक जाट का निम्नांकित दोहा बड़ा प्रसिद्ध है—

ढंढक ढंढक ढोल बाजे, दे दे ठोर नगरां की।

आसे घर दुर्गा नहीं होतो, सुन्नत होती सारां की ॥

सुशी देवीप्रसाद; होनहार बालक; प्रथम भाग, पृ० २७-३२।

वीर दुर्गादास का वृत्तान्त आगे यथास्थान आता रहेगा।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ३२। “वीरविनोद” से भी पाया जाता है कि बहुतसे राठोड़ पहले ही मारवाड़ को चल दिये थे, जिनको अलमगीर ने न रोका (भाग २; पृ० ८२८)।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६।

अजीतसिंह के दिल्ली से बाहर निकाले जाने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न ख्यातों और तवारीखों में भिन्न-भिन्न वृत्तान्त मिलते हैं। टॉड लिखता है—“जसबन्तसिंह की

वि० सं० १७३६ श्रावण वदि २ (ई० सं० १६७६ ता० १५ जुलाई) को

राणी के एक लड़का हुआ, जिसका नाम अजीत रक्खा गया। राठोड़ उसको तथा राज-परिवार के अन्य लोगों को साथ लेकर स्वदेश की ओर चले, परन्तु उनके दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने जसवन्त का बदला उसके पुत्र से लेने के इरादे से यह आज्ञा दी कि अजीत को मेरे आश्रय में दे दिया जाय। उसने इसके बदले में राठोड़ सरदारों में मारू- (मारवाड़) का विभाजन करने का भी वचन दिया, पर राठोड़ों ने इसे स्वीकार न किया। उनके इस आचरण से अप्रसन्न होकर औरंगज़ेब ने सेना भेजकर उन्हें घेर लिया। ऐसी परिस्थिति देखकर राठोड़ों ने मिठाई के टोकरे में कुमार को रखकर वहां से निकाल दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १६३)।

मुहम्मद हाशिम (खलीफ़ा) कृत “मुन्तवुल्लुबाब” नामक ग्रन्थ से पाया जाता है—“बादशाह की नाराज़गी जसवन्तसिंह पर पहले से ही थी। राजपूतों के (अटक पर के) आचरण से उसकी नाराज़गी बहुत बढ़ गई। उसने कोतवाल को राजपूतों का डेरा घेर लेने और उनपर नज़र रखने की आज्ञा दी। इसके कुछ दिनों बाद कुछ राजपूतों ने स्वदेश जाने की आज्ञा चाही, जिसकी औरंगज़ेब ने तुरन्त स्वी-कृति दे दी। इसी बीच राजपूत उन कुमारों की अवस्था के दो बालक ले आये और उन्हें वास्तविक राजकुमारों के वस्त्रों से विभूषित कर उन्होंने कुछ दासियों को राणियों की पोशाक पहना कर उनके पास रख दिया। फिर वास्तविक राणियां मर्दों के बाने में दो विश्वासपात्र सेत्रकों और कई स्वामिभक्त राजपूतों के साथ रात्रि के समय वहां से बाहर भेज दी गई” (इलियट; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ७, पृ० २६७)।”

मुन्शी देवीप्रसाद-कृत “औरंगज़ेबनामे” में लिखा है कि एक लड़का (दल-थंभन) तो पहले ही मर गया, दूसरा (अजीतसिंह) शाही सेना-द्वारा राजपूतों के घेरे जाने पर एक घोसी के पास छिपा दिया गया (भाग २, पृ० ८४-५)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन नहीं दिया है, पर उसमें लिखा है कि ख्वांछी मुकुन्ददास कलावत दोनों राजकुमारों (अजीतसिंह तथा दलथंभन) को गुप्त रूप से दिल्ली से निकाल ले गया। उनमें से दलथंभन मार्ग में ही मर गया (जि० २, पृ० ३२)।

ये सब कथन विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ “बोरबिनोद” का ही वर्णन अधिक माननीय है। “वंशमास्कर” से भी पाया जाता है कि दुर्गादास अजीतसिंह को निकाल ले जानेवाले सरदारों के साथ था और भाटी गोहंदास कालबेलिये का रूप धर दोनों राजकुमारों को पिंठारों में रखकर घेरे से बाहर निकाल ले गया था (भाग ३, पृ० २८५६, छन्द १६)।

बादशाह ने सख्त हुक्म दिया कि कोतवाल फ़ौलादख़ां और सैयद हामिदख़ां खास चौकी के आदमियों तथा हमीदख़ां, कमालु-दीनख़ां, ख़्वाजा मीर आदि शाहज़ादे सुल्तान मुहम्मद के रिसाले-सहित जाकर राणियों व जसवन्तसिंह के बेटे को कृष्णगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली से हटाकर नूरगढ़ में पहुँचा दें। यदि वे सामना करें तो उन्हें सज़ा दी जावे। जैसा कि ऊपर लिखा गया है, दुर्गादास तथा सोर्निंग आदि राठोड़ पहले दिन ही अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ रवाना हो गये थे। शेष रहे हुए राजपूतों ने बादशाही अफ़सरों का मुक़ाबला किया और वीरतापूर्वक लड़कर राणियों-

(१) राणियों के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न-भिन्न बातें लिखी हैं। टॉड के अनुसार युद्धारम्भ के पूर्व ही दोनों राणियों को स्वर्ग भेज दिया गया (राजस्थान जि० २, पृ० ११३)। “मुल्लखुलुबाब” के अनुसार दोनों राणियां मर्दों की पोशाक में बाहर निकल गईं और उनके स्थान में दो दासियां राणियों के रूप में रह गईं, जो शाही सेना के पहुँचने पर अन्य राजपूतों के समान ही लड़ने के लिए आमादा हुईं। आगे चल कर उक्त पुस्तक में यह भी लिखा है कि राणियों का भागना ठीक-ठीक प्रमाणित नहीं हुआ (इलिषट्; हिरट्टी आंव इंडिया; जि० ७, पृ० २१७-८)। मुन्शी देवीप्रसाद लिखित “शौरंगजेबनामे” से पाया जाता है कि लड़ाई में मैदान अपने हाथ से जाता देखकर राजपूतों ने, दोनों राणियों को, जो पुरुषों के वेप में उनके साथ थीं, क़त्ल किया और फिर दूसरे लड़के को दूध बचनेवाले के घर में ही छोड़कर वे भाग गये (भाग २, पृ० ८५)। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि शाही अफ़सरों के बीस हज़ार सवार और तोपख़ाने के साथ हवेली पर पहुँचने और राणियों एवं कुंवरो के मांगने पर राठोड़ मरने-मारने को कटिबद्ध हो गये। भगड़ा प्रारम्भ होने पर जादमजी और नरुकीजी (राणियों) पर चन्द्रभाण के हाथ से लोहा कराने को कहकर राठोड़ दुर्गादास आदि बचे हुए ढाई-तीन सौ राजपूतों ने शाही तोपख़ाने पर आक्रमण कर उसे क़ाबू में किया और फिर वे शाही सेना से जूझ पड़े। मुट्ठी भर राजपूतों ने इस लड़ाई में असाधारण वीरता का परिचय दिया। शाही सेना के लगभग ५०० सैनिक काम आये और ८०० घायल हुए। राठोड़ों में से अधिकांश ने वीर गति पाई। केवल दुर्गादास कुछ साथियों के साथ मुसलमानों का संहार करता हुआ घायल होकर निकल गया (जि० २, पृ० ३२-६)। कहीं-कहीं राणियों का पुरुष वेप धारणकर वीरतापूर्वक लड़ना भी लिखा मिलता है, पर ये सब कथन अधिकांश अतिशयोक्तिपूर्ण और काल्पनिक ही हैं। जोधपुर

सहित काम आये' ।

बादशाह को जब युद्ध में महाराजा जसवन्तसिंह के परिवार के मारे जाने और राजकुमारों के भगाये जाने का समाचार मिला तो उसने राज-कुमारों को, जहां से भी हो, खोजकर दरबार में उपस्थित करने की आज्ञा निकाली। घर-घर तलाश करने पर भी जब कुमारों का पता न लगा तो कोत-वाल ने एक फ़र्जी लड़का पकड़ लेजाकर बादशाह को सौंप दिया^१, जिसने उसका नाम मोहम्मदीराज रखकर अपनी पुत्री ज़ेबुन्निसा बेगम को परवरिश करने के लिए दे दिया^३ ।

दूसरे दिन फ़ौलादख़ां ने उस लड़के के कुछ ज़ेवर भी ढूंढ निकाले, परन्तु राजा और दोनों राखियों तथा अन्य राजपूतों का माल-असबाब इस बीच लुटेरों ने लूट लिया और जो सरकार में आया वह बादशाह के हुकम से "बेतुलमाल" के कोठे में जमा किया गया^२। जोधपुर के फ़ौजदार ताहिर-ख़ां ने भागे हुए राजपूतों को रोकने में पैर नहीं जमाया था, जिससे वह

राज्य का यह कथन कि बीस हजार सवारों ने किशनगढ़ की हवेली पर तोपखाने के साथ धावा किया और दुर्गादास दिह्ली में ही रहकर शाही सेना के साथ लड़ा माना नहीं जा सकता, क्योंकि जैसा ऊपर लिखा गया है वह तो अजीतसिंह को लेकर पहले ही चला गया था ।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६ ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ३६-७ । मुन्शी देवीप्रसाद-लिखित "औरंगज़ेबनामे" से पाया जाता है कि कोतवाल फ़ौलादख़ां राठोड़ों-द्वारा छिपाये हुए राजकुमार का हाल जान गया था, जिससे वह उसे घोड़ी के यहां से ले आया । राजा की लौडियों को दिखाये जाने पर उन्होंने भी यही कहा कि यह महाराजा का बेटा है (भाग २, पृ० ८५) ।

(३) मुन्शी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६ ।

(४) भंडार ।

(५) मुन्शी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६ ।

नौकरी से अलग कर दिया गया और साथ ही उसका खिताब भी छीन लिया गया' ।

ता० २० रज्जब (भाद्रपद वदि ८ = ता० १८ अगस्त) को बादशाह ने खिजराबाद के बाग में मुक़ाम होने पर वहां से सरबलंदख़ां की अध्यक्षता में एक अच्छी फ़ौज जोधपुर पर रवाना की' ।

ता० २६ रज्जब (भाद्रपद वदि १४ = ता० २४ अगस्त) को बादशाह से अर्ज़ हुई कि राजा के नौकरों में से राजसिंह^३ ने बहुतसी सेना-सहित अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरख़ां से लड़ाई की । तीन दिन तक दोनों में खूब लड़ाई होती रही, तीर और बंदूक से लड़ते-लड़ते तलवार, बर्छी, छुरी और कटारी की नौबत पहुंची । बहुत देर तक मार-काट जारी रही और दोनों तरफ़ लाशों के ढेर लग गये । आखिर तहव्वरख़ां जीता और राजसिंह वीरतापूर्वक लड़कर मारा गया' ।

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६ । जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दिल्ली की लड़ाई की ख़बर श्रावण मास के अंतिम दिनों में जोधपुर पहुंची । इसपर राठोड़ों ने ताहिरख़ां आदि को घेर लिया, जिसने माल-असबाब राठोड़ों के सिपुर्द कर अपनी जान बचाई । इसके बाद राठोड़ों ने मेढ़ते में मार-काट मचाई और फिर सिवाने का गढ़ छीन लिया (जि० २, पृ० ३७) ।

(२) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६ ।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में मेढ़तिया राजसिंह प्रतापसिंहोत और उदावत राजसिंह बलरामोत ये दो नाम दिये हैं; पर इनमें से इस लड़ाई में काम आनेवाला प्रथम राजसिंह ही था, अतएव वही फ़ारसी तवारीख़ का राजसिंह होना चाहिये । वह आलखियावासवालों का पूर्वज था ।

(४) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६-७ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार यह लड़ाई भाद्रपद वदि ११ को हुई । उस समय तहव्वरख़ां का डेरा पुष्कर में था । उक्त ख्यात के अनुसार मेढ़तिये इस लड़ाई में बड़ी वीरता से लड़े और तहव्वरख़ां भाग गया (जितद २, पृ० ३७) ।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह ने इन्द्रसिंह को जोधपुर का स्वामी मानकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए भेजा था, परन्तु उससे न तो वहाँ का प्रबन्ध ही हुआ और न वह उधर होनेवाले उपद्रव को ही शान्त कर सका, जिससे बादशाह ने उसे वापस बुला लिया^१।

इन्द्रसिंह का वापस बुलाया जाना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि दुर्गादास, सोनिंग आदि राजकुमारों को लेकर गुप्त रूप से दिल्ली से बाहर चले गये थे। छोटे राजकुमार दलधंभण का तो मार्ग में देहांत हो गया। राठोड़ों का अजीतसिंह को लेकर महागणा के पास जाना अजीतसिंह को साथ लेकर राठोड़ सरदार मारवाड़ की तरफ चले, परन्तु सम्पूर्ण जोधपुर राज्य पर बादशाह का अधिकार हो गया था। इससे दुर्गादास, सोनिंग आदि बड़े चिन्तित हुए और उन्होंने अर्ज़ी लिखकर महाराणा राजसिंह से अजीतसिंह को शरण में लेने की प्रार्थना की। महागणा के स्वीकार करने पर वे अजीतसिंह को साथ लेकर उसके पास गये और ज़ेवर-सहित एक हाथी, ११ घोड़े, एक तलवार, रत्नजटित कटार, दस हजार दीनार (चांदी का

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६। सरकार ने भी लिखा है कि केवल दो मास बाद ही उसकी अयोग्यता के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह को राज्यच्युत कर दिया (शार्ट हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब; पृ० १७२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि इन्द्रसिंह के जोधपुर पहुँचने पर उसकी तरफ से कृपावत सुदर्शन भावसिंहोत्त, जोधा रतन हरीसिंहोत्त आदि गढ़ में गये। उन्होंने वहाँ के सरदारों से कहा कि अभी महाराजा (स्वर्गीय) के पुत्र की पत्नी खबर नहीं है और इन्द्रसिंह भी महाराजा गजसिंह का पौत्र ही है, ऐसी दशा में उसको जोधपुर का शासक मान लेना असंगत नहीं है। इसपर जैतावत प्रतापसिंह देवकर्णोत्त, राठोड़ हरनाथ गिरधरदासोत्त आदि ने रातानाड़ा जाकर, जहाँ इन्द्रसिंह ठहरा हुआ था, उसकी अधीनता स्वीकार करली। तब वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ७ (ई० सं० १६७६ ता० २ सितम्बर) मंगलवार को इन्द्रसिंह ने बड़े जलूस के साथ जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया। पीछे से वि० सं० १७३७ में ग़ैरचाकरी के कारण बादशाह ने उसे जोधपुर से अलग कर दिया (जि० २, पृ० ३८ और ४३)।

सिका, रुपये) उसकी नज़र किये। महाराणा ने अजीतसिंह को बारह गाधों सहित केलवे का पट्टा देकर वहां रक्खा^१ और दुर्गादास आदि राठोड़ों से कहा कि बादशाह सीसोदियों और राठोड़ों के सम्मिलित सैन्य का आसानी से मुक्काबिला नहीं कर सकता, आप निश्चित रहिये^२।

बादशाह ने जब अजीतसिंह के, जिसे वह कृत्रिम समझता था^३, महाराणा के पास पहुंचने की खबर सुनी तब उसने महाराणा के पास फ़रमान

(१) मान कवि; राजविलास; विलास ६, पृष्ठ १७१-२०६ (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का संस्करण)। इस पुस्तक की रचना का प्रारम्भ महाराणा राजसिंह की विद्यमानता में वि० सं० १७३५ (ई० सं० १६७८) में हुआ और यह वि० सं० १७३७ में समाप्त हुई। टोड; राजस्थान; जि० १, पृ० ४४२ (दुर्गादास की देख रेख में अजीत का केलवे में, जो उसे महाराणा की तरफ़ से जागीर में मिला था, रहना लिखा है)। रूपाहेली के ठाकुर राठोड़ चतुरसिंह-कृत “चतुरकुल-चरित्र” (प्रथम भाग; पृ० १००, ई० सं० १६०२ का संस्करण) में भी इसका उल्लेख है।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ४६३।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि महाराजा जसवंतसिंह के उमराव उसकी कुछ राणियों को उनके पीहर पहुंचा आये थे। हाड़ी और चौहान राणियां बूंदी गईं, शेखावत खंडेला गईं, देवड़ी सिरौही गईं, भटियाणी जैसलमेर गईं और जादम उदयपुर राणा के पास गईं, जहां उसे उसने एक गांव दिया था। बाघेली राणी मुंहणोत नैणसी की हवेली में जा रही थी, जिसकी परवरिश का इन्द्रसिंह ने जोधपुर पहुंचने पर समुचित प्रबन्ध किया (जि० २, पृ० ३८-३९)।

(३) मुंशी देवीप्रसाद कृत “औरंगज़ेबनामे” में लिखा है कि जो राजपूत मारे जाने से बचे वे जोधपुर पहुंचकर दुर्गा और अन्य दुश्मनों के बहकाने से दं जाली लड़कों—दलथंभन (जो मर गया) और अजीतसिंह—को महाराजा जसवंतसिंह का पुत्र प्रकाशित कर फ़साद करने लगे (भाग २, पृ० ८६)। इससे स्पष्ट है कि औरंगज़ेब उक्त दोनों लड़कों को फ़ज़ी ही मानता था। सर जदुनाथ सरकार ने भी लिखा है कि औरंगज़ेब तब तक अजीतसिंह को फ़ज़ी समझता रहा, जब तक कि मेवाड़ के राजवंश में उसका विवाह नहीं हुआ (हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३५२—तृतीय संस्करण)।

बादशाह का महाराणा से
अजीतसिंह को मांगना

भेजकर अजीतसिंह को मांगा, परन्तु महाराणा ने उसपर ध्यान न दिया। फिर दो बार फ़रमान भेजकर अपनी आज्ञा पालन करने के लिए बादशाह ने महाराणा को लिखा, परन्तु उसने अजीतसिंह को सौंपना स्वीकार न किया। इसपर बादशाह ने तुरंत उसपर चढ़ाई कर दी^१।

महाराणा के कृष्णगढ़ की कुंवरी चारुमती से, जिससे बादशाह का संबंध स्थिर हो चुका था, विवाह करने, श्रीनाथजी आदि की मूर्तियों को अपने राज्य में रखने और जज़िया के विरोध में पत्र लिखने से औरंगज़ेब उसपर पहले ही नाराज़ था, ऐसे में उसकी इच्छा के विरुद्ध अजीतसिंह को आश्रय देने से बादशाह की उसपर नाराज़गी बढ़ गई और उसने हि० स० १०६० ता० ७ शबान (वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ८ = ई० स० १६७६ ता० ३ सितम्बर) को मेवाड़ पर चढ़ाई करने के लिए एक बड़ी सेना के साथ दिल्ली से प्रस्थान किया। उसी दिन उसने शाहज़ादे अकबर को अजमेर में पहले पहुंचने के लिए पालम क़सबे से खाना किया। बादशाह १३ दिन में अजमेर पहुंचा और आनासागर पर के महलों में ठहरा^२।

महाराणा ने बादशाह के दिल्ली से मेवाड़ पर चढ़ने की खबर पाकर अपने कुंवरो, सरदारों आदि को एकान्त में बुलाकर उनसे सलाह की कि बादशाह से कहां और किस प्रकार लड़ना चाहिये। उस समय कुंवरो और अन्य सरदारों आदि के अतिरिक्त राठोड़ दुर्गादास और राठोड़ सोनिंग भी

(१) राजविलास; विलास १०, पृष्ठ २२-४।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ४६३। मुंशी देवीप्रसाद-कृत “औरंगज़ेब-नामे” में ता० २६ शबान (आश्विन सुदि १ = ता० २५ सितम्बर) को बादशाह का अजमेर पहुंचना लिखा है (भाग २, पृ० ८८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७३६ के मार्गशीर्ष मास में बादशाह का अजमेर पहुंचना और वहां से महाराणा राजसिंह पर चढ़ाई करना लिखा है (जि० २, पृ० ३६), जो ठीक नहीं है।

दरबार में उपस्थित थे^१। बादशाह के पास सेना अधिक थी, अतएव पहाड़ियों में रहकर युद्ध करने का निश्चय हुआ, जिसके अनुसार महाराणा राजसिंह अपने सामन्तों आदि को साथ लेकर पहाड़ों की तरफ चला गया^२। मुगलों ने उदयपुर में प्रवेश कर उसे खाली पाया और वहां के मन्दिर आदि तोड़े। इसके बाद उन्होंने राजपूत सेना की तलाश में पहाड़ियों में प्रवेश करना प्रारम्भ किया। चित्तोड़ पर मुगल सेना का अधिकार होने के पश्चात् उदयपुर के निकट देवारी में कुछ दिनों रहने के बाद फरवरी मास के अन्त में बादशाह स्वयं वहां (चित्तोड़) लौटा। वहां से वह अजमेर लौटा और मेवाड़ में शाहजादा अकबर सैन्य-परिचालन के लिए रह गया। मुगल थाने दूर-दूर स्थापित होने और मेवाड़ एवं मारवाड़ के बीच अरावली की पहाड़ियां होने के कारण, जिसमें महाराणा अपनी सेना-सहित था, मुगल सेना को राजपूतों के साथ लड़ने में बड़ी असुविधा का सामना करना पड़ता था। जब कई बार मेवाड़ में रक्खी हुई मुगल-सेना का राजपूतों ने बहुत नुकसान किया तो बादशाह ने नाराज़ होकर अकबर को मारवाड़ की तरफ भेज दिया और उसके स्थान में शाहजादे आजम की नियुक्ति की^३।

चित्तोड़ से बदले जाने पर वि० सं० १७३७ श्रावण सुदि ३ (ई० सं० १६८० ता० १८ जुलाई) को शाहजादा अकबर सैन्य-सहित सोजत (मारवाड़) पहुंचा। मार्ग में राजपूतों ने उसे मौक्रे-मौक्रे पर हिरान किया, पर वे हटा दिये गये और तहब्बरखां ने, जो मुगल सेना के हरावल में था, व्याघर और मेड़ता में जमकर सामना करनेवाले कितने ही राठोड़ों को गिरफ्तार भी

शाहजादे अकबर का मार-
वाड़ में पहुंचना

(१) मान कवि; राजविलास; विज्ञास १०, पृष्ठ ५४-६७।

(२) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५५८।

(३) सर जदुनाथ सरकार; शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब; पृ० १७२-५। इस चर्चा के विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५५४-६३।

क्रिया । राठोड़ों की टुकड़ियां देश में इधर-उधर फैलकर, जहां मुगलों का थाना कमज़ोर देखतीं, वहां अचानक आक्रमण कर देतीं; पर जमकर कहीं भी लड़ाई नहीं हुई । मारवाड़ के प्रत्येक भाग में, दक्षिण में जालोर एवं सिवाना में, पूर्व में गोड़वाड़ में, उत्तर में नागौर में और उत्तर-पूर्व में डीडवाणा तथा सांभर में अजीतसिंह के अनुयायी हर जगह अचानक आक्रमण करते रहे ।

अकबर को यह आज्ञा मिली कि वह सोजत को सुरक्षित कर नाडोल (जो उस समय मेवाड़ के अधिकार में था) पर अधिकार करे और वहां से तहस्वरखां की अध्यक्षता में अपने हरावल सैन्य को नारलाई के पासवाले देसूरी के घाटे से होकर मेवाड़ में भेजे तथा कमलमेर (कुंभलमेर, कुंभलगढ़) के ज़िले पर आक्रमण करे, जहां महाराणा और द्वारे हुए राठोड़ ठहरे हुए थे और जहां से वे इधर-उधर आक्रमण किया करते थे; परन्तु इस आज्ञा की पूर्ति में कई महीने लग गये । मृत्यु का आर्तिगन करनेवाले राजपूतों का आतङ्क शत्रुदल पर ऐसा छा गया था कि तहस्वरखां नाडोल जाने के लिए आगे बढ़ने से इन्कार कर अपने सैन्य-सहित खरवे (? खैरवा) में ठहर गया और एक मास पीछे नाडोल पहुंचा, पर राजपूतों का भय उसे पूर्ववत् ही बना रहा । रसद आदि की समुचित व्यवस्था कर शाहज़ादा अकबर मार्ग में थाने बैठाता हुआ सोजत से चलकर सितम्बर के अंत में नाडोल पहुंचा; परन्तु तहस्वरखां ने पहाड़ों में जाना स्वीकार न किया, जिससे अकबर को अपने उस डरपोक अफसर पर दबाव डालना पड़ा । ता० २७ सितम्बर (आश्विन सुदि १४) को तहस्वरखां देखभाल करने के लिए घाटे के द्वार की ओर चला । महाराणा के दूसरे पुत्र भीमसिंह ने पहाड़ों से निकलकर उससे लड़ाई की, जिसमें दोनों पक्षों की बहुत हानि हुई । इसी बीच महाराणा का वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० (ई० सं० १६८० ता० २२ अक्टोबर) को ओड़ा गांव में विष देने से देहांत हो गया

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३४६-२० (तृतीय संस्करण) । इस लड़ाई का वृत्तान्त गुजरात के नागर ब्राह्मण ईश्वरदास ने “ऋतुहात-इ-आलमगीरी” (पत्र ७७ पृ० २-पत्र ७८ पृ० २) में लिखा है ।

और उसका पुत्र जयसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ^१। उसने भी बादशाह के साथ की लड़ाई जारी रखी।

यह सब होते हुए भी शाही सेना का सामना करना राजपूतों के लिए कठिन कार्य था, अतएव उन्होंने युक्ति से काम लेकर पहले शाहजादे

शाहजादे अकबर का राज-
पूतों से मिल जाना

मुअज्जम को (जो देवारी के पास उदयसागर पर
ठहरा हुआ था) बादशाह के विरुद्ध करने का
प्रयत्न किया। इसके लिए राव केशरीसिंह चौहान,

रावत रत्नसिंह (चूडावत), राठोड़ दुर्गादास और सोनिंग आदि सरदारों ने उससे बात-चीत शुरू की, परन्तु अजमेर से मुअज्जम की माता नवाबबाई ने उसे राजपूतों से मेल-मिलाप न रखने की सलाह दी, जिससे वह राजपूतों के बहकाने में न आया^२। तब राजपूतों ने शाहजादे अकबर को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। उन्होंने उससे कहा कि राजपूतों को नाराज़ कर औरंगज़ेब अपने सारे राज्य को नष्ट कर रहा है। इस समय तुम्हें चाहिये कि स्वयं बादशाह बनकर अपने पूर्वजों की नीति का अवलम्बन करो और राज्य को फिर समृद्ध बनाओ। तहख़्वां के जीलवाड़े में रहते समय महाराणा जयसिंह ने राठोड़ दुर्गादास तथा अन्य कई सरदारों को गुप्त रूप से अकबर के पास भेजा। अकबर ने महाराणा को कुछ परगने और अजीतसिंह को जोधपुर का राज्य देने का वचन दिया, जिसके बदले में उन्होंने उसे सहायता देना स्वीकार किया। फिर सब बातें तय होने पर ई० स० १६८१ ता० २ जनवरी (वि० स० १७३७ माघ वदि८) को अजमेर में बादशाह पर आक्रमण करने के लिए प्रस्थान करने का निश्चय हुआ^३।

(१) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० २७७-८ तथा २८१।

(२) मुंतख़्ख़ुलुबाब—इलियद; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ७, पृ० ३००।

(३) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३२५-२६। मुंतख़्ख़ुलुबाब—इलियद; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ७, पृ० ३००-१। मुंशी देवीप्रसाद;

ई० स० १६२१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १७३७ माघ वदि ७) को अकबर ने अपने को बादशाह घोषित किया । इस अवसर पर उसने अपने सरदारों और अमीरों को खिताब दिये तथा तहव्वरखां को अपना मुख्य मंत्री बनाकर उसे सात हज़ारी मनसब दिया । अकबर के साथ के सरदारों में से कुछ तो स्वयमेव उसके साथी बन गये और कुछ को बाध्य होकर उसका साथ स्वीकार करना पड़ा । जिन्होंने उसका विरोध किया वे कैद में डाल दिये गये । केवल शाहजहाँ ने, जो कुछ पीछे रह गया था, शीघ्रता से औरंगज़ेब को शाहज़ादे के विद्रोह की सूचना दे दी । औरंगज़ेब की दशा उस समय बड़ी शोचनीय थी, क्योंकि अधिकांश सेना चित्तोड़ आदि में रहने के कारण उसके पास बहुत कम सेना रह गई थी, जब कि सीसोदियों और राठोड़ों की सेना-सहित अकबर का सैन्य ७०००० के करीब था । बादशाह ने सब मनसबदारों और अपने शाहज़ादों को शीघ्र अजमेर पहुंचने के लिए लिखा । उधर युवा अकबर, जो स्वभावतः सुस्त और विलासी था, अपने बादशाह बनने की खुशी में ताचरंग में मस्त रहने लगा ।

औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० १०० तथा टि० १ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में भिन्न वर्णन मिलता है । उसमें लिखा है—“वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० को महाराणा राजसिंह का देहांत हो गया और जयसिंह गद्दी पर बैठे । इसके बाद हुगादास गोरम के पहाड़ों से होकर मार्गशीर्ष मास में मेड़ते गया, जहां उसने व्यापारियों आदि से बहुतसा धन वसूल किया । फिर उसने डीडवाणा से भी रुपये लिये । बादशाह ने उसके पीछे फ़ौज भेजी, जिसने उसका बहुत पीड़ा किया । नागौर से बादशाही सेना लौट गई । गांव जीलवाड़े से शाहज़ादे अकबर के सेवकों—ताजमुहम्मद और चौहान भावसिंह—ने राठोड़ों के पास जाकर कहा—‘तुम हमारे शामिल हो जाओ । जोधपुर राजा (जसवन्तसिंह) के लड़के को सुवारक कर दिया जायगा ।’ गांव चांचोड़ी में तहव्वरखां का पुत्र मिर्ज़ा मानी राठोड़ रामसिंह (रत्नोत) के पास जाकर राठोड़ों को साथ ले गया । खोड़ में शाहज़ादे ने तख्त पर बैठकर दरबार किया और माघ वदि ६ को राठोड़ों को सिरोपाव, घोड़े, हाथी, तलवार और हज़ार मोहरें दीं (जि० २, पृ० ४२-३) ।”

उसने १२० मील का सफ़र करने में १५ दिन लगा दिये, जबकि प्रत्येक घंटे की देरी के कारण औरंगज़ेब की स्थिति दृढ़ होती जा रही थी। कमशः शहाबुद्दीनखां और हमीदखां सैन्य सहित बादशाह के पास पहुँच गये। साथ ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म के भी प्रस्थान करने की ख़बर पहुँची। स्थिति सुधरते ही बादशाह ने अजमेर को चारों ओर से सुरक्षित कर लिया। ता० १४ जनवरी (माघ सुदि ५) को वह अजमेर से ६ मील दूर दोगाई में जाकर ठहरा। अकबर की सेना का अग्रभाग कुड़की नामक स्थान में था, पर अकबर के डेगों में उस समय निराशा और विद्रोह का साम्राज्य था। ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ने लगा, उसकी तरफ़ के मुग़ल सैनिक अधिकाधिक संख्या में उसका साथ छोड़कर बादशाह से मिलने लगे। हाँ, ३०००० राजपूत उसके साथ अवश्य बने रहे। ता० १५ जनवरी (माघ सुदि ६) को बादशाह आगे बढ़कर चार मील दक्षिण में दोगादा (? दुमराड़ा) नामक स्थान में ठहरा। अकबर भी उससे तीन मील दूर जा उठा। इसी बीच शाहज़ादा मुअज़्ज़म सेना-सहित जाकर अपने पिता के शामिल हो गया^१।

अकबर के बहुत से अफ़सर उस समय तक बादशाह से जा मिले थे। अब बादशाह ने उसके मुख्य सेनापति तहव्वरखां को उसके ससुर इनायतखां (बादशाह का सेनापति) के द्वारा इस आशय का ख़त लिखा-कर अपने पास बुलाया कि यदि वह ज़ला आयगा तो उसका अपराध क्षमा किया जायगा नहीं तो उसकी रियां सब के सामने अपमानित की जावगी और उसके बच्चे कुत्तों के मूल्य पर गुलामों के तौर बेचे जावेंगे। इस धमकी से डरकर तहव्वरखां सोते हुए अकबर तथा दुर्गादास को सूचना दिये बिना ही औरंगज़ेब के पास चला गया, जहाँ शाही नौकरों ने उसको मार डाला^१।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३५६-६१।

(२) वही; जि० ३, पृ० ३६१-६३। जोधपुर राज्य की क्थात में इस घटना का उल्लेख भिन्न प्रकार से दिया है। उसमें लिखा है—“बादशाह ने इनायतखां से तहव्वरखां की बी और पुत्रों को मारने के लिए क्ररमाया। इसकी ख़बर इनायतखां ने

इसके बाद अकबर और उसके सहायक राजपूतों में विरोध पैदा करने के लिए औरंगजेब ने एक चाल चली। उसने एक जाली पत्र अक-

औरंगजेब का छल और
दुर्गादास का शाहजादे का
साथ छोड़ना

बर के नाम इस आशय का लिखा कि तुमने राज-
पूतों को खूब धोखा दिया है और उन्हें मेरे सामने
लाकर बहुत अच्छा काम किया है। अब तुम्हें

चाहिये कि उन्हें हरावल में रक्खो, जिससे कल प्रातःकाल के युद्ध में उन-
पर दोनों तरफ से हमला किया जा सके। यह पत्र किसी प्रकार राजपूतों
के डेरे में दुर्गादास के पास पहुँचा दिया गया, जिसको पढ़ते ही उसके मन
में खटका हो गया। वह अकबर के डेरे पर गया, पर अर्द्धरात्रि का
समय होने से वह सो रहा था और उसे किसी भी दशा में जगाने की आज्ञा
सेवकों को न थी। तब दुर्गादास ने अपने डेरे पर लौटकर तहव्वरखाँ को
बुलाने के लिए अपने आदमी भेजे। पर वह तो पहले ही बादशाह के पास
जा चुका था। यह खबर मिलते ही राजपूतों का सन्देह विश्वास में परिणत
हो गया और उन्हें उस पत्र पर अविश्वास करने का कोई कारण न रहा।
प्रातःकाल होने के पूर्व ही वे अकबर का बहुतसा सामान आदि लूटकर
मारवाड़ की तरफ चले दिये। ऐसी अव्यवस्थित दशा से लाभ उठाकर
औरंगजेब के पक्षपाती, जो शाहजादे के पास क़ैदी थे तथा अन्य मुसलमान
भी भागकर बादशाह के पास चले गये।

अपने जवाई (तहव्वरखाँ) को भेज दी। इसपर तहव्वरखाँ ने राठोड़ों से कहलाया कि
अब हमारा आपका मेल नहीं रहा और वह बादशाह के पास चला गया, जहाँ वह मार
झाळा गया (जि० २, पृ० ४३)।" रॉड के कथनानुसार तहव्वरखाँ ने इस आशय का
पत्र लिखकर दूत के हाथ राठोड़ों के पास भिजवाया—"मेरे ही द्वारा आपका अकबर से
मेल हुआ था, पर अब पिता पुत्र एक हो गये हैं, अतएव अब वचन आदि का ध्यान
त्यागकर आप अपने-अपने देश जायें।" इसके बाद वह औरंगजेब के पास गया, जहाँ
बादशाह की आज्ञा से वह मारा गया (राजस्थान; जि० २, पृ० ६६८)।

मनूकी लिखता है कि तहव्वरखाँ बादशाह को मारने की नीयत से गया था
(स्ोरिया को मोगोर; जि० २, पृ० २४७), पर यह कथन कल्पनामात्र है।

(१) सरकार; हिंदी डॉब् औरंगजेब; जि० ३, पृ० ३९३-४।

सबेरा होने पर अकबर ने अपने आपको विचित्र परिस्थिति में पाया। विशाल वाहिनी के स्थान में उसके पास केवल ३५० सवार शेष रह गये। ऐसी हालत में उसकी बादशाह बनने की सारी अभिलाषा मिट्टी में मिल गई। शीघ्राति-शीघ्र भागने के अतिरिक्त उसके लिए जीवन-रक्षा का दूसरा उपाय नहीं रह गया। स्त्रियों को घोड़ों पर बैठा और जो कुछ धन आदि जल्दी में एकत्र किया जा सका वह ऊंटों पर लादकर अकबर राजपूतों के पीछे खाना हुआ। बादशाह ने यह खबर पाते ही शाहजादे मुअज्जम को अकबर को गिरफ्तार करने के लिए मारवाड़ में भेजा। अकबर दो दिन तक निराश्रित भागता रहा, पर इस बीच राठोड़ों को औरंगजेब के छल का सारा हाल ज्ञात हो गया और दुर्गादास ने राजपूतों के साथ पीछे लौटकर अकबर को अपनी शरण में ले लिया। शाहजादे की रक्षा करना राठोड़ों ने अपना प्रमुख कर्तव्य समझा। राठोड़ उसे साथ लिए कई दिन तक मारवाड़ में फिरते रहे, पर वे किसी जगह भी एक दिन तक नहीं ठहरते थे। इसपर शाहजादे मुअज्जम ने अपना ढंग बदल दिया और चारों तरफ जगह-जगह अकबर की गिरफ्तारी के लिए

(१) जोधपुर राज्य की क्वात में लिखा है—“बादशाह ने ३० हजार सेना के साथ शाहजादे आलम (? मुअज्जम) को अकबर को गिरफ्तार करने के लिए उसके पीछे भेजा। राव इन्द्रसिंह, राठोड़ रामसिंह रतनोत और नवाब कुलीचख़ां आदि इस क़ौज के साथ थे। जालोर के पास पहुंचते ही राठोड़ों ने शाही सेना का बहुतसा सामान आदि लूट लिया। इस लापरवाही के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह से जोधपुर, रामसिंह से जालोर और कुलीचख़ां से उसकी जागीर ज़ब्त कर ली। यही नहीं कुलीचख़ां कैद में डाल दिया गया (जि० २, पृ० ४३)।” मुंशी देवीप्रसाद-लिखित “औरंगजेबनामे” में भी अकबर के पीछे बादशाह-द्वारा बहुतसा धन आदि साथ देकर शाहआलम, इन्द्रसिंह, रामसिंह आदि का भेजा जाना लिखा है (भाग २, पृ० १०४)। हम ऊपर लिख आये हैं कि इन्द्रसिंह का केवल दो मास तक ही जोधपुर पर अधिकार रहा था, ऐसी दशा में क्वात का यह कथन कि इस समय उससे जोधपुर की जागीर ज़ब्त हुई संदिग्ध प्रतीत होता है।

सैनिक नियुक्त कर दिये। अजमेर से भागने के एक सप्ताह के बीच विद्रोही शाहजादा सांचोर पहुँचा, पर गुजरात में रक्खे हुए मुगल सैनिकों-द्वारा वहाँ से भगाये जाने पर उसे अपने आश्रय-दाताओं-सहित मेवाड़ में जाना पड़ा, जहाँ के महाराणा जयसिंह ने उसका आदरपूर्वक स्वागत किया और उसे अपने यहाँ ठहरने के लिए कहा। वहाँ भी ठहरना ख़तरे से खाली नहीं था, अतएव दुर्गादास ने उसे दक्षिण ले जाने का निश्चय किया^१। केवल ५०० राठोड़ों के साथ वह मेवाड़ से निकलकर डूंगरपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—“जालोर से नंज़राना वसूलकर राठोड़ शाहजादे को लेकर सांचोर की तरफ़ गये, जहाँ शाहजादे (शाह) आलम (?) की सेना से उनका युद्ध हुआ। फिर गांव कोटकोलर में डेरा होने पर शाहजादे (शाह) आलम ने राठोड़ों से सन्धि की बात-चीत की और कहलाया कि राजा के पुत्र (अजीतसिंह) को मनसब और उसकी जागीर (जोधपुर) दी जायगी तथा अकबर को गुजरात का परगना दिया जायगा। साथ ही उसने चार हज़ार मोहरों भी ख़रचे के लिए उनके पास भेजीं, जो राठोड़ हरिसिंह मोहकमसिंहों, बाघ मुरारसिंहों तथा जुभारसिंह कुशलसिंहों ज़ामिन होकर ले आये। शाहजादे अकबर और दुर्गादास को यह बात पसन्द न आई और ख़रचे के लिए आई हुई अशरफियां भी सरदारों में बांट दी जाने के कारण वापस न की जा सकीं। फलतः यह सन्धि वार्ता अपूर्ण ही रह गई और बाघ, हरिसिंह आदि शाहजादे आलम से सारी हज़ीक़त कह आये। आबणादि वि० सं० १७३७ (चैत्रादि १७३८) वैशाख सुदि १० (ई० स० १६८१ ता० १७ अप्रैल) को बादशाह ने इनायतख़ां को जोधपुर के सूबे में भेजा। इसपर पालणपुर और थराद से पेशकशी वसूल करते हुए दुर्गादास और अकबर राणा जयसिंह के पास चले गये (जि० २, पृ० ४३)।” मुन्शी देवीप्रसाद ने “औरंगज़ेबनामे” में यह सारा कथन टिप्पण में दिया है (भाग २, पृ० १०६ टि० १)। उसमें बादशाह की तरफ़ से भेजे हुए शाहजादे का नाम मुअज़्ज़म दिया है, पर अन्य फ़ारसी तवारीख़ों में कहीं भी इन घटनाओं का उल्लेख नहीं मिलता, इसलिए इनकी सत्यता संदिग्ध ही है।

(२) “वीरविनोद से पाया जाता है कि इसी बीच बादशाह और महाराणा के बीच सन्धि की चर्चा चल रही थी। विद्रोही अकबर के मेवाड़ की तरफ़ जाने का समाचार सुनकर शाहजादे आज़म ने महाराणा को हि० स० १०६२ ता० २४ रबीउलअव्वल (वि० सं० १७३८ वैशाख वदि १० = ई० स० १६८१ ता० ३ अप्रैल) को एक निशान भेजकर लिखा कि शाहजादा अकबर देसूरी की तरफ़ जा रहा

के पहाड़ी प्रदेश में होता हुआ दक्षिण की ओर चला^१। मार्ग में प्रत्येक जगह शाही सैनिकों का कड़ा पहरा था, परन्तु वीर और चतुर दुर्गादास उनसे बचता हुआ बढ़ता ही गया। डूंगरपुर से वह अहमदनगर की तरफ बढ़ा, परन्तु जब उसे उस ओर सफलता नहीं मिली तब वह दक्षिण पूर्व की तरफ से बांसवाड़ा और दक्षिणी मालवा में होता हुआ अकबरपुर के पास नर्मदा को पार कर बुरहानपुर के निकट पहुंचा; लेकिन उधर भी शाही अफसरों का कड़ा पहरा था, अतएव वह वहां से पश्चिम की तरफ चला और खानदेश एवं बुगलाना होता हुआ रायगढ़ पहुंचा^२।

मेवाड़ के साथ के लम्बे युद्ध से बादशाह तंग आ गया था। उधर महाराणा जयसिंह भी सन्धि के लिए उत्सुक था। फलस्वरूप श्यामसिंह^३

है, उसे पकड़ लेना अथवा मार डालना। उस समय अकबर के साथ राठोड़ दुर्गादास, सोनिंग आदि ससैन्य थे। महाराणा ने उनसे कहला दिया कि शाहजादे को इधर न जाकर दक्षिण में पहुंचा दो, क्योंकि यहां सुलह की बात-चीत चल रही है (भाग २, पृ० ६५३)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दक्षिण की तरफ प्रस्थान करने से पूर्व दुर्गादास ने दस वर्ष का खर्चा देकर अकबर के ज्ञानाने को बाड़मेर भेज दिया और वहां उनकी रक्षा का समुचित प्रबन्ध करवा दिया (जि० २, पृ० ४५)।

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३६४ ७। “वीरविनोद” में लिखा है कि राठोड़ दुर्गादास अकबर को भोमट (मेवाड़), डूंगरपुर और राजपीपला के मार्ग से दक्षिण में ले गया, जहां शंभा ने उसे आश्रय दिया (भाग २, पृ० ६५३)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि शंभा ने जब अकबर को आश्रय देने के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की तो उनमें से अनेक ने इसके विरुद्ध राय दी, पर एक ब्राह्मण ने यही कहा कि शाहजादा और राठोड़ एक होकर आये हैं अतएव शरण देना ही उचित है, चाहे इसमें भगड़े की ही आशङ्का क्यों न हो। इसके बाद पौष वदि २ को रायगढ़ से १७ कोस दूर पातसाहपुर में शंभाजी का शाहजादे एवं दुर्गादास से मिलना हुआ (जि० २, पृ० ४५-६)।

(३) सर जदुनाथ सरकार ने श्यामसिंह को बीकानेर का बतलाया है (हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३७०), जो ठीक नहीं है; क्योंकि राजप्रशस्ति महाराजा

अजीतसिंह का जाकर
सिरोही राज्य में रहना

के मध्यस्थ हो जाने से दोनों शक्तियों में सुलह हो गई। सुलह की शर्तों में एक शर्त यह भी रखी गई कि महाराणा राठोड़ों को सहायता न दे^१।

अनुमान होता है कि इसी समय के आस-पास सोनिंग आदि राठोड़ अजीतसिंह को उदयपुर से हटाकर सिरोही इलाक़े में ले गये, जहां वह कुछ वर्षों तक कालंद्री गांव में गुप्त रूप से पुष्करणा ब्राह्मण जयदेव के यहां रहा^२।

वह समय ऐसा था जब मुगलों का मारवाड़ में पूरा आतङ्क स्थापित हो सकता था; परन्तु शाहजादे अकबर के मरहटों से जा मिलने से औरंग-ज़ेब के लिए एक नया खतरा पैदा हो गया, जिससे राठोड़ों का मुगल सेना को तंग करना उसे अपनी अधिकांश शक्ति दक्षिण में मरहटों के विरुद्ध लगा देनी पड़ी। इसका परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ पर मुगलों का दबाव ढीला पड़ गया और राठोड़ों ने जहां-तहां

के २३ वे सर्ग में, जो सन्धि के समय के आस-पास समाप्त हुआ था, श्यामसिंह को राणा कर्णसिंह के द्वितीय पुत्र गरीबदास का बेटा लिखा है,

(राणा श्रीकर्णसिंहस्य द्वितीयस्तनयो बली ॥ ३१ ॥

गरीबदासस्तत्पुत्रः श्यामसिंह इहागतः । कृत्वा मिलनवार्ता...॥३२॥), जो अधिक विश्वसनीय है।

(१) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५८६-८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में जोधपुर राज्य के खालसा होने पर बादशाह के भय से खींची मुकुन्ददास का बालक अजीतसिंह को सीधे सिरोही के कालंद्री गांव में ले जाना और वहां उसे गुप्त रूप से कई वर्षों तक रखना लिखा है (जि० २, पृ० ३२), पर यह कथन असंगत है। जैसा कि ऊपर (पृ० ४८३ टि० २ में) सप्रमाण बतलाया गया है, मुकुन्ददास खींची नहीं वरन् दुर्गादास और सोनिंग आदि राठोड़ बालक अजीतसिंह को लेकर सर्वप्रथम उदयपुर महाराणा राजसिंह के पास गये थे, जहां उसको बारह गांवों सहित केलवा की जागीर मिली थी। पीछे से महाराणा जयसिंह के समय वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) में बादशाह के साथ सन्धि हो जाने के कारण ही अजीतसिंह का सिरोही इलाक़े के कालंद्री गांव में जाकर रहना संगत जान पड़ता है।

उपद्रव करना आरम्भ कर दिया'। जिस समय "बादशाह महाराणा से खुलह कर दक्षिण जाने की तैयारी में था, उसी समय खबर आई कि तहव्वरखां के मारे जाने के पीछे उसके ताल्लुके का बादशाही सेवक मेड़-तिया मोहकमसिंह कल्याणदासोत (तोसीण का स्वामी) घर बैठ रहा है। बादशाह ने जब उसको दंड देने का प्रयत्न किया तो वह राठोड़ सोनिंग से जा मिला। इसके बाद राठोड़ों ने बगड़ी को लूटा तथा सोजत के हाकिम सरदारखां से लड़ाई की, जिसपर वह भाग गया। इस लड़ाई में जोधपुर के चांपावत कान गिरधरदासोत, चांपावत हरनाथ गिरधरदासोत (माल-गढ़वालों का पूर्वज), चांपावत चतुरा हरिदासोत, सोहड़ विशना बाघावत, सींधल दला गोदावत, राठोड़ बीजो चतुरावत आदि कई सरदार काम आये। मुगलों ने यह देख कर जोधपुर के प्रबंध में कई अन्तर कर दिये। बादशाह ने वि० सं० १७३८ प्रथम आश्विन सुदि ६ (ई० स० १६८१ ता० ८ सितम्बर) को दक्षिण की तरफ प्रस्थान किया^१। इसके बाद असदखां ने राजा भीमसिंह (महाराणा राजसिंह का छोटा पुत्र) की मारकत मेल की बात-चीत कराई। तब राठोड़ सोनिंग आदि कई सरदार अजमेर की तरफ चले, पर मार्ग में पूजलोत गांव में सोनिंग की अचानक मृत्यु हो गई^२,

(१) ख्यातों आदि से पाया जाता है कि मुगलों का मारवाड़ पर अधिकार होने पर वहां के कुछ सरदारों ने अपनी जानीरें बचाने के लिए उनकी अधीनता स्वीकार कर ली थी; परन्तु अधिकांश सरदार महाराजा के ही पक्ष में रहे और उन्होंने कई अवसरों पर मुसलमानों से मिले हुए सरदारों पर हमले भी किये।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" (भाग २, पृ० ११२-३) से भी पाया जाता है कि इसी तिथि को बादशाह ने अजमेर से बुरहानपुर के लिए कूच किया।

(३) इस सम्बन्ध में मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि ता० १८ जूलाइ हि० स० १०६२ (वि० सं० १७३८ मार्गशीर्ष वदि ४ = ई० स० १६८१ ता० १६ नवम्बर) को एतकादखां ने बहुतसी फौज के साथ राठोड़ों पर, जो मेड़ता के पास तीन हज़ार सवार के करीब जमा हो गये थे, धावा किया। घमासान लड़ाई हुई, जिसमें सोनिंग, उसका भाई अजबसिंह, सांवलदास, बिहारीदास और गोकुलदास आदि काम आये और विजय मुसलमानों की हुई (भाग २, पृ० ११४)।

जिससे मेल की बात-चीत बीच में ही रह गई और राठोड़ों ने फिर लूट-मार शुरू कर दी। उन्होंने डीडवाणें से पेशकशी ले मकराणें को लूटा, फिर कार्तिक वदि १४ (ता० ३० अक्टोबर) को मेड़ता को लूटा और वे दो दिन इंदावड़ में रहे। इसपर बादशाही फ़ौज के साथ असदखां के पुत्र इतमादखां ने उनपर चढ़ाई की। कार्तिक सुदि १ (ता० १ नवम्बर) को गांव डीगराणा में लड़ाई होने पर उसमें राठोड़ अजबसिंह विठ्ठलदासोत, राठोड़ सखलसिंह खानावत, रामसिंह, करण बलुओत, नाहरखां हरीसिंह महेशदासोत, मेड़तिया राठोड़ गोपीनाथ, राठोड़ सादूल, राठोड़ अर्जुन आदि जोधपुर की तरफ़ के सरदार मारे गये। उन्हीं दिनों राठोड़ उदयसिंह लखधीर विठ्ठलदासोत चांपावत, राठोड़ खींवकरण आसकरणोत और राठोड़ मोहकमसिंह कल्याणमलोत ने पुर और मांडल के शाही थानों को लूटा तथा दक्षिण जाते हुए क्रासिमखां से भगड़ा कर शाही नक़ारा और निशान आदि छीन लिये। इस प्रकार लूट-मार कर राठोड़ पहाड़ों में भाग जाते, जिससे शाही सेना पीछा करके भी उनका पता न लगा सकती। वि० सं० १७३६ (ई० सं० १६८२) में ऊदावत जगराम- (नींबाजवालों का पूर्वज), जो पहले मेवाड़ का और पीछे से बादशाह का सेवक रहा था, राठोड़ों से मिल गया और उसने जैतारण में लूट-मारकर और भी कितने ही स्थानों का बिगाड़ किया। इसी तरह चांपावत बीजा घोरैह ने भी अलग-अलग भगड़े किये। जोधा उदयसिंह भाद्राजूण से चढ़कर मुल्क में इधर-उधर फ़साद करने लगा। पीछे वह और

कविराजा बांकीदास ने पूजलोत गांव में ही वि० सं० १७१८ आश्विन सुदि ७ (ई० सं० १६८१ ता० ६ सितम्बर) को सोनिंग की अकस्मात मृत्यु होना लिखा है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १६८३)।

(१) “औरंगज़ेबनामे” में भी राठोड़ों का मांडल और पुर पर धावाकर वहां से बहुतसा माल-असबाब लूटना लिखा है। इसकी सूचना बादशाह को हि० सं० १०६३ ता० १० मुहर्रम (वि० सं० १७३८ माघ सुदि १२ = ई० सं० १६८२ ता० १० जव-वरी) को मिली (भाग २, पृ० ११६)।

खींचकरण दुर्गादास के भाई के साथ होकर लूटने के लिए चले, पर उनके पीछे शेर मोहम्मद जा पहुँचा, जिसके साथ युद्धकर कई राठोड़ सरदार काम आये। राठोड़ मुकन्ददास, सादूल तथा रत्नसिंह मालदेवोत जोधा भगड़ा आरंभ होने के समय से ही भाद्राजुण में रहते थे। वि० सं० १७४० (ई० स० १६८३) में उनके ऊपर जोधपुर से इनायतख़ां ने अपने पुत्र को सेना देकर भेजा। मुकन्ददास ने उससे लड़कर ऊंट आदि छीन लिये। दूसरी बार फिर लड़ाई होने पर मुसलमान अफ़सरों ने पेशकशी देना ठहराकर शान्ति की। उसी वर्ष मेड़ते के पास मोहकमसिंह मेड़तिया ने, जैतारण के पास ऊदावत जगराम ने और सारण की तरफ़ उदयसिंह ने भगड़े किये। इसपर बादशाही अफ़सरों ने मोहकमसिंह को तोसीणे और जोधा उदय-भाण मुकन्ददासोत को भाद्राजुण की चौरासी में बैठाया (अधिकार दिया)। इसी बीच खींचकरण आसकरणोत, तेजकरण दुर्गादासोत आदि ने साथ एकत्र कर फलोधी की तरफ़ लूट-मार की और चांपावत सावंतसिंह तथा भाटी राम वगैरह ने गांव बंवाल आदि को लूटा। मेड़तिया सादूल मुसल-मानों से मिल गया था, जिससे ऊदावत जगराम ने अपने साथियों सहित चढ़कर उसे मार डाला। उधर अन्य सरदारों ने जोधपुर और सोजत के बीच बहुत से गांवों को लूटा। आवणादि वि० सं० १७४० (चैत्रादि १७४१ = ई० स० १६८४) के वैशाख मास में सोजत के थाने पर बहलोलख़ां से लड़ाई होने पर राठोड़ सावंतसिंह जोगीदास बिट्टलदासोत, राठोड़ हिम्मतसिंह शक्तसिंह सुंदरदासोत मेड़तिया, राठोड़ बिहारीदास मोहणदासोत ऊदावत आदि मारे गये। इस प्रकार राठोड़ जगह-जगह दंगा फ़साद करते रहे, पर मुसलमानों से उनका कोई प्रबन्ध न हो सका, क्योंकि वे (राठोड़) इधर-उधर लूटकर बहुधा पहाड़ियों में छिप जाते थे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ४६-४८।

डॉ० ने भी करणीदान के ग्रन्थ “सूरजप्रकाश” के आधार पर लगभग ऐसा ही वर्णन अपने ग्रन्थ “राजस्थान” में दिया है। उक्त पुस्तक से पाया जाता है कि राठोड़ों

उधर दक्षिण में शाहज़ादे अकबर के साथ रहकर दुर्गादास ने पीछा करनेवाले शाही अफ़सरों के साथ लड़कर बड़ी धीरता दिखलाई^१। वि०

दुर्गादास का दक्षिण से
लौटना

सं० १७४३ (ई० सं० १६८६) के श्रावण मास में
उसके पास मारवाड़ से खींची मुकन्ददास का पत्र
पहुँचा, जिसमें लिखा था कि राठोड़ उदयसिंह

लखधीरोत आदि सरदार बालक महाराजा के दर्शन करने के लिए
उत्सुक हो रहे हैं; आप आवें तो उसका प्रबन्ध किया जाय। अब अधिक
समय तक उसे छिपाकर रखना कठिन है। यह पत्र पाकर दुर्गादास ने
शाहज़ादे से निवेदन किया कि जो कुछ मुझ से बना मैंने अब तक आपकी
सेवा की, अब आप मारवाड़ चले चलें। मारवाड़ जाने में शाहज़ादे
को बादशाह की तरफ़ से खटका था, जिससे उसने पेसा करना स्वीकार

की इन लड़ाइयों में जैसलमेर के भाटियों ने भी काफ़ी मदद पहुँचाई (राजस्थान;
जि० २, पृ० १००१-६)। सरकार ने केवल इतना लिखा है कि दक्षिण में नहीं लड़ाई
छिड़ने अथवा कहीं पराजय होने पर जब मारवाड़ में रक्खी हुई मुग़ल सेना उधर भेजी
जाती तो देशभक्त राजपूत अपने-अपने छिपने के स्थानों से निकलकर बची हुई कमज़ोर
मुग़ल सेना को बड़ा नुक़सान पहुँचाते। दक्षिण से अवकाश मिलने पर पुनः राजस्थान
में सेना भेजी गई और मुग़लों ने अपने खोये हुए ठिकानों पर फिर अधिकार कर लिया
(हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३७१-२)।

इससे इतना तो स्पष्ट है कि बादशाह का ध्यान दक्षिण की तरफ़ आकर्षित होते
ही, मारवाड़ में मुग़लों की शक्ति कम हो गई और वहाँ के राठोड़ बलवान हो गये थे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि औरंगज़ेब ने दक्षिण में पहुँच
कर मुर्तेबख़ां (?) और राव इन्द्रसिंह रामसिंहोत की अध्यक्षता में पाँच हज़ार सवार
अकबर पर भेजे। राठोड़ों और मरहटों ने वि० सं० १७३१ में कई जगह उनसे लड़ाई की
और कई सौ आदमियों को मारा। संवत् १७४० में मीर ख़लील और उसकी मां को,
जो अकबर की दाई थी, अकबर के पास सुलह के लिए भेजा गया। अकबर को बादशाह
का भरोसा नहीं था, इसलिये उसने कहलाया कि यदि गुजरात का सूबा और मेरा
माल-असबाब मुझे दिया जाय तो मैं अहमदाबाद चला जाऊँ, पर बादशाह ने यह बात
मंज़ूर नहीं की (जि० २, पृ० ५०)।

न किया और दुर्गादास को अपने देश जाने की अनुमति दी। इस अवसर पर उसने उस (दुर्गादास) से मारवाड़ में छोड़े हुए अपने परिवार की देख-रेख करने के लिए भी कहा^१। तदनन्तर ई० सं० १६८७ के फ़रवरी (वि० सं० १७४३ फाल्गुन) मास में जहाज़ पर सवार होकर शाहज़ादा फ़ारस के लिये रवाना हो गया^२। इस प्रकार उसको सकुशल विदाकर दुर्गादास मारवाड़ लौटा^३।

जैसा कि ऊपर लिखा गया है वि० सं० १७३८ (ई० सं० १६८१) के आस-पास अजीतासिंह के अनुगामी उसे मेवाड़ से हटाकर सिरोही इलाक़े के कालिंदी गांव में ले गये थे। लम्बी राठोड़ सरदारों के समक्ष बालक महाराजा का प्रकट किया जाना अवधि तक महाराजा को न देख सकने के कारण कितने ही राठोड़ सरदार उसे देखने के लिए उत्सुक हो रहे थे। मालपुरा की ओर लूटमार करके राठोड़ उदयसिंह, मुकुन्ददास, तेजसिंह (चां रावत), ऊदावत जगरम, उदयभाण आदि जब गांव मोकलसर में एकत्र हुए तो उन्होंने यह सोचा कि बालक महाराजा की अवस्था आठ बरस की हो गई है, अब उसे प्रकट करना चाहिये। यह निश्चय होने पर उदयसिंह सिरोही (इलाक़े) जाकर मुकुन्ददास खींची से मिला और उसने उससे कहा कि तमाम राठोड़ एकत्रित हुए हैं,

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५२।

(२) मार्ग में मौसिम की खराबी के कारण अकबर का जहाज़ मस्कत के बन्दरगाह में जा पहुँचा। वहाँ अकबर कई मास तक पड़ा रहा। फिर उसने ईरान के बादशाह सुलेमानशाह से पत्र व्यवहार किया, जिसने उसे प्रतिष्ठा के साथ अपने यहाँ बुला लिया।

(३) सर जदुनाथ सरकार; शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; पृ० ३०७। मिर्ज़ा मुहम्मद हसन (अलीमुहम्मदख़ां बहादुर); मिरात-इ-अहमदी; जि० १, पृ० ३१७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में दुर्गादास के मारवाड़ की तरफ़ प्रस्थान करने के कई रोज़ बाद शाहज़ादे का ईरान जाना लिखा है (जि० २, पृ० ५२), पर यह ठीक नहीं है।

महाराजा को प्रकट करो। पहले तो मुकुन्ददास राज़ी न हुआ, परन्तु बाद में यह सोचकर कि राठोड़ सरदारों को नाराज़ करना ठीक नहीं, उसने महाराजा से जाकर निवेदन किया। श्रावणादि वि० सं० १७४३ (चैत्रादि १७४४) वैशाख वदि ५ (ई० सं० १६८७ ता० २३ मार्च) को सिरौही के पालड़ी गांव में अजीतसिंह ने प्रकट होकर नागणेची की पूजा की। अनन्तर दरबार हुआ, जिसमें उपस्थित सरदारों ने नज़रें आदि महाराजा के सम्मुख पेश कीं। इस अवसर पर दुर्जनसिंह हाड़ा भी उपस्थित था^१।

तदनन्तर बालक महाराजा को लेकर राठोड़ सरदार आऊवा गये जहां के सरदार ने घोड़े आदि देकर उसका सम्मान किया। फिर रायपुर, बीलाड़ा और धलंदा के सरदारों की नज़रें स्वीकार करती हुआ वह आसोप गया, जहां कृपावतों के मुखिया ने उसका स्वागत किया। वहां से वह भाटियों की जागीर लवेरा, मेड़तियों की रीयां और करमसोतों की जीवसर में गया। क्रमशः उसका साथ बढ़ता गया। कालू पहुंचने पर पाबू राव धांधल भी अपने सैन्य-सहित उसका अनुगामी हो गया^३।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इतना उल्लेख नहीं है। उससे पाया जाता है कि हाड़ा दुर्जनसिंह ने महाराजा के प्रकट होने के पीछे सोजत की तरफ़ देश का बिगाड़ किया। इनायतखां ने जब यह सुना तो उसने सोजत जाकर बात-चीत की और सिवाणा देने के साथ ही अन्य स्थानों से चौथ^४

(१) बांकीदास ने भी यही तिथि दी है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १६८७)। टॉड ने चैत्र सुदि १२ दी है (राजस्थान; जि० २, पृ० १००७), जो ठीक नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५२-३।

(३) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १००८।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव औरंगज़ेब" में दुर्गादास के इच्छिण से लौटने पर मुसलमानों का राठोड़ों की लड़ाइयों से तंग आकर, उन्हें चौथ देना लिखा है (जि० ३, पृ० ३७२)।

उगाहने का अधिकार महाराजा को दिया। तब महाराजा सिवाणा में दाखिल हो गया^१।

राठोड़ दुर्गादास दक्षिण से खाना होकर रतलाम पहुंचा, जहां से उसने जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत को भी साथ ले लिया। बादशाही प्रदेश में लूट-मार करते हुए आगे बढ़-कर उन्होंने दुर्गादास का अजीतसिंह की सेवा में उपस्थित होना मालपुरे^२ को लूटा। वहां उस समय सैयद कुतुब था, जिसने सामने आकर लड़ाई की। उसमें राव अनूपसिंह ईश्वरसिंहोत मारा गया और कितने ही राठोड़ घायल हुए। वि० सं० १७४४ श्रावण सुदि १० (ई० स० १६८७ ता० ८ अगस्त) को दुर्गादास महेवा के गांव भीवरलाई में अपने ठिकाने में पहुंचा। फिर बाहड़मेर में शाहजादे सुलतान से मिलने के अनन्तर उसने महाराजा अजीतसिंह के पास इस आशय की अर्ज़ों भिजवाई कि मैंने दक्षिण में ६ वर्ष तक मार-काट की और वहां से लौटते हुए मार्ग में रतलाम से जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत के साथ मालपुरा और केकड़ी बगैरह को लूटकर पेशकशी ली। अब मैं महाराजा से भेंट करने का इच्छुक हूं। उन्हीं दिनों महाराजा तलवाड़ा गांव में मल्लीनाथ का दर्शन करने के लिए गया। वहां से कार्तिक वदि ११ (ता० २१ अक्टोबर) को वह भीवरलाई पहुंचा, जहां दुर्गादास अपने साथियों-सहित उसकी सेवा में उपस्थित हुआ^३। उस (दुर्गादास) ने महाराजा से निवेदन किया कि आप कुछ दिनों पीपलौद के पहाड़ों में ही रहें, मैं तब तक देश में लूट-मार मचाता हूं^४।

(१) जिल्द २, पृ० ५३।

(२) सर जदुनाथ सरकार-कृत “हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब” में राठोड़ों का मालपुरे के अतिरिक्त पुर-मांडल, अजमेर तथा मेवात पर आक्रमण करना लिखा है (जि० ५, पृ० २७२, ई० स० १६२४ का सरकारण)।

(३) कर्नल टॉड दुर्गादास का वि० स० १७४४ भाद्रपद (वदि) १० को पोकरण में अजीतसिंह के शामिल होना लिखता है राजस्थान; जि० २, पृ० १००८।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५३-४।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुँच जाने से राठोड़ों का उत्साह बहुत बढ़ गया और वे जगह-जगह मारवाड़ में रक्खी हुई मुसलमान सेना को तंग करने लगे। धीरे-धीरे उनका मुसलमानों पर पूरा आंतक स्थापित हो गया। जब महाराजा अजीतसिंह के प्रकट होने और मुसलमान अफ़सरों के राठोड़ों को चौथ देने की खबर बादशाह की मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और उसने जोधपुर के फ़ौजदार इनायतख़ां को महाराजा को पकड़ने के लिए लिखा, पर इसी बीच उस (इनायतख़ां) का देहांत हो गया^१।

इनायतख़ां के मरने की खबर बादशाह के पास पहुँचने पर उसने मारवाड़ का प्रबंध अहमदाबाद की सूबेदारी में शामिल कर दिया। इस अवसर पर कारतलबख़ां की, जो अहमदाबाद का सूबेदार था, शुजातख़ां का ख़िताब, १००० ज़ात ४००० सवार का मनसब, नज़ारा, निशान और एक करोड़ दाम दिये गये। उस समय जोधपुर का प्रबंध करने के लिए उससे योग्य व्यक्ति दूसरा न था। ऐसा कहते हैं कि उस समय राठोड़ों के भय से कोई मुसलमान अफ़सर जोधपुर की फ़ौज़दारी स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं होता था। शुजातख़ां ने एक लाख रुपयों की मांग की, जो उसे शाही खज़ाने से दिये गये। अनन्तर उसने जोधपुर जाकर उधर का प्रबंध इस प्रकार किया कि वहाँ के कुछ सरदारों की जागीरों के, जो उनके अधिकार में पुश्त दर पुश्त से चली आती थीं, उसने पट्टे कर दिये और कुछ सरदारों के मनसबों के एवज़ उनकी तनख़्वाहें नियत कर दीं। फिर वह क़ासिमबेग मुहम्मद अमीनख़ानी को वहाँ का नायब नियत कर अहमदाबाद लौट गया। राठोड़ों के उपद्रव से पालनपुर और सांचोर के फ़ौजदार कमालख़ां जालोरी को सख़्त ताकीद की गई कि वह पालनपुर से जालोर जाकर उधर का ठीक प्रबंध रक्खे और

(१) जोधपुर राज्य की ख़्यात; जि० २, पृ० ५४। “मिरात-इ-अहमदी” में हि० सं० १०६६ (वि० सं० १७४४ = ई० सं० १६८७) में इनायतख़ां की मृत्यु लिखी है।

क्लासिमवेग को यह हुक्म हुआ कि तैयार फ़ौज के साथ मेड़ता जावे। साथ ही उसे यह भी आज्ञा दी गई कि किराये के जानवरों और गाड़ीवालों से ऐसे मुचलके लिये जावें कि वे व्यापार का माल उदयपुर के मार्ग से अहमदाबाद पहुंचावें^१।

उन्हीं दिनों राठोड़ों ने एकत्र होकर जोधपुर के आस-पास हमला किया। पीछे से मुसलमान उनपर चढ़े। दोनों दलों में लड़ाई होने पर भंडारी मयाचंद मारा गया और सिवाणा पुनः मुसलमानों के हाथ में चला गया। इस घटना के बाद ही अजीतसिंह छप्पन (मेवाड़) के पहाड़ों में जा रहा^२।

अजीतसिंह का छप्पन के पहाड़ों में जाना

वहां महाराणा जयसिंह ने उसे आश्रय दिया।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि राठोड़ों के आतंक के कारण जोधपुर में रखे हुए मुसलमान अफ़सरों ने उन्हें चौथ देना ठहरा लिया था,

जगह-जगह मुसलमानों और राठोड़ों में मुठभेड़

पर उसकी वसूली में मुसलमानों और राठोड़ों में जगह-जगह मुठभेड़ हो जाती थी। श्रावणादि वि० सं० १७४४ (चैत्रादि १७४५) वैशाख वदि ६

(ई० स० १६८८ ता० ११ अप्रैल) को राठोड़ मदनसिंह मनरूपोत आदि का रामसर में मुसलमानों से झगड़ा हुआ, जिसमें वह तथा उसके साथ के कई व्यक्ति घायल हुए। उसी वर्ष फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १६८६ ता० १७ फ़रवरी) को राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत और राठोड़ राजसिंह अखैराजोत जालोर से पेशकशी लेने के लिए गये। गांव सेना से कूच करते ही उनका कमालखां की फ़ौज से सामना हुआ, जिसमें सीसो-

(१) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मीरात-इ-अहमदी; जि० १, पृ० ३२८-३८।

जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १४) तथा सर जदुनाथ सरकार कृत "हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब" (जि० १, पृ० २७३) में भी इनायतखां की मृत्यु होने पर अहमदाबाद के सूबेदार कारतलबखां (शुजातखां) का ही जोधपुर का भी फ़ौजदार बनाया जाना लिखा है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४।

दिया राजसिंह सबलसिंहोत और राठोड़ हरनाथसिंह अमरावत जैतमालोत काम आये । उसी वर्ष क्रासिमबेग ने जोधपुर से सोजत के गुड़े पर चढ़ाई कर जैतावत नाथा नरायणदासोत को पकड़ लिया और गांव को लूटा । इसके दूसरे वर्ष (वि० सं० १७४६ में) जब मेड़ता का सूबेदार मुहम्मद-अली मेड़ता से दिल्ली जा रहा था, उस समय मेड़तिया गोकुलदास (जावला का) और जोधा हरनाथसिंह चन्द्रभाणोत (देधाणा का) ने उसका पीछाकर उसे मार डाला और उसकी स्त्रियों को पकड़ लिया^१ । मेड़ता की चौथ के लिए राठोड़ मुकुन्ददास सुजानसिंहोत चांपावत और राठोड़ मानसिंह दलपतोत मेड़तिया नियत किये गये थे । वि० सं० १७४७ माघ सुदि १३ (ई० सं० १६९१ ता० १ जनवरी) को उनका कायमखानियों से झगड़ा हुआ, जिसमें कई राठोड़ मारे गये और कितने ही घायल हुए^२ ।

वि० सं० १७४७ (ई० सं० १६९०) में अजमेर का हाकिम सफ़ीखां था । दुर्गादास ने उसपर आक्रमण करने का निश्चय किया । इसपर उक्त हाकिम ने घाटी में शरण ली, जहां आक्रमण कर अजमेर के सूबेदार से लड़ाई दुर्गादास ने उसे अजमेर की तरफ़ भागने पर बाध्य किया । बादशाह के पास से इस सम्बन्ध में उपालम्भपूर्ण पत्र पाने पर सफ़ीखां ने दूसरा मार्ग पकड़ा । उसने अजीतसिंह के पास इस आशय का पत्र लिखा—“मेरे पास आपकी जागीर आपको सौंपने की शाही सनद आ गई है, आप उसे लेने के लिए मेरे पास आवें ।” इसपर अजीतसिंह

(१) डॉड-कृत “राजस्थान” में भी इस घटना का उल्लेख है, परन्तु उसमें इनायतखां के पुत्र का जोधपुर से दिल्ली जाना और रैनवाल नामक स्थान में जोधा हरनाथ-द्वारा उसकी स्त्रियां और सामान छीना जाना लिखा है । वहां से खान (इनायतखां का पुत्र) भागकर कछवाहों की शरण में गया । उसको छुड़ाने के लिए अजमेर से शुजाबेग गया, पर उसे मुकुन्ददास चांपावत ने परास्त कर उसका सामान आदि लूट लिया (जि० २, पृ० १००८-९) । संभव है कि ऊपर आया हुआ मुहम्मदअली इनायतखां का ही पुत्र रहा हो ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५५-७ ।

ने बीस हजार राठोड़ों के साथ अजमेर की तरफ प्रस्थान किया और मुकन्ददास चांपावत को यह जानने के लिए आगे रवाना कर दिया कि कहीं उक्त बात में छल तो नहीं है। इससे ठीक समय पर छल का पता चल गया और इसकी सूचना अजीतसिंह को मिल गई, पर वह पीछे न लौटा। उसके नगर में पहुंचने पर बाध्य होकर सफीखां को उसके सम्मुख उपस्थित होना और रत्न तथा घोड़े आदि भेंट में देने पड़े।

आवणादि वि० सं० १७४८ (चैत्रादि १७४६) आषाढ सुदि १४ (ई० सं० १६६२ ता० १७ जून) को बावल परगने (मेवाड़ राज्य) के भड़मिया गांव में रहते समय राठोड़ दुर्गादास पर अजमेर के सूबेदार ने चढ़ाई की, जिसमें राठोड़ों की तरफ के मनोहरपुर का स्वामी गुमानीचंद देवीचंद तिलोकचंदोत, भाटी दौलतखां रघुनाथोत आदि काम आये और कितने ही सरदार घायल हुए।

अजमेर के सूबेदार की
दुर्गादास पर चढ़ाई

वि० सं० १७४६ (ई० सं० १६६२) में जोधपुर से क़ासिमबेग के बेटे अलाकुली ने सुजानसिंह के साथ चढ़कर सेतरावा आदि गांवों का बिगाड़ किया और फिर वहाँ जोधपुर लौट गया।

अलाकुली का जोधपुर के
गांवों में बिगाड़ करना

शाहज़ादे अकबर ने वि० सं० १७३८ (ई० सं० १६८१) में दक्षिण की तरफ जाने से पूर्व अपने पुत्र सुलतान बुलन्दशहर और पुत्री सफ़ीयतुन्निसा बेगम को मारवाड़ में ही छोड़ दिया था, जहां दुर्गादास ने उनकी देख-रेख और निवास आदि का समुचित प्रबंध कर दिया था। वि० सं० १७४६ (ई० सं०

अकबर की पुत्री को सौंपने
के विषय में सुगलों की
दुर्गादास से बातचीत

(१) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १००६। सरकार-कृत “हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब” में केवल इतना लिखा मिलता है कि ई० सं० १६६० (वि० सं० १७४७) में दुर्गादास ने सफ़ीखां को, जो मारवाड़ की सीमा पर आ गया था, परास्तकर अजमेर की तरफ़ भगा दिया (जि० ६, पृ० २७८)।

(२) जोधपुर राज्य की कथात; जि० २, पृ० ५६।

(३) वही; जि० २, पृ० १०।

१६६२) में सक्रीखां ने राठोड़ों से मेल-जोल का व्यवहार स्थापित कर दुर्गादास से अकबर की पुत्री को बादशाह को सौंप देने के विषय में बात-चीत चलाई; परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला, क्योंकि बादशाह (औरंगज़ेब) उस समय अजीतसिंह का हक़ आदि मानने के लिए तैयार न था^१।

उपर्युक्त घटना का फल यह हुआ कि राठोड़ों और मुग़लों के साथ की लड़ाई, जो कुछ शिथिल हो गई थी, फिर बढ़ गई। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इसके एक साल पूर्व मुग़लों के साथ राठोड़ों की पुनः लड़ाइयाँ अजीतसिंह और दुर्गादास के बीच कुछ मनो-मालिन्य हो गया था। मुकन्ददास और तेजसिंह ने जाकर दुर्गादास को समझाया, जिससे वह महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर उन्होंने जोधपुर, जालोर, सिवकोटड़ा और पोहकरण आदि स्थानों से पेशकशी वसूल की। जोधपुर से क़ासिमवेग और राठोड़ भगवानदास ने उनका पीछा किया, पर वे उनका कुछ बिगाड़ न कर सके और उन्हें वापस लौट जाना पड़ा^३।

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८०।

टॉड के कथनानुसार यह बात-चीत नारायणदास कुलम्बी की मारफ़त हुई थी (राजस्थान; जि० २, पृ० १००६-१०)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी नारायणदास कुलम्बी द्वारा यह बात-चीत होना लिखा है, पर उसमें उक्त घटना का समय वि० सं० १७५१ दिया है (जि० २, पृ० ६१), जो ठीक नहीं है।

(२) मनोमालिन्य का कारण ख्यात में इस प्रकार दिया है—

दुर्गादास के गांव भीमरलाई में रहते समय उसके पास अजीतसिंह ने जाकर उसका सम्मान आदि किया और कहा कि तुम्हारी राय के विपरीत अजमेर जाने के कारण मैंने सिवाणा भी गंवा दिया। दुर्गादास ने उत्तर दिया कि अब आपका विश्वास दो महीने में होगा, उस समय मैं उपस्थित हो जाऊंगा। इसपर महाराजा अग्रसन्न होकर कुंडल चला गया (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६०-१)।

(३) जि० २, पृ० ६१।

ई० स० १६६३ (वि० सं० १७५०) में दुर्गादास के परामर्शानुसार अजीतसिंह ने भीलाड़ा (?) नामक स्थान में रहना स्थिर किया। जहाँ रहते समय उसने कई बखेड़े किये, लेकिन इसी बीच अजीतसिंह का पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना शुजातखाँ के मारवाड़ में पहुँच जाने; जोधपुर, जालोर और सिवाण के फौजदारों के एकत्र होकर आक्रमण करने एवं आखा बल्ला के मुगल-सेना-द्वारा परास्त किये जाने पर अजीतसिंह को भागकर पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना पड़ा^१ ।

उसी वर्ष एक सांड की हत्या किये जाने के कारण मोकलसर में मुगलों और राठोड़ों में मुठभेड़ हो गई, जिसमें चांपावत मुकुन्ददास ने चाँक के हाकिम को उसके समस्त अनुयायियों-सहित मारवाड़ में मुगल शक्ति का कैद कर लिया^२ । टॉड लिखता है —“वि० सं० १७५१ (ई० स० १६६४) में राठोड़ों और मुगलों के निरंतर संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ में मुगल-शक्ति बहुत क्षीण हो गई । स्थान-स्थान पर चौथ देने के साथ ही उनमें से बहुतों ने राठोड़ों के यहाँ नौकरी तक कर ली^३ ।”

उसी वर्ष क्रासिमखाँ और लश्करखाँ ने अजीतसिंह पर, जो उन दिनों विजयपुर (?बीजापुर, गोड़वाड़) में था, चढ़ाई की । इसपर दुर्गादास के पुत्र ने उनका सामना कर उन्हें हराया^४ ।

उसी वर्ष शाहजादे अकबर के पुत्र और पुत्री के सौंपे जाने के सम्बन्ध में पुनः बादशाह से बात-चीत शुरू हुई । इस बार यह कार्य शुजातखाँ को

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८० । टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१० । जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है ।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१० ।

(३) वही; जि० २, पृ० १०१० ।

(४) वही; जि० २, पृ० १०१० ।

अकबर के परिवार के लिए राठोड़ों से पुनः बात-चीत होना सौंपा गया^१। टॉड लिखता है—“अपनी पौत्री के लिए बादशाह की चिन्ता बढ़ती जाती थी, क्योंकि वह धीरे-धीरे युवावस्था को प्राप्त होने लगी थी। उस(बादशाह)ने जोधपुर के हाकिम शुजातखां को लिखा कि जिस प्रकार भी हो सके मेरे सम्मान की रक्षा करो^२।”

वि० सं० १७५३ (ई० सं० १६६६) के प्रारम्भ में उदयपुर के महाराणा जयसिंह और उसके पुत्र अमरसिंह के बीच दुबारा विरोध उत्पन्न हुआ^३। उन दिनों महाराजा अजीतसिंह कोटकोलर- (जसवन्तपुरा परगना) की तरफ था। वहां के शाही सेवक लश्करखां को परास्त कर वह उदयपुर गया^४, जहां महाराणाने अपने भाई गजसिंह की पुत्री की शादी उसके साथ आपाठ वदि ८^५ (ता० १२ जून) को की और ६ हाथी, १५० घोड़े आदि बहुतसा सामान उसे दहेज में दिया^६। इसके कुछ ही दिनों बाद उसका देवलिया-प्रतापगढ़ में विवाह हुआ^७। उदयपुर के राजघराने में अजीतसिंह

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८०।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१०।

(३) महाराणा और उसके पुत्र में पहले विरोध वि० सं० १७४८ में हुआ था और दोनों ओर से युद्ध की तैयारी भी हो गई थी। उस अवसर पर राठोड़ों की सेना-सहित जाकर दुर्गादास भी महाराणा के शरीक हुआ था (वीरविनोद; भाग २, पृ० ६७३-७)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६१। उससे पाया जाता है कि इस लड़ाई में मुसलमानी सेना के ८० आदमी काम आये और राठोड़ों की तरफ के राठोड़ सुन्दरदास अमरावत कृपावत के गोली लगी।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात में आपाठ वदि ७ दिया है।

(६) वीरविनोद; भाग २; पृ० ६८२।

(७) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१०। बांकीदास ने देवलिया की कुंवरी का नाम कल्याणकुंवरी दिया है, जो पृथ्वीसिंह (कुंवर) की पुत्री और रावत प्रताप-

का विवाह हो जाने से बादशाह का उसके जाली होने का शक जाता रहा और उसी समय से उस (अजीतसिंह) के भाग्य ने भी पल्टा खाय।

अकबर के पुत्र और पुत्री को राठोड़ों से प्राप्त करने का कार्य दूसरी बार शुजातखां को सौंपा गया था। उसने अपनी तरफ से ईश्वरदास को, जो पाटण का नागर ब्राह्मण था और जोधपुर के अमीन का कार्य करने के साथ ही राठोड़ों से मेल-जोल रखता था, राठोड़ों से इस विषय में बात-चीत करने के लिए नियुक्त किया। अकबर द्वारा उसके कम-उम्र पुत्र बुलन्द-अस्तर तथा पुत्री सफ़ीयतुन्निसा के मारवाड़ में छोड़े जाने पर दुर्गादास ने उन्हें गिरधर जोशी के संरक्षण में एक सुरक्षित स्थान में रखवा दिया था। उनकी शारीरिक और मानसिक देख-रेख के साथ-साथ सफ़ीयतुन्निसा को इस्लाम-धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। ईश्वरदास के कई बार दुर्गादास के पास इस सम्बन्ध में जाने पर दुर्गादास ने भी, जो लड़ाई भगड़े से ऊब गया था, अजीतसिंह के तथा अपने हितों की रक्षा की धरज से, बात-चीत करने में उत्सुकता प्रकट की। उसने इस आशय का एक पत्र ईश्वरदास के पास भेजा कि यदि शुजातखां बादशाह के पास से मेरी (दुर्गादास की) अर्ज़ी का जवाब आने तक मेरे घर आदि की रक्षा करने और मेरे जाने-आने की सुविधा का वचन दे तो मैं सफ़ीयतुन्निसा बेगम को शाही दरबार में भेज दूंगा। बादशाह ने तुरत उसकी शर्त को स्वीकार कर लिया। फिर उसके पास से उत्तर प्राप्त होने पर शुजातखां के आदेशानुसार ईश्वरदास ने दुर्गादास के पास जाकर इसकी सूचना दी और समझा-बुझाकर उसे

सिंह की पौत्री थी (ऐतिहासिक बातें; संख्या २५००)। यह विवाह रावत प्रतापसिंह की विद्यमानता में हुआ था।

(१) ईश्वरदास को इतिहास से बड़ा प्रेम था। उसने बादशाह औरंगज़ेब के समय का बहुत सा हाल अपनी फ़ारसी पुस्तक “फ़तूहात-इ-आलमगीरी” में दिया है। मारवाड़ के उस समय के इतिहास के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है और मुहम्मद मासूम के लिखे हुए “फ़तूहात-इ-आलमगीरी” से भिन्न है।

शाहज़ादी को वापस करने पर राज़ी किया। फिर खां के पास लौटकर उसने समुचित सेवकों और सवारी आदि का प्रबंध किया। अनन्तर वह दुर्गादास के पास जाकर शाहज़ादी को अपने साथ ले आया। मार्ग-प्रबंध समुचित रूप से करने से प्रसन्न हो कर शाहज़ादीने ईश्वरदास को ही शाही दरबार तक चलने की आज्ञा दी। वहाँ पहुँचने पर बादशाह ने शाहज़ादी को इस्लाम-धर्म की शिक्षा देने के लिए एक शिक्षिका नियुक्त करने की इच्छा प्रकट की। इसपर शाहज़ादी ने उत्तर दिया कि दुर्गादास ने हर बात का ध्यान रक्खा है और मेरी मज़हबी शिक्षा के लिए अजमेर से एक मुसलमान शिक्षिका बुलाकर रख दी थी, जिसके शिक्षण में रहकर मैंने कुरान का अध्ययन कर उसे कण्ठस्थ कर लिया है। यह जानकर बादशाह दुर्गादास से अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसने उसके पहले के अपराध क्षमा कर दिये। उसने अपनी पौत्री से पूछा कि दुर्गादास इस सेवा के बदले में किस पुरस्कार की इच्छा रखता है। शाहज़ादी के यह कहने पर कि इस विषय में ईश्वरदास ही अच्छी तरह जानता है, औरंगज़ेब ने उसको अपने पास बुलाया। अनन्तर दुर्गादास का मनसब निर्धारित किया गया और उसके लिए माहवार तनख्वाह भी नियत हुई। ईश्वरदास २०० सवारों का अफ़सर बनाया जाकर दुर्गादास और बुलन्दशहर को साथ लाने के लिए मारवाड़ में भेजा गया; पर इस कार्य की पूर्ति में लग-भग दो वर्ष लग गये।

दुर्गादास यह चाहता था कि जोधपुर का राज्य अजीतसिंह को दे दिया जाय, परन्तु बादशाह उसे मारवाड़ का कुछ भाग ही देना चाहता था। दुर्गादास ने केवल अपने लिए बड़े से बड़ा मनसब लेने से इनकार कर दिया। जब तक उसके पास बुलन्दशहर विद्यमान था तब तक उसे अपनी बात पूरी होने की पूर्ण आशा थी। फल यह हुआ कि यह बात-चीत इसी प्रकार चलती रही। उधर अजीतसिंह भी निराश्रय घूमने से तंग आ गया था और महागणा के भाई गजसिंह की पुत्री के साथ विवाह हो जाने के कारण उसकी यह अभिलाषा थी कि वह एक स्थान पर जम कर रहे। ऐसी परिस्थिति में दुर्गादास ने अपनी मांगों में कमी

कर दी। बादशाह ने अजीतसिंह को मनसब^१ प्रदान कर जालोर^२, सांचोर और सिवाणा^३ की जागीर दी, जहां का वह फौजदार भी नियत किया गया। इसके एवज में शाहजादा बुलन्दअक़्तर बादशाह को सौंप दिया गया^४।

ईश्वरदास इस संबंध में लिखता है—

“शाही दरबार से प्रस्थान कर मैं कई बार दुर्गादास के पास गया और गुजाअतख़ां की तरफ़ से विश्वासघात न होने का मैंने उसे आश्वासन दिया। शाही परवाने के मिलने और मिली हुई जागीर पर अधिकार करने के अनन्तर वह शाहजादे को साथ ले मेरे साथ पहले अहमदाबाद और फिर सूरत तक आया, जहां कतिपय शाही अफ़सर शाहजादे की अगुवानी करने

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा के साथ-साथ राठोड़ दुर्गादास, राठोड़ खींवरण आसकणोत, राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत, राठोड़ मेहकरण दुर्गादासोत, भाटी दूदा आदि तेरह सरदारों को मनसब मिलना लिखा है (जि० २, पृ० ६२-३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है—“बादशाह ने जहानाबाद से दीवान असदख़ां की मुहर-युक्त एक परवाना जोधपुर के सूबेदार गुजाअतख़ां के पास भिजवाया कि डेढ़ हज़ार ज़ात एवं पांचसौ सवारों का मनसब तथा जालोर की जागीर अजीतसिंह को दी जाय। गुजाअतख़ां ने इस आज्ञा का पालन किया और श्रावणादि वि० सं० १७५४ (चैत्रादि १७५५ = ई० स० १६६८) ज्येष्ठ सुदि १३ को अजीतसिंह ने जालोर के गढ़ में प्रवेश किया (जि० २, पृ० ६४)।”

(३) टॉड के अनुसार वि० सं० १७५७ (ई० स० १७००) के पौष मास में अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हो गया, जहां पहुंचकर उसने गढ़ के पांचों फाटकों पर एक-एक भैंसे का बलिदान किया। उस समय गुजाअत मर गया था, अतएव शाहजादे ने उसका स्वागत किया। पीछे ई० स० १७५६ में वहां फिर आज्ञम-शाह ने क़ब्ज़ा कर लिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०११), जो ठीक नहीं है; क्योंकि ई० स० १७०१ में तो वहां का फौजदार शाहजादा आज्ञम था (देखो सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८४ का टिप्पण)।

(४) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८१-४। “मिरात-इ-अहमदी” में भी इस घटना का वर्णन करीब-करीब ऐसा ही और कहीं-कहीं अधिक विस्तार से दिया है (जि० १, पृ० ३३१-३)।

और उसे शाही शिष्टाचार की शिक्षा देने के लिए उपस्थित थे; लेकिन शाहज़ादा मौन ही बना रहा और आये हुए शाही अफ़सर उसे कुछ भी सिखाने में समर्थ न हुए^१ ।”

शाहज़ादे बुलंदशहर को सौंपने के बाद, जब भीमा (नदी) के तट पर इस्लामपुरी के ख़ेमे में दुर्गादास शाही दरबार के प्रवेशद्वार पर पहुंचा तो उसे निशस्त्र भीतर जाने की आज्ञा हुई ।

दुर्गादास को मनसब मिलना

दुर्गादास ने निर्विरोध अपनी तलवार छोड़ दी ।

यह सुनकर बादशाह उससे बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे सशस्त्र भीतर आने की आज्ञा प्रदान की । शाही ख़ेमे में प्रवेश करते ही अर्थ-मंत्री रूहुल्लाखां ने आगे बढ़कर उस (दुर्गादास) के दोनों हाथ एक रूमाल से बांध दिये और तब उसे लेकर वह बादशाह के समक्ष गया^२ । बादशाह ने उसके हाथ खोले जाने की आज्ञा देकर उसे तीन हज़ार सवार का मनसब, एक रत्न-जटित कटार, एक सुवर्ण पदक, एक मोतियों की माला और शाही ख़ज़ाने से एक लाख रुपये दिलवाये^३ ।

ई० स० १७०० (वि० सं० १७५७) के अक्टोबर मास में बादशाह के पास अजीतसिंह की इस आशय की अर्ज़ी पहुंची कि यदि सेना रखने के लिए मुझे जागीर अथवा नक़द धन दिया जाय तो मैं चार हज़ार सवारों के साथ शाही दरबार में उपस्थित हो जाऊं । बादशाह ने इसपर उसे अजमेर के ख़ज़ाने से धन दिये जाने की आज्ञा दी और साथ ही यह वादा

अजीतसिंह का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८४-५ ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का हथियार छोड़कर हाथ बांधे बादशाह की सेवा में उपस्थित होना और सौ मोहरें तथा एक हज़ार रुपये भेंट करना लिखा है (जि० २, पृ० ६३) ।

(३) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८५-६ ।

“मिरात-इ-अहमदी” से पाया जाता है कि इस अवसर पर दुर्गादास को धन्धुका तथा गुजरात के कई परगने जागीर में मिले (जि० १, पृ० ३३८) ।

भी किया कि उसके दरबार में उपस्थित होते ही उसे जागीर भी दे दी जायगी' ।

शाही सेवा में उपस्थित हो जाने के बाद बादशाह ने दुर्गादास को पाटण (अणहिलवाड़ा, बड़ोदा राज्य) का फौजदार नियतकर उधर भेज दिया । बात यह थी कि उसे दुर्गादास की तरफ से खटका बना हुआ था, जिससे उसने उसे मारवाड़ से दूर रखना ही ठीक समझा । ई० स० १६६८ से १७०१ (वि० सं० १७५५ से १७५८) तक तो कुछ शान्ति रही पर इसके बाद ही पुनः राठोड़ों और मुगलों के बीच झगड़े का सूत्रपात हो गया । औरंगज़ेब के साथ मैत्री-संबंध स्थापित कर लेने पर भी दुर्गादास एवं अजीतसिंह दोनों के मन में उसकी तरफ से सन्देह बना ही रहा । ई० स० १७०१ (वि० सं० १७५८) में बादशाह-द्वारा कई बार बुलाये जाने पर भी अजीतसिंह उसके पास न गया और टाल-टूट करता रहा । ई० स० १७०१ ता० ६ जुलाई (वि० सं० १७५८ श्रावण वदि १) को मारवाड़ के शासक शुजाअतख़ां का देहान्त हो गया^१ । उसके स्थान में शाहज़ादे मुहम्मद आज़मशाह की नियुक्ति होकर वह वहां भेजा गया । वह स्वभाव का घमंडी था । बादशाह ने उसको आज्ञा दी कि यदि हो सके तो वह दुर्गादास को शाही सेवा में भेजने का प्रयत्न करे अन्यथा उसे वहीं मरबा डाले, जिससे उसके अजीतसिंह तथा अन्य राठोड़ों को उकसाने का भय ही जाता रहे । इस आज्ञा के अनुसार शाहज़ादे ने दुर्गादास को लिखा कि तुम अहमदाबाद में मेरे पास हाज़िर हो । उस (शाहज़ादे) के एक अफ़सर सफ़दरख़ां बाबी^३ ने शाहज़ादे के रूबरू दुर्गादास के उपस्थित

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८६ ।

(२) कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाग्वे प्रेसिडेंसी" (भाग १, खंड १, पृ० २६१) में ई० स० १७०३ में शुजाअतख़ां का मरना लिखा है ।

(३) ई० स० की सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में बादशाह शाहजहाँ के राज्यकाल में मृनागद के नवाब का पूर्वज बहादुरख़ां बाबी अफ़ग़ानिस्तान से भारतवर्ष में

होते ही उसे कैद करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लिया। पाटण से अपने अनुयायियों-सहित प्रस्थानकर दुर्गादास अहमदाबाद के निकट साबरमती नदी के किनारे करीज (? वाडेज) नामक गांव में ठहरा। मुलाक़ात के लिए निश्चित तिथि को शिकार के बहाने शाहज़ादे ने सारी सेना तैयार रखी थी। सब मनसबदार मौजूद थे और सफ़रदरख़ा बाबी अपने पुत्रों और सेवकों-सहित सशस्त्र दरबार में उपस्थित था। शाहज़ादे ने दरबार में पहुंचते ही दुर्गादास को बुलाने के लिए आदमी भेजे। पहले दिन एकादशी का व्रत रखने के कारण दुर्गादास ने भोजनादि से निवृत्त होकर दरबार में उपस्थित होने की इच्छा प्रकट की। शाहज़ादे को एक-एक क्षण का विलम्ब अस्वर रहा था। उसने दूत पर दूत भेजने शुरू किये। यह देखकर दुर्गादास के मन में स्वभावतया ही सन्देह हो गया। फिर जैसे ही उसने मुग़ल सेना के तैयार रहने की बात सुनी तो वह एकदम शंकित हो उठा। ऐसी दशा में भोजन किये बिना ही वह अविलम्ब अपने डेरे आदि में आग लगाकर माल-असबाब और साधियों-सहित वहां से मारवाड़ की तरफ़ चला गया। यह ख़बर पाते ही मुग़ल सेना की एक टुकड़ी ने, जिसमें सफ़रदरख़ा बाबी भी था, उसका पीछा किया। कुछ ही समय में पाटण के मार्ग में वे भागते हुए राठोड़ों के निकट जा पहुंचे। ऐसी दशा देखकर दुर्गादास के पौत्र ने उससे कहा—“युद्ध सम्मुख

आया। ई० स० १६५४ में जब शाहज़ादा मुरादबख़्श गुजरात की सूबेदारी पर मुक़र्रर हुआ, तो बहादुरख़ा बाबी का पुत्र शेरख़ा बाबी भी उसके साथ वहां गया। प्रारम्भ में ई० स० १७६३-६४ में शेरख़ा बाबी को चुंवाल परगने की थानेदारी सौंपी गई। चतुर और दृढ़व्रती होने के कारण वह इस पद के सर्वथा योग्य था। उसके चार पुत्र हुए, जिनमें से तीसरे ज़ाफ़रख़ा बाबी को चुंवाल में रहकर अच्छी सेवा करने के एवज़ में “सफ़रदरख़ा” का ख़िताब मिला और वह पाटण का नायब सूबेदार नियत हुआ। पीछे से उसको पाटण और बीजापुर की सूबेदारी मिली। मराठा सरदार धन्नाजी यादव के साथ की लड़ाई में वह कैद हुआ और बड़ा दंड देकर छूटा। सफ़रदरख़ा के वंशजों के अधिकार में इस समय जूनागढ़, राधनपुर, वाडासिनोर आदि राज्य हैं।

(१) सरकार ने आगे चलकर इसी पौत्र का मारा जाना लिखा है, परन्तु

देखकर घायल खाये बिना चले जाना लज्जा की बात है। मैं शत्रु-सेना को रोकता हूँ तब तक आप निकल जावें।” उस वीर ने ऐसा ही किया और अन्य कितने ही राठोड़ों के साथ वीरतापूर्वक मुगल सेना का मार्ग रोकते हुए अपने प्राण उत्सर्ग किये। इस लड़ाई में मुगल सेना के सफ़रदरख़ाँ का पुत्र और मुहम्मद अशरफ़ घुरनी घायल हुए। दुर्गादास इस बीच वहाँ से साठ मील दूर “ऊंभा-उनौवा” नामक स्थान में पहुँच गया। रात्रि के समय वहाँ से प्रस्थानकर वह पाटण पहुँचा, जहाँ से अपने परिवार को साथ लेकर वह थराद चला गया। शाही सेना ने पाटण पहुँचने पर दुर्गादास-द्वारा वहाँ रक्खे हुए कोतवाल को मार डाला^१।

उसका नाम नहीं दिया है। वह दुर्गादास के पुत्र तेजकरण का पुत्र अनूपसिंह था।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८६-६। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी, जि० १, खंड १, पृ० २६१-२। क़रीब-क़रीब ऐसा ही वृत्तान्त ‘मिरात-इ अहमदी’ में भी मिलता है (जि० १, पृ० ३४८-५१)। इस सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की ख्यात में जो वर्णन मिलता है वह नीचे लिखे अनुसार है—

“राठोड़ दुर्गादास पाटण में रहता था। बादशाह ने शाहज़ादे आज़म को दक्षिण में बुलाया तो उस शाहज़ादे ने दुर्गादास को लिखा कि एक बार शीघ्र हमसे आकर मिलो। वि० सं० १७६२ कार्तिक सुदि १२ (ई० स० १७०५ ता० १८ अक्टोबर) को अहमदाबाद में पहुँचने पर दुर्गादास को ख़बर मिली कि तुमपर चूक होनेवाली है, सावधान रहना। इससे वह दरबार में न गया। उसी दिन दीवान अफ़ज़लख़ाँ दस हज़ार फ़ौज-सहित उसपर चढ़ गया। ऐसी दशा में दुर्गादास अपने साथियों-सहित पाटण की ओर रवाना हो गया। सात कोस पहुँचते-पहुँचते शाही सेना भी आ पहुँची। तब मेहकरण ने अपने पिता (दुर्गादास) से कहा—‘ ऐसे नहीं चलेगा। मैं ठहरकर लड़ता हूँ, आप जावें।’ इसपर दुर्गादास तो आगे रवाना हुआ और मेहकरण, अभयकरण, अनूपसिंह (दुर्गादास का पौत्र, तेजकरण का पुत्र), राठोड़ रघुनाथ सुजान-सिंहोत चांपावत, भाटी दुर्जनसिंह चन्द्रभायोत, राठोड़ मोहकमसिंह अमरावत उदावत, राठोड़ हरनाथ चन्द्रभायोत जोधा आदि ने ठहरकर मुगल सेना से लोहा लिया, जिसमें अठारह वर्षीय अनूपसिंह तथा दूसरे कई व्यक्ति वीरतापूर्वक लड़कर मारे गये। इसी बीच दुर्गादास पाटण पहुँच गया, जहाँ से अपने परिवार को उसने सिंघाणा भेज दिया और वह स्वयं वहीं ठहर गया। बादशाह ने जब यह समाचार सुना तो उससे

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुँचने पर अजीतसिंह उसके शामिल हो गया और दोनों मिलकर ई० सं० १७०२ (वि० सं० १७५६) में खुल्लमखुल्ला उपद्रव करने लगे। उन्होंने मुगलों के साथ कई भगड़े किये, लेकिन कोई विशेष परिणाम न निकला। अनवरत युद्ध, लूट-खसोट, दुर्भिक्ष आदि के कारण मारवाड़ की आर्थिक दशा दिन-दिन हीन होती जा रही थी। करणीदान (कविया चारण) के अनुसार—“वि० सं० १७५६ (ई० सं० १७०२) में अजीतसिंह जालोर चला गया। कुछ राठोड़ों ने महाराणा की और कुछ ने मुगलों की अधीनता स्वीकार कर ली, क्योंकि मुसलमानों का अत्याचार उस समय चरम सीमा को पहुँच गया था^१।”

वि० सं० १७५६ मार्गशीर्ष वदि १४ (ई० सं० १७०२ ता० ७ नवम्बर) शनिवार को महाराजा अजीतसिंह की चौहान राणी कुंवर अभयसिंह का जन्म के उदर से कुंवर अभयसिंह का जन्म हुआ^२।

इसी समय के आस-पास अजीतसिंह तथा दुर्गादास के बीच मन-

कहलाया कि शाहजादे ने नासमझी से मेरी आज्ञा के बिना यह सब किया है, तुम निश्चित होकर पाटण में रहो और वहां की क्राँजदारी करो। इसपर दुर्गादास सतर्कता के साथ गांव कंबोई में रहता और पाटण में उसकी सेना तथा कोतवाल पढ़िहार शिवदान महेशदासोत रहता। उसी वर्ष माघ वदि २ (ता० २१ दिसंबर) को दुर्गादास ने इस घटना का समाचार अजीतसिंह के पास लिख भेजा और उसे सावधान रहने को लिखा (जि० २, पृ० ६४-५)। ख्यात में दिया हुआ समय आदि ठीक नहीं है।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८६।

टॉड-कृत “राजस्थान” में भी करणीदान के उपर्युक्त कथन का उल्लेख है। उसमें यह भी लिखा मिलता है कि वि० सं० १७५७ (ई० सं० १७००) में अजीतसिंह ने जोधपुर पर अधिकार कर लिया था, पर वि० सं० १७५६ (ई० सं० १७०२) में शाहजादे आजम ने वह स्थान उससे छीन लिया, जिससे अजीतसिंह को जालोर जाना पड़ा (जि० २, पृ० १०११) ; परन्तु यह कथन विश्वसनीय नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की स्थात; जि० २, पृ० ६४। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०११।

मुटाव हो गया। बादशाह औरंगज़ेब दिन-प्रति-दिन के भगड़ों से परेशान हो गया था। उसके शत्रुओं की संख्या बढ़ती ही जाती थी। अतएव वि० सं० १७६१ (ई० सं० १७०४) में अजीतसिंह को मेड़ता देकर एक प्रकार से उसने उसके साथ सन्धि कर ली^१। अजीतसिंह ने मेड़ता पर अधिकार मिलने पर कुशलसिंह को वहां का अधिकारी नियुक्त किया। इससे नाराज़ होकर नागौर के इन्द्रसिंह का पुत्र मोहकमसिंह, जो महाराजा की बाल्यावस्था से ही उसके साथ की लड़ाइयों में उसकी तरफ़ शामिल रहा था, औरंगज़ेब से जा मिला और अजीतसिंह का विरोधी बनकर अपने ही जाति भाइयों पर आक्रमण करने लगा^२।

(१) टॉड-कृत “राजस्थान” से पाया जाता है कि वि० सं० १७६१ (ई० सं० १७०४) में मुर्शिदकुली जोधपुर का हाकिम होकर गया। उसने वहां पहुँचते ही मेड़ता दिये जाने की शाही सनद अजीतसिंह को दी (जि० २, पृ० १०११)।

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६०-२९१। टॉड-कृत “राजस्थान” में भी लिखा है कि महाराजा-द्वारा वहां (जोधपुर में) कुशलसिंह मेड़तिया और धांधल गोविन्ददास के नियुक्त किये जाने के कारण इन्द्र का पुत्र (मोहकमसिंह) बिगड़ गया। उसने बादशाह को लिखा कि मुझे मारवाद में नियुक्त कर दिया जाय तो मैं हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए सन्तोषपूर्ण प्रबन्ध कर दूँ (जि० २, पृ० १०११)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—

“वि० सं० १७६२ (ई० सं० १७०५) में चांपावत उदयसिंह (लखधीरोत) तथा चांपावत उर्जनसिंह (प्रतापसिंहोत) ने मोहकमसिंह से, जो बादशाह की तरफ़ से मेड़ते के थाने पर था, कहलाया कि आप चढ़कर जालोर आवें, हम अजीतसिंह को पकड़ा देंगे। इसपर वह दो हज़ार सवारों के साथ चढ़ गया। इसकी ख़बर धांधल उदयकरण तथा मारवाद के कई दूसरे सरदारों ने ज़ट सवारों-द्वारा अजीतसिंह के पास भिजवाई। महाराजा ने अपने सरदारों से इस विषय में बात की तो उन्होंने वहां से हट जाना ही उचित बतलाया। तब वह वहां से हट गया। माघ सुदि ३ (ई० सं० १७०६ ता० ६ जनवरी) को मोहकमसिंह ने जालोर पहुँचकर कुछ लड़ाई के बाद वहां अधिकार कर लिया। अनन्तर राठोड़ बिदुलदास भगवानदासोत अपने तथा राठोड़ उदयसिंह

मोहकमसिंह के विरोधी हो जाने के कुछ ही समय बाद महाराजा अजीतसिंह ने दुनाड़ा नामक स्थान में उसपर आक्रमण किया और उसे पगस्त कर अपनी शक्ति और सम्मान में पर्याप्त अभिवृद्धि की ।

अजीतसिंह का मोहकमसिंह को हराना

के परिवार के साथ कालंधरी (?) गांव में महाराजा के शामिल हो गया । मेढतिया कुशलसिंह अचलसिंहोत तथा विजयसिंह हरिसिंहोत अग्रबगरी गांव में महाराजा से मिले । कुछ अन्य सरदार भी उसके शामिल हुए (जि० २, पृ० ६५-७) ।”

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६१-२ । टॉड-कृत “राज-स्थान” में लिखा है—“वि० सं० १७६१ (ई० स० १७०४) में शत्रुओं (अर्थात् मुगलों) का सितारा अस्त होने लगा । मुगल मुर्शिदकुली के स्थान में जाहंगीरों की नियुक्ति हुई । मोहकमसिंह का पत्र (बादशाह के पास भेजा हुआ) बीच में ही पकड़ लिया गया । वह अजीतसिंह का विरोधी होकर शत्रुओं से मिल गया था । अजीत ने उसके ज़िलात चढ़ाई की और दुनाड़ा नामक स्थान में उसकी शत्रु-सेना से लड़ाई हुई, जिसमें उसकी विजय हुई और विरोधी इन्द्रावत (मोहकमसिंह) मारा गया । यह घटना वि० सं० १७६२ (ई० स० १७०५) में हुई (जि० २, पृ० १०११-१२) ।” टॉड ने इस लड़ाई में मोहकमसिंह का मारा जाना लिखा है, जो ठीक नहीं है ।

यही घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—

“जालोर पर मोहकमसिंह का अधिकार होने के पश्चात् क्रमशः बहुतसे राठोड़ सरदार अजीतसिंह से जा मिले । इस प्रकार अपना बल बढ़ जाने पर उसने मोहकमसिंह से कहलाया कि आये हो तो जमे रहना, मैं भी आता हूँ । मोहकमसिंह को जब पता लगा कि महाराजा के पास विशाल फौज है तो वह माघ सुदि १३ (ई० स० १७०६ ता० १५ जनवरी) को जालोर छोड़कर चला गया । महाराजा ने उसका पीछा किया । मार्ग में अन्य कितने ही जोधपुर के सरदार भी उसके शामिल हो गये । दुनाड़ा पहुँचने पर आमने सामने दोनों सेनाओं के मोर्चे जमे और गोलियाँ चलने लगीं । राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े और अन्त में विजय उन्हीं की हुई । मोहकमसिंह के साथ के तीस आदमी मारे गये और पचास घायल हुए तथा उसका नगारा, निशान, हाथी, घोड़े आदि विजेताओं के हाथ लगे । इस लड़ाई में अजीतसिंह की तरफ़ के भी कई राठोड़ और भाटी सरदार मारे गये तथा कितने ही घायल हुए । अनन्तर महाराजा का डेरा गांव दीडस में हुआ और मोहकमसिंह उसी रात कूचकर पीपाड़ चला गया (जि० २, पृ० ६७-८) ।

ई० स० १७०५ (वि० सं० १७६२) में इब्राहीमखां का पुत्र ज़बर्दस्तखां लाहोर से बदलकर अजमेर और जोधपुर का हाकिम नियुक्त किया गया।

दुर्गादास का पुनः शाही
अधीनता स्वीकार करना

उन्हीं दिनों दुर्गादास ने भी शाहज़ादे आजम की मारफ़त बादशाह से माफ़ी की दख्खान्त की। इसपर उसका मनसब बहालकर उसकी नियुक्ति गुजरात में पहले के स्थान पर कर दी गई^१।

बादशाह औरंगज़ेब के अंतिम राज्यवर्ष में गुजरात में मरहटों का उपद्रव बढ़ गया और उन्होंने अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले अब्दुल-हमीदखां को हराया। इस घटना से मुग़लों की स्थिति अधिक कमज़ोर हो गई और उनके शत्रुओं की आशा पुनः बलवती हो उठी। ऐसी परिस्थिति देख अजीतसिंह फिर विद्रोही हो गया। दुर्गादास भी शाही आश्रय छोड़कर उससे जा मिला और थराद आदि स्थानों में उपद्रव करने लगा। राजपीपला के स्वामी वैरिशाल ने भी मुग़लों को छेड़ना शुरू किया। इसपर आजमशाह के पुत्र बेदारबख़्त ने, जो गुजरात में मुक्रर था, विद्रोहीराठोड़ों के पीछे सेना भेजी, जिससे बाध्य होकर अजीतसिंह को पीछे हटना पड़ा और दुर्गादास सूरत से दक्षिण के कोलियों के देश में चला गया^२।

वि० सं० १७५६ (ई० स० १७०२) में बादशाह औरंगज़ेब ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) के नाम सिरोही और आवू की जागीर का (जिसकी आय एक करोड़ बीस लाख दाम अर्थात् तीन लाख रुपये मानी जाती थी) फ़रमान कर दिया था। वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) में उदयपुर से जाने के बाद महाराजा अजीतसिंह की सिरोही राज्य में

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६१। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० २६३।

(२) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, भाग १, पृ० २६३-४। सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब जि० ५, पृ० २६१।

परवर्ति हुई थी, इसलिए वहां के देवड़ा स्वामी के पत्र में होकर उसने महाराणा का वहां अधिकार स्थापित होने में बाधा डाली। इसकी शिकायत होने पर मालवा के सूबेदार अमीरुलुमरा शाहस्ताखां ने हि० स० १११४ ता० ११ ज़िलिहज (वि० सं० १७६० वैशाख सुदि १२ = ई० स० १७०३ ता० १७ अप्रैल) को फ़ौजदार यूसुफ़खां के नाम यह हुक्म भेजा कि अजीतसिंह सिरौही से हटाये हुए जागीरदार की मदद करता है, इसलिए उसको देवड़ों की मदद से बाज़ आने की हिदायत की जावे। इसपर भी जब अजीतसिंह ने कोई ध्यान न दिया तो महाराणा और उसके बीच मनमुटाव हो गया। विपत्ति के समय महाराजा को मेवाड़ में आश्रय मिलता रहा था और पुनः बादशाह की तरफ़ से छल होने की संभावना थी, अतएव महाराजा तथा उसके साथी राठोड़ों ने महाराणा से मेल रखना ही उचित समझा। तदनुसार महाराजा के सरदारों में से ठाकुर मुकुंददास ने महाराणा के प्रधान दामोदारदास पंचोली की मारफ़्त पारस्परिक मनमुटाव को मिटाने और महाराणा की तरफ़ से महाराजा को मदद मिलने के बारे में बात-चीत चलाई तथा महाराजा के कर्मचारी (विठ्ठलदास भंडारी) ने भी वि० सं० १७६३ वैशाख वदि १४ (ई० स० १७०६ ता० १ अप्रैल) को अपनी अर्ज़ी के साथ महाराणा के नाम का महाराजा का पत्र भेजा। मोहकमसिंह के जालोर के आक्रमण के समय महाराजा के कई सरदार भी उस (मोहकमसिंह) के शरीक हो गये थे। इससे महाराजा का उन सरदारों पर से विश्वास हट गया और उसने तेजसिंह चांपावत को अपना प्रधान नियत किया। उसकी इस कार्यवाही से ठाकुर मुकुंददास, जो मेल के लिए यत्न कर रहा था, महाराजा से खिन्न रहने लगा। महाराजा इससे उसपर भी संदेह करने लगा और उसने महाराणा से मेल करने के लिए सबीनाखेड़ा के गोस्वामी नीलकंठ गिरि को मध्यस्थ बनाकर वि० सं० १७६३ चैत्र सुदि ११ (ई० स० १७०६ ता० १३ मार्च) को पत्र के साथ तरवाड़ी सुखदेव, भगवान और धरणीधर को उस (गोस्वामी) के पास उदयपुर भेजा। ऐसा ही एक पत्र वैशाख सुदि ११ (ता० १२ अप्रैल) शुक्रवार

को उसने पुनः उक्त गोस्वामी के नाम भेजकर उसके साथ महाराणा के नाम भी पत्र भेजा^१। अनुमान होता है कि इससे महाराणा और महाराजा के बीच का बढ़ता हुआ मनमुटाव दूर हो गया।

ई० स० १७०७ (वि० सं० १७६३) के फ़रवरी मास में अहमदनगर में रहते समय बादशाह बीमार पड़ा। इस बीमारी से वह कुछ समय के लिए अच्छा ज़रूर हो गया, पर उसके हृदय में इस विश्वास ने घर कर लिया कि उसका अन्तकाल निकट ही है। अतएव उसने कामचूश को बीजापुर और मुहम्मद आज़म को मालवे की तरफ़ खाना कर दिया, पर मुहम्मद आज़म बादशाह की हालत समझ गया था, जिससे उसने मार्ग तय करने में ढील रखी। उधर बादशाह की दशा कमशः बिगड़ती गई। बृहस्पतिवार ता० १६ फ़रवरी (फाल्गुन चदि १३) को हमीदुद्दीनखां ने उससे एक हाथी दान करने को कहा, पर बादशाह ने हाथी के एवज़ में ४००० रुपये गरीबों को बंटवा देने की आज्ञा दी। इसके दूसरे दिन बादशाह ने प्रातःकाल की नमाज़ पढ़कर तसवीह (माला) फेरना शुरू किया और इसी दशा में लगभग आठ बजे उसका देहांत हो गया^२।

औरंगज़ेब के जीवन-काल में ही उसके कठोर हिन्दू-विरोधी आचरण के कारण भारतवर्ष के कोने-कोने में असन्तोष फैल गया था; यहां तक कि जगह-जगह लोग उसके विरुद्ध विद्रोह भी करने लगे थे। इसका परिणाम यह हुआ कि न तो उसे ही जीवन-भर शान्ति मिली और न प्रजा को ही सुख-शान्ति प्राप्त हुई। उसके मरते ही उसके विरोधियों का ज़ोर बहुत बढ़ गया। अजीतसिंह जिस अवसर की तलाश में था और जिसकी प्रतीक्षा में उसने अपने जीवन का इतना दीर्घ समय संकट में बिताया था, वह उसे अब प्राप्त हुआ। औरंगज़ेब की मृत्यु का समाचार उसके पास ई० स० १७०७

अजीतसिंह का जोधपुर
आदि पर अधिकार करना

(१) ये पत्र “वीरविनोद” (भाग २, पृ० ७४६-२० तथा ७६४-७) में छपे हैं।

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २५५-८।

ता० ४ मार्च (वि० सं० १७६३ फाल्गुन सुदि १२) को पहुँचा^१ । इसके तीसरे दिन इस समाचार की पुष्टि हो जाने पर, उसने ससैन्य जोधपुर पर आक्रमण कर दिया और वहाँ के नायब फौजदार जाफ़रकुली को भगाकर उसने अपने पैतृक राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसके जोधपुर में प्रवेश करते ही मुग़ल अपना सामान आदि वहाँ छोड़कर भाग गये । राठोड़ों ने पीछा कर उनमें से बहुतों को मार डाला और बहुतों को कैद कर लिया । कुछ मुसलमान तो जान बचाने के लिए हिन्दुओं का बेष बनाकर भाग गये । मेड़ता पर राठोड़ों का आक्रमण होने पर मुहकमसिंह घायल दशा में मेड़ता छोड़कर नागौर चला गया^२ ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा उस समय जालोर के पास देवलवाटी में था, परन्तु बांकीदास उस समय उसका सांचोर में होना लिखता है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १४१६) ।

(२) सरकार; “हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब” जि० ५, पृ० २११-२ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

“वि० सं० १७६३ (ई० सं० १७०६) के मार्गशीर्ष मास में, जिस समय महाराजा जालोर की तरफ़ देवलवाटी में पेशकशी वसूल कर रहा था, उसे बादशाह की मृत्यु का समाचार मिला । उसी समय उसने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया । जोधपुर में उन दिनों फ़ौजदार क़ाज़िमबेग का पुत्र जाफ़रबेग (? जाफ़रकुली) था । उसके पास उसके भाई ने गुजरात से बादशाह के मरने की सूचना देते हुए कहलाबा कि अब जोधपुर में ठहरना निरापद नहीं है । इसपर जाफ़रबेग ने तत्काल अपना सारा सामान उंटों पर लदवाकर अजमेर भिजवा दिया । उसका इरादा स्वयं भी वहाँ से चल देने का था, पर अन्य मनसबदारों के कहने से वह वहीं ठहर गया । अजीतसिंह के जोधपुर पहुँचने पर जाफ़रबेग-द्वारा भेजे हुए राठोड़ कीरतसिंह (कृपावत), राठोड़ उदयभाण (चांपावत) आदि ने उसके पास उपस्थित होकर कहा कि आप नागोरी दरवाज़े के पास जाफ़रबेग के डेरे के निकट ठहरें, बिना शाही आज्ञा के शहर में प्रवेश करना उचित नहीं; पर किसी ने उनकी बात पर ध्यान न दिया । बलपूर्वक उन्हें हटाकर वे नगर में घुस गये और तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए । इस अवसर पर वहाँ जाफ़रबेग की दो बियाँ और मामा मोहम्मदज़मा थे, जो दरवाज़ा बन्द कर बैठ गये । अजीतसिंह ने आगे बढ़कर दरवाज़ा खोल दिया और जाफ़रबेग की बियाँ को उसके

महाराजा अजीतसिंह के जोधपुर पर अधिकार करने की खबर मिलने पर दुर्गादास जोधपुर गया। महाराजा ने भांडेलाव तालाब तक जाकर उसका स्वागत किया। दुर्गादास ने उसका उचित अभिवादन कर ग्यारह रुपये नज़र किये। इसके बाद महाराजा उससे सूरसागर के डेरे पर जाकर मिला। दुर्गादास ने उसे दो घोड़े भेंट किये। महाराजा ने भी वैशाख सुदि ७ (ता० २७ अप्रैल) को उसे एक घोड़ा और सिरापाव दिया।

बीकानेर पर उन दिनों महाराजा सुजानसिंह का राज्य था, पर वह बादशाह की तरफ से दक्षिण में नियुक्त था और बीकानेर का राज्य-कार्य मंत्री तथा अन्य सरदार आदि करते थे। सुजानसिंह की अनुपस्थिति में राज्य-विस्तार करने का अच्छा अवसर देखकर अजीतसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह और रतलाम के राजा रामसिंह ने अपने वकीलों-द्वारा बादशाह औरंगज़ेब से मारवाड़ का राज्य अजीतसिंह को, उसके जन्म के कुछ ही समय बाद, दिलाने की सिफ़ारिश कराई थी; परन्तु अजीतसिंह ने राज्य पाते ही फ़ौज के साथ बीकानेर की ओर प्रस्थान किया और लाडरगं में जाकर ठहरा। बीकानेर

पास भिजवा दिया। जोधपुर पर अजीतसिंह का अधिकार हो जाने के कारण घर घर बड़ा आनन्द-उत्सव मनाया गया। महाजनों और प्रजा ने उसकी अधीनता स्वीकार की। उस समय उसके साथ चांपावत हरनाथसिंह, कृपावत पद्मसिंह (जैतसिंहोत), जोधा भीम (रणछोड़दासोत), खीवरण (आसकणोत), उदावत जगराम (विजयरामोत), हृदयनारायण (बलरामोत), भाटी सूरजमल (जगन्नाथोत) आदि थे। चैत्र वदि १३ (ई० स० १७०७ ता० १६ मार्च) को पांच घड़ी दिन चढ़े अजीतसिंह ने बड़े समारोह के साथ गढ़ में प्रवेश कर उसके कंगूरे को अपनी पगड़ी के पल्ले से साफ़ किया। इसके बाद वि० सं० १७६४ चैत्र सुदि १० (ई० स० १७०७ ता० ३१ मार्च) को उसके परिवार के अन्य लोग भी जालोर से जोधपुर पहुंच गये (जि० २, पृ० ६६-७१)।

(१) जोधपुर राज्य की हयात; जि० २, पृ० ७१-२।

(२) वही; जि० २, पृ० १६।

राज्य की सीमा के तेजसिंहोत बीदावत महाराजा सुजानसिंह से विरोध रखते थे। अजीतसिंह ने उन्हें लाडलुं बुलाकर उनसे बात-चीत की, जिससे उनमें से अधिकांश उसके सहायक हो गये, परन्तु गोपालपुरा के कर्मसेन तथा बीदासर के बिहारीदास ने इस बुरे कार्य में सहयोग देना स्वीकार न किया, जिससे उन्हें नज़रक़ैद कर अजीतसिंह ने भंडारी रघुनाथ को एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर भेजा। कर्मसेन और बिहारीदास ने नज़रक़ैद होने पर भी इस चढ़ाई का समाचार गुप्त-रूप से बीकानेर भिजवा दिया, परन्तु बीकानेरवालों की शक्ति जोधपुरवालों का सामना करने की न पड़ी, जिससे वहाँ पर अजीतसिंह का अधिकार हो गया और नगर में उसके नाम की दुहाई फिर गई। बीकानेर में रामजी नाम का एक वीर, साहसी एवं राजभक्त लुहार रहता था। उसके हृदय को यह घटना इतनी असह्य हुई कि वह अकेला ही जोधपुर के सैनिकों से भिड़ गया और पाँच को मारकर मारा गया। इस घटना से बीकानेर के सैनिकों का जोश भी बढ़ा और भूकरका के ठाकुर पृथ्वीराज एवं मलसीसर के बीदावत हिन्दूसिंह (तेजसिंहोत) सेना एकत्र कर जोधपुर की फ़ौज के समक्ष जा डटे, जिससे जोधपुर की सेना में खलबली मच गई। विजय की आशा के लोप होते ही सारे सरदारों ने संधि कर लौट जाने में ही भलाई समझी। जब अजीतसिंह के पास यह समाचार पहुँचा तो उसने भी यही ठीक समझा। फलतः जोधपुर की सेना जैसी आई थी वैसी ही लौट गई। लौटते समय अजीतसिंह ने कर्मसेन तथा बिहारीदास को मुक्त कर दिया।

(१) दयालदास की रूपात; जि० २, पत्र ६०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट, पृ० ४६।

जोधपुर राज्य की रूपात में इस चढ़ाई का उल्लेख नहीं है; परन्तु कविराजा श्यामलदास-रचित “वीरविनोद” में भी लिखा है कि औरंगज़ेब की मृत्यु होने पर जोधपुर पर अधिकार करने के उपरांत अजीतसिंह ने बीकानेर लेने का भी हुरादा किया, पर उसका यह विचार पूरा न हुआ (भाग २, पृ० ५००)। इससे यह निश्चित है कि दयालदास का कथन कोरी कल्पना नहीं है।

बादशाह औरंगज़ेब की दक्षिण में मृत्यु होते ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म ने, जो उन दिनों काबुल में था, अपने आप को बादशाह घोषित कर आगरे की तरफ़ प्रस्थान किया। उसका छोटा भाई आज़म उस समय दक्षिण में ही था। वह भी अपने को बादशाह प्रकटकर ससैन्य आगरे की तरफ़ अग्रसर हुआ। धौलपुर और आगरे के बीच जजाओ नामक स्थान में दोनों का परस्पर युद्ध हुआ, जिसमें हि० स० १११६ ता० १८ रबीउलअव्वल (वि० सं० १७६४ आषाढ वदि ४ = ई० स० १७०७ ता० ६ जून) को आज़म मारा गया। तब शाहज़ादा मुअज़्ज़म “शाह आलम बहादुरशाह” नाम धारणकर मुग़ल साम्राज्य का स्वामी बना^१।

औरंगज़ेब के जीतेजी राठोड़ भावसिंह सबलसिंहोत, राठोड़ उरजनसिंह प्रतापसिंहोत आदि कितने ही सरदार महाराजा के विरोधी हो गये थे। एक फ़र्ज़ी दलथंभन को खड़ाकर चार साल तक वे सोजत के परगने में, जहाँ का हाकिम सरदारखां था, लूट-मार करते रहे। फिर बादशाह औरंगज़ेब के मरने की ख़बर पाकर जब देश में चारों ओर अराजकता और उत्पात फैलने लगा, तो उन्होंने भी उस अवसर से लाभ उठाकर सोजत के शाही हाकिम के भाग जाने पर वहाँ अधिकार कर लिया। उन्होंने अन्य सरदारों को भी लालच देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न किया। इन सब बातों की सूचना पाते ही महाराजा ने पन्द्रह-बीस हज़ार सवार सेना के साथ सोजत पर चढ़ाई कर उसे घेर लिया। ग्यारह दिन तक घेरा रहने के पश्चात् महाराजा ने कहलाया कि व्यर्थ प्राण गंवाने से क्या लाभ, आप दलथंभन को मेरे पास लावें, वह मेरा भाई है; पर विद्रोही सरदारों ने यह स्वीकार न किया। गढ़ के भीतर का सामान इत्यादि समाप्त हो जाने पर आबणादि वि० सं० १७६३ (चैत्रादि १७६४) ज्येष्ठ वदि ६ (ई० स० १७०७ ता० ११ मई) रविवार को आधी रात के समय

गढ़ के भीतर के लोग वहां से चले गये और महाराजा का वहां अधिकार हो गया। दलधंभन के साथी उसे लेकर बादशाह के पास गये, पर वहां उनकी बात मानी नहीं गई। तब वे मेहराबख़ां के पास जाकर स्वामी गोविन्ददास के स्थान में ठहरे। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने सोजत से वहां आदमी भेजकर उन्हें मौत के घाट उतरवा दिया। इस सेवा के एवज़ में इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों को महाराजा ने बहुत कुछ पुरस्कार देकर सन्तुष्ट किया। फिर जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने अन्य अपराधी व्यक्तियों को दंड दिया^१।

जोधपुर पर अधिकार होने के बाद ही महाराजा अजीतसिंह ने वहां औरंगज़ेब के समय बनी हुई मसजिदों को तुड़वाने के साथ ही आज्ञान का देना भी बन्द करवा दिया^३। यही नहीं उसने बादशाह की गद्दीनशीनी के समय अपना कोई वकील भी न भेजा^४। इन सब बातों से बादशाह की उसपर नाराज़गी हो गई और उसने जोधपुर की तरफ़ ससैन्य प्रस्थान किया^५। आंबेर होता हुआ वह अजमेर पहुंचा, जहां से उसने शाहज़ादे अज़ीमुद्दौला और खानख़ाना मुनश्शिरां को फ़ौज देकर मारवाड़ पर भेजा और आप जोधपुर से छः कोस पर जा ठहरा। जोधपुर पर भेजी गई फ़ौज ने वहां पहुंचकर बरबादी करना तथा प्रजा को

(१) सरकार ने भी जोधपुर पर अधिकार होने के पश्चात् महाराजा का सोजत पर अधिकार करना लिखा है (हिस्ट्री ऑफ़ औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ७२-५ ।

(३) बीरबिनोद; भाग २, पृ० ६२६ ।

(४) इबिन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४५ ।

(५) “बीरबिनोद” में बादशाह के प्रस्थान करने की तारीख़ ७ शाबान हि० स० १११६ (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ८ = ई० स० १७०८ ता० ११ अक्टोबर) और “लेटर मुग़ल्स” में १७ शाबान दी है ।

लूटना शुरू कर दिया और वहां शाही अधिकार स्थापित हो गया^१। ऐसी हालत में महाराजा अजीतसिंह महाराजा जयसिंह^२-सहित वज़ीर मुनश्मखां की मारफ़्त बादशाह की सेवा में उपस्थित हो गया^३।

इर्विन लिखता है—“ता० २१ फ़रवरी को बादशाह मेड़ता पहुंचा। इसके चौथे दिन ता० २४ फ़रवरी को अजीतसिंह भी खानज़मां के साथ वहां पहुंच गया। उसे मुनश्मखां के डेरों में रहने को स्थान दिया गया। दूसरे दिन रूमाल से उसके हाथ बांधकर वह बादशाह के समक्ष उपस्थित किया गया। उस समय उसने सौ मोहरें तथा एक हजार रुपये बादशाह को नज़र किये। बादशाह ने उसका समुचित सत्कार कर इस्लामखां को उसे खिलअत आदि सम्मान की वस्तुएं प्रदान करने की आज्ञा दी। फिर ता० २६ फ़रवरी को दरबार में उपस्थित होने पर अजीतसिंह सिंहासन की बाईं तरफ़ खड़ा किया गया। इसके तीसरे और चौथे दिन बादशाह की तरफ़ से उसे कई चीज़ें उपहार में मिलीं। ता० १० मार्च को

(१) वीरविनोद; भाग २; पृ० ६२६। इर्विन लिखता है कि मार्ग से बादशाह ने जोधपुर के क़ौजदार मेहराबख़ां को जोधपुर की तरफ़ भेजा था, जिसका मेड़ता में महाराजा अजीतसिंह से मुकाबला हुआ। इस लड़ाई में महाराजा हारकर भाग गया और मेड़ता पर शाही क़ब्ज़ा हो गया (लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४७)।

(२) बादशाह औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद उसके शाहज़ादों के बीच राज्य के लिए जो लड़ाई हुई उसमें जयपुर का महाराजा सवाई जयसिंह शाहज़ादे आज़म के पक्ष में था और उसका छोटा भाई विजयसिंह बहादुरशाह (शाह आलम) के। इस कारण बहादुरशाह उस (जयसिंह) से नाराज़ था और उसने बादशाह बनते ही सर्वप्रथम आंबेर को ख़ालसा कर विजयसिंह को वहां का राजा बनाया (इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४६)। अपना राज्य पीछा प्राप्त करने की इच्छा से ही जयसिंह भी महाराजा अजीतसिंह के साथ बादशाह की सेवा में गया था। जोधपुर ख़ालसा होने के पूर्व जयसिंह ने अजीतसिंह को लिखा कि आंबेर पर शाही थाना स्थापित हो गया है और अब बादशाह जोधपुर से समझना चाहता है। इस समय बादशाह का जोधपुर जाना अच्छा नहीं, अतएव उसके हुज़ूर में हाज़िर हो जाना ही ठीक होगा। पीछे हम जैसा उचित समझेंगे करेंगे (जोधपुर राज्य की स्थापना; जि० २, पृ० ७८)।

(३) वीरविनोद; भाग २; पृ० ६२६।

उसे "महाराजा" का खिताब और ता० २३ अप्रैल को साढ़े तीन हज़ार ज़ात तीन हज़ार सवार (एक हज़ार दुअरूपा) का मनसब, भंडा, नक़ारा आदि दिये गये। उसके बड़े पुत्र अभयसिंह को १५०० ज़ात ३०० सवार, उससे छोटे राखीसिंह (? अखैसिंह) को ७०० ज़ात २०० सवार तथा दूसरे दो छोटे पुत्रों को ५०० ज़ात १०० सवार के मनसब मिले।^१ इतना होने पर भी उसे उसका राज्य नहीं दिया गया।

जोधपुर का मामला इस प्रकार तय हो जाने पर बादशाह मेड़ता से अजमेर की तरफ़ खाना हुआ, जहाँ वह ई० स० १७०८ ता० २४ मार्च (वि० सं० १७६५ चैत्र सुदि १४) को पहुँचा। अजीतसिंह, सवाई जयसिंह और दुर्गादास उसके साथ रहे। मार्ग से उस (बादशाह) ने क़ाज़ीख़ां और मुहम्मद ग़ीस मुफ़्ती को जोधपुर में पुनः मुसलमानी धर्म का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए उधर खाना किया। ता० ३० अप्रैल (ज्येष्ठ वदि ६) को बादशाह का मुक़ाम मंडेश्वर (? मण्डलेश्वर) में हुआ। वहाँ तक अजीतसिंह आदि राज्य-प्राप्ति की आशा से बादशाह के साथ रहे, पर जब ऐसी कोई आशा नज़र नहीं आई और उनपर बादशाह की तरफ़ से निगरानी रहने लगी तो वे अपने डेरे-डंडे वहीं छोड़कर बादशाह को सूचना दिये बिना ही वहाँ से चले गये^२। उस

(१) लेटर मुग़लस; जि० १, पृ० ४८। उससे यह भी पाया जाता है कि मार्ग से बादशाह ने दुर्गादास के पास करमान भेजा। जिसका उत्तर अजीतसिंह के पास से आने पर राजा बुधसिंह हाबा एवं नजाबतख़ां के साथ खानज़मां जोधपुर भेजा गया (बहादुरशाहनामा; पृ० ६८)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी लिखा है कि अजीतसिंह के बादशाह की सेवा में उपस्थित होने पर उसे तथा उसके पुत्रों को अलग-अलग मनसब मिले। उससे यह भी पाया जाता है कि इस अवसर पर महाराजा को सोजत, सिबाया और फलोधी के परगने मिले, पर जोधपुर और मेड़ता उसे बादशाह ने नहीं दिये (जि० २, पृ० ८१-२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि अजीतसिंह के शाही आज्ञा के बिना जोधपुर पर अधिकार करने के कारण बादशाह ने वहाँ के प्रबन्ध के लिए मेहराबख़ां को भेजा। आबयादि वि० सं० १७६४ (चैत्रादि १७६५) बैशाख सुदि २

समय विद्रोही कामवक्त्र का प्रबन्ध करना बहुत ज़रूरी था, अतएव बादशाह ने इस ओर ध्यान न दिया और वह दक्षिण की तरफ चला गया^१।

अजीतसिंह आदि बादशाह का साथ छोड़कर उदयपुर की ओर अग्रसर हुए। उनके देवलिया पहुंचने पर रावत प्रतापसिंह ने उनका

अजीतसिंह आदि का देव-
लिया होते हुए उदयपुर
जाना

स्वागत किया^२। वहां से प्रस्थान कर उन्होंने अपने

आने की सूचना महाराणा को दी। महाराणा

अमरसिंह वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ वदि ५ (ई० सं०

१७०८ ता० २६ अप्रैल) को उदयपुर से जाकर उदयसागर की पाल पर

ठहरा। दूसरे दिन वह उनके स्वागत के लिए गाडवा गांव तक गया, जहां

महाराजा अजीतसिंह, जयसिंह, दुर्गादास और मुकुन्ददास भी पहुंचे।

महाराणा पहले अजीतसिंह से मिला, फिर जयसिंह के पास गया। अनन्तर

वह दुर्गादास और मुकुन्ददास से मिला। सन्ध्या समय सब उदयपुर गये,

जहां महाराजा अजीतसिंह कृष्णविलास और जयसिंह सर्व ऋतुविलास महल

में ठहराये गये। इसकी खबर मिलने पर शाहज़ादे मुईजुद्दीन जहांदारशाह

ने महाराणा के पास ता० १४ सफ़र सन् जलूस २ (वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ

वदि १ = ई० सं० १७०८ ता० २४ अप्रैल) को एक निशान^३ भेजकर लिखा—

(ई० सं० १७०८ ता० १४ अप्रैल) को बादशाह का डेरा मंदसोर में हुआ। वहां रहते

समय अजीतसिंह ने दुर्गादास से सलाह की कि अब क्या करना चाहिये। अनन्तर

सवाई जयसिंह से बात ठहराकर बैशाख सुदि १२ (ता० २० अप्रैल) को गांव बड़ोद

से बादशाह का साथ छोड़ अजीतसिंह, दुर्गादास और सवाई जयसिंह पीछे लौट गये

(जि० २, पृ० ८२)। टॉड लिखता है कि बादशाह के नर्मदा पार करते ही दोनों राजा

(अजीतसिंह और सवाई जयसिंह) उसका साथ छोड़कर राजवाड़ा की ओर चले गये

(राजस्थान; जि० २, पृ० १०१४)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० १, पृ० ४८-५० तथा ६७। वीरविनोद;

भाग २; पृ० ७६७-६८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८३।

(३) यह निशान उदयपुर राज्य में अब तक विद्यमान है। जोधपुर राज्य की

ख्यात में भी शाहज़ादे अजीबुद्दीन (? मुईजुद्दीन) द्वारा भेजे गये, लगभग इसी आशय

“अजीतसिंह, जयसिंह और दुर्गादास जागीर और तनखाह न मिलने के कारण भाग गये हैं। तुम्हें चाहिये कि उन्हें अपने यहां नौकर न रखो और उन्हें समझा दो कि वे बादशाह के पास अर्जियां भेजें, मैं उनके अपराध क्षमा करवाकर उनकी जागीरें उन्हें दिलवा दूंगा।” महाराणा ने उनसे माफ़ी की अर्जियां लिखवाकर शाहजादे की मारफ़त बादशाह के पास भिजवा दीं और उन्हें अपने पास ही रक्खा। उनके वहां रहते समय महाराणा ने अपनी पुत्री चन्द्रकुंवरी का विवाह सवाई जयसिंह के साथ किया। इस विवाह के प्रसंग में तीनों राजाओं के बीच एक प्रतिज्ञापत्र लिखा गया, जिसके अनुसार यह निश्चय हुआ कि

(१) उदयपुर की राजकुमारी, चाहे वह छोटी ही क्यों न हो, सब राणियों में मुख्य समझी जाय।

(२) उदयपुर की राजपुत्री का पुत्र ही युवराज माना जाय।

(३) यदि उदयपुर की राजपुत्री से कन्या उत्पन्न हो तो उसका विवाह मुसलमान के साथ न किया जाय।

जब कुछ समय बीत जाने पर भी बादशाह की तरफ़ से उन्हें अपने राज्य प्राप्त न हुए तो उन्होंने अपने बाहुबल से उन्हें हस्तगत करने का विचार किया। इस विचार के अनुसार महाराणा ने अपने दो अफ़सरों की अध्यक्षता में अपनी सेना उन राजाओं के साथ कर उन्हें विदा किया^१। तीनों

अजीतसिंह का पुनः जोध-
पुर पर अधिकार होना

के एक निशान का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८४)। इर्विन-कृत “लेटर मुग़ल्स” में आगे चलकर लिखा है कि ई० स० १७०८ ता० ३० मई (वि० सं० १७६५ आषाढ वदि ७) को दोनों राजाओं के महाराणा के पास पहुंचने की निश्चित ख़बर बादशाह को मिली (जि० १, पृ० ६७)।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ७६१-७७१। वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३०१७-८। जोधपुर राज्य की ख़्यात में भी इस विवाह का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८३)। इर्विन ने जयसिंह की पुत्री का विवाह महाराणा अमरसिंह के साथ होना लिखा है (लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ६७), जो ठीक नहीं है।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ७७४-५।

राजाओं की सम्मिलित सेना ने प्रथम जोधपुर को जा घेरा । दुर्गादास के बीच में पड़ने से जोधपुर का शाही फौजदार मेहराबख़ां क़िला ख़ालीकर चला गया^१ ।

जोधपुर राज्य की ख़्यात से पाया जाता है कि अजमेर तक सही-सलामत पहुंचा दिये जाने की शर्त पर वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ११ (ई० सं० १७०८ ता० ३ जुलाई) को मेहराबख़ां गढ़ ख़ाली कर चला गया । इसके दूसरे दिन महाराजा अजीतसिंह ने सवाई जयसिंह और दुर्गादास आदि सहित गढ़ में प्रवेश किया । महाराजा के सिंहासनासीन होने के अवसर पर सवाई जयसिंह ने उसके टीका किया । अनन्तर सब सरदारों ने टीका कर नज़रें पेश कीं । महाराजा ने सवाई जयसिंह का डेरा सूरसागर के मडलों में, दुर्गादास का ब्रह्मकुंड पर और महाराणा के सैनिकों का कूपावत राजसिंह खीमावत के बाग में कराया^२ ।

महाराजा अजीतसिंह आदि के उदयपुर में रहते समय ही महाराजा जयसिंह के दीवान रामचन्द्र और श्यामसिंह कछुवाहा ने आंबेर के शाही

फौजदार पर आक्रमण कर उसे निकाल दिया^३ ।

महाराजा अजीतसिंह आदि के आचरण के सम्बन्ध में महाराणा के नाम शाह-जादे जहादारशाह का निशान भेजना

इस विषय में, शाहजादे जहादारशाह ने महाराणा के नाम ता० २७ रबीउस्सानी सन् जुलूस २ (वि० सं० १७६५ श्रावण वदि १४ = ई० सं० १७०८ ता० ५ जुलाई) को इस आशय का एक निशान भेजा

(१) इर्विन; लेटर मुग़लस: जि० १, पृ० ६७ । टॉड लिखता है कि उदयपुर से चलकर दोनों राजा आउवा पहुंचे, जहां उदयभाण के पुत्र चांपावत संग्राम ने अजीतसिंह का स्वागत किया । वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ७ (ई० सं० १७०८ ता० २६ जून) को उसने जोधपुर पर घेरा डाला । श्रावण वदि १२ को दुर्गादास द्वारा जीवन-दान प्राप्त कर मेहराबख़ां चला गया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०१४) ।

(२) जि० २, पृ० ८५ ।

(३) जोधपुर राज्य की ख़्यात से भी पाया जाता है कि श्रावण सुदि में आंबेर से सवाई जयसिंह के पास ख़बर आई कि मेहता रामचन्द्र दीवान के ऊपर आंबेर के

कि अजीतसिंह, जयसिंह और दुर्गादास की अर्ज़ियों समेत तुम्हारी अर्ज़ी पहुँची, जो हमने बादशाह को नज़र कर दी। हमारी यह इच्छा थी कि उनके अपराध क्षमा किये जावें, लेकिन इन दिनों अजमेर के सूबेदार शुजा-अतख़ां से मालुम हुआ कि रामचन्द्र आदि जयसिंह के सेवकों ने सैयद हुसेनख़ां आदि बादशाही नौकरों से लड़ाई की। उन्हें यह हरगिज़ उचित न था कि हमारा उत्तर पहुँचने तक ऐसा निन्दित कार्य करते। यह बहुत बुरी कार्रवाई हुई, इसलिए कुछ समय तक हमने इन अपराधों की माफ़ी स्थगित रखी है। उनको समझा दो कि अब भी हाथ खेंच लें, रामचन्द्र को निकाल दें और इसके लिए यहाँ अर्ज़ी भेजें। इसके उत्तर में महाराणा ने लिखा कि आपकी आज्ञा के अनुसार महाराजा जयसिंह को लिख दिया गया है, परन्तु वास्तविक बात यह है कि अपने देश की जागीर पाये बिना उन्हें सन्तोष न होगा। ऐसा मालुम होता है कि हिन्दुस्तान में बड़ा फ़साद उठेगा, इसलिए आप अपने हित एवं उपद्रव दूर करने के विचार से उन्हें उनके देश में जागीर दिला दें। इसी आशय का एक पत्र महाराणा ने नवाब आसफ़ुद्दौला को भी लिखा।

फ़ौजदार ने एक बड़ी फ़ौज के साथ चढ़ाई की। इसपर तमाम कछवाहे एकत्र हुए। बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें फ़ौजदार के बहुतसे आदमी मारे गये और वह भाग गया। तब रामचन्द्र आबेर गया। अनन्तर उसने सारे राज्य में से मुसलमानों को निकाल दिया (जि० २, पृ० ८७)।

हर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी इस घटना का उल्लेख है। उसमें लिखा है कि अजमेर के सूबेदार शुजाअतख़ां बारहा ने बादशाह को ख़बर दी कि दोनों राजाओं ने दो हज़ार सवार और पन्द्रह हज़ार पैदल सेना एकत्र कर रामचन्द्र और सांवलदास की अध्यक्षता में आबेर पर भेजी। सैयद हुसेनख़ां, अहमद सईदख़ां और महमूदख़ां ने उनका सामना कर सात सौ को मार डाला। बादशाह ने इसपर विश्वासकर बड़ा आनन्द मनाया, पर यह घटना असत्य निकली, जैसा कि बादशाह को ता० २१ अगस्त को ज्ञात हुआ (जि० १, पृ० ६१-७०)।

जोधपुर में महाराजा जयसिंह के रहते समय वि० सं० १७६५

भाद्रपद बदि ५ (ई० सं० १७०८ ता० २६ जुलाई) को

अजीतसिंह की पुत्री का
संबंध जयसिंह के साथ होना

अजीतसिंह ने अपनी पुत्री सूरजकुंवरबाई का
संबंध उसके साथ किया।

वर्षा ऋतु की समाप्ति होने पर राजपूतों की सेना ने मेड़ता के मार्ग
से होते हुए अजमेर की तरफ प्रस्थान किया। जहां उस समय मुसलमानों

अजीतसिंह और जयसिंह
का सांभर पर आक्रमण
करना

की बड़ी छावनी थी। वहां से राजपूतों की फौज
सांभर की तरफ अप्रसर हुई। उसका सामना
करने के लिए मेवात का सूबेदार सैयद हुसेनखां

बारहा, मेड़ता संगलढाना का फौजदार अहमद सईदखां तथा नारनोल का
फौजदार गैरतखां बड़े। उनके पहले ही आक्रमण में राजपूतों को अपना
सामान छोड़कर भागना पड़ा और वह सारा सामान सैयदों के हाथ लगा।
दोनों राजा कुछ ही दूर पहुंचे थे कि उन्हें यह समाचार मिला कि
मुसलमान सेनापति अपने दो भाइयों, दूसरे संबंधियों एवं कितने ही
अनुयायियों-सहित मार डाला गया। बात यह हुई कि जिस समय
मुसलमानों की सेना में विजय की खुशियां मनाई जा रही थीं, उसी समय
हुसेनखां की दृष्टि एक किनारे पर खड़े हुए एक राजपूत सरदार पर पड़ी,
जो अपने दो हज़ार सैनिकों-सहित ऊंटों पर सामान लादकर भागने में
व्यस्त था। यह देखते ही वह अपने थोड़े से साथियों-सहित उधर बढ़ा।
राजपूत एक ऊंचे टीले पर थे और सैयद नीचे। उनके निकट पहुंचते ही
राजपूतों ने गोलियां चलाईं और वे भागने को भी उद्यत हुए, परन्तु
उनका पहला ही बार इतना कारगर हुआ कि फौजदार अपने दोनों भाइयों
एवं पचास साथियों सहित वहीं खेत रहा। मुखियों की मृत्यु मुसलमानों
के लिए बड़ी हानिकारक सिद्ध हुई और मुसलमान सैनिक जो इधर-उधर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८७-६। 'वीरविनोद' में भी
इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ८३४)।

लूट-मार में लगे हुए थे, प्राण-रक्षा के निमित्त भाग गये^१। जब यह समाचार राजाओं के पास पहुंचा तो पहले तो उन्हें इसपर विश्वास ही न हुआ, परन्तु अन्त में बे थापस लौटे। हुसेनखां का मृत शरीर हाथी के होदे के नीचे मिला। वह तथा अन्य शव रणभूमि में ही गाड़ दिये गये^१।

(१) “मअसिरुल-उमरा” (जि० २, पृ० ५००) में इससे बिल्कुल भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि सैयद हुसेनखां आंबेर का क़ौजदार था। दोनों राजाओं के शाही सेवा से भागने और उनके आंबेर पर आक्रमण करने के इरादे का पता पाकर, उसने अपने पुत्रों आदि सहित युद्ध की तैयारी की, लेकिन राजपूतों के पहुंचते ही उसकी सेना भाग गई। तब खां ने आंबेर से निकलकर कालादहरा (?) नामक मैदान में दुर्गादास का सामना किया, जिसमें राजपूतों की पराजय तो हुई पर खां का डेरा भी लुट गया और उसका एक पुत्र मारा गया। दूसरे दिन खां को भी भागना पड़ा। नारनोल में पहुंचकर उसने नई सेना एकत्र की। सांभर के निकट फिर विरोधी दलों का सामना हुआ। प्रारम्भ में तो खां की ही विजय हुई, परन्तु अचानक बालू की पहाड़ी के पीछे छिपे हुए दो-तीन हजार राजपूत बन्दूकचियों ने उसकी सेना पर बन्दूकों चलाई^१। इस प्रकार घिर जाने पर खां और उसके बहुतसे साथी मारे गये। मुहम्मदज़मांखां और सैयद मसऊदखां गिरफ्तार कर लिए गये, जिनमें से पहला मार डाला गया और दूसरा राजा के समक्ष पेश किया गया (इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ७० टिप्पण १)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, ६६-७०। जोधपुर राज्य की क्वात में इस लड़ाई के संबंध में लिखा है कि वि० सं० १७६५ भाद्रपद सुदि २ (ई० सं० १७०८ ता० ६ अगस्त) शुक्रवार को राजा जयसिंह का डेरा शेखावत के तालाब पर हुआ, जहां गुजरात के सूबेदार गाजूद्रीखां (? गाज़ीउद्दीनखां) के पास से क़ासिद पत्र लेकर आये। इसके दूसरे दिन अजीतसिंह, जयसिंह तथा दुर्गादास कूचकर मेड़ता होते हुए पुष्कर गये, जहां अजमेर के सूबेदार शुजाअतखां ने राठोड़ कनीराम उदावत की मारफ़त उनसे कह-लाया कि अजमेर बादशाही इलाक़ा है, उसकी इज़त रखना क़र्ज़ है, मैं बादशाह को लिख-कर जोधपुर और आंबेर का मनसब मंगवा दूंगा और खर्च का जोतीन लाख रुपया मंज़ूर हुआ था, वह भी पहुंचा दूंगा। इस प्रकार धोखे में डाल उसने दोनों राजाओं को एक मास तक पुष्कर में ही रोक रखा और बादशाह के पास मदद के लिए लिखा। इसपर आगरा, मथुरा, नारनोल तथा आंबेर से रामचन्द्र-द्वारा भगाई हुई सेनाएं सहायतार्थ आ गईं। यह ख़बर पाकर जयसिंह ने सांभर पर चढ़ाई की। वहां के क़ौजदार अलीमुहम्मद ने कालिक वदि १३ (ता० ३० सितम्बर) को उसका मुक़ाबला किया, पर पीछे से भागकर

इस प्रकार सांभर पर अधिकार कर लेने के बाद वहां की आय दोनों नरेशों में बराबर-बराबर बांटी जाने का निर्णय होकर वहां दोनों के अधिकारी रख दिये गये। इसके बाद ही डीडवाणा पर भी महाराजा अजीतसिंह का अधिकार हो गया^१।

अपनी अपूर्व वीरता, स्वामीभक्ति, युद्ध-कौशल, राजनैतिक योग्यता एवं स्वार्थत्याग के कारण दुर्गादास की प्रतिष्ठा राठोड़ सरदारों एवं अन्य राजाओं आदि में बढ़ी हुई थी।

दुर्गादास का मारवाड़ में
निर्वातित किया जाना

उसकी यह बढ़ती हुई प्रतिष्ठा महाराजा को असह्य होने से उसने बुरे लोगों के बहकाने में आकर दुर्गादास को, जिसने उस (अजीतसिंह) के बाल्यकाल से ही उसकी पूरी मदद की थी, वि० सं० १७६५ के अन्त के आस-पास मारवाड़ से निकाल दिया^२। इससे महाराजा की बड़ी बदनामी

वह देवजानी के कोट में चला गया। अनन्तर मथुरा का कौजदार सैयद गौरतख, नारनोल का सैयद हसनखान और आंखेर का सैयद तुसेनअहमद आठ हजार सवार और विशाल तोपखाने के साथ आये। दोनों राजाओं के पास बीस-पच्चीस हजार सौज थी। परस्पर लड़ाई होने पर सैयद सरदार, जो हाथी पर था, मारा गया, अलीमुहम्मद पकड़ लिया गया और मुसलमानों की अन्य सेना भाग गई, जिसका महाराजा की कौज ने पांच कोस तक पीछा किया। इस लड़ाई में हाथी, घोड़े आदि बहुत सा सामान विजेताओं के हाथ लगा। महाराजा की तरफ के राठोड़ भीम सबलसिंहोंत कृपावत (आसोप), भाटी किशनसिंह (आंख), राठोड़ केसरीसिंह काशीसिंहोंत आदि काम आये और अन्य कितने ही घायल हुए (वि० २, पृ० ८६-८७)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात, वि० २, पृ० ८०। “वीरविनोद” (भाग २, पृ० ८३५-६) में दुर्गादास का उदयपुर के पंचोली बिदारीदास के नाम का एक पत्र छपा है, जिससे पाया जाता है कि दोनों राजाओं (जयसिंह और अजीतसिंह) ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) को भी सहायतार्थ बुलाया था; परन्तु दुर्गादास उस समय उसे जाने के लिए न जा सका जिससे महाराणा स्वयं सम्मिलित न हुआ, जैसा कि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी प्रकट है (वि० २, पृ० ८१ तथा ११९)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सांभर-विजय के बाद वहां आने पर दुर्गादास ने अपनी सेना-साहत अलग डेरा किया। महाराजा ने उससे मिलकर

हुई^१। दुर्गादास मारवाड़ का परित्याग कर उदयपुर महाराणा (अमरसिंह द्वितीय) की सेवा में चला गया^२। महाराणा ने उसे विजयपुर की जागीर^३ देकर अपने पास रक्खा और उसके लिए पांचसौ रुपये रोज़ाना नियत कर दिये^४। पीछे से वह रामपुरे का हाकिम नियत हुआ^५, जहां रहते समय

(सरदारों की पंक्ति) में डेरा करने को कहा तो उसने उत्तर दिया कि मेरी तो उमर अब थोड़ी रह गई है, मेरे पीछे के लोग मिसल में डेरा करेंगे। दुर्गादास को महाराजा के इस व्यवहार का ध्यान रहा और जब वह राणा को बुलाने के लिए भेजा गया तो वहां से लौटा ही नहीं (जि० २, पृ० ११६)।

(१) इस विषय में निम्नलिखित पद्य प्रसिद्ध है—

महाराज अजमालरी जद पारख जाणी ।

दुर्गो देशां कादियो गोलां गांगाणी ॥

आशय—महाराज अजमाल (अजीतसिंह) की परीक्षा तो तब हुई जब उसने दुर्गो(दुर्गादास) को देश से निकाल दिया और गोलों को गांगाणी जैसी जागीर दी ।

(२) बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास के साथ उसके दो पुत्र तेजकरण और महेशकरण उदयपुर गये। अभयकरण महाराजा जयसिंह के पास गया और चैनकरण समदरडी में ही रहा (ऐतिहासिक बातें; संख्या २६८)।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६३-४। उक्त पुस्तक में विजयपुर की जागीर के सम्बन्ध के दुर्गादास के बिहारीदास पंचोली के नाम के वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ६ के पत्र की नक़ल छपी है ।

बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास को सादड़ी की जागीर मिली थी, जहां रहते समय उसने अपनी नौ बहिन-बेटियों के विवाह किये (ऐतिहासिक बातें; संख्या २६७) ।

(४) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०३४। टॉड ने महाराणा के नाम लिखे हुए बादशाह बहादुरशाह के एक पत्र का उल्लेख किया है, जिसमें इसका वर्णन है। उससे यह भी पाया जाता है कि बादशाह ने महाराणा को दुर्गादास को सौंपने के विषय में लिखा, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया ।

(५) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६२। वहां रहते समय वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ५ को दुर्गादास ने महाराणा के नाम एक अर्ज़ी भेजी, जिसकी नक़ल उक्त पुस्तक में छपी है ।

उसकी वि० सं० १७७५ मार्गशीर्ष सुदि ११ (ई० स० १७१८ ता० २२ नवंबर) को मृत्यु हुई^१ । उसका अन्तिम संस्कार क्षिप्रा नदी के तट पर हुआ^२ ।

वि० सं० १७६५ (ई० स० १७०८) के मार्गशीर्ष मास में दोनों नरेशों ने आंबेर की ओर प्रस्थान किया । आंबेर पहुंचकर जयसिंह वहां की गद्दी पर बैठा । महाराजा ने उसे टीके में हाथी-घोड़े दिये । कुछ समय बाद अजीतसिंह वहां से सांभर लौट गया^३ ।

जयसिंह का आंबेर पर
अधिकार होना

इसी बीच रूपनगर (कृष्णागढ़) के राजा राजसिंह (मानसिंहोत्त) ने, जो अजीतसिंह के भयसे अपनी ननसार देवलिया में जा रहा था,

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का मेवाड़ में ही मरना लिखा है (जि० २, पृ० ११६) ।

चंडू के यहां से प्राप्त जन्मपत्रियों के संग्रह में दुर्गादास का जन्म वि० सं० १६६५ द्वितीय श्रावण सुदि १४ (ई० स० १६३८ ता० १३ अगस्त) सोमवार को होना लिखा है । बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास ने ८० वर्ष ३ मास २८ दिन की उमर पाई (ऐतिहासिक वार्तें; संख्या २७१) । इसके अनुसार उसकी मृत्यु की उपरि-लिखित तिथि ही आती है ।

(२) इस विषय में निम्नलिखित प्राचीन पद्य प्रसिद्ध है—

अण्ण घर याही रीत दुर्गो सफरां दागियो ।

आशय—इस घराने (जोधपुर) की ऐसी ही रीति है कि दुर्गादास का दाह भी सफरां (क्षिप्रा) नदी के तट पर हुआ (मारवाड़ में नहीं) ।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६१ । टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१५ ।

हर्विन-कृत “लेटर मुगल्स” से पाया जाता है कि राजा जयसिंह ने बीस हजार सवार और पैदल सेना के साथ रात्रि के समय आक्रमण कर आंबेर के क़ौजदार सैयद हुसैनख़ां को भगा दिया और इस प्रकार उसका वहां अधिकार हो गया (जि० १, पृ० ६६) ।

अजीतसिंह और जयसिंह
के नाम उनके राज्यों का
फरमान होना

शाहजादे अज़ीमद्दीन (? अज़ीमुद्दौल्ला) को लिखा कि दोनों राजाओं के पास बड़ी सेना है और उनका दिल्ली तक बिगाड़ करने का इरादा है, अतएव उन्हें उनके वतन (जोधपुर और आंवरे) दिला दिये जावें तो अच्छा हो। इसपर शाहजादे ने बादशाह से अर्ज़ कर दोनों राजाओं के नाम उनके इलाकों के फरमान लिखवाकर भिजवा दिये। राजसिंह फरमान लेकर अजीतसिंह के पास गया, जिसपर वह जोधपुर चला गया^१।

जोधपुर पहुँचने पर महाराजा ने पाली के ठाकुर मुकुन्ददास चांपा-
वत को धोखे से मरवा डाला। महाराजा ऊपर से तो उससे खुश था, पर
भीतर ही भीतर वह उससे जलता था, क्योंकि
पाली के ठाकुर को छल में
मरवाना। पाली की ज़मीन और मनसब उसे बादशाह की
तरफ़ से प्राप्त हुआ था। मुकुन्ददास क्रोध पर
बुलवाया गया, जहाँ छीपिया के ठाकुर प्रतापसिंह उदावत और सबलसिंह
कुंपावत ने उसको मार डाला। इसपर मुकुन्ददास के वीर राजपूतों भीमा
और धन्ना^२ ने प्रतापसिंह को मारकर बदला लिया और आप भी मारे

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ११। इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" से भी पाया जाता है कि शाहजादे अज़ीमुद्दौल्ला के बीच में पड़ने से ई० स० १७०८ ता० ६ अक्टोबर (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ४) को अजीतसिंह तथा जयसिंह शाही सेवा में बहाल कर लिये गये (जि० १, पृ० ७१)।

(२) भीमा चौहान और धन्ना गहलोत थे। तथा दोनों मामा-भांजे लगते थे। सरलहृदय मुकुन्ददास के मारे जाने की खबर सुनते ही उन्होंने बलपूर्वक ताशलीपोल के किवाड़ तोड़कर महल के भीतर प्रवेश किया और प्रतापसिंह को मारकर अपने स्वामी का घेर लिया तथा राजसेना से वीरतापूर्वक लड़कर वे स्वयं भी मारे गये। वे राजपूताने में अग्रिम वीर माने जाते हैं। उनके विस्तृत परिचय के लिए देखो मलसीसर (जयपुर) के विद्यानुरागी शेखावन ठाकुर बुरसिंह-द्वारा संगृहीत "विविध संग्रह" (प्रथम संस्करण); ३० ११०-१२।

गये' ।

उसी वर्ष पौष मास में महाराजा ने ससैन्य नागोर की तरफ प्रस्थान कर गांव उचरे में डेरा किया। वहां के स्वामी इन्द्रसिंह के पुत्र मोहकमसिंह को इसकी पहले से खबर मिल जाने पर वह वहां से भाग गया। फिर महाराजा का डेरा मूंडवा में होने पर इन्द्रसिंह की माता तथा कुंवर अजबसिंह उसके पास उपस्थित हो गये। इन्द्रसिंह की माता ने महाराजा से प्रार्थना कर नागोर के संबंध में उसकी माफ़ी प्राप्त की। पीछे से इन्द्रसिंह भी अपने पुत्र-पौत्र सहित हाज़िर हो गया। कुछ समय बाद इन्द्रसिंह का कुंवर २०० सवारों के साथ जोधपुर जाकर माघ सुदि २ (ई० स० १७०६ ता० १ जनवरी) को महाराजा के पास उपस्थित हुआ और चार दिन वहां रह कर लौटा^२ ।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३७-८ । जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० ८४-६ । इस सम्बन्ध में नीचे लिखी कविता प्रसिद्ध है —

आजूणी अश्वरान, मल्लज रुणी मुकंदरी ।
पातलरी परभात, भली रुवाणी भीमड़ा ॥
पांच पहर लग पौठ, जड़ी रती जैधाणी ।
रै गढ़ ऊपर रौठ, भली मचाई भीमड़ा ॥
चांग ऊपर चूरु, उदा करे न आदरे ।
धन्ना वाळी धूरु, जण जण ऊपर जूकवे ॥
भीमा धन्ना सारखा, दो भड़ राख दुवाह ।
सुण चन्दा खरज कहे, राह न रोके राह ॥
गढ़ साखी गहलोत, कर साखी पातल कमध ।
मुकन रुवारी मोत, भली सुधीरी भीमड़ा ॥

रुवा (रघुनाथ) मुकन्ददास का भाई था, जो उसके साथ ही मारा गया था ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६१-२ ।

महाराजा अजीतसिंह के महाराणा अमरसिंह (दूसरा) के नाम के बि० सं०

उन्हीं दिनों अजमेर के सूबेदार शुजाअतख़ां ने महाराजा से कह-
लाया कि बादशाह ने मुझे यहाँ से हटा दिया है। आपने सांभर एवं डीडवाणा
पर अधिकार कर लिया और सैयदों को (सांभर में)
अजीतसिंह का अजमेर के
सूबेदार पर आक्रमण
करना
मारा, इससे बादशाह मुझसे नाराज़ है; अतएव
मैं तो बतन को जा रहा हूँ। यहाँ फ़ीरोज़ख़ां
का पुत्र नियुक्त हुआ है, पर वह भय के कारण
नहीं आ रहा है और उज्जैन के मार्ग से आगे चला गया है, अतएव आप
आकर अजमेर पर अधिकार कर लें। वास्तव में यह सब उसका छल था
और वह चाहता था कि महाराजा के पहुँचते ही उसे मार डाले। महाराजा
ने पचीस-तीस हजार फ़ौज एकत्र कर वि० सं० १७६५ फाल्गुन सुदि ५
(ई० सं० १७०६ ता० ३ फ़रवरी) को प्रस्थान किया। उधर शुजाअतख़ां ने
मेवाती फ़ीरोज़ख़ां के पुत्र (पुर मांडल का थानेदार) के पास से तथा अन्य स्थलों
से सेना मंगवा रखी थी और दरवाज़े के बाहर खाई खोदकर वह तैयार
बैठा था। दांतड़ा पहुँचकर जब महाराजा को यह सब हाल ज्ञात हुआ तो
उसने अन्य स्थानों से तोपखाना तथा फ़ौज बुलवाकर चैत्र वदि ७ (ता० १६
फ़रवरी) को आक्रमण किया। कई दिन तक लड़ाई होने पर भी जब शुजा-
अतख़ां की विजय के दर्शन न हुए तो उसने रूपनगर के स्वामी राजसिंह
की मारफ़त हाथी, घोड़े और ४५००० रुपये देकर घेरा उठवा दिया^१।

१७६५ माघ सुदि ७ (ई० सं० १७०६ ता० ७ जनवरी) के खरीते से भी इस घटना
की पुष्टि होती है, जो उदयपुर राज्य में विद्यमान है। आगे चलकर उसमें महाराजा ने
लिखा है कि अब तक जो कार्य हुए हैं वह सब आपकी कृपा से ही हुए हैं और आगे
भी जो होंगे आपकी सहायता से होंगे। साथ ही उसमें उसने शाहज़ादे अज़ीम के साथ,
जो उधर आ रहा था, स्वयं मुकाबिला करने की बात लिखकर महाराजा को भी इसके
लिए तैयार रहने को लिखा। इससे स्पष्ट है कि उस समय तक अजीतसिंह को महा-
राजा की तरफ़ से सहायता मिलती रही थी।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६३-४। “वीरविनोद” में भी
महाराजा का अजमेर से रुपये वसूल करना लिखा है (भाग २, पृ० ८३६)।

बहादुरशाह के राज्यसमय के ता० ४ सफ़र सन् जलूस ३ (वि० सं० १७६६

कई रोज़ अजमेर में रहकर महाराजा देवलिया गया, जहां उसने बिना मुहूर्त के आशुषादि वि० सं० १७६५ (चैत्रादि १७६६) चैत्र सुदि १२ (ई० सं० १७०६ ता० ११ मार्च) को महारावत पृथ्वीसिंह की पुत्री से विवाह किया। वहां से वैशाख वदि ५ (ता० १६ मार्च) को वह जोधपुर लौटा।

महाराजा का देवलिया में
विवाह होना

अजमेर की चढ़ाई की खबर बादशाह बहादुरशाह के पास दक्षिण में पहुंची तो नवाब असदख़ां ने ता० ११ सफ़र सन् जुलूस ३ (वि० सं० १७६६ प्रथम वैशाख सुदि १३=ई० सं० १७०६ ता० ११ अप्रैल) को गुजाअतख़ां को महाराजा अजीतसिंह आदि को समझाने के लिए ख़त लिखा। ई० सं० १७०६ ता० २५ दिसंबर (वि० सं० १७६६ पौष सुदि ५) को बहादुरशाह ने नर्मदा को पार किया। अनन्तर वह मांडू, नालछा, देपालपुर आदि स्थानों में होता हुआ अजमेर से तीस कोस दूर दांढवा सराय में ठहरा। वहां यारमुहम्मदख़ां कुल और हांसी का नाहरख़ां, जो विद्रोही राजाओं के पास भेजे गये थे, उनके मंत्रियों आदि को लेकर बादशाह के पास पहुंचे। ई० सं० १७१० ता० २२ मई (वि० सं० १७६७ ज्येष्ठ सुदि ५) को शाहज़ादे अज़ीमुशशान ने दोनों राजाओं के पत्र बादशाह के समक्ष पेश किये। उस (शाहज़ादे) के प्रार्थना करने पर बादशाह ने उनके अपराध क्षमा कर दिये। शाहज़ादे ने मंत्रियों को ख़िल-अतें दीं। इसके चार दिन पश्चात् बादशाह के लोडा (? टोडा) पहुंचने पर महाराणा अमरसिंह, महाराजा अजीतसिंह और जयसिंह के सेवकों के

प्रथम वैशाख सुदि ६ = ई० सं० १७०६ ता० ४ अप्रैल) के अख़बार से भी पाया जाता है कि अजमेर के निवासियों से रुपये वसूलकर अजीतसिंह ने वहां से घेरा उठाया। ये अख़बार “अख़बारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला” के नाम से प्रसिद्ध हैं और जयपुर के संग्रह में सुरक्षित हैं।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २ पृ० ६४। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८३६। ऊपर टिप्पण १ में दिये हुए अख़बार से भी बीस हजार सवारों के साथ महाराजा अजीतसिंह का अपनी शादी के लिए देवलिया जाना स्पष्ट है।

(२) बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८३६-४०।

लिए खिलअत भेजी गई। इस अवसर पर एक खिलअत दुर्गादास के पास से पत्र लानेवाले व्यक्ति को भी दी गई। इसी बीच सरहिन्द के उत्तर से सिक्खों के विद्रोह की खबर आई। ऐसी परिस्थिति में राजपूताने के राजाओं के साथ शीवातिथीय मेल करना बादशाह के लिए आवश्यक हो गया। वज़ीर मुनइमखां के निवेदन करने पर उसका पुत्र महाबतखां दोनों राजाओं अजीतसिंह और जयसिंह को आश्वासन देकर उन्हें लाने के लिए भेजा गया। इसके तीन दिन बाद देवराई (दौराई) में डेरे होने पर बादशाह के पास खबर आई की गंगवाना में दोनों राजाओं से मिलकर महाबतखां ने ता० २० जून (आषाढ सुदि ५) को उन्हें शाही सेवा में उपस्थित होने के लिए राजी कर लिया है। इसपर मुनइमखां भी दोनों राजाओं के पास भेजा गया। ता० २१ जून (आषाढ सुदि ६) को अजीतसिंह और जयसिंह महाबतखां के साथ बादशाह के पास उपस्थित हुए और प्रत्येक ने दो सौ मोहरें तथा दो हज़ार रुपये उसको नज़र किये। इसके बदले में बादशाह की तरफ से उन्हें खिलअत, रतम-जटित तलवार और कटार, येशक्रीमत रुमाल, हाथी, फ़ारस के घोड़े आदि दिये गये। इसके बाद बादशाह ने उन्हें अपने-अपने देश लौटने की इजाज़त दी।

(१) हर्विन; लेटर मुग़लस, जि० १, पृ० ७१-३। आगे चलकर उसी पुस्तक में लिखा है कि राजपूत गुसलमानों के घबराव का कितना कम भरोसा करते थे यह तत्कालीन इतिहास लेखक कामवरखां के लेख से प्रकट होता है। कामवरखां ने, जो उस समय मौजूद था, देखा कि चारों ओर पहाड़ियों और मैदानों में राजपूत भरे हुए थे। कई हज़ार राजपूत तो दो दो, तीन तीन की संख्या में बन्दूक अथवा तीर-कमान से सज्जित ऊंटों पर सवार पहाड़ियों की घाटियों में छिपे हुए थे। वस्तुतः विश्वासघात का ज़रा भी आभास पाने पर वे अपने स्वामिनों की रक्षा के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार थे।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में जो वृत्तान्त दिया है वह नीचे लिखे अनुसार है—

“बि० सं० १७६७ में बहादुरशाह दक्षिण से अजमेर गया। इसपर राज-परिवार को पोकरण फ़लोधी में भेजकर महाराजा ने भंडारी खीवसी को अजमेर भेजा, जिसने शाहज़ादे अज़ीमशाह (? अज़ीमुद्दौला) की मारकृत बादशाह से मुलाकात कर,

बादशाह के पास से विदा होकर दोनों राजा पुष्कर गये, जहां वे पर्वस्तान के लिए ठहरे। वहां से दोनों अलग होकर अपने-अपने राज्यों को गये। अजीतसिंह जुलाई मास में जोधपुर पहुंचा।

महाराजा का पुष्कर होते हुए जोधपुर जाना

महाराजा की तरफ से भंडारी पेमसी ने देवगांव (ज़िला अजमेर) जाकर वहां के स्वामी से १५००० रुपये वसूल किये थे। कुछ ही समय बाद महाराजा ने स्वयं वहां जाकर राठोड़ नाहरसिंह^२ से गद्दी खाली कर देने को कहलाया। उसने अर्ज की कि मुझे तो राठोड़ दुर्गादास ने यहां बैठाया है और मैं तो आपका सेवक हूं। तब फिर १५००० रुपये पेशकशी के

देवगांव के स्वामी से पेश-कशी वसूल करना

अपने स्वामी के लिए काबुल के सूबे का क्रमान प्राप्त किया। पीछे बादशाह का डेरा गांव सढोरे (?) में हुआ, जहां रहते समय भंडारी खीवसी पुनः उसके पास गया। फिर उसके कहलाने पर महाराजा बादशाह के पास गया। आंबेर से जयसिंह भी गया और दोनों शाहजादे की मारकत बादशाह की सेवा में उपस्थित हुए (जि० २, पृ० ६६)।

“वीरविनोद” में भी वि० सं० १७६७ में भंडारी खीवसी को भेजकर शाहजादे अज़ीमुद्दौला की मारकत बादशाह से क्रमान पाना और खुद अजीतसिंह का बादशाह के पास जाना लिखा है (भाग २; पृ० ८४०)। टॉड कृत “राजस्थान” से पाया जाता है कि अजीतसिंह के नागौर पर चढ़ाई करने से अप्रसन्न हो इन्द्रसिंह ने इसकी शिकायत बादशाह से की। इसपर बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ। तब दोनों राजाओं ने भयभीत होकर उससे मेल करना ही ठीक समझा। क्रमान और पंजा प्राप्त होने पर अजमेर में वे बादशाह के पास वि० सं० १७६७ आषाढ वदि १ को उपस्थित हो गये, जहां उनका समुचित सम्मान होकर जोधपुर और आंबेर की जागीरें उन्हें मिल गईं (जि० २, पृ० १०१५-६)।

(१) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० १, पृ० ७३। टॉड-कृत “राजस्थान” (जि० २, पृ० १०१६) में भी इसका उल्लेख है, पर जोधपुर राज्य की ख्यात तथा “वीरविनोद” में महाराजा का सीधे जोधपुर जाने का उल्लेख है और उसका पुष्कर ठहरना नहीं लिखा है।

(२) चन्द्रसेन के वंशधर भिणाय के स्वामी श्यामसिंह के छोटे भाई साठोजा के स्वामी गिरधारीसिंह का पौत्र एवं देवगांव बवेरा का संस्थापक।

ठहराकर तथा उसके पुत्र के सदैव चाकरी में रहने और बुलाये जाने पर स्वयं उसके हाज़िर होने की शर्त कर महाराजा ने वहां से कूच किया^१।

वि० सं० १७६८ (ई० सं० १७११) के भाद्रपद मास में महाराजा फ़ौज लेकर कृष्णागढ़ गया, जहां के राजा राजसिंह से उसने वंड वसूल किया^२। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कृष्णागढ़ में भंडा लगाकर महाराजा रूपनगर गया, जहां चार दिन तक लड़ाई होने के बाद बात ठहराकर राजसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया^३।

उसी वर्ष बादशाह की आज्ञा से महाराजा नाहन (पंजाब) गया, जिधर के विरोधी सरदारों का उसने दमन किया। वहां से वह गंगा-स्नान के लिए गया और वसन्त ऋतु में जोधपुर लौटा^४।

उसी वर्ष पंजाब के सिक्खों का उपद्रव दबाने के लिए बादशाह स्वयं पंजाब की तरफ़ गया। ई० सं० १७११ ता० ११ अगस्त (वि० सं० १७६८ प्रथम भाद्रपद सुदि ६) को वह लाहोर पहुंचा। ई० सं० १७१२ (वि० सं० १७६८) के जनवरी मास के मध्य में वह बीमार पड़ा। उसके बाद क्रमशः उसकी दशा बिगड़ती गई और हि० सं० ११२४ ता० २१ मुहर्रम (ता० २६

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६६।

(२) वीरबिनोद; भाग २; पृ० ८४०।

(३) जि० २, पृ० ६६-७। “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि मारवाड़ के राजा के अजमेर पर अधिकार करने के कारण रूपनगर का राजा राजसिंह उससे विरोध रखने लगा था और उसने दिल्ली जाकर बादशाह से उसकी शिकायत तक की थी (चतुर्थ भाग; पृ० ३०४०)। संभवतः यही चढ़ाई का कारण रहा हो।

(४) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०। अन्य किसी ख्यात आदि में इसका उल्लेख नहीं है।

फ़ारबरी = फाल्गुन वदि ७) को उसका देहान्त हो गया ।

बहादुरशाह के मरते ही उसके पुत्रों, अज़ीमुश्शान, जहांदारशाह, जहांशाह (खुज़्मतद अस्तार) तथा रफ़ीउल्क़दर (रफ़ीउश्शान) के बीच बादशाहत के लिए विरोध पैदा हुआ । उनमें से अज़ीमुश्शान एक तरफ़ रह्य और शेष तीनों भाइयों ने सम्मिलित होकर उसका विरोध किया । कई लड़ाइयां होने के बाद अज़ीमुश्शान और उसके बहुत से पक्षपाती मारे गये तथा तीनों शाहज़ादों की विजय हुई । पीछे से उनमें भी संपत्ति के बंटवारे के संबंध में झगड़ा हुआ और दोनों भाइयों को मारकर मुहम्मदज़ुहीन जहांदारशाह बादशाह बना । लाहौर से चलकर हि० सं० ११२४ ता० १८ जमादिउल्अव्वल (वि० सं० १७६६ आषाढ़ वदि ५ = ई० सं० १७१२ ता० १२ जून) को वह दिल्ली पहुंचा, जहां उसने अपने दूसरे विरोधियों को मरवाया या कैद में डलवा दिया । वह भी अधिक समय तक राज्य-सुख न भोगने पाया था कि उस-पर अज़ीमुश्शान के पुत्र फ़र्रुख़सियर ने चढ़ाई कर दी ।

औरंगज़ेब के समय अज़ीमुश्शान को बंगाल और बहादुरशाह के समय उड़ीसा, इलाहाबाद और अज़ीमाबाद (पटना) की सूबेदारी मिली थी, जहां क्रमशः जाफ़रखां, सैयद अब्दुल्लाखां एवं सैयद हुसेनअलीखां को अपनी तरफ़ से नियुक्त कर वह खुद बादशाह (बहादुरशाह) की सेवा में

(१) बील; एन ओरिएण्टल बायोग्राफ़िकल डिक्शनरी; पृ० ६५ ।

बादशाह के मरने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न-भिन्न मत मिलते हैं । “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि बहादुरशाह की मृत्यु एक कलावंत के हाथ से हुई (चतुर्थ भाग; पृ० ३०३२-३) । जोधपुर राज्य की ख्यात में भी ऐसा ही उल्लेख है (जि० २, पृ० ६६) । ख़ाफ़ीखां लिखता है कि वह दिमाग में ख़लल आने से ७-८ दिन में मर गया । “मिरात-इ-आफ़ताबनुमा” और “ख़ानदान-इ-आलमगीरी” में उसका पेट के दर्द से मरना लिखा है । “सैरुलमुताख़िरिन” में दो-चार दिन पूर्व से उसका मिज़ाज और होश बदल जाना और फिर बीमारी से मरना लिखा है । कर्नल टॉड बादशाह का विष-प्रयोग-द्वारा मारा जाना लिखता है । “बीरबिनोद” में उसका एकाएक मरना लिखा है ।

रहता था। अज़ीमुद्दौल्लाह की मृत्यु के समय उसका पुत्र फ़र्रुख़सियर ज़नाने-सहित अकबरनगर में था। जहाँदारशाह ने बादशाह होने पर फ़र्रुख़सियर को गिरफ्तार कर भेजने के लिए जाफ़रखां के पास एक फ़रमान भेजा। स्वामिभक्त जाफ़रखां ने शाहज़ादे को आगाह कर दिया। इसपर पटने में सैयद हुसेनअलीखां के पास जाकर उसने उससे मदद मांगी। उसने मदद देना स्वीकार कर अपने भाई अब्दुल्लाखां को भी अपने शरीक किया। तदनन्तर फ़र्रुख़सियर को बादशाह घोषित कर हुसेनअलीखां ने पटने से प्रस्थान किया। यह ख़बर मिलने पर जहाँदारशाह ने सैयद अब्दुल्लाख़ान् फ़ारुख़ी को दस-बारह हज़ार सवारों के साथ इलाहाबाद की हुकूमत पर भेजा, पर वह अब्दुल्लाखां की सेना-द्वारा परास्त होकर मार डाला गया। फिर इलाहाबाद से अब्दुल्लाखां को भी साथ लेकर फ़र्रुख़सियर आगे बढ़ा। इसपर जहाँदारशाह का बड़ा शाहज़ादा अअज़ुद्दीन उसके मुक़ाबले के लिए गया, पर खजवा गांव में उसकी हार हुई। तब हि० स० ११२४ ता० १२ ज़िल्काद (मार्गशीर्ष सुदि १५ = ता० १ दिसम्बर) सोमवार को जहाँदारशाह स्वयं मुक़ाबले के लिए दिल्ली से रवाना हुआ। आगरे के आगे समूतनगर के निकट विपत्ती दलों का सामना होने पर जहाँदारशाह हारकर आगरे के क़िले में चला गया। फिर उसके दिल्ली पहुंचने पर आसफ़ुद्दौला असदखां ने उसे नज़रबन्द कर दिया। इस प्रकार विजय प्राप्त कर ता० १५ ज़िल्हिज (माघ वदि २ = ई० स० १७१३ ता० २ जनवरी) को फ़र्रुख़सियर ने दरबार किया, जिसमें अब्दुल्लाखां की मारफ़त हाज़िर होकर तूरानी सरदारों ने नज़रें पेश कीं। फिर अब्दुल्लाखां को कई उमरावों के साथ दिल्ली का बन्दोबस्त करने के लिए भेजकर एक सप्ताह बाद फ़र्रुख़सियर ने स्वयं भी उधर प्रस्थान किया। हि० स० ११२५ ता० १४ मुहर्रम (माघ सुदि १५ = ता० ३० जनवरी) को दिल्ली के पास बारहपुले में पहुंचकर उसने अब्दुल्लाखां को "कुतुबुल्मुल्क" का खिताब तथा सात हज़ार ज़ात सात हज़ार सवार का मनसब देकर अपना वज़ीर-आज़म और हुसेनअलीखां को "इमामुल्मुल्क" का खिताब तथा सात

हज़ार ज्ञात सात हज़ार सवार का मनसब देकर अपना अमीरउल्उमरा बख्शीउल्मुल्क अव्वल बनाया। इस अवसर पर अन्य कई व्यक्तियों को भी मनसब, खिताब और ओहदे मिले। ता० १६ मुहर्रम (फाल्गुन यदि २ = ता० १ फ़रवरी) को जहांदारशाह फांसी देकर मार डाला गया। इसके दूसरे दिन फ़र्रुखसियर ने क़िल्ले में प्रवेश किया^१।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पूरब के सूबे में शाहज़ादा फ़र्रुखसियर था, जिसके मुसाहिब बारहा के सैयद अब्दुल्लाखां और हुसेनअली थे। उसने ८० हज़ार फ़ौज के साथ दिल्ली की तरफ़ प्रस्थान किया। व्यय के लिए धन सैयद अपने मामा से ले आये। इसपर दिल्ली से जहांदारशाह ने उनका सामना करने के लिए प्रस्थान किया और जोधपुर से अजीतसिंह को सहायतार्थ बुलाया^२। अजीतसिंह स्वयं तो न गया, पर उसने भंडारी विजयराज को भेज दिया और उसे ताकीद कर दी कि मुसलमान आपस में लड़ मरें तो ठीक नहीं तो उसी का साथ देना, जिसकी जीत होती देखो। जहांदारशाह ने और भी कई राजाओं और उमरावों को सहायतार्थ बुलाया, पर कोई गया नहीं। आगरे के निकट युद्ध होने पर जहांदारशाह पकड़ा गया, सैयद घायल हुए और फ़र्रुखसियर दिल्ली के तख़्त का स्वामी हुआ। वज़ीर का पद और बख्शीगीरी क्रमशः अब्दुल्लाखां और हुसेनअलीखां को मिली। अनन्तर बादशाह से आज्ञा प्राप्तकर विजयराज जोधपुर लौटा^३।

ऊपर आये हुए वर्णन से स्पष्ट है कि सैयद-बन्धुओं की सहायता से ही फ़र्रुखसियर दिल्ली के तख़्त का स्वामी बना था, पर सल्तनत मिलते

(१) बीरबिनोद; भाग २, पृ० ११३०-३५। इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० १८६, २०५-४०, २४५-५५।

(२) इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी जहांदारशाह-द्वारा अजीतसिंह एवं अन्य राजपूत राजाओं के बुलवाये जाने का उल्लेख है (जि० १, पृ० २२३)।

(३) जि० २, पृ० ६६-१००।

बादशाह का सैयद बन्धुओं
से विरोध होना

ही उसने सैयद अब्दुल्लाख़ां की मर्जी के खिलाफ़ लोगों को ओहदे, मनसब आदि देना शुरू कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि बादशाह और वज़ीर के दिलों में फर्क आने लगा। खुशामदी लोगों का बादशाह पर प्रभाव बढ़ने से इस विरोध में वृद्धि ही होती गई।

श्रावणादि वि० सं० १७६६ (चैत्रादि १७७० = ई० सं० १७१३) में महाराजा-द्वारा बुलवाये जाने पर जूनिया के ठाकुर सुजानसिंह के पुत्र कर्णसिंह और जुभारसिंह^२ जोधपुर गये, जहाँ उनके पिता के महाराजा का जूनिया के वैर^३ में उन्हें महाराजा के पक्ष के राठोड़ जैतसिंह कर्णसिंह तथा जुभारसिंह सूरसिंहोत (मेड़तिया, बोखंदा का), राठोड़ दौलतसिंह को मरवाना जुभारसिंहोत (मेड़तिया, कोसाणा का), राठोड़ पृथ्वीसिंह दुलेराजोत(मेड़तिया, राहण का) आदि ने ज्येष्ठ सुदि १ (ता० १४ मई) को चूक कर मार डाला।

इसके बाद उसी वर्ष (वि० सं० १७७०) भाद्रपद सुदि ५ (ता० २४ अगस्त) को महाराजा ने अपने आदमियों को भेजकर दिल्ली में नागोर के

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ११३५ ।

(२) इनके वंश में क्रमशः मेहरूँ और पीसांगण के ठिकाने हैं। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जैतारण का गांव रास इनके पट्टे में था (जि० २, पृ० १००)। “वीरविनोद” से पाया जाता है कि ये बड़े वीर थे और बादशाह की तरफ़ से इन्हें, बदनोर, पुर, मांडल आदि परगने मिले थे, जिसकी वजह से उदयपुरवालों के साथ इनका झगड़ा रहता था (भाग २, पृ० ७५२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में वैर का कारण यह दिया है कि अजीतसिंह के राज्य पाने से पूर्व सुजानसिंह (केसरीसिंहोत, जूनिया का स्वामी) ने शाही-सेवा स्वीकार कर ली थी। उसके पक्ष में उसे जागीर में सोजत और सिवाना मिले। उसकी महाराजा के राजपूतों से भी कई लड़ाइयां हुईं (जि० २, पृ० ६७)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६७ तथा १००। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१।

मोहकमसिंह को मरवाना राव इन्द्रसिंह के कुंवर मोहकमसिंह को मरवा डाला। इसपर बादशाह ने इन्द्रसिंह को उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह-सहित बुलवाया। महाराजा ने मोहनसिंह को भी मार्ग में दया से मरवा दिया^१।

इसके बाद ही बादशाह ने जोधपुर पर सेना रवाना की। राजपूतों का उपद्रव पहले—बहादुरशाह के राज्यकाल में—ही बढ़ गया था, जिसका समुचित प्रबंध नहीं होता था। उसके महाराजा पर शाही सेना की चढ़ाई मरते ही जोधपुर में नियुक्त शाही अफसरों को निकालने और उनके घर नष्ट करने के अतिरिक्त अजीतसिंह ने अपने यहां गो-हत्या और आज्ञान का दिया जाना बन्द करवा दिया। साथ ही उसने अजमेर पर भी कब्जा कर लिया। फ़र्ब्रसियर

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१। जोधपुर राज्य की ख्यात में इसका विस्तृत विवरण दिया है, जो इस प्रकार है—

“बादशाह फ़र्ब्रसियर के सिंहासनारूढ़ होने पर नागोर के राव इन्द्रसिंह का कुंवर मोहकमसिंह उसके पास दिखी गया। वहां रहनेवाले जोधपुर के वकीलों ने लिखा कि वह जोधपुर पाने के लिए प्रयत्नशील है तो महाराजा ने भाटी अमरसिंह केशोदासोत, राठोड़ अमरसिंह नाथावत और उसके भाई मोहकमसिंह (कीटणोद के), राठोड़ कर्णसिंह विजयसिंहोत (थोब का) एवं राठोड़ दुर्जनसिंह सबलसिंहोत जोधा (पाटोदी का) को बीस-पच्चीस सवारों के साथ उस (मोहकमसिंह) को चूककर मारने के लिए भेजा। वे व्यापारियों के रूप में दिखी पहुंचे और जब एक दिन कुंवर (मोहकमसिंह) संध्या-समय किसी नवाब के यहां से मातमपुर्सी करके लौट रहा था, उन्होंने उसे मार्ग में ही मार डाला। इससे प्रसन्न होकर महाराजा ने उनके लौटने पर उन्हें सिरपाव तथा आभूषण आदि पुरस्कार में दिये। बादशाह ने इसपर राव इन्द्र-सिंह और उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह को दिखी बुलवाया, जिसपर वे एक दो हज़ार आदमियों के साथ रवाना हुए। इसकी खबर पाकर महाराजा ने राठोड़ दुर्जनसिंह, राठोड़ सूरजमल, राठोड़ शिवसिंह गोपीनाथोत (सरनावड़ा का), राठोड़ मोहकमसिंह और राठोड़ कृतहसिंह को उनपर चूक करने के लिए भेजा। उन्होंने मार्ग में ही मोहनसिंह को, जब वह सो रहा था, मार डाला, जिससे राव इन्द्रसिंह अकेला ही दिखी गया (जि० २, पृ० १००-२)।”

ने अपने राज्यारम्भ में अजीतसिंह के पास इस विषय में लिखा, पर वहाँ से सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त न होने से अन्त में चढ़ाई करने का ही निश्चय हुआ^१। बादशाह की इच्छा स्वयं युद्ध में सम्मिलित होने की थी, पर स्वास्थ्य ठीक न होने एवं अन्य लोगों के समझाने से उसने अपना विचार स्थगित रक्खा और इस कार्य के लिए सैयद हुसेनअलीखां को नियुक्त किया^२। इस अवसर पर बादशाह ने दुहरी चाल चली। इधर तो उसने अजीतसिंह के विरुद्ध हुसेनअलीखां को रवाना किया और उधर अजीतसिंह को गुप्तरूप से फ़रमान भेजकर लिखा कि वह जैसे भी हो हुसेनअलीखां को मार डाले^३। इसके बदले में उसे बहुत कुछ इनाम-इकराम देने का वचन दिया गया। हि० स० ११२५ ता० २६ जिल्काद (वि० सं० १७७० पौष सुदि १ = ई० स० १७१३

(१) जोनाथन स्कॉट भी चढ़ाई का क़रीब क़रीब यही कारण देता है (हिस्ट्री ऑफ़ डेकन; जि० २, पृ० १३६)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इन्द्रसिंह के दिल्ली पहुँचने के बाद बादशाह ने सैयद हुसेनअलीखां की अध्यक्षता में एक बड़ी क़ौज मारवाड़ पर रवाना की (जि० २, पृ० १०२)। “वीरविनोद” से भी पाया जाता है कि नागोर के मोहकमसिंह और मोहनसिंह के मरवाये जाने से बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ और उसने हुसेनअलीखां को एक बड़ी क़ौज के साथ मारवाड़ पर भेजा (भाग २, पृ० ८४१)। टॉड ने भी यही कारण दिया है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०)।

(२) जोनाथन स्कॉट लिखता है कि बादशाह ने मीर जुमला और उसके साथियों की सलाह से दोनों भाइयों (सैयद बन्धुओं) को अलग करने का यह उपाय स्थिर किया कि उनमें से एक को महाराजा अजीतसिंह को दंड देने के लिए भेज दिया जाय। तदनुसार अमीरहुजुमरा (हुसेनअलीखां) इस कार्य के लिए रवाना किया गया (हिस्ट्री ऑफ़ डेकन; जि० २, पृ० १३६)। “वीरविनोद” में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११३५)।

(३) “वीरविनोद” में भी इस आशय के फ़रमान के भेजे जाने का उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि यह फ़रमान महाराजा ने हुसेनअलीखां को दिला दिया (भाग २, पृ० ११३५)।

ता० ७ दिसम्बर) को हुसेनअलीखां ने बादशाह से बिदा ली। इस चढ़ाई में उसके साथ अन्य सरदारों में सरबुलन्दखां, अफ़ास्याबखां, एतक्कादखां, दिलदिलोरखां, सैफ़ुद्दीनअलीखां, नज्मुद्दीनअलीखां, राजा गोपालसिंह भदोरिया तथा रूपनगर का राजा राजबहादुर (राजसिंह) आदि थे। हि० स० ११२५ ता० १५ जिल्दहज (माघ वदि ३ = ता० २३ दिसम्बर) को अजीतसिंह के पास से एक प्रार्थनापत्र आया, पर वह सन्तोषजनक न होने से चढ़ाई का कार्य पूर्ववत् जारी रहा। फिर उस (महाराजा) का मुन्शी रघुनाथ एक हज़ार सवारों के साथ सन्धि की शर्तें तय करने के निमित्त सराय सहल में आया। हुसेनअलीखां उस समय सराय अल्लावर्दीखां में था। उसने महाराजा अजीतसिंह द्वारा रखी गई शर्तें अस्वीकार कर दीं। इसके बाद मुसलमान सेना पुनः आगे बढ़ी। उस समय राठोड़ सेना के सांभर से बारह कोस दक्षिण में होने की खबर थी और ऐसी अफ़वाह थी कि अबसर पाते ही वे मुसलमान फ़ौज पर आक्रमण करेंगे, परन्तु दिल्ली से अजमेर तक कोई घटना न घटी। सांभर के परगने से गुज़रते समय शाही सेना ने सनमगढ़ का नाश किया। अजमेर पहुँचने पर शाही सेना कुछ दिनों तक आनासागर के किनारे पड़ी रही, जहाँ से महाराजा के पास क़ासिद भेजे गये। फिर वहाँ से प्रस्थान कर मुसलमान सेना पुष्कर होती हुई मेड़ता पहुँची, जहाँ एक थाना नियत कर दो हज़ार सेना रख दी गई। अजीतसिंह इसके पूर्व ही वहाँ से हट गया था। अजमेर और मेड़ता के बीच जोधपुर और जयपुर राज्यों के गांव मिले-जुले थे। शाही सेना का आगमन सुनते ही जोधपुर के गांवों के निवासी गांव खाली कर चले गये। इसपर खाली गांवों को नष्ट करने और लूटने की आज्ञा दी गई। यह देखकर जोधपुर के गांवों के निवासी अपने पड़ोसी जयपुर के गांववालों की मारफ़्त बात ठहराकर अपने-अपने गांवों में लौट आये। मेड़ता के मार्ग में ही हुसेनअलीखां

(१) जालराम-कृत “तुहफ़तुलहिन्द” में इस घटना का समय हि० स० ११२६ ता० १४ मुहर्रम (बि० सं० १७७० फ़ाल्गुन वदि १ = ई० स० १७१४ ता० २० जनवरी) दिया है।

ने अन्य लोगों से मन्त्रणा कर निर्णय किया कि यदि अपनी एक पुत्री का विवाह बादशाह से करने और अपने कुंवर को शाही सेना में भेजने के लिए अजीतसिंह राजा न हो तो उसको पकड़कर उसका सिर दरबार में भेज दिया जाय। कुछ लोग उस समय जोधपुर पर आक्रमण करने के विरुद्ध थे, क्योंकि उन दिनों गर्मी अधिक होने के साथ ही पानी और गल्ले आदि की कमी और मंहगाई थी, परन्तु अपना बहुतसा सामान वहीं छोड़कर हुसेनअलीखां ने शीघ्र जोधपुर की तरफ बढ़ने का ही निश्चय किया। इस चढ़ाई के परिणाम की सूचना बादशाह के पास हि० सं० ११२६ ता० १४ रबीउलअव्वल (वि० सं० १७७१ वैशाख वदि १ = ई० सं० १७१४ ता० २० मार्च) को पहुँची। उससे पता चला कि एक ही रात में अजीतसिंह सांभर के निकट से हटकर मेड़ता और फिर वहां से जोधपुर चला गया, जहां उसे अपनी रक्षा की अधिक आशा थी, पर जब उसे इस बात की खबर मिली कि शाही सेना बढ़ती ही आ रही है, तो अपने जनाने को पहाड़ी प्रदेश में भिजवाकर वह स्वयं बिकानेर जा रहा। हुसेनअलीखां के मेड़ता के निकट पहुँचने पर महाराजा की तरफ से डेढ़ हज़ार सवारों के साथ एक दूत-दल सन्धि के लिए उसके पास पहुँचा। शाही अफसरों को शक था कि राजा को निकल जाने का अवसर देने के लिए यह केवल बहाना है, अतएव इसकी जांच करने के लिए हुसेनअलीखां ने उनसे कहा कि तुम्हें जंजीरों से बांधा जायगा। पहले तो राजपूतों ने इसे अस्वीकार कर दिया, पर पीछे से वे इसके लिए राजी हो गये। उनमें से चार मुखिया जंजीरों से बांधकर तंबू में लाये गये। उनको इस दशा में देख नीच प्रकृति के लोगों ने यही समझा कि शायद संधि की शर्तें ठुकरा दी गईं और उनमें से कितनों ने ही राजपूतों पर आक्रमण कर उन्हें लूटना शुरू कर दिया। इस गड़बड़ी को शान्त करने में बड़ा समय लगा। मुखियों को बुलाकर उनकी

(१) टैंड लिखता है कि अजीतसिंह ने अपनी व्यक्तियों को सिंघाना एवं अपने परिवारवालों तथा पुत्र को राडदवा की मरुभूमि में भिजवा दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०)।

जंजीरें खोल दी गईं और उन्हें आश्वासन दिया गया । अन्त में मेड़ता पटुंचने पर सन्धि की शर्तें तय हो गईं, जिनके अनुसार यह निश्चित हुआ कि महाराजा बादशाह के लिए अपनी पुत्री का “डोला” भेजे, उसका पुत्र अभयसिंह हुसेनअलीखां के साथ शाही दरबार में जाय और बुलाये जाने पर स्वयं महाराजा भी दरबार में उपस्थित हों^३ ।

हुसेनअलीखां के मारवाड़ से लौटने पर सन्धि की शर्तों के अनुसार

(१) जोनाथन स्कॉट लिखता है कि हुसेनअलीखां के आगमन से भयभीत होकर अजीतसिंह सपरिवार पहाड़ों में जा रहा और शाही दरबार की तरफ से अमीर-लउमरा का विरोध करने का इशारा मिलने पर भी उसने उसके पास दूत भेजकर अपने अपराधों की क्षमा चाही । चूंकि इसी समय शाही दरबार में बादशाह और उसके वज़ीर (अब्दुल्लाखां) के बीच विरोध बढ़ने लगा तथा उस (वज़ीर) को क्रोध करने का षड्यन्त्र रचा जाने लगा, इसलिये अब्दुल्लाखां ने अपने भाई को कई पत्र लिखकर उसे शीघ्र दिल्ली अपने को लिखा । तब अधिक देर लगाना विपत्ति-जनक जान हुसेनअलीखां ने अजीतसिंह का अधीनता मानना स्वीकार कर लिया (हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १३६) । “वीरविनोद” में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११३५) ।

(२) कन्या का पिता अपनी पुत्री का विवाह अपने यहां न कर उसे विवाह के लिए घर के यहां भेजता है, उसको राजपूताने में “डोला” कहते हैं ।

(३) हर्विन; लेटर मुग़लस; जि० १, पृ० २८५-६० । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१ । जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १३६ ।

हर्विन ने यह वर्णन कामबर के “तज़किरातुस्सलातीन-इ-चशतिवा”, कामराज के “इबरतनामा”, क़ासिम लाहोरी के “इबरतनामा”, मुहम्मद क़ासिम औरंगाबादी के “अहवाल-उल-ख़वाकीन” और “मअसिरुलउमरा” के आधार पर लिखा है ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में केवल दो शर्तों—पुत्री का विवाह करने एवं अभय-सिंह को बादशाह के पास भेजने—का उल्लेख है और यह सन्धि मेड़ते में भंडारी खींवसी-द्वारा होना लिखा है । उससे यह भी पाया जाता है कि हुसेनअलीखां के आगमन की खबर पाकर महाराजा ने चांपावत भगवानदास जोगीदासोत (भीनमाल), जोधा भीम रणछोड़दासोत (खैरा) आदि कई व्यक्तियों को उसके पास भेजा था, पर उसका कोई परिणाम न निकला (जि० २, पृ० १०१-३) ।

महाराजा अजीतसिंह ने अपने पुत्र अभयसिंह को उसके साथ कर दिया^१।

कुंवर अभयसिंह का बाद-
शाह के पास जाना

ता० ५ रज्जब (द्वितीय आषाढ़ सुदि ६ = ता० ७ जुलाई) को हुसेनअलीखां बादशाह के पास पहुँचा, जिसने उसके साथ गये हुए सरदारों को इनाम दिये।

इसके तीसरे दिन अभयसिंह बादशाह के रूबरू पेश किया गया^२। बादशाह ने सैयद अहमद जिलानी को सोरठ (सौराष्ट्र) से हटाकर अभयसिंह को वहाँ का हाकिम नियत किया। इसपर वह स्वयं तो दरबार में ही रहा, परन्तु उसने सोरठ का प्रबंध करने के लिए अपने कार्यकर्ता फ़तहसिंह कायस्थ को भेज दिया^३। कुछ मास तक वहाँ ठहरकर श्रावणादि वि० सं० १७७१ (चैत्रादि १७७२ = ई० सं० १७१५) के आषाढ़ मास में अभयसिंह बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर लौटा। बादशाह ने उसके दरबार से प्रस्थान करते समय उसे सिरोपाव एवं आभूषण आदि दिये^४।

सन्धि हो जाने और अभयसिंह के भंडारी खीवसी के साथ दिल्ली चले जाने पर वि० सं० १७७१ (ई० सं० १७१४) के आश्विन मास में महाराजा जोधपुर से सिवाणा होता हुआ बाड़मेर-कोटड़ा गया। वहाँ से उसने खीवसी को लिखा कि गुजरात, मारोठ, पर्वतसर, बावल और केकड़ी

महाराजा का अहमदाबाद
जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार भंडारी खीवसी भी अभयसिंह के साथ दिहली गया (जि० २, पृ० १०४)।

(२) हर्विन; लेटर मुगल्स; जि० १, पृ० २६०।

(३) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, भाग १, पृ० २६७। मीरात-इ-अहमदी; भाग २, पृ० १।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४। टॉड लिखता है कि अभयसिंह के दरबार में उपस्थित होने पर उसे पाँच हज़ारी मंसब मिला। उसके कथनानुसार पीछे से महाराजा भी दिहली गया, जहाँ से थोड़े समय बाद वह अपने मनोरथ सफल कर लौटा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२१)। कर्णवीरान-कृत “सूरजप्रकाश” में भी अभयसिंह को पाँच हज़ारी मंसब मिलना लिखा है (पृ० १२८)।

यदि मेरे मनसब में लिखे जायेंगे तो मैं अपनी कुंवरी का डोला भेजूंगा। तदनुसार बादशाह से अर्ज कर उसी वर्ष मार्गशीर्ष मास में खीबसी ने उक्त स्थानों का क्रमशः उसके नाम करा दिया, जिसके प्राप्त होने पर महाराजा ने जोधपुर आकर पहले भंडारी बिजयराज खेतसिंहोत को रवाना किया और फिर वि० सं० १७७२ में वह स्वयं भी अहमदाबाद चला गया।

वि० सं० १७७२ (ई० सं० १७१५) के आश्विन मास में महाराजा की पुत्री इन्द्रकुंवरी का विवाह बादशाह फ़र्रुख़सियर से करने के लिए

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४। कैम्बेल-कृत “गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी” (जि० १, भाग १, पृ० २१६) तथा “वीरविनोद” (भाग २, पृ० ८४१) में भी महाराजा अजीतसिंह को अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना और वि० सं० १७७२ में उसका वहां जाना लिखा है। “भीरात-इ-अहमदी” से पाया जाता है कि महाराजा को छ हज़ार ज़ात छ हज़ार सवार का मनसब और अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर उसने भंडारी विजयराज को वहां का नायब बनाकर भेजा, जो वहां हि० सं० ११२७ ता० ७ शाबान (वि० सं० १७७१ आश्विन सुदि ८ = ई० सं० १७१४ ता० ७ अगस्त) को पहुंचा। महाराजा खुद हि० सं० ११२८ ता० १० रबीउल-अव्वल (वि० सं० १७७२ फाल्गुन सुदि १२ = ई० सं० १७१६ ता० २३ फ़रवरी) गुरुवार को शाही बाग़ (अहमदाबाद के निकट) में पहुंचा और अरुड़ा मुहूर्त देखकर भद्र (अहमदाबाद में) के क़िले में उसने प्रवेश किया। वहां के नौकरों, जागीरदारों, दारोगाओं और तहवीलदारों को उसने पूर्ववत् बहाल रक्खा (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन क़य्द; जि० २, पृ० १-२)। टॉड लिखता है कि वि० सं० १७७२ में अजीतसिंह अपने पुत्र अभयसिंह के साथ अपनी हुकूमत (अहमदाबाद की सूबेदारी) पर गया। सर्वप्रथम वह जालोर गया, जहां वह वर्षा ऋतु पर्यन्त रहा। अनन्तर उसने मेवासा (सिरोही इलाक़े में) पर आक्रमण कर नीमज (? नीषज, सिरोही राज्य) के देवकों से दंड लिया। पालनपुर से फ़ीरोज़ख़ां उससे मिलने के लिए आया। थराद के राव ने एक लाख रुपया उसे दिया। इसी प्रकार खम्भातवालों और कोली सरदार चेमकण्य को भी महाराजा ने अधीन बनाया। फिर चांपावत शक्ता एवं भंडारी विजय, जो एक वर्ष पूर्व उक्त सूबे का प्रबन्ध करने के लिये भेजे गये थे, पाटण से आकर उसके शामिल हो गये (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२२)।

इन्द्रकुंवरी का डोला दिल्ली
जाना

उस (कुंवरी) का “डोला” दिल्ली भेजा गया। उसके साथ भंडारी खाँवसी सपरिवार गया^१। इर्विन लिखता है—“हि० स० ११२७ ता० १२ जमादिजलअव्वल (वि० सं० १७७२ वैशाख सुदि १३ = ई० स० १७१५ ता० ५ मई) को बादशाह का मामा शाहस्ताख़ां जोधपुर से दुलहिन को लाने के लिए भेजा गया। वह उसे साथ लेकर ता० २५ रमज़ान (आश्विन वदि १२ = ता० १३ सितम्बर) को दिल्ली पहुँचा, जहाँ दुलहिन के स्वागत के लिए महल के आंगन में तम्बू खड़े किये गये थे। अनन्तर वह अमीरुलउमरा (सैयद हुसेनअलीखाँ) के मकान में भेजी गई तथा विवाह के इन्तज़ाम का कार्य कुतुबुलमुल्क (सैयद अब्दुल्लाखाँ) के सुपुर्द किया गया^२।”

उन्हीं दिनों विवाह से पूर्व बादशाह सख्त बीमार पड़ा। जब उसके दरबारी हकीम उसे अच्छा करने में समर्थ न हुए, तो लाचारी की हालत में उसने ईस्ट इंडिया कम्पनी के दूत-दल के साथ
बादशाह की बीमारी
आये हुए डॉक्टर सर्जन हैमिल्टन से अपना इलाज कराना मंजूर किया। उसने चीरा लगाकर उसे पुनः नीरोग कर दिया। चीरा लगाने के समय पेसी अफ़वाह उड़ी कि बादशाह हैमिल्टन के हाथों मर गया। इस अफ़वाह से जनता इतनी क्रुद्ध हुई कि लोगों ने जाकर उस मकान को घेर लिया, जहाँ दूत-दल ठहरा हुआ था और उनको मारने की धमकी दी। लोगों को सन्तोष उसी समय हुआ, जब बादशाह ने स्वयं महल की खिड़की पर आकर लोगों को आश्वासन दिया कि हैमिल्टन को योग्य चिकित्सा के कारण ही मुझे नया जीवन प्राप्त हुआ है। इसपर लोग अंग्रेज़ों को आदर की दृष्टि से देखने लगे। बादशाह हैमिल्टन की

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४-५। मुरारीदास-कृत “तवारीख़-इ-मारवाड़” में भी इसका उल्लेख है।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३०४। इस वर्णन के लिखने में इर्विन ने मिर्ज़ा मुहम्मद-लिखित “तज़किरा अथवा हजरतनामा” और कामबरखाँ-लिखित “तज़किरातुस्सलातीन-इ-बग़तिषा” का आश्रय लिया है।

सेवा से बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसका पूर्ण सम्मान करने के साथ ही उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांग लो। हैमिल्टन ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी की व्यापारिक सुविधा के लिए कुछ मांगें पेश कीं, जो बादशाह ने उसी समय स्वीकार कर लीं। दूत-दल के लौटते समय बादशाह ने हैमिल्टन से शाही सेवा स्वीकार करने की स्थाविर प्रकट की, जिसे उसने उस समय अस्वीकार कर दिया; परन्तु कलकत्ते का प्रबंध कर उसने लौटने का वायदा किया। उस समय बादशाह ने उसे उपहार में जो वस्तुएं दीं उनमें उसके चीर-फाड़ के कुल औजारों के सुवर्ण-निर्मित नमूने भी थे। बंगाल में लौटने के कुछ ही समय बाद हैमिल्टन की मृत्यु हो गई^२।

(१) “वीरचिनोद” में लिखा है कि उस नेक शूरस (हैमिल्टन) ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के फ़ायदे के लिए निम्नलिखित दो मांगें पेश कीं—

(१) कम्पनी के लिए बंगाल में ३८ गांव ख़रीदने की इजाज़त।

(२) जो माल कलकत्ते के प्रेसिडेन्ट के दस्तख़त से रवाना हो उसके महसूल की माली।

बादशाह ने ये दोनों बातें क़बूल कर लीं, लेकिन बंगाल के सूबेदार ने ज़मींदारों को मना कर दिया, जिससे ज़मीन तो कम्पनी को न मिल सकी, परन्तु महसूल मात्र हो गया (भाग १, पृ० ८१)

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १३६ और उसका टिप्पण्य।

जोनाथन स्कॉट आगे चलकर लिखता है कि इस घटना का पता मुझे मि० हेस्टिंग्स से लगा, जिसने मुझसे कहा कि जब मैं भारतवर्ष में प्रथम बार आया उस समय यहां ऐसे व्यक्ति विद्यमान थे, जिन्होंने ये घटनायें आंखों से देखी थीं। साथ ही हैमिल्टन के कलकत्ते के स्मारक स्तंभ पर भी इनका उल्लेख था।

बादशाह विवाह से पूर्व सख़्त बीमार पड़ा था, जिस वजह से इन्द्रकुंवरी के दिल्ली में पहुंच जाने पर भी विवाह में विलम्ब हुआ ऐसा इर्बिन-कृत “लेटर मुग़लस” में भी लिखा है तथा उससे यह भी पाया जाता है कि उसका इलाज दूत-दल के साथ आये हुए सर्जन विलियम हैमिल्टन ने किया। ई० स० १७१५ ता० ३ दिसम्बर

रोग-मुक्त होने के बाद पौष मास^१ में महाराजा अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुंवरी का विवाह बादशाह के साथ हुआ। विवाह के समय बादशाह ने हिन्दू रीति के अनुसार तोरण-ध्वनन किया और भंडारी खींवसी की पत्नी ने उसकी आरती कर केसर का तिलक किया एवं मोतियों के अक्षत लगाये तथा उसकी नाक खींची। इससे बादशाह बड़ा खुश हुआ और उसने पुरोहित अखैराज, बारहट केसरसिंह तथा भंडारी खींवसी को सिरोपाव तथा अन्य पुरस्कार दिये^२।

जोनाथन स्कॉट इस विवाह के प्रसंग में लिखता है—“दुल्हिन की तरफ के सारे कार्य अमीरकुमरा ने किये और शादी ऐसी शानोशौकत और धूमधाम से हुई, जैसी हिन्दुस्तान के राजाओं के यहां पहले कभी नहीं देखी गई थी। शाही जलूस में शानदार भंडे नज़र आते थे। नगर की रोशनी सितारों की रोशनी को मात करती थी। छोटे-बड़े सभी ने इस विवाह के जलूसों में भाग लिया और सब आनन्द से भरे नज़र आते थे। बादशाह अमीरकुमरा के महलों में गया, जहां शादी की रस्म अदा होने के अनन्तर वह राजकुमारी को शाही शानो-शौकत और बाजे-गाजे के साथ, आनन्द से चिल्लाते हुए जन-समूह के बीच से अपने महल में ले गया^३।”

(वि० सं० १७७२ पौष वदि ४) को अच्छे होने के बाद बादशाह ने पहले पहल स्नान किया और ता० १० दिसम्बर को उसने हैमिंस्टन को मूल्यवान उपहार दिये (जि० १, पृ० ३०५-६)।

(१) “वीरविनोद” में पौष वदि ८ (ता० ७ दिसम्बर) को फर्लससियर के साथ इन्द्रकुंवरबाई का विवाह होना लिखा है (जि० २, पृ० ८४१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्याल; जि० २, पृ० १०४-५। “वंशभास्कर” में स्वयं महाराजा का दिल्ली जाकर अपनी पुत्री का बादशाह से विवाह करना लिखा है (चतुर्थ खंड, पृ० ३०५०)।

(३) हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १३६।

इस घटना का वर्णन जोनाथन स्कॉट ने ब्राह्मणों की ऐतिहासिक पुस्तक

नागोर का ममसब कुंवर अभवसिंह के नाम होने की सूचना मिलने पर महाराजा ने मेड़ता के हाकिम भंडारी प्रेमसी और जोधपुर के हाकिम भंडारी अनूपसिंह के पास आका भेजी कि वे वहां जाकर अधिकार कर लें। इसपर श्रावणादि वि० सं० १७७२ (चैत्रादि १७७३) ज्येष्ठ सुदि १३ (ई० सं० १७१६ ता० २३ मई) को रवाना होकर सोजत की सेना के साथ जोधपुर का हाकिम आषाढ वदि १३ (ता० ६ जून) को गांव नाराधणा में पहुंचा। नागोर से राव इन्द्रसिंह की फौज ने जाकर उसका मुक्काबला किया। पर तीन पहर तक घमासान लड़ाई होने के बाद

“तारीख इ-इरादतख़ां” से दिवा है। इरादतख़ां बादशाह फर्रुखसियर के समय विद्यमान था, जिसके समय का हाल उसने अपनी पुस्तक में दिया है। पहले इस पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद जोनाथन स्कॉट ने पुस्तकाकार प्रकाशित किया था। पीछे से स्वलिखित “हिस्ट्री ऑफ़ डेकन” की दूसरी जिल्द प्रकाशित करते समय उसने उसे भी उसमें शामिल कर दिया।

इर्विन इस विवाह के सम्बन्ध में लिखता है—“बादशाह की तरफ़ से उसकी पत्नी के लिए उपहारों का प्रबन्ध उस (बादशाह) की माता ने किया था, जो हि० सं० ११२७ ता० १५ ज़िलिहज (वि० सं० १७७२ पौष वदि २ = ई० सं० १७१५ ता० १ दिसम्बर) को उसके पास भेजे गये। ता० २१ ज़िलिहज (पौष वदि ८ = ता० ७ दिसम्बर) को सारे दीवाने आम, जिलाउख़ाना (महल का आंगन), सबकों आदि पर रोशनी का बहुत सुन्दर प्रबन्ध किया गया। रात्रि को नौ बजे भंडारी खीवसी-द्वारा लाई हुई पोशाक पहनकर बादशाह बड़े समारोह के साथ अमीरुलउमरा के मकान पर गया। इस अवसर पर जो कृत्य हुए उनमें हिन्दू एवं मुसलमानी रीति रिवाजों का सम्मिश्रण पाया जाता था। राजपूतों ने अपने यहां का रिवाज बताकर मुसलमानों को गुलाबजल में धोली हुई अफीम पीने पर मजबूर किया, जिसपर उनमें से बहुतों ने उसे पिचा भी। इस अवसर पर एक सोने की अद्भुत तश्तरी देखने में आई, जो पहले कभी देखी नहीं गई थी। उसके पांच ख़ानों में से चार में क्रमशः हीरे, लाल, पत्ते तथा पुखराज और मध्यवाले ख़ाने में बड़े-बड़े मूल्यवान मोती रक्खे थे। विवाह का जशन मनाने में बिलम्ब होने का कारण बादशाह की बीमारी थी (खेटर मुग़दस; जि० १, पृ० ३०४-५)।” एक स्थल पर इर्विन लिखता है कि बादशाह ने अपनी पत्नी के लिए “मेहर” में एक लाख मोहरें लिखवाईं (वही; जि० १, पृ० ३०४)।

उसे हारकर नागोर भागना पड़ा। तब भंडारी प्रेमसी कूचकर आषाढ सुदि १५ (ता० २३ जून) को नागोर पहुंचा। अनन्तर वहां मोर्चे लगने पर राठोड़ भीम रणछोड़दासोत की मारफ्त बात ठहराकर राव इन्द्रसिंह ने नागोर खाली कर दिया और स्वयं दिल्ली चला गया। उसी वर्ष श्रावण वदि ७ (ता० ३० जून) को जोधपुर का नागोर पर अधिकार हो गया, जिसकी सूचना अहमदाबाद में महाराजा के पास पहुंचने पर उसने सरदारों के लिए सिरोपाव आदि भेजे और भंडारी प्रेमसी को वहां का हाकिम नियत किया तथा मेड़ता में उसके स्थान में भंडारी गिरधरदास नियुक्त हुआ^१।

सोरठ की ओर के राजाओं आदि की तरफ शाही खिराज की बहुत रकम वाकी रह गई थी। उसे वसूल करने के लिए अहमदाबाद से महाराजा अजीतसिंह रवाना हुआ। नवानगर-महाराजा की द्वारिका-यात्रा (जामनगर) पहुंचकर जब उसने वहां के स्वामी से पेशकशी की अधिक रकम मांगी तो दोनों में कई गोज़ तक तोप-बन्दूक की लड़ाई हुई। तदनन्तर वहां का मामला तयकर मार्ग में दूसरे राजाओं से खिराज वसूल करता हुआ, महाराजा द्वारिका गया^२। द्वारिका में रहते समय आलणियावास के ठाकुर कल्याणसिंह तथा रीयां के ठाकुर सरदार-सिंह की मृत्यु हो गई। यही नहीं द्वारिका की इस यात्रा में महाराजा के साथ के ३००० आदमी और बेशुमार ऊंट, घोड़े एवं बैल मर गये^३, जिसका

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०५।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-ए-अहमदी; जि० २, पृ० ११। कैम्पबेल; गैज़टियर ऑव दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० ३७०।

जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा का चढ़ाई कर बड़नगर (? जामनगर) के जाबेचा स्वामी से पांच लाख रुपया पेशकशी ठहराना लिखा है (जि० २, पृ० १०६)।

(३) और सबै आणंद हुआ एक बात नह चाह।

की-न्याणो राजण तणो मुवो द्वारिका मांह ॥ १ ॥

कारण सम्भवतः किसी बीमारी का फैल जाना था ।

महाराजा अजीतसिंह के गुजरात में नियत किये हुए नायब आदि, उधर के लोगों पर बहुत जुल्म करते थे, जिसकी शिकायत बादशाह के पास होने पर महाराजा वहां की सूबेदारी से अलग कर दिया गया^१ और उसके स्थान में शम्सामुद्दौला खानदौरा (नसरतजंग बहादुर) सूबेदार नियत हुआ^२ । उसने महाराजा के नायबों को निकाल दिया, जिसपर महाराजा

महाराजा का गुजरात की सूबेदारी से हटाया जाना

सिरदारै साथे हुंती नारी परतग दोय ।

टाली भूली रह गई साथ गई नह कोय ॥ ४७ ॥

ईते मरग राह में मांगस तीन हजार ।

ऊंट, तुरंगम बैलरी कर कुण सकै सुमार ॥ ६३ ॥

अजीतविलास ।

“अजीतविलास” नामक हस्तलिखित ग्रन्थ में राव सीद्दा से लगाकर अजीतसिंह तक का कुछ-कुछ वृत्तान्त मिलता है । उक्त पुस्तक के मध्यभाग में स्वयं महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए बहुतसे दोहे अंकित हैं, जिनमें से २१२ में स्वामीभक्त सरदारों का उल्लेख और ११७ में उसकी द्वारिका-यात्रा का वर्णन है । “अजीतविलास” के कर्ता का परिचय नहीं मिलता ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी महाराजा की द्वारिका-यात्रा का उल्लेख है, पर उसमें उसका वापस जोधपुर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १०६), जो ठीक नहीं है । महाराजा द्वारिका से वापस अपने सूबे अहमदाबाद गया था (कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बांबे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० ३००) ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सैन्यदों से मेल रखने के कारण वि० सं० १७७४ में बादशाह ने महाराजा को अहमदाबाद के सूबे से अलग कर दिया । उससे यह भी पाया जाता है कि अहमदाबाद का सूबा महाराजा से द्वारिका यात्रा के पूर्व ही हटा लिया गया था । महाराजा के लिखने पर खीबसी ने उसे ४ मास के लिये और बहाल करवाया (जि० २, पृ० १०६) ।

(२) इससे कुछ समय पूर्व ही कुंवर अभयसिंह सोरठ की ज़ौजदारी से अलग किया जाकर, उसके स्थान में हैदरकुलीख़ां नियुक्त हुआ (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ८) ।

को बहुत बुरा लगा और वह लड़ाई करने के इरादे से साबरमती के निकट शाही बाग में ठहरा; परन्तु नाहरखां के, जो महाराजा का कार्यकर्ता और उसकी तरफ से वकील का काम करता था, समझाने से हि० सं० ११२६ तारीख ११ रजब (वि० सं० १७७४ द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३ = ई० सं० १७१७ ता० १० जून) को उसने जोधपुर की तरफ कूच किया।

उन दिनों बीकानेर का महाराजा सुजानसिंह केवल थोड़े से साथियों-सहित नाल में ठहरा हुआ था। महाराजा अजीतसिंह ने बीकानेर पर अधिकार करने के हेतु उस (सुजानसिंह) पर घात करने का यह उपयुक्त अवसर समझा और उसके पुत्र अमयसिंह के जन्म के उपलक्ष्य में अपने आदिमियों-द्वारा बख्साभूषण भिजवाये। गुप्तरूप से उसने अपने आदिमियों को यह आज्ञा दी कि यदि अवसर मिले तो महाराजा सुजानसिंह को पकड़ लाना नर्दा तो भेंट का सामान देकर चले आना। उसके इस उद्देश्य का पता सुजानसिंह को किसी प्रकार चल गया, जिससे वह नाल का परित्याग कर गढ़ में चला गया। तब जोधपुर के आदमी भेंट का सामान देकर जोधपुर लौट गये। इस प्रकार अजीतसिंह

बीकानेर के महाराजा
सुजानसिंह को पकड़ने
का असफल प्रयत्न

(१) मिर्जा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ११-१२। कैम्प-बेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बांवे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० २६६-३००। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१।

“मुन्तख़्ख़ुलुबाब” में लिखा है कि अजीतसिंह ने, जो अहमदाबाद तथा अजमेर का सूबेदार था, अपनी अमलदारी में गोहत्या बन्द करवादी, अतएव आगरे के सूबेदार सआदतख़ां को उसे दंड देने के लिए जाने की आज्ञा दी गई, पर वह न जा सका। तब शम्सुद्दीन कमरुद्दीनख़ां बहादुर और हैदरकुलीख़ां भेजे गये, परन्तु वे भी कई कार्यों से बीच से ही लौट गये। इसी बीच यह ख़बर आई कि निज़ामुस्सुल्तान ने अजीतसिंह की अच्छी तंबीह कर दी है। कुछ ही समय बाद महाराजा ने अहमदाबाद से हटना स्वीकार कर माफ़ी मांग ली, लेकिन अजमेर का सूबा बहाल रखने के लिए उसने प्रार्थना की (इज्जियट; हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया; जि० ७, पृ० ५१७)।

का आन्तरिक उद्देश्य सफल न हो सका ।

उधर इसी बीच बादशाह और उसके मंत्री सैयदों के बीच का विरोध क्रमशः बढ़ता ही गया, यहां तक कि बादशाह ने सैयद बन्धुओं का खात्मा करने का निश्चय किया । कृतबुलमुल्क को बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर महाराजा का दिल्ली जाना जय उसकी ऐसी मंशा का पता लगा तो वह सावधान रहने लगा । उन्हीं दिनों बादशाह ने एक नये व्यक्ति को अपना प्रीतिपात्र बनाया, जिसका नाम मुहम्मद मुराद^२ था । वह पहले तीसरे दर्जे का “मीर तुज़क” था, पर क्रमशः अपनी वाक्पटुता एवं चाटुकारी से वह बादशाह का पूर्ण विश्वास-भाजन बन गया । उसने बादशाह को विश्वास दिलाया कि मैं सैयदों का अन्त कर दूंगा । बादशाह उससे इतना खुश रहा कि उसने धीरे-धीरे बढ़ाते हुए उसका मनसब ७००० ज़ात ७००० सवार^३ का कर दिया और जम्मू की फ़ौजदारी के अतिरिक्त उसे अनेक मूल्यवान् वस्तुएं उपहार में दीं । साथ ही उसने उसे दिल्ली, आगरे आदि के सूबों में अच्छी से अच्छी जागीरें प्रदान कीं^४ । उसकी सलाह के अनुसार बादशाह ने सरबुलंदखां को बुलाकर सैयदों का प्रबन्ध करने के लिए नियत किया और उसे ७००० ज़ात ६००० सवार

(१) दबालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६०-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४७ ।

(२) मुहम्मद मुराद का जन्म काश्मीर में हुआ था और वह उसी स्थान का रहनेवाला था, जहां की फर्रुखसियर की माता थी, जिसकी मारक़त वह बादशाह की ख़िदमत में हाज़िर हुआ था ।

(३) उस समय मनसब नाम मात्र का रह गया था और हर किसी को बढ़ा से बढ़ा मनसब दे दिया जाता था, पर उसकी तनज़ाह में मनसब के अनुसार कोई जागीर नहीं मिलती थी । राजाओं की जागीरें ही उनके मनसब में गिनी जाती थीं, चाहे मनसब बढ़ा हो चाहे छोटा ।

(४) जोनाथन स्कॉट-कूत “हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन” (जि० २, पृ० १५३-४) में भी इसका उल्लेख है ।

का मनसब एवं "मुबारिजुलमुल्क नामवरजंग" का खिताब दिया। वह बुद्धिमान एवं वीर व्यक्ति था, इससे लोगों की यह धारणा होने लगी कि अब सैयद-बन्धुओं का अन्त अवश्य हो जायगा। कुतुबुलमुल्क यह देख अधिक सावधानी से रहने लगा। वह दरबार में जाता तो अपने साथ तीन-चार हज़ार सेना ले जाता। सरबुलन्दखां को यह आशा थी कि सैयद बन्धुओं का ख़ात्मा होते ही वज़ीर का पद उसे मिल जायगा, पर जब उसने स्वयं बादशाह के मुख से सुना कि वज़ीर का पद मुहम्मद मुराद के लिए सुरक्षित है तो वह इस कार्य से हट गया, लेकिन ऊपर से उसने अपना यह भाव प्रकट न होने दिया। हि० स० ११३० ता० १६ शव्वाल (वि० सं० १७७५ आश्विन वदि ५ = ई० स० १७१८ ता० ४ सितम्बर) को जब उसकी नियुक्ति आगरा में की गई तो वह इस्तीफ़ा देकर फ़रीदाबाद से ही लौट गया।

इसी बीच ईद के दिन हि० स० ११३० ता० १ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ३ = ई० स० १७१८ ता० १७ अगस्त) को ईदगाह में कुतुबुलमुल्क का अन्त करने का निश्चय हुआ, परन्तु इसकी ख़बर कुतुबुलमुल्क को अपने जासूसों-द्वारा लग गई, जिससे बादशाह का इरादा पूरा न हो सका। ऐसी दशा में बादशाह की सारी आशाएं अजीतसिंह में केन्द्रित हो गई, क्योंकि वह उसका श्वसुर लगता था, जिससे उसे उससे मदद की पूरी उम्मेद थी। उसको बुलाने के लिए नाहरखां भेजा गया, पर उस- (नाहरखां) की सद्दानुभूति सैयद बन्धुओं की तरफ़ होने से उसने अजीतसिंह को भी सैयदों के पक्ष में कर लिया। यद्यपि मन से अजीतसिंह सैयद बन्धुओं का सहायक हो गया तथापि ऊपर से दिखाने के लिए उसने जोधपुर से दिल्ली की तरफ़ प्रस्थान किया। बादशाह यह सुनकर बड़ा

(१) "वीरचिनोद" में अजीतसिंह को बुलाने की घटना पहले और ईदगाह में कुतुबुलमुल्क को मरवाने का षड्यन्त्र रचने की घटना बाद में दी है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा को बादशाह ने अहमदाबाद से बुलवाया था (भाग २; पृ० ११३८)।

खुश हुआ। हि० सं० ११३० ता० ४ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ६ = ई० सं० १७१८ ता० २० अगस्त) को महाराजा के मल्हनशाह के बाग के निकट पहुंचने की खबर पाकर बादशाह ने एतकादखां (मुहम्मद मुराद) के हाथ उसके पास एक कटार भेजी और शम्सामुद्दौला को उसे लाने के लिए भेजा। साथ ही उसके द्वारा बादशाह ने यह भी कहलाया कि मेरी मेहरबानी तुमपर इतनी ज्यादा है कि तुम कुतुबुल्मुल्क के बिना ही दरबार में उपस्थित हो सकते हो; पर उसने ऐसा करना स्वीकार न किया, क्योंकि उसे बादशाह पर भरोसा न था। पहले तो यह जानकर बादशाह को बड़ा गुस्सा आया, लेकिन और कोई रास्ता न होने से उसने कुतुबुल्मुल्क को भी दूसरे दिन दरबार में उपस्थित होने के लिए कहला दिया। ता० ५ शव्वाल (भाद्रपद सुदि ७ = ता० २१ अगस्त) को एतकादखां और शम्सामुद्दौला महाराजा को लेकर दरबार में चले, परन्तु बाहरी फाटक पर पहुंचकर उसने तबतक आगे बढ़ने से इनकार कर दिया जबतक कि उसे कुतुबुल्मुल्क के मौजूद होने का निश्चित पता न लग जाय। कई बार विश्वास दिलाये जाने पर वह वहां से आगे चला, लेकिन “दीवाने आम” के फाटक पर वह फिर रुक गया। वहां भी उसकी दिल-जमई होने पर वह आगे बढ़ा, परन्तु “दीवानेखास” के प्रवेश-द्वार पर वह फिर रुक गया, जहां कुतुबुल्मुल्क आकर उससे मिला। उसके साथ वह बादशाह के समक्ष उपस्थित हुआ। बादशाह उस(अजीतसिंह)से प्रसन्न तो न था, पर उसने प्रथानुसार खिलअत तथा अन्य उपहार की चीजें उसे दीं। इसके बाद बीस दिन तक महाराजा अथवा कुतुबुल्मुल्क दोनों में से कोई भी दरबार में उपस्थित न हुआ, पर भीतर ही भीतर उनमें बात-चीत जारी रही। इस अवधि में बादशाह और उसके वज़ीर के बीच का मनमुटाव प्रकट हो गया था, अतएव बादशाह ने प्रकटरूप से इस संबंध में कार्यवाही की, लेकिन जैसे ही उसे ज्ञात हुआ कि महाराजा तथा कुतुबुल्मुल्क एक हैं, तो उसने उनसे मेल करना चाहा। पहले एतकादखां और फिर अफ़ज़लखां सदरुससदर ने इसके लिए प्रयत्न किया, पर कोई

परिणाम न निकला। अनन्तर इस कार्य को अंजाम देने के लिए सरबुल्ले-दख्खान और शम्सामुद्दौला नियत किये गये, जिन्हें कुछ सफलता मिली। वे महाराजा एवं कुतुबुलमुल्क को राजी कर दरबार में ले गये, जहाँ कुतुबुलमुल्क के प्रार्थना करने पर बीकानेर का राज्य महाराजा के नाम कर दिया गया, लेकिन भीतर ही भीतर बादशाह अपने वज़ीर का अन्त करने के उद्योग में लगा रहा। सब तरफ से निराश होकर बादशाह ने मुरादाबाद के क़ौजदार निज़ामुलमुल्क को दरबार में बुलवाया, पर बादशाह की कमज़ोर हालत देखकर वह भी भीतर ही भीतर उससे खिंच गया। दिन पर दिन बीतने पर भी जब उसने कोई कार्यवाही न की तो बादशाह ने उससे नाराज़ होकर उसकी जागीर मुरादाबाद मुहम्मद मुराद के नाम कर दी। फिर मीरजुमला को, जो पहले सरहिन्द और फिर लाहौर में हटा दिया गया था, बादशाह ने दरबार में आने को लिखा, परन्तु पीछे से सैनिकों के भय से उसने उसे मार्ग से ही वापस जाने को लिखा। मीर जुमला ने इसपर कोई ध्यान न दिया और वह दिल्ली पहुँचकर सीधा कुतुबुलमुल्क के मकान पर गया। इससे चिढ़कर बादशाह ने मीरजुमला का मनसब उतार दिया और उसे कुतुबुलमुल्क के मकान से हटाने के लिए आदमी भेजे। ऐसी परिस्थिति में कुतुबुलमुल्क ने अपने भाई हुसेनअलीखान के पास, जो दक्षिण में था, पत्र लिखकर उसे शीघ्र दिल्ली आने को लिखा। जब इसकी सूचना बादशाह को मिली तो उसने शम्सामुद्दौला को भेजकर वज़ीर का भय मिटाना चाहा^१।

हि० सं० ११३० ता० ६ ज़िल्काद (वि० सं० १७७५ आश्विन सुदि ८ = ई० सं० १७१८ ता० २० सितम्बर) को बादशाह शिकार के लिए गया। वहाँ से लौटते हुए उसने अपनी मंशा कुतुबुलमुल्क के यहाँ जाने की प्रकट की। उधर से गुज़रते समय अजीतसिंह के उसकी ताज़ीम के

अजीतसिंह को कल करने का प्रयत्न

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३३६-२३। जोधपुर राज्य की रियासत में इन घटनाओं का उल्लेख नहीं है।

लिए बाहर निकलते ही उसका छात्मा करने का बादशाह ने बह्यंत्र रचा था, पर इसका उसे किसी प्रकार पता चल गया, जिससे वह कुतुबुलमुल्क के पास जा रहा। यह खबर मिलने पर बादशाह ने अपना इरादा बदल दिया और कुतुबुलमुल्क के यहां ठहरे बिना ही वहाँ चला गया। इसके बाद ही फिर कई बार कुतुबुलमुल्क को मारने के बह्यंत्र रचे गये, पर उनमें सफलता नहीं मिली। इसी समय के आस-पास बादशाह को पूरा यकीन हो गया कि उसके मन्सूबों का पता सैयदों को बसकी धाय तथा एतमादख़ां नाम के एक खोजे की मारफ़त मिल जाता है, जिससे वे समय पर सचेत हो जाते हैं^१।

भाई का पत्र मिलने पर ज़िलिहज मास के प्रारंभ में हुसेनअलीख़ां ने दक्षिण से प्रस्थान किया। अपने दरबार में लौटने का कारण उसने यह प्रकट किया कि मैं औरंगज़ेब के पुत्र शाहज़ादे अकबर के पुत्र मुईनुद्दीन को अपने हमराह ला रहा हूँ। उसने मरहटों की भी सहायता प्राप्त कर ली, जो ग्यारह-बारह हजार की संख्या में पेशवा बालाजी विश्वनाथ, खांडेराब, सन्ताजी आदि की अध्यक्षता में उसके साथ थे। कुल मिलाकर उसके पास लगभग २५००० सवार और तोपखाना घमैरह था। इस खबर से बादशाह को बड़ी चिन्ता हुई और उसने हुसेनअलीख़ां को वापस लौटाने के लिए इख़लासख़ां को भेजा, जिसका उसपर बड़ा प्रभाव माना जाता था; परन्तु उसने उल्टा बादशाह के विरुद्ध उस (हुसेनअलीख़ां) के कान भरे। इससे हुसेनअलीख़ां दिल्ली पहुंचने के लिए अधिक व्यग्र हो उठा। तब बादशाह

(१) “वीरविनोद” में मा लिखा है (भाग २, पृ० ११३६)।

(२) हर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३५३-६। “वीरविनोद” में भी इसका उल्लेख है (भाग २; पृ० ११३६)। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सैयदों से मिल जाने के कारण बादशाह महाराजा से नाराज़ हो गया और उसने उसे मार डालने के लिए कई बार जाल बिछाये, परन्तु सफलता नहीं मिली। पहली बार तो उसपर चूक होने की खबर स्वयं उसकी पुत्री (फर्रुख़सियर की पत्नी) ने उसे दी थी (जि० २, पृ० १०८-९)।

ने घबराकर कुतुबुल्मुल्क से मेल करना चाहा। तदनुसार हि० सं० ११३१ ता० २६ मुहर्रम (वि० सं० १७७५ पौष वदि १३ = ई० सं० १७१८ ता० ८ दिसम्बर) को बादशाह स्वयं कुतुबुल्मुल्क के यहां गया और उसने अपनी पगड़ी उसके सिर पर पहनाई^१।

ता० २७ मुहर्रम हि० सं० ११३१ (पौष वदि १४ = ता० ६ दिसम्बर) को कुतुबुल्मुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उसी दिन शाम को धीका (१टीका) हज़ारी तथा अजीतसिंह एवं चूड़ा (चूड़ा-बादशाह का अजीतसिंह से माफी मांगना) मन) जाट के आदिमियों के बीच भगड़ा हो गया। तीन घंटे की लड़ाई में दोनों तरफ़ के कितने ही आदमी मारे गये। अन्त में गाज़ीउद्दीनखां ग़ालिबजंग, सैयद कुलीखां कुल तथा सैयद नज्मुद्दीन मलीखां के बीच में पड़ने से लड़ाई बन्द होकर मेल स्थापित हो गया। बादशाह ने भी ज़फ़रखां को भेजकर महाराजा से इस घटना के लिए माफी मांग ली^२।

अनन्तर बादशाह ने कुतुबुल्मुल्क के कहने के अनुसार ता० १ सफ़र (पौष सुदि ३ = ता० १३ दिसम्बर) को उसके साथ महाराजा अजीतसिंह के डेरे पर जाकर उसे उपहार आदि दिये। इसके अजीतसिंह को “राजेश्वर” का खिताब मिलना दूसरे दिन अजीतसिंह तथा कुतुबुल्मुल्क साथ-साथ शाही दरबार में गये। ता० १६ सफ़र (माघ वदि २ = ता० २८ दिसम्बर) को बादशाह ने अजीतसिंह को “राजेश्वर” का खिताब और अहमदाबाद गुजरात का सूबा दिया। साथ ही उसने अपने दू नरे विरोधियों एवं कृपापात्रों को भी पुरस्कार आदि देकर सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया^३।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३२७-३६३।

(२) वही; जि० १, पृ० ३६३।

(३) वही; जि० १, पृ० ३६३-६५। जोधपुर राज्य की क्वात में महाराजा के बादशाह के पास पढ़ने पर उसे “राजराजेश्वर” के खिताब के अतिरिक्त सिरपाव, हाथी, घोड़ा, माही मरातिव, आभूषण आदि और एक करोड़ दाम मिन्नना खिन्ना है।

सरबुलंदखां की नियुक्ति बादशाह ने काबुल के सूबे में कर दी थी, परन्तु इससे भी उसको सन्तोष न हुआ। तब ता० ६ रबीउलअव्वल (माघ सुदि १०=ई० स० १७१६ ता० २० जनवरी) अजीतसिंह का सरबुलंदखां से मिलना को बादशाह की आज्ञानुसार कुतुबुलमुल्क उसको सन्तोष देने के लिए उससे जाकर मिला। इसके तीन दिन बाद महाराजा अजीतसिंह तथा महाराव भीमसिंह (कोटा) भी उसके पास गये।

इस बीच दिन-दिन हुसेनअलीखां दिल्ली के निकट पहुंचता आ रहा था। मार्ग में ही उसे बादशाह और अपने भाई (कुतुबुलमुल्क) के बीच मेल हो जाने की सूचना मिली। इसपर उसने हुसेनअलीखां का दिल्ली पहुंचना तथा महाराजा जयसिंह का वहां से अपने देश भेजा जाना ऊपरी मन से खुशी ज़ाहिर की, परन्तु दिल्ली की ओर बढ़ना जारी रक्खा। बादशाह ने उसको खुश करने की गरज़ से हाकिमों में फेर-फार कर सैयदों के पक्ष के लोगों को नियत किया। ता० २१ रबीउलअव्वल (फाल्गुन वदि ८=ई० स० १७१६ ता० १ फरवरी) को ज़फ़रखां एवं इसके एक-दो रोज़ बाद हुसेनअलीखां के निकट पहुंचने पर एतकादखां उसका स्वागत करने के लिए भेजे गये। ता० २७ रबीउलअव्वल (फाल्गुन वदि १४=ता० ७ फरवरी) को हुसेनअलीखां जमुना के किनारे नगर से चार मील उत्तर बज़ीराबाद में पहुंचा। इसके तीन दिन बाद कुतुबुलमुल्क, महाराजा अजीतसिंह एवं महाराव भीमसिंह उससे जाकर मिले और उससे बात-चीत कर उन्होंने अपना कार्यक्रम निश्चित किया। उस समय भी बादशाह ने एतकादखां की सलाह से सैयदों की कई मांगें स्वीकृत कर उनकी

उससे पाया जाता है कि बादशाह उससे बड़े सम्मानपूर्वक खड़ा होकर मिला और उसे उसने अपनी दाहिनी ओर खड़ा किया (जि० २, पृ० १०८)। डॉ० ने इन सबके अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मंसब मिलना भी लिखा है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२३)।

(१) इर्विन; ग्रेटर मुआल्लस; जि० १, पृ० ३००।

मंशा के मुताबिक व्यक्ति महलों में नियत कर दिये। इस बीच बादशाह फ़र्रुखसियर के सच्चे सहायक जयसिंह ने कई बार उससे कहा—“विपक्षियों (सैयदों आदि) का इरादा मेल करने का नहीं दिखाई देता, अतएव समय पर सैयदों पर आक्रमण करना ठीक होगा। इससे लोग आपसे आ मिलेंगे। मेरे पास २०००० अनुभवी तथा विश्वासपात्र सवार हैं और मैं प्राण रहते आपके लिए लड़ने को प्रस्तुत हूँ। दुश्मन हमारे सामने अधिक समय तक टिक न सकेंगे और यदि भाग्य हमारे प्रतिकूल हुआ, तो भी हम कायरता के कलंक से बच जावेंगे।” उसके इस कथन का बादशाह पर कोई असर न हुआ, क्योंकि वह जैसे बने वैसे सैयदों को अपने पक्ष में करना चाहता था। फलस्वरूप कुछ ही समय बाद उसने क़ुतुबुल्मुल्क के दबाव डालने पर अपने हाथ से पत्र लिखकर राजा जयसिंह तथा राब बुधसिंह (बुंदी का) को अपने-अपने देश जाने की आज्ञा दी। जयसिंह ने इसका विरोध किया, पर कोई सुनवाई नहीं हुई। तब और कोई रास्ता न देख ता० ३ रबीउलआखिर (फाल्गुन सुदि ४ = ता० १२ फ़रवरी) को उसने दिल्ली से प्रस्थान किया।

ता० ४ रबीउलआखिर (फाल्गुन सुदि ५ = ता० १३ फ़रवरी) को क़ुतुबुल्मुल्क एवं हुसेनअलीखां का दरबार में जाना तय हुआ था। उस दिन बड़े सबेरे ही महल में जाकर क़ुतुबुल्मुल्क और अजीतसिंह ने शाही रक्षकों को हटाकर उनके स्थान में अपने आदमी नियुक्त कर दिये। अतएव मरहटों की सेना तथा अपनी फ़ौज के साथ वे महल में गये। मुलाकात के समय अन्य लोग वहां से हटा दिये गये और वे बादशाह के साथ अकेले रह गये। उस समय हुसेनअलीखां ने कई मांगें उसके सामने पेश कीं, जिन सब को ही बादशाह ने स्वीकार कर लिया। तीन घंटे रात जाने तक बात-चीत करने के बाद वे अपने-अपने स्थानों को लौटे। इस घटना से

लोगों के मन में विश्वास हो गया कि अब बादशाह और सैयद बन्धुओं के बीच स्थायी मेल स्थापित हो गया, परन्तु बात इसके विपरीत निकली ।

हि० स० ११३१ ता० = रबीउल्लाखिर (फाल्गुन सुदि ६ = ता० १७ फरवरी) को कुतुबुलमुल्क ने नज्मुद्दीन खलीजां, गैरतखां,

महाराजा अजीतसिंह, महाराज भीमसिंह हाड़ा, राजा गजसिंह नरवरी तथा कई दूसरे व्यक्तियों के साथ शाही महल में प्रवेशकर वहां प्रत्येक

स्थान में अपने आदमियों को नियुक्त कर दिया । इस अवसर पर उपर्युक्त हिन्दू राजाओं ने दीवानी और खानसामां के कमरों पर कब्जा किया । उसी दिन दोपहर के समय तीस-चालीस हज़ार सवारों के साथ हुसेनअलीखां ने भी नगर में प्रवेश किया । उसने यह प्रकट किया कि वह शाहज़ादे को अपने साथ ला रहा है । मरहटे सवार महल के फाटकों तथा आस-पास के मार्गों में तैयार थे । दोपहर के बाद कुतुबुलमुल्क बादशाह के पास उास्थित हुआ । उससे बातों ही बातों में बादशाह की कहा-सुनी हो गई । पीछे से उस (बादशाह) ने क्रोधावेश में पतक़ादखां को निकाल दिया । परिस्थिति गंभीर होने पर बादशाह ने अजीतसिंह से मदद चाही । उसने उसको लिखा—“महल का जमुना की तरफ़ का पूर्वी भाग रक्तकों से रहित है । यदि हो सके तो उधर अपने कुछ आदमी भेज दो, ताकि मैं यहां से बाहर निकलकर अन्यत्र चला जाऊं ।” अजीतसिंह ने इसका उत्तर यही दिया कि अब अवसर नहीं है । कुछ लोगों का ऐसा भी कहना है कि उसने बादशाह का पत्र अब्दुल्लाखां के पास भिजवा दिया । ता० ६ रबीउल्लाखिर (फाल्गुन सुदि १० = ता० १८ फरवरी) को बड़े सवेरे ही नगर में एक बख़ेड़ा खड़ा हुआ । जिस समय मुहम्मद अमी-नखां चिन बहादुर तथा ज़करियाखां (अब्दुस्समदखां का पुत्र) ने अपने दल-बल सहित महल में जाना चाहा तो मार्ग में नियुक्त मरहटे सैनिकों ने उन्हें रोका , जिसपर भगड़ा हो गया और मरहटों के हज़ार-डेढ़ हज़ार

सैनिक तथा कई अफसर मारे गये^१। इसी बीच इस अफवाह ने ज़ोर पकड़ा कि अजीतसिंह ने बादशाह की रक्षा करने की दृष्टि से कुतुबुल्मुल्क को मार डाला। इससे बादशाह के पक्ष के लोगों का उत्साह बढ़ा और जगह-जगह उन्होंने विरोधियों का मुक़ाबला करने की तैयारी की। कुतुबुल्मुल्क के मारे जाने की अफवाह से सैयदों के पक्षपाती बड़े हतोत्साह हुए, परन्तु पीछे से वज़ीर के जीवित रहने की खबर से उनमें पुनः आशा का संवार हुआ और उन्होंने थोड़ी लड़ाई के बाद ही बादशाह के पक्ष के लोगों को बिखेर दिया^२।

फ़र्रुख़सियर उस समय ज़नानख़ाने में छिप रहा था। कुतुबुल्मुल्क ने उसे बाहर आकर नित्य के अनुसार दरबार करने के लिये कई बार कहलाया, परन्तु उसने ऐसा करना स्वीकार न किया। हुसैनअलीख़ां द्वारा कई बार लिखे जाने पर कुतुबुल्मुल्क आदि ने शीघ्रता से मशविरा कर बादशाह औरंगज़ेब के पौत्र शाहज़ादे बेदारदिल (बेदारबख़्त का पुत्र) को गद्दी पर बैठाने का निश्चय किया। कुतुबुल्मुल्क ने क़ादिरदादख़ां तथा अजीतसिंह के भंडारियों को शाहज़ादे को लाने को भेजा। बेग़मों ने उनके वहां पहुंचने पर यह समझा कि बादशाह को गिरफ़्तार कर सैयदों ने शाहज़ादों का अन्त करने के लिए आदमी भेजे हैं, अतएव उन्होंने द्वार बन्द कर दिये और उन्हें भीतर न घुसने दिया। तब एक हाथ नवाब तथा दूसरा अजीतसिंह पकड़े हुए रफ़ीउश्शान के पुत्र रफ़ीउद्दरजात को बाहर लाये और उन्होंने उसे तख़्त पर बैठाया। इस कार्य के बाद बादशाह की तलाश हुई। नज़मुद्दीनअलीख़ां, राजा रत्नचंद, राजा बख़्तमल और

(१) हर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३७८-८४। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि क़ाग़ा ख़ानदौरां के आदमियों और मरहटों के बीच हुआ था। उसी समय मुहम्मद अमीनख़ां को, जो अमीरुलउमरा से मिलने जा रहा था, आते देख, उसे दुश्मन समझकर मरहटे भाग खड़े हुए और उनके लगभग १५०० आदमी एवं तीन अफ़सर मारे गये (हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १६१)।

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन, जि० २, पृ० १६१-२।

जलालखां का पुत्र दीनदारखां कतिपय अफगानों के साथ ज़नानखाने से गद्दी से उतारे हुए बादशाह (फर्रुखसियर) को कैद कर लाने के लिए भेजे गये । सब भिन्नाकर लगभग चारसी व्यक्ति शाही महलों की ओर वेग से बढ़े । मार्ग में कुछ औरतों ने शस्त्र लेकर उन्हें रोकना चाहा, पर इसका कोई परिणाम न निकला और उनमें से कई घायल हुईं तथा मारी गईं । अंत में बादशाह एक छोटे कमरे में मिला । उसने स्वयं लड़ने की निरर्थक कोशिश की तथा उसकी पुत्रियों, माता आदि ने भी उसकी रक्षा करने का विरल प्रयत्न किया; परन्तु उसका कोई परिणाम न निकला और सैन्यों के मनुष्यों ने घेरकर उसे कैद कर लिया तथा वे अपमान के साथ घसीटते हुए उसे दीवानेखास में कुतुबुल्मुल्क के समक्ष ले गये । वहां उसकी दोनों आंखें फोड़ दी गईं और वह कैद कर त्रिपोलिया दरवाजे के ऊपर रक्खा गया, जहां साधारण अपराधी रक्खे जाते थे । साथ ही शाही ज़नानखाने एवं भंडार अथवा वहां के आदमियों के पास जो भी सामान—सोना, चांदी, आभूषण, रत्न, तांबे के बर्तन, बख्श आदि—था वह सब लूट लिया गया । यही नहीं दासियों

(१) बांकीदास लिखता है कि उस समय अजीतसिंह भी हुर्रमज़ाना लूटकर रत्नों की २१ परात अपने डेरे पर ले गया (ऐतिहासिक बातें; संख्या ५६) ।

कविया करणीदान-कृत “सूरजप्रकाश” में अजीतसिंह का भी लूट के माल में हिस्सा बंटाना लिखा है—

इक साह तख़त उथाप, इक साह तख़तह आप ॥

कथ कहे जिम कमधेस, द्रव लीध बांट दलेस ॥

रजतेस कनक रखत्त, तै चमर छत्र तख़त्त ॥

असि गपंद लीध अपार, हद माल मुलक जुहार ॥

[पृ० १३२, हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से]

अर्थात् एक शाह को तख़त से उतार तथा दूसरे को तख़त पर बैठाकर कमधेस (अजीतसिंह) ने दिह्लीपति का द्रव्य बांट लिया और चांदी, सोने का सामान, खंवर, छत्र, तख़त, हाथी, घोड़े, मुक्त आदि अधिकार में कर लिये ।

और अन्य स्त्रियों तक पर अधिकार कर लिया गया। महाराजा अजीतसिंह के प्रार्थना करने पर उसकी पुत्री बादशाह की बेगम का सामान नहीं लूटा गया।

रफीउद्दरजात ने प्रथम दरबार के दिन महाराजा अजीतसिंह, राजा भीमसिंह (कोटा) तथा राजा रत्नचंद^३ के कहने हिन्दुओं पर से जज़िया हटाया जाना पर हिन्दुओं पर लगनेवाला जज़िया नाम का कर हटा दिया।

फ़ौज की हालत में फ़र्रुखसियर को अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये। फ़र्रुखसियर ने, जिसे आखें फोड़ी जाने पर भी कुछ-कुछ दिखाई पड़ता था, सैन्यों से कई बार कहलाया कि यदि तुम मुझे फ़र्रुखसियर का मारा जाना मुक्त कर तख्त पर बैठा दो तो मैं सारा शासन-भार तुम्हें सौंपने के लिए तैयार हूँ। उधर से निराश होकर उसने अपने एक जेलर अब्दुल्लाख़ां अफ़ग़ान से मदद चाही। उससे उसने कहा कि यदि तुम मुझे सकुशल राजा जयसिंह के पास पहुँचा दो तो मैं तुम्हें सात

(१) हर्विन; जेटर मुग़ल्स; जि० १; पृ० ३८६-९०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १०८-१०), बीरविनोद (भाग २, पृ० ११४०-१) तथा टॉड-कृत "राजस्थान" (जि० २, पृ० १०२३-४) में भी इन घटनाओं का कहीं-कहीं कुछ भिन्नता के साथ मूल रूप में ऐसा ही वर्णन मिलता है।

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १९४।

(३) यह जात का महाजन और इलाहाबाद के सूबेदार सैयद अब्दुल्लाख़ां का हीरान था। फ़र्रुखसियर ने तख़्तनशीन होने पर अपने अन्य मददगारों के साथ इसे भी "राजा" का ख़िताब और दो हज़ारी मनसब दिया। सैन्यों का प्रीतिपात्र होने के कारण इसका खूब दबदबा रहा। पीछे से मुहम्मदशाह के समय जब सैन्यों का सितारा अस्त हुआ, उस समय यह भी शाही सेना के साथ लड़कर ज़ैद हुआ और बाद में मार डाला गया।

(४) हर्विन; जेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०४। मुतल्लुख़ाब—इज़ियट; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ७, पृ० ४७९। जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १९४।

हज़ारी मनसब दूंगा। अब्दुल्लाखां अफ़ग़ान ने उसकी मदद करने के बजाय इसकी सूचना सैयदों को दे दी। इसी बीच यह अफ़ग़ाह फैली कि कुछ अन्य लोग बादशाह को कैद से छुड़ाकर पुनः तख़्तनशीन करने के लिए प्रयत्नशील हैं। तब फ़र्रुख़सियर को मारने का निश्चय हुआ। तदनुसार सैयदों ने सीदी यासीनखां (जिसके बाप सीदी क़ासिमखां क़ौलादखां को फ़र्रुख़सियर ने मरवाया था) को बुलवाकर बादशाह को मारने की आज्ञा दी, पर उसने ऐसा करना स्वीकार न किया। इसपर सैयदों ने यह कार्य अपने हाथ में लेकर फ़र्रुख़सियर को शनैः शनैः विष देना शुरू किया, पर जब इसमें देर दिखाई पड़ी तो उन्होंने हत्यारों को बन्दीगृह में भेजा, जिन्होंने गला घोटकर उसको मार डाला। यह घटना हि० स० ११३१ ता० ८ और ६ जमादिउलआख़िर (वि० सं० १७७६ वैशाख सुदि ६ और १० = ई० स० १७१६ ता० १७ और १८अप्रैल) की रात को हुई। इसके अगले दिन उसकी लाश हुमायूँ के मकबरे में ले जाकर दफ़नाई गई। इस अवसर पर लाश के साथ जानेवाले सैयदों के पक्ष के लोगों को एकत्रित जन समूह ने बहुत कोसा और गालियाँ दीं तथा उनपर ईंट-पत्थरों की वर्षा की^१।

मुग़लों से पूर्व दिल्ली की सल्तनत पर गुलाम, ख़िलजी, तुग़लक़, सैयद और लोदी आदि मुसलमान वंशों का अधिकार रहा था, परन्तु किसी एक वंश का सौ वर्ष भी राज्य न रहा।

मुग़ल साम्राज्य की स्थिति

मुग़लवंश के बुद्धिमान बादशाह अकबर ने, अपने राज्य की ऐसी हालत न हो इस विचार से, ईरान के बादशाह की अपने पिता (हुमायूँ) को दी हुई नसीहत को स्मरण रख सर्वप्रथम मुसलमान बादशाहों की नीति में परिवर्तन किया एवं हिन्दुओं के साथ मेल का

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३६१-४। उसी पुस्तक में “सैरुल्-मुताख़िरिन” के आधार पर यह भी लिखा है कि फ़र्रुख़सियर ने एक बार भागने का प्रयत्न किया, पर वह शीघ्र ही पकड़ लिया गया और बुरी तरह पीटा गया। इस अपमान से पीड़ित होकर फ़र्रुख़सियर ने दीवार से सर टकराकर आत्महत्या कर ली; परन्तु यह कथन विश्वास-योग्य नहीं है, क्योंकि उक्त पुस्तक का कर्ता सैयद था, जिसने सैयदों का कलह मिटाने के लिए यह कथा लिख दी है।

व्यवहार कायम कर उन्हें बड़े-बड़े मंसब और ओहदे देकर अपना सहायक बनाया। इसका परिणाम अच्छा हुआ एवं भारत में मुगल बादशाहत की जड़ जम गई। उसके पीछे जहांगीर और शाहजहां ने भी उसकी निर्धारित नीति का अनुसरण किया, जिससे राज्य की बड़ी उन्नति हुई। शाहजहां के उत्तराधिकारी औरंगज़ेब ने धर्म के प्रश्न को प्रधानता देकर अपने पूर्वजों से उलटा आचरण करना शुरू किया। उसकी कट्टर धार्मिकता और हिन्दू-विरोधिनी नीति के कारण मुगल-साम्राज्य के स्तम्भस्वरूप हिन्दुओं का उससे विरोध पैदा हो गया तथा देश भर में जगह-जगह विद्रोह होने लगे। फलस्वरूप अकबर की डाली हुई मुगल-साम्राज्य की नींव औरंगज़ेब के जीते जी ही हिल गई और उसको इस बात का आभास हो गया कि मेरे पीछे बादशाहत की दशा अवश्य बिगड़ जायगी। हुआ भी ऐसा ही। उसके बाद शाहआलम (बहादुरशाह) ने केवल पांच वर्ष तक राज्य किया। फिर उसका पुत्र मुहम्मद मुईजुद्दीन (जहांदारशाह) तख्त पर बैठा, परन्तु नौ मास बाद ही उसके भतीजे फ़र्रुख़सियर ने उसे मरवा डाला। फ़र्रुख़सियर के समय से ही शाही सत्ता का लोप सा हो गया। उसके समय राज्य-कार्य उसके वज़ीर सैयद-बन्धु चलाते थे और वह नाम मात्र का बादशाह रह गया था। उसकी मृत्यु बड़ी दुःखद हुई। यह औरंगज़ेब की ही नीति का फल था कि उसकी मृत्यु के बारह वर्ष बाद ही मुगल साम्राज्य की ऐसी स्थिति हो गई कि मुगल वंश का शासक- (फ़र्रुख़सियर) अपने नौकरों के हाथों अपमानित होकर बुरी तरह से मारा गया। उसके पीछे मुगल साम्राज्य की दशा क्रमशः बिगड़ती ही गई और बादशाह सिर्फ़ नाम के ही रह गये।

बादशाह फ़र्रुख़सियर को कैद करने और मरवाने में महाराजा अजीतसिंह की भी सलाह होने से जनता उसके भी विरुद्ध थी। जब भी वह बाज़ार से गुज़रता तो लोग उसे “दामाद-कुश” (जमाई की हत्या करनेवाला) कहकर संबोधन करते थे। कोई-कोई अपमान-सूचक शब्द कायज़ों पर

महाराजा का दिक्की छोड़ने का इरादा करना

लिखाकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पूजा के पात्रों पर गौ की हड्डियां फेंकी गईं। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आख़िर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रैल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई, पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये, जिनसे उसका जाना रुक गया^१।

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही खराब था। उसे दिक की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूँ, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख़्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रज्जब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख़्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २४ रज्जब (आषाढ वदि ११ = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहांत हो गया^२।

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के जीते जी ही सैयदों के मित्रसेन^३ आदि कुछ विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र निकोसियर

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४१७-८।

(३) यह जात का नागर ब्राह्मण और निकोसियर का सेवक था। हिकमत जानने के कारण इसका शाही सैनिकों पर बहुत-कुछ प्रभाव था। निकोसियर ने बादशाह कोषित किये जाने पर इसे सात हज़ारी मनसब दिया।

विद्रोही निकोसियर का
गिरफ्तार होना

को कैद से निकालकर आगरे में बादशाह घोषित किया और उसके नाम का सिक्का जारी किया। उन्होंने महाराजा जयसिंह, राजा भीमसिंह हाड़ा, चूड़ामन जाट, छुबीलेराम नागर^१ आदि को भी उसकी सहायतार्थ खड़ा किया। महाराजा जयसिंह अपने राज्य से कई मंज़िल आगे बढ़ा, पर जब उसने दूसरों को आते न देखा तो वह भी ठहर गया। कुतुबुलमुल्क निकोसियर से मेल कर लेना ठीक समझता था, पर हुसेनअलीखां ने इसका विरोध कर ता० ६ शबाबन (आषाढ सुदि ८ = ता० १४ जून) को, आगरे की तरफ निकोसियर के विरुद्ध प्रस्थान किया। वहां पहुंच उसने घेरा डालकर मोर्चे लगाये और कुछ ही दिनों के घेरे के बाद निकोसियर आदि को गिरफ्तार कर आगरे के क़िले की सारी सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया^२।

उधर इसी बीच जयसिंह के निकोसियर की सहायतार्थ आंबेर से प्रस्थान करने के समाचार सुनकर बादशाह रफ़ीउद्दौला और कुतुबुलमुल्क ने स्वयं सेना के साथ उसके विरुद्ध प्रस्थान किया। महाराजा अजीतसिंह की पुत्री का उसको सौंप जाना उस समय अजीतसिंह शाही सेना की हरावल का अफ़सर बनाया गया, परन्तु उसने यह कहकर आगे बढ़ने से इनकार कर दिया कि यदि मैं अपनी पुत्री (फ़र्रखसियर की बेगम) को अकेली छोड़कर जाऊंगा तो या तो वह विष खा लेगी अथवा उसकी इज्जत भ्रष्ट होगी। इसपर अब्दुल्लाखां ने महाराजा की पुत्री उसको सौंप दी। फिर हिन्दू मतानुसार उसकी शुद्धि की गई और उसने मुसलमानों को पोशाक उतारकर हिन्दू वेष धारण किया। अनन्तर अपनी

(१) यह दयाराम नागर का, जो शाहज़ादे अज़ीमुशान की सरकार में किसी माखी ख़िदमत पर नियत था, भाई और प्रसिद्ध गिरधर बहादुर का चाचा था। दयाराम की मृत्यु होने के बाद यह उसकी जगह पर मुकर्रर हुआ और क्रमशः उन्नति करता हुआ पहले अकबराबाद और पीछे इलाहाबाद का सूबेदार हो गया। हि० स० ११३१ में इलाहाबाद में इसकी मृत्यु हुई।

(२) इर्विन; लेदर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८-१६, ४२२-२८।

एक करोड़ से भी अधिक रुपयों की सम्पत्ति के साथ वह जोधपुर भेज दी गई। इससे कट्टर मुसलमानों को बहुत बुरा लगा और क्राजी ने यह क्रतवा दिया कि धर्मपरिवर्तन किये हुए व्यक्ति को वापस देना मुसलमानी मज़हब के खिलाफ़ है। अब्दुल्लाखां अजीतसिंह को खुश रखना चाहता था, जिससे उसने इन सब बातों पर ध्यान न दिया^१। महाराजा की पुत्री के निर्वाह के लिए अट्टारह हज़ार रुपया^२ मासिक देना तय हुआ था, जिसके अहमदाबाद के सूबे के शाही खज़ाने से देते रहने के सम्बन्ध में परधाना जारी हुआ^३।

ता० १६ रमज़ान (भाद्रपद वदि ६ = ता० २६ जुलाई) को बाद-
शाह मय अपनी फ़ौज के करहका और कोरी के बीच में पहुंचा। वहां से
महाराजा का मथुरा जाना
महाराजा अजीतसिंह को मथुरा-यात्रा के लिए जाने
की आज्ञा दी गई। ता० ११ शव्वाल (भाद्रपद सुदि
१४ = ता० १७ अगस्त) को बादशाह के डेरे ओल नामक स्थान में होने
पर मथुरा से लौटकर अजीतसिंह पुनः उसके शरीक हो गया^४।

रफ़ीउद्दौला का स्वास्थ्य भी अपने भाई की तरह ही ख़राब रहता था
और वह अफ़्रीम भी बहुत खाया करता था। दिल्ली से प्रस्थान करते समय
ही उसकी तबियत ज़्यादा ख़राब हो गई थी।
रफ़ीउद्दौला की मृत्यु तथा
मुहम्मदशाह का बादशाह
होना
क्रतहपुर सीकरी के पास विद्यापुर में पहुंचने पर
ता० ४ अथवा ५ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि
६, ७ = ता० ८, ९ सितम्बर) को उसकी मृत्यु हो गई, पर यह बात तबतक

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४२८-६।

(२) “बीरविनोद” में बारह हज़ार रुपया वार्षिक लिखा है (भाग २, पृ० ११४२)।

(३) मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० २६-७। जोधपुर राज्य की ख्यात में
भी फर्ह्रसियर की मृत्यु के बाद उसकी बेगम अजीतसिंह की पुत्री का अपनी कुल
सम्पत्ति लेकर जोधपुर जाना और पीछे से विष का प्याला पीकर मरना लिखा है (जि०
२, पृ० ११०)।

(४) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४२८-३०। इख़ियट; हिस्ट्री ऑफ़
इंडिया; जि० ७, पृ० ४८३।

छिपाई गई जब तक कि दिल्ली से दूसरा शाहज़ादा शाही सेना में न पहुँच गया। बादशाह की मृत्यु के लगभग एक सप्ताह पूर्व ही गुलामअलीखाँ (सैयदों का भानजा) तथा कई दूसरे अमीर इस कार्य के लिए दिल्ली भेजे गये थे। ता० ११ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि १३ = ता० १५ सितंबर) को वे शाहज़ादे रोशनअफ़्तर^१ को लेकर बिद्यापुर पहुँचे। तब बादशाह की मृत्यु की घोषणा करने और उसका शव दिल्ली खाना करने के अनन्तर ता० १५ ज़िल्काद (द्वितीय आश्विन वदि २ = ता० १६ सितंबर) को रोशनअफ़्तर “अबुलफ़तह नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह बादशाह ग़ाज़ी” का विरुद्ध धारण कर दिल्ली के तज़्ज़ का स्वामी बना^२।

अजीतसिंह ने बीच में पड़कर जयसिंह और बादशाह के बीच सुलह कराने का प्रयत्न किया, पर जब इसमें बहुत समय लगने लगा, तो महाराजा अजीतसिंह को अजमेर तथा अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना उस (जयसिंह) पर आतंक स्थापित करने के लिए बादशाह ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया। इसी बीच अजीतसिंह ने अपने देश जाने को आह्वां चाही। साथ ही उसने यह भी कहा कि मैं मार्ग में जयसिंह से भी मिलता जाऊंगा। इसपर उसे देश जाने की आह्वां दी गई। ता० २ ज़िलहिज (द्वितीय आश्विन सुदि ३ = ता० ५ अक्टोबर) को बादशाह के पास ख़बर आई कि जयसिंह इसके तीन दिन पूर्व आंवेर लौट गया। अनन्तर संधि हो जाने पर जयसिंह को सोरठ (दक्षिणी काठियावाड़) तथा अजीतसिंह को अहमदाबाद एवं अजमेर की सूबेदारी प्रदान की गई^३।

(१) बादशाह बहादुरशाह के चतुर्थ पुत्र जहांशाह ख़ुज़िस्ताअफ़्तर का पुत्र।

(२) हर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४३०-३२ तथा जि० २, पृ० १-२।

(३) हर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ३-४।

“मुंतज़ज़ुल्लुबाब” में रज़ीउद्दौला के कृतान्त में ही लिखा है कि जब जयसिंह को किसी तरफ़ से सहायता न मिली तो उसने अपने वकील भेजकर माफ़ी मांग ली। उस समय यह निर्णय हुआ कि सोरठ की क़ौजदारी जयसिंह को दी जाय तथा अजमेर, अहमदाबाद और जोधपुर पूर्ववत् अजीतसिंह के अधिकार में रहें (इज़िज़्ट; हिस्ट्री

अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर महाराजा स्वयं तो वहां न गया लेकिन भंडारी अनूरसिंह को उसने अपना नायब बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के लिए भेज दिया। हि० सं० ११३२ के जमादिउस्सानी (वि० सं० १७७७ चैत्र-वैशाख = ई० सं० १७२० अप्रैल) मास में वह शाही बाग में पहुँचा। फिर भद्र के क़िले में रहकर उसने सूबे का कार्य शुरू किया। वहां रहते समय उसकी वहां के नायब सूबेदार मेहरअली से अनबन हुई। मेहरअली के पास बड़ी फौज थी, जिससे भंडारी उपयुक्त मौक़े का इन्तज़ार करने लगा। ऐसी स्थिति में वहां रहना नामुनासिब समझ मेहरअली अपनी नई जगह खंभात चला गया। उन्हीं दिनों भणसाली कपूरचन्द अहमदाबाद में जाकर नगर सेठ का कार्य करने लगा। उसने भंडारी-द्वारा लोगों पर अनुचित जुरमाना किये जाने, उनपर झूठे आरोप लगाकर उनसे ज़बरदस्ती धन वसूल करने आदि का विरोध किया। महाराजा की कुतुबुल्मुल्क एवं अमीरुलउमरा से घनिष्ठ मैत्री होने के कारण भंडारी को बड़ा अभिमान हो गया था। वह अपने स्वार्थसाधन में नगर सेठ को बाधक मानकर उसे दूर करने का उपाय करने लगा। इसपर कपूरचन्द सावधान रहने लगा और उसने भद्र में जाना छोड़ दिया। साथ ही उसने

ऑब् इंडिया; जि० ७, पृ० ४८५)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के बादशाह होने पर अब्दुल्लाखां ने आंबेर पर चढ़ाई की। इस अवसर पर गुजरात के सूबे का फ़रमान अजीतसिंह के नाम करा वह (अब्दुल्लाखां) उसे भी साथ ले गया। आंबेर को नष्ट करने की अब्दुल्लाखां की बड़ी इच्छा थी, पर जब जयसिंह के वकील अजीतसिंह के पास पहुँचे तो उसने समझा-बुझाकर उसे वापस लौटा दिया (जि० २, पृ० ११०-११)।

कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑब् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ होने के समय अजीतसिंह ही सबसे शक्तिशाली नरेश था। उसको अपनी तरफ़ मिलाये रखने के लिए सैयदों ने गुजरात की सूबेदारी उसके नाम करा दी और उसके वहां पहुँचने तक वहां का प्रबन्ध करने के लिए मेहरअलीखां को नियुक्त किया (जि० १, खंड १, पृ० ३०१)।

क़रीब ५०० पैदल सिपाही अपनी सेवा में रख लिये। जब भी वह पूजा करने के लिए मन्दिर में जाता, उसके साथ बहुत से आदमी रहते। तब भंडारी ने अपने आदमियों में से ख्वाजाबक्श को नगर सेठ को मारने के लिये नियत किया। वह क़ासिद का वेष बनाकर कपूरचंद के नाम के कितनेक ज़ाली पत्र तैयार कर रात्रि के समय, जब वह घर में अकेला था, उसके पास गया। जैसे ही कपूरचंद उन पत्रों को पढ़ने लगा, ख्वाजाबक्श कटार से उसे मारकर भाग गया। रात्रि के अन्त में इस घटना का पता लगने पर कपूरचंद के संबंधी एकत्र हुए और उसके शव को लेकर चले। भंडारी के आदमियों ने शव को रोका और वे उसे लेजानेवालों को तकलीफ़ देने लगे। डेढ़ पहर दिन चढ़े तक उसका शव वहीं पड़ा रहा। इसके बाद कहीं उसे लेजाने की आज्ञा भंडारी से प्राप्त हुई।

जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करते समय अजीतसिंह ने महाराजा जयसिंह को भी अपने साथ ले लिया। वि० सं० १७७७ (ई० सं० १७२०) में मनोहरपुर के गोड़ों के यहां विवाह करने के अनन्तर वह जयसिंह के साथ जोधपुर पहुंचा, जहां जयसिंह सूरसागर के महलों में ठहराया गया। आश्विमास वि० सं० १७७७ (चैत्रादि १७७८) के ज्येष्ठ मास में महाराजा ने अपनी पुत्री सूरजकुंवरी का विवाह जयसिंह के साथ किया।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह की तरफ़ से अहमदाबाद का सूबा महाराजा अजीतसिंह को दे दिया गया था। ई० सं० १७१६ (वि० सं० १७७६) में महरटों का प्रभाव बहुत मारवाड़ के निकट के गुजरात के प्रदेश पर महाराजा का क़ब्ज़ा करना बढ़ गया था। पीलाजी गायकवाड़ ने सैयद आक़िल तथा मुहम्मद पनाह की सेनाओं को परास्त

(१) मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० २८, ३१-२ तथा ३४-५। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" (जि० १, खंड १, पृ० ३०१-२) एवं जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १११) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १११।

कर सोनगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया। इसी समय के आस-पास मुगलों की शक्ति का ह्रास शुरू हुआ। अजीतसिंह भी मुसलमानों से घृणा रखने के कारण गुप्त रूप से मरहटों का पक्षपाती हो गया। यही नहीं उसने मारवाड़ की सीमा से मिले हुए गुजरात के कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। पीछे से सरबुलंदखां ने उन स्थानों पर पुनः अधिकार करने के लिए कई बार प्रयत्न किये, परन्तु उनमें उसे सफलता नहीं मिली।

मुहम्मदशाह के राज्य के प्रारम्भिक दिनों में ही सैयदों और चिन-कलीचखां निज़ामुल्मुल्क के बीच विरोध पैदा हो गया। विरोध यहां तक
 सैयद बन्धुओं का पतन बढ़ा कि सैयदों ने उसका नाश करने के लिए
 और मारा जाना सैनिक तैयारियां कीं। इसी बीच बादशाह ने गुप्त
 रूप से निज़ामुल्मुल्क के पास इस आशय के पत्र भेजे कि मुझे सैयदों के
 पंजे से मुक्त करो। हुसेनअलीखां ने कोटा के महाराव भीमसिंह को अपने
 पक्ष में कर उसको दिलावरखां के साथ दक्षिण में निज़ामुल्मुल्क पर भेजा।
 हि० स० ११३२ ता० १३ शबान (वि० सं० १७७७ ज्येष्ठ सुदि १५ = ई० स०
 १७२० ता० ६ जून) को रतनपुर (बुरहानपुर से १७ कोस दूर) के निकट
 लड़ाई होने पर महाराव भीमसिंह आदि कितने ही व्यक्ति मारे गये और
 निज़ामुल्मुल्क की फ़तह हुई। अनन्तर उसने आलमअलीखां (सैयदों के
 संबंधी) को भी हराया। तब ता० ६ ज़िल्काद (भाद्रपद सुदि १२ = ता० २
 सितंबर) को हुसेनअलीखां ने स्वयं बादशाह के साथ आगरे से दक्षिण की
 तरफ़ प्रस्थान किया। मार्ग से ही अब्दुल्लाखां वापस राजधानी (दिल्ली) भेजा
 गया। सैयदों के बढ़ते हुए आतंक से चिन्तित होकर बादशाह की मा की
 मर्ज़ी और सलाह के अनुसार एतमादुद्दौला मुहम्मद अमीनखां, सआदतखां
 एवं मीर हैदरखां काशगरी ने हुसेनअलीखां को मार डालने का षड्यंत्र
 रचा। फ़तहपुर से पैंतीस कोस दक्षिण तोरा नामक स्थान में बादशाह के
 डेरे होने पर ता० ६ ज़िल्दज (आश्विन सुदि ८ = ता० २८ सितंबर) को,

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० ३०१।

जब हुसेनअलीखां बादशाह से विदा होकर अपने डेरे की तरफ जा रहा था, मार्ग में मीर हैदरखां काशगरी ने एक अर्ज़ी उसके सामने पेश की, जिसमें मुहम्मद अमीनखां की कुछ शिकायत लिखी थी। जैसे ही हुसेनअलीखां ने उसे पढ़ना शुरू किया, हैदरखां ने उसके पेट में खंजर भोंककर उसे मार डाला, पर वह भी जीवित न बचा और एक मुगल के हाथ से मारा गया। हुसेनअलीखां की एक करोड़ रुपये से भी अधिक की सम्पत्ति पर शाही अधिकार हो गया और नागौर का मुहकमसिंह, जो हुसेनअलीखां का दोस्त था, हैदरकुलीखां के समझाने पर बादशाह से मिल गया। हुसेनअलीखां का सिर काटकर मुगलों ने बादशाह के सामने पेश किया। अब्दुल्लाखां ने जब यह समाचार सुना तो वह चिन्तित हुआ। दिल्ली पहुंचकर उसने ता० ११ ज़िल्हिज (आश्विन सुदि १३ = ता० ३ अक्टोबर) को रफ़ीउद्दजात के बेटे सुलतान इब्राहीम को बादशाह घोषित कर करीब एक लाख सेना के साथ मुहम्मदशाह के विरुद्ध प्रस्थान किया। इसपर मुहम्मदशाह भी दिल्ली की ओर बढ़ा। उसके पास अब्दुल्लाखां की सेना से आधी सेना थी। हुसेनपुर नामक स्थान में सामना होने पर हि० स० ११३३ ता० १३ और १४ मुहर्रम (कार्तिक सुदि १५ और मार्गशीर्ष वदि १ = ता० ३ और ४ नवंबर) को दोनों में भीषण युद्ध हुआ। मुहकमसिंह, जो अबतक शाही सेना के साथ था, इस अवसर पर अब्दुल्लाखां से जा मिला। अन्त में विजय शाही सेना की हुई तथा अब्दुल्लाखां और सुलतान इब्राहीम कैद कर लिये गये। लगभग दो वर्ष तक कैद में रहने के बाद हि० स० ११३५ ता० १ मुहर्रम (वि० स० १७७६ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७२२ ता० १ अक्टोबर) को वह विष देकर मार डाला गया। उसकी इच्छानुसार उसकी लाश दिल्ली में ही पुम्बा दरवाजे के बाहर राजा बक्ष्तमल-द्वारा

(१) अब्दुल्लाखां की कैद की दशा में महाराजा अजीतसिंह ने बादशाह से अर्ज़ कराई कि यदि अब्दुल्लाखां को मुक्त कर दिया जाय तो मैं पुनः शाही सेवा में आने को तैयार हूं, परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला।

कुतुबुलमुल्क को दिये गये बाग में गाड़ी गई^१, जो निज़ामुद्दीन औलिया के मज़ार को जानेवाली सड़क पर था^२।

उन्हीं दिनों महाराजा अजीतसिंह ने अजमेर जाकर वहां रहना इस्तिथार किया और अपने दोनों सूबों (गुजरात और अजमेर) में गो-बध बन्द किये जाने की आज्ञा प्रचारित की। ऐसी

महाराजा का अजमेर
जाकर रहना

अवस्था में उसका अविलम्ब दमन किया जाना

आवश्यक समझकर सर्वप्रथम अकबराबाद के

हाकिम सआदतख़ां और फिर क्रमशः शम्सामुद्दौला, क्रमरुद्दीनख़ां तथा हैदरकुलीख़ां को अजमेर का सूबा एवं शाही सेना देकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए जाने को कहा गया; परन्तु उनमें से एक ने भी उधर प्रस्थान न किया और एक न एक बहाना कर इस कार्य को हाथ में लेने से इनकार कर दिया। शम्सामुद्दौला चाहता था कि अजमेर का परित्याग करने की शर्त पर अजीतसिंह के नाम गुजरात का सूबा बहाल रखा जाय, परन्तु हैदरकुलीख़ां ने इसका विरोध किया। तब सआदतख़ां को अजीतसिंह पर जाने का कार्य सौंपा गया। नया आदमी होने की वजह से वह इस कार्य के लिए पर्याप्त व्यक्ति एकत्र न कर सका। क्रमरुद्दीनख़ां ने जाने से पूर्व यह मांग पेश की कि सैयद अब्दुल्लाख़ां आदि वारदा के सैयदों को क्षमा कर मेरे साथ भेजा जाय, परन्तु बादशाह का सैयदों पर विश्वास न होने से यह मांग स्वीकृत न हुई। तब सैयद मुज़फ़्फ़रअलीख़ां देपुरी की अजमेर में नियुक्ति हुई^३।

उसी समय महाराजा से अहमदाबाद का सूबा हटाया जाकर हैदर-

(१) अब्दुल्लाख़ां ने अपने जीते जी अजमेर में (वर्तमान रेल्वे स्टेशन और मार्टिंडेल ब्रिज के बीच सड़क की दाहिनी ओर) अपना मक़बरा बनवाया था, पर उसकी लाश अजमेर न आने से वह योंही रह गया।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ११४३-४६। इर्विन; लेटर मुग़लस, जि० २, पृ० ५६-६६।

(३) इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० २, पृ० १०८।

कुलीखां वहां का सूबेदार नियत हुआ^१। उसने अपने नायब को वहां भेज दिया। सूबा उतर जाने से अब भंडारी अनूपसिंह क्या करेगा यह मालुम न होने से मेहरअलीखां- (जो पहले दीवान का कार्य करता था) अपनी प्रतिष्ठा के बचाव के लिए अरबों की एक टुकड़ी, कुछ पैदल तथा सवार अपने साथ रखने लगा। उनमें से एक व्यक्ति की एक दिन बाज़ार में अनूपसिंह के नौकरों के साथ खट-पट हो गई और वह ज़ख्मी हो गया। लोगों को सूबे की बदली की खबर मिल गई थी और उसके जुदम से लोग ऊब गये थे, अतएव उस छोटे से भगड़े ने लड़ाई का रूप धारण कर लिया। उसकी खबर मेहरअलीखां के पास पहुंचने पर उसने अपने नौकरों तथा दूसरे लोगों को प्रबंध करने के लिए भेजा। इससे लड़ाई बढ़ गई और बदमाश तथा लुटेरे लोगों ने लड़ाई में शरीक होकर क़िले को घेर लिया। जब अनूपसिंह को इस बखेड़े का हाल मालुम हुआ तो भद्र की साबरमती की तरफ़ की खिड़की से निकलकर वह शाही बाग़ में चला गया। तब मेहरअलीखां के नौकरों और दूसरे लोगों ने, जो उनके साथ हो गये थे, क़िले में घुसकर अनूपसिंह की जो-जो चीज़ हाथ लगी उसे नष्ट किया और भंडारी ने जो वहां एक नई इमारत बनवाई थी, वह मेहरअलीखां की आज्ञा से तोड़ डाली गई^२। इस प्रकार भंडारी की अत्याचारपूर्ण हुकूमत का अन्त हुआ।

(१) “मिरात-इ-अहमदी” (जि० २, पृ० ३८) में अजीतसिंह के अहमदाबाद की सूबेदारी से हटाये जाने का समय हि० स० ११३३ का रजब मास (वि० सं० १७७८ वैशाख, ज्येष्ठ = ई० स० १७२१ मई) और इर्विन-कृत “लेटर मुग़ल्स” (जि० २, पृ० १०८) में ई० स० १७२१ ता० १२ अक्टोबर (वि० सं० १७७८ कार्तिक सुदि २) दिया है। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि अजीतसिंह द्वारा नियत किये हुए हाकिम के जुल्मों की शिकायत होने पर बादशाह ने अजीतसिंह को वहां से हटा दिया (हिस्ट्री ऑफ़ डेक्कन; जि० २, पृ० १८५)।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात इ-अहमदी; जि० २, पृ० ३८-९।

इधर अजमेर के नये सूबेदार मुज़फ़्फ़रअलीख़ान ने स्वयं उधर जाने का विचार किया, पर उसके पास धन की कमी थी। उसे छः लाख रुपये दिये जाने का हुक्म हुआ, पर उस समय उसे दो लाख से अधिक न मिल सके। उसने उतने से ही सन्तोष कर सैनिकों की भर्ती शुरू की। मनोहरपुर पहुंचते-पहुंचते उसके पास २०००० सेना हो गई, लेकिन इसी बीच उसको मिला हुआ सब रुपया भी ख़त्म हो गया। सवाई जयसिंह का मामला आसानी से तय हो गया था और ई० स० १७२१ (वि० सं० १७७८) में उसने दरबार में उपस्थित हो बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी; लेकिन अजीतसिंह का मामला इतना आसान न निकला। उसने अजमेर खाली करने का कोई इरादा ज़ाहिर न किया और अपने ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को मुज़फ़्फ़रअलीख़ान का सामना करने को भेजा। इसपर (ई० स० १७२१ ता० २ अक्टोबर = वि० सं० १७७८ कार्तिक वदि ८) को मुज़फ़्फ़रअलीख़ान के पास दिल्ली से यह आज्ञा पहुंची कि वह मनोहरपुर से आगे न बढ़े। वह वहां तीन मास तक पड़ा रहा। इस बीच दिल्ली से शेष रुपये भी न आये। तन्फ़्वाहें न मिलने के कारण उसके सिपाहियों ने अपने शस्त्र आदि बेच दिये। अन्ततः उन्होंने नारनोल के निकट के कई गांवों को लूट लिया और फिर वे उसका साथ छोड़कर चले गये। ऐसी परिस्थिति में मुज़फ़्फ़रअलीख़ान ने राठोड़ों पर आक्रमण करने का एक बार भी प्रयत्न न किया। कुछ समय बाद जयसिंह का सेनापति आकर उसे अपने साथ आंवेर ले गया, जहां से अजमेर की सूबेदारी का शाही फ़रमान, खिलअत आदि लौटाकर वह फ़कीर हो गया। तब सैयद नसरतयारख़ान बारहा की नियुक्ति हुई। इसी बीच चूड़ामन जाट के पुत्र मोहकमसिंह के सेना-सहित अजमेर पहुंच जाने से अजीतसिंह की शक्ति बढ़ गई। इससे पूर्व कि नसरतयारख़ान उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही करे, अजीतसिंह ने अभयसिंह को नारनोल तथा आगरा एवं दिल्ली के सूबों पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। उस (अभयसिंह) के पास अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित बारह हज़ार ऊंट-सवार थे। उसके

महाराजा का अजमेर
छोड़ना

नारनोल पहुँचने पर वहाँ के हाकिम (बयाज़िदखाँ मेवाती का प्रतिनिधि) ने शक्ति भर उसका सामना किया, पर अन्त में वह हारकर मेवात चला गया। तब नारनोल को लूट उसने अलवर, तिजारा एवं शाहजहाँपुर को लूटा और वह दिल्ली से सोलह मील दूर सराय अल्लावदीखाँ तक जा पहुँचा। इस बीच अजीतसिंह के सम्बन्ध की कार्यवाही के विषय में दिल्ली में गड़बड़ी ही बनी रही। पहले तो शम्सामुद्दौला ने, बदला लेने की बड़ी क्रसमें खाकर, जाने की आज्ञा प्राप्त की। उसने अपने डेरे आदि आगे रवाना भी कर दिये, पर इससे आगे उसने कुछ न किया। बादशाह उसके इस आचरण से बड़ा नाराज़ हुआ, जिसके फलस्वरूप शम्सामुद्दौला ने दरबार में आना-जाना बन्द कर दिया। इसके बाद हैदरकुलीखाँ इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया, जिसने बहुतसी मांगें पेश कीं। इसपर सारा शाही तोपखाना उसके अधिकार में देकर उसके जाने की तैयारी की गई, परन्तु अन्त में उसने भी जाने से इनकार कर दिया। इसी प्रकार क्रमरुद्दीनखाँ ने भी इनकार ही किया। अन्ततः नसरतयारखाँ इस कार्य के लिए रवाना हुआ, पर उसके कुछ दूर आगे बढ़ते ही खबर आई कि अजीतसिंह नगर- (अजमेर) खालीकर अपने देश चला गया। राठोड़ों के अजमेर छोड़ने का कारण यह था कि उन्हें निज़ामुल्मुल्क के वज़ीर आज़म का पद स्वीकार करने और दक्षिण से प्रस्थान करने का पता लग गया था^१।

इस घटना के एक मास बाद ई० स० १७२२ ता० २१ मार्च (वि० सं० १७७६ चैत्र सुदि १५) को सांभर के फ़ौजदार नाहरखाँ के साथ महाराजा की ओर से भंडारी खींवसी उसकी अर्ज़ी लेकर बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। उस अर्ज़ी में अपनी पुरानी वफ़ादारी की याद दिलाते हुए महाराजा ने लिखा था—“सैन्यों के अधिकारव्युत् होने के पूर्व ही मुझे अहमदाबाद और अजमेर के सूबे मिले थे, जहाँ का शासन करते समय मैंने इसलाम धर्म का पूरा-पूरा खयाल रक्खा। फिर जब आपकी

महाराजा का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

विजय हुई तो अहमदाबाद का सूबा हैदरकुलीखां को दे दिया गया, लेकिन इसपर भी मैंने कुछ न कहा। अजमेर के बारे में भी मेरा ऐसा ही इरादा था, लेकिन मुजफ्फरअलीखां पहुंचा ही नहीं। अनन्तर नारनोल आदि की घटनाओं की आड़ लेकर लोगों ने मेरे विरुद्ध विद्रोह की शिकायतें कीं, जो ठीक नहीं थीं। वस्तुतः वे आक्रमण मेवातियों से भगड़ा होने के कारण हुए थे। अब मैं आपकी न्याय-प्रियता पर विश्वास रखते हुए, यह मामला आपके समक्ष पेश करता हूं, क्योंकि मैं स्वामिभक्ति के मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं हुआ हूं। अब जैसी भी आज्ञा होगी उसके अनुसार या तो मैं दरबार में हाज़िर हो जाऊंगा या अपने देश में ही रहूंगा।”

बादशाह ने महाराजा की उपर्युक्त अर्ज़ी के उत्तर में एक फ़रमान भेजा, जिसमें उसकी स्वामिभक्ति की प्रशंसा करते हुए दोनों सूबों के उतारे जाने के संबंध में अस्पष्ट बातें लिखी थीं।
 महाराजा की अर्ज़ी के उत्तर में फ़रमान जाना
 आगे चलकर उसमें लिखा था कि कुछ समय के लिए अजमेर का सूबा फिर उसे ही सौंपा जाता है और खुदा की मर्ज़ी हुई तो अहमदाबाद का सूबा भी बहाल कर दिया जायगा। इस फ़रमान के साथ उसके पास उपहार में खिलअत, जड़ाऊ सरपेंच, एक हाथी और एक घोड़ा भेजा गया।

ई० स० १७२२ ता० ८ दिसम्बर (वि० सं० १७७६ मार्गशीर्ष सुदि १२) को बादशाह ने नाहरखां को सांभर की फ़ौजदारी के साथ ही अजमेर का दीवान नियुक्त किया। इसी अवसर पर उसके भाई (खुदुल्लाखां) को गढ़ पतीली (? बीटली) की फ़ौजदारी दी गई। भंडारी खींवसी उन दोनों को अपने साथ लेकर अजमेर गया^३।

(१) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० २, पृ० १११।

(२) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० २, पृ० १११-२।

(३) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० २, पृ० ११२। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि बादशाह ने भंडारी खींवसी को कहा कि वह महाराजा को उत्पात न करने

अजमेर के निकट पहुंचकर राठोड़ों को अपना मित्र समझने के कारण नाहरखां एवं रहुल्लाखां ने उनके बहुत निकट डेरा किया । ई०

स० १७२३ ता० ६ जनवरी (वि० सं० १७७६ पौष सुदि ११) को प्रातःकाल के समय राठोड़ों ने उन नाहरखां एवं रहुल्लाखां का मारा जाना

पर आक्रमण कर उन्हें मार डाला । उनका भानजा हाफिज़ महमूदखां तथा उसके दूसरे संबंधी आदि पकड़ लिये गये, जिनमें से २५ के सिर काट डाले गये और कुछ ही समय में उनका सारा सामान लूट लिया गया । जो वहां से भागने में समर्थ हुए उन्होंने आंबेर के जयसिंह की शरण ली, जहां से वे शाही अमलदारी में पहुंचा दिये गये । इस घटना की खबर बादशाह को ता० ६ फ़रवरी (माघ सुदि द्वितीय १५) को मिली ।

और दरबार में हाज़िर होने के लिए लिखे । महाराजा ने ऐसा करने से पूर्व जज़िया माफ़ करने और अब्दुल्लाखां को मुक्त करने की दरख़्वास्त की । बादशाह ने जज़िया माफ़ कर महाराजा को “राजराजेश्वर” का खिताब दिया और उसके दिल्ली पहुंचने पर अब्दुल्लाखां को मुक्त करने का वादा कर खीवसी के साथ नाहरखां को उसे लाने के लिए भेजा, परन्तु महाराजा ने शर्त पूरी हुए बिना चलने से इनकार कर उन्हें वापस लौटा दिया । उनके दिल्ली पहुंचने पर क्रमरुद्दीनखां, खानदौरां एवं महाराजा जयसिंह ने नाहरखां की मारफ़्त अब्दुल्लाखां को मरवा दिया । अनन्तर नाहरखां को जयसिंह आदि की सिक़ारिश पर सात हज़ारी मंसब देकर भंडारी खीवसी के साथ पुनः महाराजा को लाने के लिए बादशाह ने रवाना किया (जि० २, पृ० ११२-३) ।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११२ । जोधपुर राज्य की ग़्यात से पाया जाता है कि महाराजा को अब्दुल्लाखां के मरवाये जाने की खबर मिल गई, जिसके बारे में उसने सांभर में भंडारी खीवसी से कहा । भंडारी के सारी हकीक़त निवेदन करने पर महाराजा ने नाहरखां को मारने का इरादा किया । भंडारी ने उसे बहुतेरा, समझाया, पर जब वह नहीं माना तो वह बीमारी का बहाना कर सांभर शहर में जा रहा । अनन्तर भण्डारी थानसिंह (खीवसिंहोत) तथा राठोड़ शिवसिंह (गोपीनाथोत) मेड़तिया ने प्रातःकाल के समय आक्रमण कर नाहरखां और उसके भाई को मारबाखा और उनका सारा सामान लूट लिया (जि० २, पृ० ११३) ।

टॉल लिखता है कि नाहरखां ने महाराजा के प्रति कुछ अपमान-सूचक शब्दों

इसपर बादशाह ने शर्कुद्दौला इरादतमंदख़ाँ को महाराजा पर बड़ाई करने के लिए नियुक्त किया। इस अवसर पर उसका मनसब बढ़ाकर ७००० ज़ात और ६००० सवार का कर इरादतमंदख़ाँ का महाराजा अजीतसिंह पर भेजा जाना दिया गया तथा उसे ५०००० फ़ौज दी गई। ता० २६ फ़रवरी (फाल्गुन सुदि ३) को उसे प्रस्थान करने की इजाज़त मिली और इसके चार दिन बाद उसे फ़ौज खर्च के लिए शाही खज़ाने से दो लाख रुपये दिये गये। ता० १० मार्च (फाल्गुन सुदि १५) को दूसरे कई अमीरों को भी उसके साथ जाने का हुक्म हुआ और ता० ४ अप्रैल (वि० सं० १७८० चैत्र सुदि १०) को महाराजा जयसिंह, मुहम्मदख़ाँ बंगश, राजा गिरधर बहादुर तथा अन्य कई व्यक्तियों के पास इस आशय की ज़रूरी इत्तला भेजी गई कि वे भी शर्कुद्दौला के शामिल हो जायें। साथ ही ता० ५ जून (ज्येष्ठ सुदि १३) को इन्द्रसिंह राठोड़ को नागोर की उसकी पुरानी हुकूमत बख़शी गई। उस समय वह (इन्द्रसिंह) निज़ामुलमुल्क के साथ दक्षिण में था, जिससे उसके पौत्र मानसिंह ने नज़र आदि पेश करने का समयोचित कार्य सम्पन्न किया। इसी अवसर पर हैदरकुलीख़ाँ अहमदाबाद से दिल्ली को वापस लौट रहा था। उसके रेखाड़ी पट्टेचने पर रोशनुद्दौला ने बीच में पड़कर उसे माफ़ी दिला दी।

का व्यवहार किया, जिसपर उसने उसे उसके साथियों सहित मार डाला (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२७)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में हसनकुलीख़ाँ नाम दिया है (जि० २, पृ० ११३)।

(२) हैदरकुलीख़ाँ ने अहमदाबाद का शासन हाथ में लेते ही वहाँ मनमाना आचरण करना शुरू किया, जिससे यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि वह शाही शक्ति की अभिवेक्षण कर स्वतंत्र बनना चाहता है। तब बादशाह ने निज़ामुलमुल्क के समझाने पर अहमदाबाद का सूबा ई० सं० १७२२ ता० २४ अक्टोबर (वि० सं० १७७६ कार्तिक वदि ११) को हैदरकुलीख़ाँ से हटाकर उसे निज़ामुलमुल्क के नाम कर दिया। इसपर हैदरकुलीख़ाँ के अनुयायी उसे साथ लेकर वहाँ से रवाना हो गये (इर्बिन; खेदर मुग़लस, जि० २, पृ० १२८-९)।

फलतः सांभर की फ़ौजदारी और अजमेर की सूबेदारी उसके नाम कर दी गई, जिसका आक्षेपत्र लेकर ख्वाजा सादुद्दीन उसके पास पहुंचा। तब वह भी नारनोल में शाही सेना के शामिल होकर अजमेर की तरफ बढ़ा। शाही सेना का आगमन सुनते ही अजीतसिंह, जो भानरा गांव में था, बिना लड़े ही वहां से सांभर होता हुआ जोधपुर चला गया। इसकी खबर ता० ३० मई (ज्येष्ठ सुदि ७) को मिली। इसके पांच दिन बाद यह खबर आई कि हैदरकुलीख़ां ने सांभर पर अधिकार कर लिया। ता० ८ जून (आषाढ वदि १) को अजमेर के नये हाकिम (इरादतमंदख़ां) ने अजमेर में प्रवेश किया^२।

ता० १७ जून (आषाढ वदि ११) को अजीतसिंह-द्वारा गढ़ बीटली-
(तारागढ़) में रक्खी हुई सेना घेर ली गई। लग-
नग बीटली पर शाही सेना का अधिकार होना भग डेढ़ मास तक घेरा रहने के बाद वहां शाही
सेना का अधिकार हो गया^३।

ऐसी अवस्था में महाराजा के लिए बादशाह से मेल कर लेने के

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा शाही फ़ौज का सामना करने के लिए मनोहरपुर के निकट तक गया और उसने लड़ाई की तैयारी की, परन्तु महाराजा जयसिंह के समझाने पर वह बिना लड़े अजमेर होता हुआ मेड़ता चला गया (जि० २, पृ० ११३-४)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० २, पृ० ११३-४। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार उस समय गढ़ में उदावत अमरसिंह था, जो अच्छा लड़ा (जि० २, पृ० ११४)।

(३) इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० २, पृ० ११४। उसी पुस्तक में मुहम्मद शर्की वारिद-कृत “मिरात-इ वारिदात” (पृ० १३०) के आधार पर लिखा है कि इस अवसर पर क्रिजे में ४०० योद्धा थे। परस्पर शर्तें तय होने के बाद वे क्रिज़ा सौंप कर बाहर निकल गये (पृ० ११४ का टिप्पण)। टॉड-कृत “राजस्थान” में लिखा है—“आषाढ मास में तारागढ़ पर घेरा डाला गया। अमरसिंह अमरसिंह पर वहां की रक्षा का भार झलकर बाहर निकल गया। चार मास तक राठोड़ सेना ने शाही फ़ौज का मुकाबला किया। पीछे से जयसिंह के समझाने पर अजीतसिंह ने अजमेर सौंप दिया (जि० २, पृ० १०२८)।”

अतिरिक्त दूसरा उपाय न रह गया। स्वयं दरबार में उपस्थित होने के लिए एक वर्ष की मुहलत मांगकर उसने अपने महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मेल करना ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को कई दायियों और दूसरे उपहारों के साथ शाही सेनाध्यक्ष के पास भेज दिया। हैदरकुलीखाने अभयसिंह को उपहारों आदि के साथ बादशाह की सेवा में भेजा, जहां उसका समुचित स्वागत हुआ। उसे बहुत सी वस्तुएं उपहार में दी गईं और वह दरबार में ही रोक लिया गया^१।

यद्यपि महाराजा दीर्घ समय तक स्थायी रूप से जोधपुर में बहुत कम रहा था, फिर भी भवन निर्माण का शौक होने से उसने अपने समय में कई नये भवन आदि बनवाये। जोधपुर के गढ़ में उसने फ़तहमहल और दौलतखाने का राज-महल बनवाया। नगर के भीतर के घनश्यामजी^३

महाराजा अजीतसिंह के बनवाये हुए भवन आदि

(१) इर्विन; लेटर मुगल्स, जि० २, पृ० ११४। “तारीख़ ह-हिंदी” (इल्लि-बट; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ८, पृ० ४४) में भी इसका उल्लेख है।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले महाराजा ने कुंवर के साथ खींवसी को भेजना चाहा, पर वह (खींवसी) राज़ी न हुआ तो उसने आउवा के चांपावत हरनाथसिंह तेजसिंहोत को भेजा। दोनों अजमेर जाकर हसनकुली और जयसिंह बगैरह से मिले। अनन्तर महाराजा तो मेड़ता से कूचकर मंडोवर गया और कुंवर शाही क़ौज के साथ दिल्ली की ओर गया, पर मार्ग में ही आउवा का ठाकुर मर गया, जिसकी ख़बर मिलने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने कुंवर की बड़ी ख़ातिर की (जि० २, पृ० ११४)।

टोड-कृत “राजस्थान” में भी अभयसिंह का दिल्ली जाना और उसका वहां अष्टा स्वागत होना लिखा है (जि० २, पृ० १०२८)।

(२) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० २२।

(३) घनश्यामजी का मन्दिर राव गांगा ने बनवाया था। जोधपुर पर मुगलों का अधिकार होने के बाद मुसलमानों ने उसे तोड़कर वहां मस्जिद बनवाई। जब महाराजा अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हुआ, तो उसने मस्जिद के स्थान में मंदिर बनवा दिया। पीछे से महाराजा विजयसिंह ने उस मंदिर को और बढ़ाया (मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खंड, पृ० २३-४)।

तथा मूलनायकजी के मन्दिर महाराजा के ही बनवाये हुए हैं । मंडोर में उसने महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) का स्मारक बनवाया । उसकी राणियों में से राणावत ने गोल में तंघरजी के भालरे के निकट शिखरबन्ध मन्दिर तथा जाड़ेची ने चांदपोल के बाहर एक बावड़ी बनवाई ।

कुंवर अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय महाराजा जयसिंह तथा अन्य मुगल सरदारों ने उसे समझाया कि फ़र्रुखसियर को मरवाने में

महाराजा का मारा जाना शामिल रहने के कारण बादशाह महाराजा (अजीत-सिंह) से बहुत नाराज़ है । यदि तुम मारवाड़ का

राज्य अपने वंशवालों के पास रखना चाहते हो तो उसको मरवा दो । तब कुंवर ने अपने छोटे भाई बल्लूतसिंह को इस विषय में लिखा, जिसने अपने भाई के इशारे के अनुसार वि० सं० १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई० सं० १७२४ ता० २३ जून) को ज़नाने में सोते हुए अपने बाप को मार डाला । महाराजा के शव के साथ उसकी कई राणियों, खवासों, लौंडियों, नाज़िरों आदि ने प्राण दिये^१ । महाराजा का दाह संस्कार मंडोर में हुआ, जहां

(१) वीरविनोद; भाग २; पृ० ८४२ । उक्त पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि इस अवसर पर आनंदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह की माताओं ने अपने बालकों को सरदारों के सुपुर्द कर दिया । किशोरसिंह तो उसकी ननिहाल जैसलमेर में भेज दिया गया और शेष दो को देवीसिंह और मानसिंह चौहान पहाड़ों में ले गये (भाग २; पृ० ८४४) ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस संबंध में भिन्न वर्णन दिया है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

“अभयसिंह पर बादशाह की बड़ी कृपा थी और साथ ही उस (अभयसिंह) की महाराजा जयसिंह से भी घनिष्टता थी । इससे महाराजा के मन में उसकी तरफ़ से खटका हो गया । उसने पुरोहित जगू तथा रोहट के ठाकुर चांपावत सगतसिंह को दिल्ली से कुंवर को लाने को भेजा । उधर बादशाह के कहने से महाराजा जयसिंह ने कुंवर को समझाया कि सैयदों एवं महाराजा अजीतसिंह ने फ़र्रुखसियर को मरवाया था, उनमें से सैयदों को तो बादशाह ने मरवा दिया और अब वह अजीतसिंह को मारने का मौका देख रहा है । यही नहीं वह अबसर मिलते ही जोधपुर पर क़ब्ज़ा कर लेगा और हज़ारों

इसका एक थड़ा (स्मारक) अबतक विद्यमान है, जो विशाल और दर्शनीय है^१।

जोधपुर राज्य की क्वात के अनुसार महाराजा अजीतसिंह के सत्रह

राणियां तथा सन्तति

राणियां थीं, जिनसे उसके निम्नलिखित सत्रह

पुत्र^२ तथा आठ पुत्रियां हुई^३—

राठों के प्रायः जायेंगे, अतएव आप चूककर महाराजा को मरवा दें, जिससे उसका क्रोध शान्त हो। भंडारी रघुनाथ ने भी यही राय दी कि जिससे बादशाह प्रसन्न हो वही करना चाहिये। तब उसने महाराजा पर चूक करने के लिए अपने भाई बल्लसिंह को लिखा, जिसने श्रावणादि वि० सं० १७८० (वैशाख १७८१) आषाढ सुदि १३ (ई० सं० १७२४ ता० २३ जून) को महाराजा को, जब वह महल में सो रहा था, अपने हाथ से मार डाला। कुंवर आनंदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह बाहर चले गये। महाराजा के शव के साथ कई राणियां आदि सती हुईं (जि० २, पृ० ११५)।

कामवरजां अजीतसिंह के मारे जाने का दूसरा ही कारण देता है। उसके अनुसार महाराजा का अपनी पुत्रवधू (बल्लसिंह की पत्नी) के साथ अनुचित संबंध हो गया था। इस अपमान से लजित एवं पीड़ित होकर बल्लसिंह ने एक रात को, जब अजीतसिंह शराब के नशे में ग्राहित पड़ा हुआ था, उसे मार डाला (तज्ञकिरतुस्सला-तीन-इ च्वातिया—इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० २, पृ० ११६-७)। यह कथन कहाँ तक ठीक है यह कहा नहीं जा सकता, क्योंकि अन्य किसी इतिहासवेत्ता ने इसकी पुष्टि की हो ऐसा हमारे देखने में नहीं आया।

टॉड लिखता है कि सैयदों ने महाराजा से विरोध हो जाने के कारण अभयसिंह से कहा कि तुम अपने पिता को मरवा दो, नहीं तो हम मारवाड़ का नाश कर देंगे। इसपर अभयसिंह ने अपने भाई बल्लसिंह को नागौर की जागीर देने का वादा कर इस कार्य को पूरा करने के लिए लिखा। तदनुसार बल्लसिंह ने रात्रि के समय पिता के शयनागार में छिपकर निद्रावस्था में उसे मार डाला (राजस्थान; जि० २, पृ० ८५७-८)। टॉड का यह कथन असंगत है, क्योंकि अजीतसिंह तो अन्त तक सैयदों के पक्ष में रहा था और उसके मारे जाने के बहुत पूर्व ही सैयद बन्धुओं का ख़ात्मा हो चुका था। ऐसी दशा में सैयदों का अभयसिंह को इस कुकृत्य के लिए उभारना कल्पना मात्र है।

(१) देखो मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड; पृ० २५।

(२) “वीरविनोद” में केवल पन्द्रह पुत्रों के ही नाम मिलते हैं (भाग २, पृ० ८४२)।

(३) जि० २, पृ० ११७-२०।

पुत्र—

(१) अभयसिंह, (२) बल्लतसिंह (जन्म वि० सं० १७६३ भाद्रपद वदि ८), (३) आनन्दसिंह (जन्म वि० सं० १७६४ आश्विन वदि ५), (४) किशोरसिंह (जन्म वि० सं० १७६६ आश्विन वदि ११), (५) रायसिंह (जन्म वि० सं० १७६८ आश्विन वदि १२), (६) रत्नसिंह (जन्म वि० सं० १७७४ आश्विन सुदि ६), (७) सुलतानसिंह^१ (जन्म वि० सं० १७७५), (८) तेजसिंह, (९) दौलतसिंह (जन्म वि० सं० १७५८ बाल्यावस्था में मर गया), (१०) जोधसिंह, (११) सोभागसिंह, (१२) अखैसिंह, (१३) रूपसिंह, (१४) जोरावरसिंह, (१५) मानसिंह, (१६) प्रतापसिंह और (१७) छत्रसिंह ।

पुत्रियां—

(१) फूलकुंवर बाई (वि० सं० १८०८ में महाराजा बल्लतसिंह के समय जैसलमेर के रावल अखैसिंह को व्याही गई), (२) इन्द्रकुंवर बाई, (३) फ़तहकुंवर बाई, (४) सूरजकुंवर बाई, (५) किशोरकुंवर बाई, (६) अखैकुंवर बाई, (७) बल्लतावरकुंवर बाई और (८) सोभाग्यकुंवर बाई (महाराणा जगतसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को व्याही गई) ।

अजीतसिंह का लाहोर में जन्म होने से पूर्व ही उसके पैतृक राज्य पर मुगल बादशाह औरंगजेब ने अधिकार कर लिया था और फिर उसका जन्म होने के बाद वह उसे मरवाने का उद्योग करने लगा । ऐसी परिस्थिति में अधिकांश स्वामीभक्त राठोड़ों ने, जिनमें दुर्गादास का नाम भारतवर्ष के इतिहास में सदा अमर रहेगा, अपनी जान खतरे में डालकर बड़ी वीरता एवं चतुराई के साथ उसे दिल्ली से बाहर कर दिया । महाराजा के बाल्य-जीवन का कुछ भाग मेवाड़ और कुछ सिराही राज्य में बीता । इस बीच अपने स्वामी का साक्षात्कार न होने पर भी, राठोड़ों ने जगह-जगह मुसलमानों से मोर्चे लेकर जोधपुर को बादशाह के चंगुल से

महाराजा अजीतसिंह
का व्यक्तित्व

(१) ख्यात के अनुसार अभयसिंह ने इसे, भयङ्कारी गिरधरदास के अहमदाबाद में फूटी अर्ज़ करने पर, चक कर मरवाया (जि० २, पृ० ११८) ।

छुड़ाने का प्रयत्न जारी रक्खा। अजीतसिंह के प्रकट होने और दुर्गादास के दक्षिण से लौटने के बाद राठोड़ों के प्रयत्न ने जोर पकड़ा, यहां तक कि औरङ्गजेब के मरते ही लगभग २८ वर्ष तक राज्य से वञ्चित रह और कष्ट-मय जीवन व्यतीत कर अजीतसिंह ने अपने सरदारों की सहायता से जोध-पुर पर पीछा ऋज्जा कर लिया।

वह वीर साहसी और स्वाभिमानी नरेश था। साथ ही उदारता की मात्रा भी उसमें पाई जाती थी। समय-समय पर उसने अपने सरदारों, ब्राह्मणों, चारणों आदि को गांव तथा भूमि प्रदान कर उनका समुचित सत्कार किया था। वह हिन्दू धर्म का पूर्ण पक्षपाती एवं मुसलमानों का विरोधी था। यद्यपि समय के फेर से उसे मुगल बादशाहों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी तथा अपनी पुत्री का विवाह बादशाह फर्रुखसियर से करना पड़ा था तथापि हृदय से उसकी सहायुभूति कभी मुसलमानों के साथ नहीं रही। पड़ोसी महाराजाओं के साथ बहुधा उसने मेल का ही व्यवहार रक्खा। महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) एवं सवाई जयसिंह के साथ उसकी मैत्री ऊंचे दर्जे की रही।

वह भाषा का अच्छा विद्वान् और कवि था। उसके रचे हुए गुण-सागर, दुर्गापाठ भाषा, निर्वाण दुहा, अजीतसिंह जी कह्या दुहा, महाराजा अजीतसिंहजी कृत दुहा श्री ठाकुरां रा^१, महाराजा अजीतसिंहजी की कविता एवं महाराजा अजीतसिंहजी रा गीत नामक ग्रन्थ मिले हैं^२। अपने कुछ दोहों में उसने अपनी द्वारिका-यात्रा का वर्णन किया है^३।

जहां उसमें इतने गुण थे वहां कई दुर्गुण भी विद्यमान थे। वह

(१) “अजीतविलास” में महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए कई सौ दोहों का संग्रह है, जिनमें उसके स्वामिभक्त सरदारों का वर्णन है (देखो ऊपर पृ० ५६६, टि० ३)। संभवतः ये वही दोहे हैं।

(२) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (काशी नागरी प्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित); प्रथम भाग, पृ० ३।

(३) देखो ऊपर पृ० ५६६, टि० ३।

अभिमानि, कान का कच्चा, अत्याचारी और कुतघ्न नरेश था। अपने स्वार्थ-साधन के लिए वह नम्र बन जाया करता था। बादशाह फ़र्रुख-सियर, बहादुरशाह एवं मुहम्मदशाह के समय उसपर मुगल सेना की चढ़ाइयां होने पर उसने लड़ने का साहस न किया और पीछे हटता गया। यही नहीं उसने उस समय मुसलमानों की कड़ी से कड़ी शर्तें तक मान लीं। इससे उसकी मानसिक कमज़ोरी ही प्रकट होती है। वह अपने विरोधियों से सख्त बदला लेता था, जिनमें से कई को उसने छल से मरवा डाला। उसने अपने सच्चे सहायक और मारवाड़ के रत्नक, अदम्य साहसी एवं स्वार्थत्यागी वीर दुर्गादास को, जिसने उसके जन्म से ही उसका साथ दिया था, बुरे लोगों के बहकाने में आकर बिना किसी अपराध के देश से निर्वासित कर दिया। उसकी यह कुतघ्नता उसके चरित्र पर कलंक की कालिमा के रूप में सदैव अङ्कित रहेगी।



महागजा अभयसिंह

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा बरतसिंह तक

अभयसिंह

अभयसिंह का जन्म वि० सं० १७४६ मार्गशीर्ष वदि १४ (ई० सं० १७०२ ता० ७ नवम्बर) शनिवार को जालोर में हुआ था। अपने पिता के मारे जाने का समाचार दिल्ली पहुंचने पर वि० सं० १७८१ श्रावण वदि ८ (ई० सं० १७२४ ता० २ जुलाई) शुक्रवार को वह वहीं जोधपुर राज्य का स्वामी बना। अनन्तर वह बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ, जिसने सिरोपाव आदि देने के अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मनसब दिया। इस अवसर पर महाराजा अजीतसिंह से वि० सं० १७७६ (ई० सं० १७२२) में ज़प्त किये हुए परगनों में से नागोर, केकड़ी, घटियाली, मारोठ, परबतसर, फूलिया तथा कुछ बाहर के परगने अभयसिंह को मिले।

अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय ही उसके पास महाराजा जयसिंह की पुत्री के साथ विवाह करने का संदेश आंबेर से आया। उसने

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२१।

इर्विन-कृत “लेटर मुगल्स” के अनुसार महाराजा अजीतसिंह के मारे जाने के बाद उसके पुत्रों में गद्दी के लिए बख्शबा खड़ा हुआ। ई० सं० १७२४ ता० २५ जुलाई (वि० सं० १७८१ भाद्रपद वदि १) को शम्सामुद्दौला के बीच में पड़ने पर बादशाह ने अभयसिंह को “राजराजेश्वर” का खिताब तथा सात हज़ारी मनसब देने के साथ ही जोधपुर पर अधिकार करने के लिए जाने की आज्ञा दी (जि० २, पृ० ११५)।

कुछ सरदारों का अप्रसन्न
 होकर महाराजा का
 साथ छोड़ना।

इस विषय में अपने पास रहनेवाले भंडारी रघुनाथ तथा अन्य सरदारों आदि से सलाह की। उन्होंने कहा कि पहले आप जोधपुर चले, फिर आंबेर जाकर विवाह करें; परन्तु उसने यह सलाह न मानी और मथुरा जाकर पहिले आंबेर-नरेश की पुत्री से भाद्रपद वदि ८ (ता० १ अगस्त) को विवाह किया। इससे अप्रसन्न होकर चैनकरण दुर्गा-दासोत (समदड़ी), उदयसिंह हरनाथसिंहोत (खीवसर) तथा अन्य कितने ही चांपावत, कूपावत, जैतावत, करणोत, मेड़तिया, जोधा, करम-सोत तथा ऊदावत सरदार उसका साथ छोड़कर चले गये। उनमें से कई तो अपने-अपने घर गये और कितने ही महाराजा के छोटे भाइयों आनन्दसिंह तथा रायसिंह के शामिल हो गये। किशोरसिंह जैसलमेर अपनी ननसाल में चला गया^१।

आनंदसिंह तथा रायसिंह ने उन सरदारों की सहायता से सोजत आदि परगनों पर अधिकार कर लिया और वे मुल्क में लूट-मार करने लगे^२। जब उनपर फ़ौजकशी हुई, तो उन्होंने ईडर पर अधिकार जाकर ईडर पर अधिकार कर लिया, जो बादशाह ने अभयसिंह को दिया था^३।

जोधपुर राज्य के कार्यकर्ता भंडारियों से राठोड़ सरदार अप्रसन्न थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि महाराज्य अजीतसिंह को मरवाने में उनका भी हाथ था। एक बार राठोड़ शक्तिसिंह आईदानीत रोहट गया। इसकी खबर पाकर बल्लसिंह ने उसे अपने पास बुलवाया, तो उसने

भंडारी रघुनाथ आदि का
 कैद किया जाना।

(१) जोधपुर राज्य की कथत; जि० २, पृ० १२१-२४। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८४४। “बीरबिनोद” से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर में रहे हुए शेष (? कई) भाइयों को बल्लसिंह ने मरवा डाला।

(२) जोधपुर राज्य की कथत; जि० २, पृ० १२४।

(३) बीरबिनोद; भाग २, पृ० ६४७।

उत्तर में कहलाया—“मैं तो महाराजा अजीतसिंह के पुत्र का ही सेवक हूँ, परन्तु आपने भंडारियों के कहने से जो कुछ किया वह उचित नहीं था, क्योंकि राज्य तो अन्त में आपको ही मिलता। इसके बाद मैंने महाराजा- (अभयसिंह) को जयपुर में विवाह करने के लिए मना किया, परन्तु उस- पर भी ध्यान नहीं दिया गया। राठोड़ भंडारियों से अप्रसन्न हैं। अब तो भंडारियों को कैद करने से ही राठोड़ राजी होंगे और देश का फ़साद मिटेगा।” भंडारियों के कैद किये जाने का वचन मिलने पर शक्तिसिंह बरतसिंह के पास गया। अनन्तर देश का समुचित प्रबन्ध करने के लिये बरतसिंह ने पंचोली केसरीसिंह के भालरे पर रहते समय वि० सं० १७८१ (ई० सं० १७२४) के कार्तिक मास में भंडारियों को गिरफ़्तार करने का हुक्म दिया। इस पकड़ा-धकड़ी में कई व्यक्ति मारे गये और ज़रमी हुए। राज्य-कार्य पंचोली रामकिशन बख़्शी को सौंपा गया। फिर इन सब बातों की ख़बर बरतसिंह ने महाराजा अभयसिंह के पास मथुरा भेजी, जिस पर उस (महाराजा) ने भंडारी रघुनाथ को नज़रक़ैद किया और दीवान का पद पंचोली रामबख़्श बालकिशन को सौंपा^१।

बादशाह से आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करते समय महाराजा ने जयसिंह की तरफ़ से खत्री लाला शिवदास नारायणदास को ५००० सवारों सहित अपने साथ ले लिया था।

जोधपुर पहुँचकर उसने भंडारी रघुनाथ आदि को मुक्त कर दिया। इससे नाराज़ होकर फिर कुछ सरदार जालोर की तरफ़ चले गये। उन्हें खुश करने के लिये उसने

(१) भंडारी रघुनाथ ने, जो अभयसिंह के साथ दिल्ली गया था, सवाई जयसिंह के समान ही उस (अभयसिंह) को अपने पिता अजीतसिंह को सरवाने की राय दी थी। उसने कहा कि महाराजा जयसिंह का कथन ठीक है, हमें जैसे बादशाह खुश रहे वैसा ही करना चाहिये (जोधपुर राज्य की ख़्यात, जि० २, पृ० ११५)।

(२) जोधपुर राज्य की ख़्यात, जि० २, पृ० १२४-५। बीरबिनोद, भा० १, पृ० ८४४।

फाल्गुण वदि १३ (ई० स० १७२५ ता० ३१ जनवरी) को फिर भंडारी रघुनाथ को गिरफ्तार कर लिया और दीवान का पद मेहता गोकुलदास समदड़िया को दिया^१ ।

अनन्तर अभयसिंह जालोर तथा सोजत होता हुआ मेड़ता गया । वहां से कूचकर वह नागोर गया । वहां के स्वामी इन्द्रसिंह ने गढ़ में रहकर एक मास तक मुक्ताबिला किया, परन्तु अन्त में वह गढ़ छोड़कर चला गया और वहां महाराजा का अधिकार हो गया । वहां से महाराजा मेड़ता लौटा^२ ।

उन्हीं दिनों आनंदसिंह और रायसिंह का देश में उत्पात बढ़ा । इस पर बख्तसिंह ने फ़ौज के साथ उनपर चढ़ाई कर उन्हें देश से बाहर निकाल दिया । अनन्तर वह- (बख्तसिंह) मेड़ता जाकर महाराजा से मिला^३ ।

वि० सं० १७८९ (ई० स० १७२५) के कार्तिक मास में महाराजा ने बख्तसिंह को “राजाधिराज” का खिताब और नागोर देकर उसका अलग ठिकाना क़ायम किया^४ ।

उसी वर्ष माघ मास में राज्य का प्रबंध बख्तसिंह के हाथ में सौंपकर महाराजा ने मेड़ता से दिल्ली की तरफ़ प्रस्थान किया । परबतसर^५

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२५ ।

(२) वही; जि० २, पृ० १२५-६ ।

(३) वही; जि० २, पृ० १२६ ।

(४) वही; जि० २, पृ० १२६ ।

“वंश भास्कर” से पाया जाता है कि अभयसिंह ने अपने पिता अजीतसिंह को मारने के एवज़ में अपने भाई बख्तसिंह को आधा राज्य और नागोर देने का वायदा किया था (चतुर्थ भाग; पृ० ३०८३, छन्द संख्या १-५) ।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि परबतसर में रहते समय

महाराजा का दिल्ली
जाना

होता हुआ वह आषाढ मास में दिल्ली पहुंचा। वहां रहते समय उसकी नवाब रोशनूद्दौला तुराबाज़-ज्जां नाम के शाही अफसर से नाराज़गी हो गई, जिसे उसने मारने का निश्चय किया, परन्तु बादशाह ने महाराजा को बुलाकर समझा दिया^१।

बख्तसिंह का किशोरसिंह
को भगाना

उन्हीं दिनों जैसलमेर की तरफ से कुंवर किशोरसिंह फ़ौज के साथ मारवाड़ में बिगाड़ करने के लिए पहुंचा। उधर से बख्तसिंह उसका सामना करने को गया। गांव तिंथरी चंडालिया में भगड़ा हुआ, जिसमें गांव रतकूड़िया के कूपावत कनीराम (रामसिंहोत) के हाथ से कोसाणा का खांदावत दौलतसिंह (जुभारसिंहोत) मारा गया। इस सेवा के बदले में बख्तसिंह ने अपने भाई अभयसिंह से कहकर आसोप का ठिकाना कनीराम के नाम करा दिया। इससे पूर्व आसोप का ठिकाना कूपावत भीम (सबलसिंहोत) के पास था। किशोरसिंह भागकर पीछा जैसलमेर और वहां से बीकानेर होता हुआ आंखेर गया^२।

आनंदसिंह तथा रायसिंह
को ईंडर का श्लाका
मिलना

आनंदसिंह और रायसिंह के ईंडर पर क़ब्ज़ा करने का उल्लेख ऊपर आ गया है। महाराणा संग्रामसिंह भी वहां अपना अधिकार जमाना चाहता था। उसने इस विषय में जयपुर के महाराजा जयसिंह को लिखा, तो उस (जयसिंह) ने महाराजा अभयसिंह को समझाया कि आपके दोनों भाई- (आनंदसिंह तथा रायसिंह) ईंडर पर क़ाबिज़ रहकर मारवाड़ का बिगाड़ करेंगे, अतएव महाराणा को उन दोनों का नाश

महाराजा को शीज़ (शीतला) माता की बीमारी हुई, जिसके ठीक होने पर उसने वहां शीज़ माता का मन्दिर बनवाया (जि० २, पृ० १३०)।

(१) जोधपुर राज्य की स्थाप; जि० २, पृ० १३०। फ़ारसी तबारीख़ों से इसकी पुष्टि नहीं होती।

(२) जोधपुर राज्य की स्थाप; जि० २, पृ० १३१।

करने के एवज में आप यह परगना दे दें। महाराजा को भी यह बात पसंद आई और वि० सं० १७८४ (ई० सं० १७२७) में उसने उन दोनों को मारने की शर्त पर ईडर का परगना महाराणा को दे दिया। महाराणा ने इसपर भीडर के महाराज जैतसिंह (शकावत) तथा धायभाई राव नगराज की अध्यक्षता में ईडर पर सेना भेजी, जिसने जाकर उसे घेर लिया। ऐसी दशा में आनंदसिंह तथा रायसिंह को भी आत्म-समर्पण करना पड़ा। उन दोनों को लेकर जब महाराज जैतसिंह महाराणा के पास पहुंचा तो उसने मारने के बजाय उन्हें अपने पास रख लिया। यह खबर पाने पर महाराजा ने जहानाबाद से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि २ (ई० सं० १७२८ ता० १० अगस्त) को एक उपालम्भपूर्ण पत्र महाराणा के नाम भेजा, परन्तु उसके पहुंचने के पूर्व ही वे दोनों भाई वहां से चले गये। इसके कुछ ही समय बाद उन्होंने मेड़ता आदि मारवाड़ के परगनों में उत्पात करना आरम्भ किया। इसपर महाराजा ने बल्लतसिंह को उधर भेजा। इसी बीच महाराजा जयसिंह के पास से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि १३ (ता० २२ अगस्त) का पत्र पहुंचने पर महाराणा ने आनंदसिंह तथा रायसिंह के अपने पास आने पर उन्हें ईडर का कुछ इलाका दे दिया^१।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६७-८। अभयसिंह का महाराणा के नाम लिखा हुआ श्रावणादि वि० सं० १७८३ (चैत्रादि १७८४) आषाढ वदि ७ (ई० सं० १७२७ ता० ३१ मई) का पत्र (वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६६)।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६६-७२। जोधपुर राज्य की क्वात में इस सम्बन्ध में निम्नलिखित वर्णन मिलता है—

“वि० सं० १७८५ में आनन्दसिंह और रायसिंह के जालोर में उपद्रव करने पर जोधपुर से भंडारी अनूपसिंह उनके विरुद्ध फौज लेकर गया, जिसपर वे गुजरात में चले गये। तब अनूपसिंह वापस जोधपुर लौट गया। इसके बाद ही आनन्दसिंह तथा रायसिंह दक्षिणी कंठा पीलू को २०००० फौज के साथ लाकर जालोर में पुनः उपद्रव करने लगे। इसपर बल्लतसिंह नागौर से जोधपुर गया। खीवसी ने दक्षिणियों से बात कर कंठा पीलू को लौटा दिया और बल्लतसिंह ने आनन्दसिंह एवं रायसिंह को समझकर उन्हें ईडर का पहा दिखा दिया (जि० २, पृ० १३१)।

उसी समय के आस-पास किशोरसिंह, महाराजा जयसिंह से आजा होकर खंडेला में विवाह करने गया, जहां से वह जैसलमेर पहुंचकर पोकरण किशोरसिंह का पोकरण फलोदी की तरफ लूट-मार करने लगा। इसकी फलोदी में उत्पात खबर मिलने पर बसंतसिंह उधर गया, जिसपर करना किशोरसिंह भागकर जैसलमेर चला गया। तब पोकरण का ठिकाना नरावतों से छीनकर चांपावत महासिंह (भगवानदासोत) को दिया गया और भीनमाल खालसा कर लिया गया।

गुजरात के हाकिम मुबारिजुल्मुल्क सरबुलंदखां का प्रबंध ठीक न होने के कारण बादशाह ने हि० सं० ११४३ (वि० सं० १७८८ = ई० सं० १७३२) में उसको हटाकर वहां महाराजा अभय-सिंह की नियुक्ति की। इसकी सूचना वकीलों-द्वारा प्राप्त होने पर सरबुलंदखां ने लौटने का इरादा

(१) महासिंह के पूर्वज गोपालदास (मांडयोत) के नाम रणसिंगाव की ऋद्धीसी जागीर थी। वि० सं० १६४२ (ई० सं० १५८५) में मोटे राजा उदयसिंह ने उसको आऊवा दिया और उसके बाद आऊवा का पट्टा हटाकर पाली की जागीर उसके नाम कर दी। पाली आदि ३३ गांव गोपालदास के पुत्र विठ्ठलदास की जागीर में रहे। वह महाराजा जसवन्तसिंह के समय उज्जैन की लड़ाई में काम आया। विठ्ठलदास के पौत्र सावन्तसिंह (जोगीदासोत) के पट्टे में भीनमाल भी रहा; किन्तु वह निःसन्तान था, जिससे उसका छोटा भाई भगवानदास भीनमाल का स्वामी हुआ। महाराजा अजीतसिंह को जब राज्य नहीं मिला था, उस समय अच्छी सेवा करने के एवज में उस (महाराजा) ने भगवानदास को वि० सं० १७६६ (ई० सं० १७०९) में ३० गांवों के साथ ३४००० रुपये आय की दासपां की जागीर दी। इसके दो वर्ष के भीतर ही उसे २१६०० रुपये की आय के आठ गांव और मिले। उसका पुत्र महासिंह था।

मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास (हस्तलिखित); जि० १, पृ० १-३।

(२) जोधपुर राज्य की क्यात; जि० २, पृ० १३१। मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास; जि० १, पृ० ३।

(३) जोधपुर राज्य की क्यात से पाया जाता है कि वह दक्षिणियों से मिल गया था और उसने शाही आज्ञा की ओर करनी शुरू कर दी थी (जि० २, पृ० १३२)।

(४) जोधपुर राज्य की क्यात में वि० सं० १७८६ दिया है (जि० २, पृ० १३२)।

किया। अन्य उपहारों आदि के अतिरिक्त इस अवसर पर अभयसिंह का शाही खजाने से १८ लाख रुपये और भिन्न-भिन्न आकार की ५० तोपें दी गईं। दिल्ली से प्रस्थान कर महाराजा प्रथम जोधपुर गया, जहां उसने मारवाड़ और नागौर से २० हजार अच्छे सवार एकत्रित किये। अनन्तर बल्लसिंह को साथ लेकर उसने अहमदाबाद की तरफ प्रस्थान किया^३। पालनपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में केवल पन्द्रह लाख लिखा है और महाराजा के साथ नवाब अज़ीमुल्लाहों का जाना लिखा है (जि० २, पृ० १३२)।

कविया करणीदान-कृत “सूर्यप्रकाश” से पाया जाता है कि बादशाह ने इस अवसर पर महाराजा को सिरपाव आदि के अतिरिक्त अपनी सेना और खजाने के इकतीस लाख रुपये दिये—

ताज कुलह सिरपेच जरी तोरा जर कंवर ।

खंजर जमदङ्ग खदग पवंग सिरपाव पटाभर ।

तई लोक ताबीन तोबरवाना गजवाना ।

सभे साह बगसीस लाख इकतीस खजाना ।

अहमदाबाद दीधो उतन असपति सोच उथालियो ।

ईखतां दोयरा हां अभौ होय विदा इम हालियो ॥ ६ ॥

[हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से; पृ० २०६]।

परन्तु ३१ लाख रुपये देने का कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वह प्रथम जयपुर जाकर महाराजा जयसिंह से मिला, जहां से चलकर वह कार्तिक मास में जोधपुर पहुँचा (जि० २, पृ० १३२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार वि० सं० १७८६ चैत्र वदि १० (ई० स० १७३० ता० २ मार्च) को महाराजा ने बल्लसिंह के साथ जोधपुर से कूच किया। गांव दुनावे में डेरा होने पर उसने भाद्राज्य के जोधा पर, जो देश में बहुत बिगाड़ करता था, बल्लसिंह को भेजा। वह उससे पेशकशी ठहरा और मालगुज में थाना स्थापित कर जोधा को साथ ले जाखोर में महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर गांव रेबाडोली के विद्रोही हीरा देवड़ा का दमन किया गया। गांव पोसाखिबे में उसने सिराही के राज उम्मेदसिंह की पुत्री से वि० सं० १७८७ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १७३०

पहुँचने पर फौजदार करीमदादखां भी उनसे जा मिला। यह पता चलने पर कि सरबुलंदखां अवरोध करने पर तुला बैठा है, उस (महाराजा) ने सरदार मुहम्मदखां शोरनी के पास बीस हजार रुपये की हुंडी और नायब हाकिमी का पत्र भेजकर आज्ञा दी कि यदि संभव हो तो तुम शहर पर अधिकार कर लो। सरदार मुहम्मदखां गुजरातियों की सेना एकत्र कर अवसर देखने लगा। इस बीच शाहनवाज़खां, मुहम्मद अभीनबेग तथा शेख अल्लाहयार ने फाटकों को चुनवा दिया और जगह जगह रक्त नयुक्त कर घे घेरे के लिए सामान इकट्ठा करने लगे। रात-दिन वे पूरी सतर्कता रखते, जिससे सरदार मुहम्मदखां को मौक़ा न मिला।

महाराजा के अहमदाबाद से ६४ मील उत्तर में सिद्धपुर के निकट पहुँचने पर जवांमर्दखां तथा सफ़्दरखां बाबी सरबुलंदखां की कृपाओं को गुजरात के पहले सेनादार भुलाकर राधनपुर से जाकर उससे मिल गये। साथ सरबुलंदखां के साथ ही 'क़सबाती' नाम के मुसलमान सिपाही तथा स्वर्गीय लड़ा मोमिनखां का पुत्र मुहम्मद बाकिर भी गुप्त रूप से तीन-चार व्यक्तियों के साथ महाराजा के शामिल हो गये। हि० सं० ११४३ के रबीउलआख़िर (वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि = ई० सं० १७३० अक्टो-बर) के प्रारम्भ में अभयलिंग सावरमती के किनारे मोजिर नामक गांव में पहुँचा, जहाँ से केवल दो मील दूर सरबुलंदखां के डेरे थे। ख़ाई आदि खुदवाकर उसने रात्रि को वहीं ठहरने का प्रबन्ध किया। रात्रि पड़ने पर दोनों ओर के सेनाध्यक्ष अपने अपने सलाहकारों के साथ युद्ध के संबंध में सलाह करते रहे। सुबह होने पर सरबुलंदखां सेना-सहित सामने आकर डट गया और युद्ध की बाट देखने लगा, लेकिन महाराजा ने परिस्थिति को

ता० २६ जुलाई) को विवाह किया (जि० २, पृ० १३३) ।

बांकीदास भी लिखता है कि गुजरात जाते समय मार्ग में सिरौही के पोसाकियां गांव में महाराजा ने सिरौही के राव की पुत्री से विवाह किया (ऐतिहासिक बातें, संख्या ३२५) ।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० २००-४ ।

देखते हुए युद्ध छोड़ा नहीं। गुजरातियों की सलाह के अनुसार वह नदी के ऊपर की ओर चार-पांच मील चलकर नगर के पश्चिम की तरफ उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ पहले सरबुलंदखाँ का डेरा था। वहाँ पर ही महाराजा ने अपना डेरा नियत किया। ऊँचे स्थान पर बसे हुए गाँव के छोटे-छोटे मकानों में राठोड़ों ने निवासस्थान बनाया। दीवारों पर तोपें रक्खी गईं और गाँव में प्रवेश करने के जल और स्थल दोनों मार्ग रोक दिये गये। वह स्थान अहमदाबाद के किले के ठीक सामने था और वहाँ से गोलाबारी करने की सुविधा थी। सुरक्षित गाँव में जवांमर्दखाँ तथा सफ़्दरखाँ बाबी के साथ मारवाड़ी पैदल सेना रक्खी गई। भद्र के किले से उनपर थोड़ी गोलाबारी हुई। महाराजा ने सेना की एक टुकड़ी शाह भीकन की क़दम के पास तथा बहरामपुर और बाड़ा नैनपुर की तरफ़ भेजी। इसका उद्देश्य यह था कि वहाँ तोपें लगाकर नगर पर आक्रमण किया जाय। शत्रु की गतिविधि का पता लगभग सूर्यास्त के निकट लगने के कारण सरबुलंदखाँ सुबह तक वहीं ठहरा रहा, लेकिन सतर्कता की दृष्टि से उसने अपने कुछ आदमियों को काली के किले में तथा शाही बाग के निकट मलिक मक़सूद गुजराती की मस्जिद की छत पर नियुक्त कर दिया। सबेरा होने पर

(१) बांकीदास लिखता है कि वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि ७ (ई० स० १७३० ता० ७ अक्टोबर) को कोचरपालवी पहुँचने पर अहमदाबाद नगर तथा भद्र के किले पर पाँच मोर्चे लगाये गये, जिनमें से चार महाराजा की सेना के थे और एक ब्रह्मसिंह की सेना का। एक मोर्चे में अभयकरण (कर्णोत), चांपावत महासिंह (पोकरण का), तथा भागीरथदास आदि, दूसरे में शेरसिंह सरदारसिंहोत (मेड़तिया), प्रतापसिंह भीमोत (जोधा, खैरवा का) तथा पुरोहित केसरीसिंह आदि, तीसरे में मारोठ तथा चौरासी के मेड़तिये एवं भंडारी विजयराज, चौथे में गुजराती सैनिक एवं भंडारी रत्नसिंह और पाँचवे में दीवान पंचोली लाला आदि थे। नवाब के पास उस समय आठ हज़ार सवार, दस हज़ार पैदल और छोटी-मोटी नौसौ तोपें थीं (ऐतिहासिक बातें; संख्या ११०२-८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इन पाँचों मोर्चों का उल्लेख है। उसमें पहले मोर्चे में पाली के चांपावत करण राजसिंहोत का नाम विशेष है (जि० २, पृ० १३४)।

उसने आगे बढ़कर शाही बाग के सामने दरगाईंखां गुजराती की क़दम की दूसरी तरफ़ डेरा किया। बचा हुआ तोपखाना तथा सामान थोड़ी सेना के साथ उसने शहर में भिजवा दिया। सारा दिन इसी प्रकार बीत गया। हां क़िले की दीवारों से शत्रु पर गोलाबारी अवश्य जारी रही। उधर अधिकृत गांवों में महाराजा के सैनिक पक्की दीवारों का निर्माण करने में लगे थे। बाहर उन्होंने खाइयां खोद दी थीं। इन सब कार्यों से निवृत्त होकर उन्होंने भी गोलाबारी का जवाब दिया। ऊंचे स्थान पर स्थित होने के कारण उनकी गोलाबारी सफल हो रही थी, जब कि शत्रु के गोले व्यर्थ जा रहे थे। ई० स० १७३० ता० २० अक्टोबर (वि० सं० १७८७ कार्तिक वदि ५) को सूर्योदय के एक या दो घंटे बाद सरबुलन्दखां युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर साबरमती के रेतीले मैदान में आया। उसका उद्देश्य शत्रु को सुरक्षित स्थान से हटा देना था। घोड़े पर चढ़कर चलने लायक जगह न होने के कारण उसके सैनिकों को, जो मैदान से जा रहे थे, पैदल चलना पड़ा। अन्य बाधाओं का अतिक्रमण करते हुए वे गांवों की दीवारों पर जा पहुँचे, जहाँ से उन्होंने बंदूकें चलाईं। अन्त में उन्हें खानपुर के फाटक खोल देने में भी सफलता प्राप्त हुई। वह स्थान ठीक नदी के किनारे था और उसके नीचे कई खाइयां थीं। फिर भी सरबुलन्दखां के आदमी फाटक तथा दूसरे मार्गों से भीतर प्रवेश कर ही गये। महाराजा की सेना के गुजराती भी अटल थे। हाथों-हाथ लड़ाई होने लगी, पर कितने ही अक्रसरों के मारे जाने पर शेष गुजराती सैनिक महाराजा के शामिल हो गये। इसी बीच सरबुलन्दखां भी वहाँ जा पहुँचा, पर उसने तोपखाने को वापस क़िले में ले जाने की आज्ञा देकर एक बड़ी ग़लती की। साथ ही उसके पैदल बक्सरी सैनिक लूट-मार करने की गरज़ से बिखर गये। सरबुलन्दखां के आगे बढ़ते ही महाराजा अपनी सारी सवार सेना के साथ उसका सामना करने को गया। मारवाड़ी सेना ने बड़े वेग से शत्रु पर आक्रमण कर उनपर बन्दूकों की मार की। सरबुलन्दखां के पास केवल तीरंदाज़ बच रहे थे। महाराजा और उसका भाई राजपूती प्रथा के विरुद्ध

बजाय हाथियों के घोड़ों पर चढ़कर लड़ रहे थे। सरबुलन्दखां ने हाथियों के समूह की तरफ आक्रमण किया, पर वहां तो महाराजा था नहीं। मार-बाड़ी सैनिक बहुत समय तक तो जमकर लड़े, परन्तु बाद में उनके पैर छल्लड़ने लगे। सरबुलन्दखां ने भी लगातार आक्रमण कर उन्हें पीछे हटने पर मजबूर किया, पर इस बीच मुसलमानों की तरफ के कई प्रमुख अफसर मारे जा चुके थे, जिससे उनकी यह धारणा होने लगी कि विजयभी उनके हाथ न लगेगी और उनमें से कितने ही युद्धक्षेत्र का परित्याग कर चले गये। इस घटना ने यहां तक तूल पकड़ा कि अन्त में यह बात फैल गई कि सरबुलन्दखां मारा गया। शहर में यह अफवाह फैलने पर वहां छोड़े हुए मुहम्मद अमीनबेग तथा अल्लाहयार खानपुर द्वार से बाहर निकल गये। मार्ग में उन्हें दूसरे मुसलमान सैनिक मिले, जिन्होंने कहा कि अब कुछ करना व्यर्थ है। उधर जैसे ही मारवाड़ियों को यह मालूम हुआ कि सरबुलन्दखां के सैनिकों की संख्या बहुत घट गई है, तो उन्होंने नवीन उत्साह के साथ आक्रमण किया, पर सरबुलन्दखां जमकर लड़ता ही रहा। इसी बीच अल्लाहयार जा पहुंचा, जिसे पहले आक्रमण में ही मारवाड़ियों ने मार डाला, लेकिन इससे सरबुलन्दखां इताश न हुआ। उसने अन्त में मारवाड़ियों को भगा दिया और सरखेज तक उनका पीछा किया। सारा दिन इसी प्रकार लड़ाई होती रही। रात्रि पड़ने पर विथाम के लिए तम्बू लगाये गये। दिन में राजपूतों में यह अफवाह फैल गई कि महाराजा युद्धक्षेत्र छोड़कर चला गया। इसका परिणाम यह हुआ कि गुजराती तथा कसबाती सैनिक भागकर आस-पास के गांवों में चले गये। शाम को महाराजा के वापस लौटने पर लोगों को सन्तोष हुआ। इस प्रकार राजपूतों पर विजय प्राप्त कर संघ्या पड़ने पर मुहम्मद अमीनबेग के समझाने से सरबुलन्दखां घायल और मृत व्यक्तियों का प्रबन्ध करने के लिए वापस किले की तरफ चला गया^१। दूसरे दिन जब महाराजा को यह ज्ञात हुआ

(१) फ़ारसी तबारीख़ों में इस लड़ाई में महाराजा की तरफ के मारे जानेवाले व्यक्तियों का उल्लेख नहीं मिलता, अतएव हम तत्सम्बन्धी हाल बांकीदास के

कि सरबुलंदखां अभी तक जीवित है, तो उसने लड़ाई की तैयारी की। सरबुलंदखां भी सतर्क था, पर उस दिन लड़ाई न हुई और दोनों तरफ़ के लोग अपने-अपने घायलों तथा मृतकों का प्रबंध करने में व्यस्त रहे।

“ऐतिहासिक बातें” नामक ग्रन्थ से उद्धृत करते हैं। वह लिखता है—वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि १० (ई० सं० १७३० ता० १० अक्टोबर) शनिवार को बड़े सवेरे नवाब (सरबुलन्दखां) ने शेरसिंह (सरदारसिंहोत) के मोर्चे पर आक्रमण किया। अभयकरण और चांपावत करण उस शेरसिंह की सहायता को गये। बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें मुसलमानों के तीन सौ आदमी और महाराजा की सेना के चांपावत करण (पाली), मेड़तिया भोमसिंह (सरारसया), जोधा हठीसिंह जोगीदासोत, धांधल भगवानदास (बूटेलाव) और पुरोहित केसरीसिंह मारे गये। अभयकरण बहुत घायल हुआ। महाराजा का डेरा मोर्चे से अलग था। यह खबर पाते ही वह अपने भाई बल्लतसिंह के साथ युद्धस्थल पर पहुँचा, पर उस समय तक लड़ाई बन्द हो चुकी थी। तब अश्वारूढ़ होकर दोनों भाइयों ने मुसलमानों पर आक्रमण कर उनमें से बहुतों को मार डाला और उनका सामान आदि लूट लिया। इस झगड़े में बल्लतसिंह के बीस तीर लगे। नवाब भाग गया और महाराजा की फ़तह हुई (ऐतिहासिक बातें संख्या ११०६-१२)। जोधपुर राज्य की ख्यात में लड़ाई का प्रारम्भिक वृत्तान्त तो ऐसा ही है, परन्तु आगे चलकर कुछ विस्तृत वर्णन दिया है, जो इस प्रकार है—“आश्विन सुदि १० की लड़ाई में महाराजा की सेना के चांपावत किशनसिंह जसवन्तोत (नारनबी), चांपावत रामसिंह सबलसिंहोत (रामासया), चांपावत सुलतानसिंह सावन्तसिंहोत, चांपावत उर्जनसिंह पद्मसिंहोत, मेड़तिया शुभनाथ गोवर्द्धनोत, मेड़तिया सरदारसिंह जोरावरसिंहोत माधोदासोत, जोधा गुमानसिंह हठीसिंहोत, जोधा जोरावरसिंह कुशलसिंहोत, चांदावत हरीसिंह भावसिंहोत (नोखा) आदि कितने ही सरदार काम आये। महाराजा की फ़ौज की फ़तह होते ही उसके कितनेक सैनिक वापस अपने डेरों को चले गये। इतने में अमीनख़ां ने, जो नदी के किनारे खड़ा था, अपनी दो हजार फ़ौज के साथ महाराजा की फ़ौज पर आक्रमण कर दिया। इसकी खबर लगते ही सैनिकों ने लौटकर उसका सामना किया और नवाब की फ़ौज को पीछे हटा दिया। दूसरे दिन फिर लड़ाई होने पर महाराजा की तरफ़ से बहुत से आदमी मारे गये और घायल हुए। उसी दिन जोधपुर से जाकर ऊदावत अमरसिंह कुशलसिंहोत (नीबाज) तथा चांदावत अभयसिंह विजयसिंहोत (बलूदा) महाराजा की सेना में शामिल हुए (जि० २, पृ० १३५-७)।

(१) इर्विन; लेटर सुगास्स; जि० २, पृ० २०५-११। “बीरविनोद” में भी इस लड़ाई का संक्षिप्त उल्लेख है (भाग २, पृ० ८४४-५)। कविता करणीदास ने

महाराजा ने और लड़ने में लाभ की संभावना न देख सुलह की शर्तें तय करने के लिए महुमूदाबाद के जागीरदार मुखलिसखां एवं खंभात के फ़ौजदार मोमिनखां को नियत कर सरबुलन्दखां

सरबुलन्दखां के साथ
सुलह होना

के पास एक पत्र भिजवाया। उसका ठीक जवाब मिलने पर उपर्युक्त दोनों व्यक्ति सरबुलन्दखां से जाकर मिले। दूसरे दिन मोमिनखां और ऊदावत अमरसिंह (नींवाज) ने जाकर ये शर्तें कीं कि सरबुलन्दखां को एक लाख रुपया और भारवर्दारी दी जायगी, उसे अपनी तमाम तोपें महाराजा के सुपुर्द करनी होंगी और महाराजा से मिलना होगा। पहली मुलाक़ात के लिए यह तय हुआ कि प्रथम महाराजा सरबुलन्दखां के पास जाय। तदनुसार नवाब गाज़ीउद्दीनखां के बाग़ के पास एक तंबू खड़ा किया गया, परन्तु महाराजा ने कई प्रकार के बहाने बनाकर जाना स्थगित रक्खा। दूसरे दिन थोड़े से आदमियों के साथ सरबुलन्दखां महाराजा के डेरे पर गया। वहां उस समय सारे मारबाड़ी सुसज्जित खड़े थे। सरबुलन्दखां के पहुंचते ही महाराजा उसके स्वागत के लिए आगे बढ़ा। गले मिलने के अनन्तर दोनों पास-पास बैठ गये। फिर पगड़ी बदलने की रस्म हुई, जिसके बाद सरबुलन्दखां अपने डेरे को लौट गया। बख़्तसिंह घायल होने के कारण इस मिलन के समय उपस्थित न था और कहते हैं कि उस समय अभयसिंह वख़्तों के भीतर

अपने ग्रन्थ “सूर्य प्रकाश” में इस लड़ाई का अत्यन्त विस्तारपूर्वक वर्णन किया है, पर काव्य ग्रन्थ होने से उसका वर्णन बहुधा प्रशंसात्मक और अतिशयोक्तिपूर्ण है।

(१) मुन्शी मुहम्मद सैयद अहमद मारहोई-कृत “उमरा-इ-हन्द” से पाया जाता है कि सरबुलन्दखां ने अश्वल तो ख़ूब मुक़ाबिला किया, लेकिन बादशाह और नवाब आसफ़जाह के ख़ौक़ से सुलह करना मुनासिब जानकर एक दिन शाम को चन्द खोबदारों और ख़िदमतगारों के साथ अभयसिंह की मुलाक़ात के लिए चला गया। यह हाल देखकर अभयसिंह को बड़ा ताज्जुब हुआ। बहरहाल स्वयं स्वागत कर उसे अपने निवास-स्थान पर ले गया और अत्यन्त सम्मान के साथ मसनद पर बैठाया। दोनों में स्नेह की बातें हुईं और वे पगड़ी बदल भाई बने (पृ० २३)। इससे भी स्पष्ट है कि विजय सरबुलन्दखां की ही हो रही थी।

जिरहबख्तर पहने था^१ ।

ई० सं० १७३० ता० २६ अक्टोबर (वि० सं० १७८७ कार्तिक वदि ११) को सरबुलंदख़ां के प्रस्थान का प्रबंध करने के लिए जगदेव नामका एक व्यक्ति नियुक्त किया गया । इसके दूसरे दिन महाराजा का भद्र के किले में प्रवेश करना रतनासिंह भंडारी ने भद्र के किले में प्रवेश कर वहां नया कोतवाल रक्खा । गाड़ियों का प्रबंध होने तक सरबुलंदख़ां को वहां रुकना पड़ा । छोटी-बड़ी एकसौ तिहत्तर^१ तोपें सूबे के दीवान अब्दुलगनी के सुपुर्द कर उससे रसीद लेली गई । अब भी प्रतिष्ठा किये हुए एक लाख रुपयों में से बीस हजार देने बाक़ी रह गये, जिन्हें भिजवा देने का ज़िम्मा अमरसिंह ने अपने ऊपर लिया । अनन्तर मोडासा तथा उदयपुर होता हुआ सरबुलंदख़ां आगरे चला गया । तब महाराजा शाही बाग के निकट जाकर किले में प्रवेश करने की शुभ घड़ी का इन्तज़ार करने लगा । वहां ही अब्दुलगनीख़ां तथा अब्दुल मुफ़्फ़ा-ख़िरख़ां उससे जाकर मिले । ता० ७ नवंबर (कार्तिक सुदि ६) को महाराजा ने अपने भ्राता सहित भद्र के किले में प्रवेश किया, जहां कुछ

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० २११-२ । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४६ ।

बांकीदास इस सम्बन्ध में लिखता है कि दूसरे दिन नवाब (सरबुलन्दख़ां)-ने शेख़ मुजायद को महाराजा अमरसिंह के पास सुलह की शर्तें तय करने के लिए भेजा । महाराजा ने उससे कहलाया कि अपना सारा तोपज़ाना छोड़कर चले जाओ । ऐसा ही हुआ । इस प्रकार वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि १२ (ई० सं० १७३० ता० ११ अक्टोबर) को अहमदाबाद पर महाराजा का अधिकार हुआ (ऐतिहासिक बातें; संख्या १११३) । जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि आश्विन सुदि १२ को नवाब ने पत्र लिखकर उदावत अमरसिंह को बुलाया । उसने महाराजा की आज्ञा से जाकर यह तय किया कि नवाब शहर छोड़ देगा, उसे भारवरदारी दी जायगी और महाराजा से मिलकर वह पगड़ी बदल भाई बनेगा । इसके एवज़ में उसे कई मंज़िल तक पहुँचा दिया जायगा । कार्तिक वदि ७ को वह (नवाब) महाराजा और उसके भाई से मिला (जि० २, पृ० १३७) ।

(२) “मिरात-इ-अहमदी” से पाया जाता है कि महाराजा को छोटी बड़ी २७३ तोपें सरबुलन्दख़ां ने सौंपी (जि० २, पृ० १३१) ।

समय तक ठहरने के बाद वह अपने डेरे पर लौट गया। कुछ दिनों बाद स्थायी रूप से वहां रहकर वह सूबे की देख-भाल करने लगा।

उसी वर्ष महाराजा ने अपने भाई बख्तसिंह को पाटण का हाकिम बख्तसिंह को पाटण की हाकिमी मिलना नियुक्त किया और वहां का कार्य-संचालन करने के लिए उसके साथ एक नायब भेजा।

सरबुलन्दखां ने गुजरात की हाकिमी छूटने के पूर्व राजा साहू के मन्त्री बाजीराव को कुछ मामले तय करने के लिए अपने पास बुलाया था, परन्तु बाजीराव के साथ महाराजा उस (बाजीराव) के रवाना होने के पहिले ही सर- बुलन्दखां गुजरात छोड़कर चला गया और वहां का

(१) इर्विन; लेटर मुगल्स; जि० २, पृ० २१२-३। इर्विन ने अपनी पुस्तक में सरबुलन्दखां के साथ की महाराजा अभयसिंह की लड़ाई का सारा हाल मिर्जा मुहम्मद हसन-कृत “मिरात-इ-अहमदी” के आधार पर लिखा है (देखो मूल फ़ारसी पुस्तक; जि० २, पृ० ११८-२८)।

कैम्पबेल कृत “गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी” में लिखा है कि अहमदाबाद में प्रवेश करने पर महाराजा ने रत्नसिंह भंडारी को अपना नायब मुक़र्रर किया और मोमिनखां के चचेरे भाई फ़िदाउद्दीनखां को शहर कोतवाल बनाया। कुछ समय बाद पालनपुर के हाकिम करीमदादखां जालोरी का, जो उसके साथ गुजरात में गया था, बेहान्त हो गया। अनन्तर शेरखां बाबी के उपस्थित होने पर उसे उसके पिता की जागीर दी गई, जिसकी सूचना बादशाह को भेजी गई। मोमिनखां खंभात का शासक तथा फ़िदाउद्दीनखां उसके आस-पास के प्रदेश का हाकिम बनाया गया (भाग १, खंड १, पृ० ३११)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी अहमदाबाद के सूबे पर अभयसिंह का असर होने, उसके शाही बाग में ठहरने और नायब का पद भंडारी रत्नसिंह को देने का उल्लेख है (जि० २, पृ० १३७)।

(२) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२।

लगभग उसी समय मुबारिजुलमुल्क (सरबुलन्दखां) के अनुयायी मीर फ़ख़रुद्दीन ने महाराजा के पास उपस्थित हो जूनागढ़ की नायब हाकिमी प्राप्त की, परन्तु उसके बहाने पर मीर इस्माइल ने अमरेली (मध्य काठियावाड़) में लड़ाई कर उसे मार डाला। अनन्तर मुहम्मद पहाड़ अपने पिता करीमदादखां जालोरी के स्थान में पालनपुर का शासक बनाया गया तथा जवांमदखां बकनगर भेजा गया (वही; भाग १, खंड १, पृ० ३१२)।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में कौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फौजदार सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ़ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाप में मिला और शर्तें तय कर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुक़ाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई; परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़ज़ाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ़ चला गया^१।

(१) पूना के पास के दावड़ी गांव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और मींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाड़े ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अक्रसर था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मात-हत अक्रसरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई मींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १३३-४। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बांबे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की क्वात; जि० १२, पृ० १३६।

उन दिनों भड़ोच शहर का हाकिम अब्दुल्लाबेग था, जिसे उस पद पर मुबारिजुलमुल्क ने नियत किया था। अभयसिंह के हाथ में गुजरात का अधिकार जाने से उसे बड़ी नाराज़गी हुई और उसने निज़ाम को लिखा कि यदि मुझे आज़्ञा हो तो मैं आपकी तरफ़ से यहां का नायब बना रहूँ। निज़ामुलमुल्क ने इसकी स्वीकृति देने के साथ ही उसको “नेकअलमखां” का खिताब दिया। उन्होंने दिनों बक़्तसिंह नागोर गया और अज़मतुल्ला आगरे’।

मुबारिजुलमुल्क (सरबुलन्दखां) के समय में ही अहमदाबाद में ख़ुशहालचन्द नगर सेठई से हटाया जाकर गंगादास वहां का नगर सेठ बनाया गया था। अभयसिंह ने सूबेदार होने पर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाल रखने का वचन दिया, जिस सम्बन्ध की अपनी मुहर-सहित सनद अभयकरण दुर्गादासोत ने उसको दी। महाराजा ऊपर से तो उसपर कृपा रखता था, पर भीतर ही भीतर वह उसे कैद कर उससे रुपये वसूल करना चाहता था। इसके लिए मोमिनखां की सलाह के अनुसार सम्सामुद्दीला (ख़ाजा असीम, खानदौरां) की मोहर-सहित दो जाली फ़रमान तैयार किये गये। उनमें से एक का आशय यह था कि अहमदाबाद के लोगों पर जो कर और वृंह लगाये गये थे उनका मूल गंगादास था, इसलिए उसको गिरफ़्तार कर सांकल से बांध, बेड़ी पहना बादशाह के दरबार में भेजा जाय। दूसरा फ़रमान मोमिनखां के नाम था, जिसमें यह लिखा गया कि मुखलिसखां गंगादास को पकड़ने में मदद पहुंचावे, जिसके एवज़ में महमूदाबाद का पट्टा उसे दिया जायगा। इस फ़रमान के अनुसार मुखलिसखां ने गंगादास को अपने पास बुलवाकर कैद कर लिया। अभयकरण को, जिसने उस- (गंगादास) की प्रतिष्ठा क़ायम रहने की सनद कर दी थी, यह बहुत बुरा

(१) कैम्बेल्; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बांवे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२।
जोधपुर राज्य की ख्यात में आबख़ादि वि० सं० १७८७ (बैत्रादि १७८८ = ई० सं० १७३१) के आषाढ मास में बक़्तसिंह का नागोर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १३६)।

लगा और वह लड़ने के लिए तैयार हो गया। महाराजा ने जब उसको अपने पास बुलाकर फ़रमान दिखाया और कहा कि यह तो शाही हुक्म है, तब वह चुप हो गया। गंगादास के साथ ही उसके अन्य सम्बन्धी एवं रेशम के व्यापारी भी कैद कर लिये गये। मार-पीट तथा कई तरह के अत्याचार कर गंगादास के पास से दो लाख रुपये, उसके चचेरे भाई खुशहाल से तीन लाख तथा दूसरों से जो कुछ वसूल हो सका वसूल किया गया। इस प्रकार थोड़े समय में ही सक्ती तथा ज़ोर-जुलम से नौ लाख रुपये वसूल किये गये। इससे हिन्दुस्तान के शहरों के अतिरिक्त सिंध, तुर्किस्तान, अरब, हबस (अबीसीनिया), ईरान और तूरान तक होनेवाले रेशम के व्यापार को बड़ा धक्का पहुंचा। इसी तरह महाराजा ने बोहरों से भी दंड की बड़ी रकम वसूल की। छोटे-बड़े हिन्दू मुसलमान तक भी दंड से न बचे और उनका माल और धन छीना गया। यही नहीं आमदनी बढ़ाने की गरज़ से सोने, चांदी के प्रचलित सिक्कों में मेल की मात्रा बढ़ाई गई, जिससे अन्यत्र उनका चलन बन्द हो गया। सैयदों, शेखों, फ़कीरों आदि को जो भूमि और गांव आदि निर्वाह के लिए दिये गये थे उनपर भी महाराजा ने चौथ लेना स्थिर किया, जिससे उनकी हालत भी खराब हो गई। इसी अर्थ में मुबारिजुलमुल्क (सरयुलन्दख़ां) द्वारा एकत्र किया हुआ शीशा, बारूद, गोले तथा अन्य सामग्री, जो उसने तोगों के साथ महाराजा को सौंपी थी, धीरे-धीरे जोधपुर भिजवा दी गई^१।

स्वर्गीय खंडेराव दामाड़े^२ का प्रतिनिधि, सोनगढ़ का स्वामी तथा

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन, मिरात-इ-अहमदी, जि० २, पृ० १३६-४१।

(२) दामादों का मूल पुरुष येसाजी तोगांव का रहनेवाला था। वह शिवाजी की सेवा में रहता था। उसका बड़ा लड़का खंडेराव रामराजा का सेवक रहा, जिसने उसकी अच्छी सेवा के बदले में उसे 'सेना धुरन्धर' की पदवी देकर गुजरात और बगलाना की तरफ़ भेजा। शाहू राजा के समय वह उसका सेनापति नियत हुआ। फिर उसको गुजरात और काठियावाड़ अधीन करने की आज्ञा हुई। उसने वसही से सूरत तक का कोंकण का प्रदेश अपने हस्तगत किया था। ई० स० १७२१ (वि० सं०

भीलों एवं कोलियों का मददगार होने के कारण पीलाजी गायकवाड़ स्व-

महाराजा का पीलाजी
गायकवाड़ को छल से
मरवाना

भावतः अभयसिंह को कांटे के समान खटकता
था। बड़ोदा नगर और डभोई के किले पर अधिकार
हो जाने से उसका पक्ष अधिक मज़बूत हो गया

था। खंडेराव को गुजरात की चौथ उगाहने का हक प्राप्त था। मही नदी
के पार के इलाके की चौथ उगाहने के बाद खंडेराव की विधवा पत्नी उमा
बाई ने आस-पास के प्रदेश की चौथ उगाहने के लिए कंधाजी (कदम) के
स्थान में पीलाजी गायकवाड़ को नियत किया। वह बड़ा लश्कर लेकर
चौथ उगाहने के लिए डाकोर नामक स्थान में पहुंचा। यह खबर सुनकर
अभयसिंह सेना और तोपखाना लेकर उससे लड़ने चला, परन्तु प्रकट रूप
से उसने अपना पैगाम पहुंचाने और सलाह करने के लिए कितनेक मार-
वाड़ियों को उसके पास भेजा। उनमें से दो तीन छल-कपट करने में प्रवीण
व्यक्तियों को महाराजा ने कहा कि अवसर पाते ही पीलाजी को मार
डालना। पीलाजी के पास पहुंचकर उन्होंने दो-तीन दिन दिखावटी बात-चीत में
व्यतीत किये। फिर एक रात्रि को अपने डेरों पर जाने की आज्ञा हो जाने के
बाद उनमें से एक वापस पीलाजी के पास गया और कुछ ज़रूरी बात कहने
के बहाने उसके कान के निकट जा उसने कटार के दो घाव कर उसे मार
डाला। इसका पता लगते ही पीलाजी के आदमियों ने घातक को मार
डाला। अनन्तर माही नदी के सामने के तट पर सांवली गांव में उसके
शव का दाह हुआ^१।

१७८६) में पथरी की बीमारी से उसकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्यु के बाद, पुत्र की
नाबाख्ति अवस्था के कारण उसकी वीर पत्नी उमाबाई उसका कार्य चलाते लगी।

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१३।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १४२-३।
कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१३। जोधपुर
राज्य की क्वात में भी पीलाजी गायकवाड़ के महाराजा-द्वारा मरवाये जाने का वर्णन है।
उसमें घातक का नाम ईश लखधीरोत दिया है (जि० २, पृ० १३२-४०)।

इसके बाद महाराजा अहमदाबाद से प्रस्थान कर माही नदी से उत्तर बड़ोदा ज़िले में जा पहुँचा। दक्षिणियों ने बड़ोदा और दूसरे परगने छोड़कर डभोई के क़िले में, जो सुरक्षित स्थान महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना समझा जाता था, आश्रय लिया। तब महाराजा ने खाद्य सामग्री, शीशा और दारू-गोला अपने बच्चे में कर जीवराज भंडारी को बड़ोदा के मालदार आदमियों को क़ैद कर उनसे धन वसूल करने के लिए वहाँ नियत किया। उसने वहाँ के लोगों पर यह झूठा आरोप लगाकर कि उनके पास मरहटे धन-माल छोड़ गये हैं उनसे दंड लिया। उन्हीं दिनों बादशाह की तरफ़ से रहीमबाख़रखाँ इस आशय का फ़रमान लेकर कि शाही मनसबदारों और सूबे के मुख्य-मुख्य अधिकारियों को उनकी जागीरें दे दी जावें पाटण से अहमदाबाद पहुँचा। महाराजा का नायब रत्नसिंह भंडारी उस (रहीमबाख़रखाँ) को लेकर महाराजा के पास गया। महाराजा डभोई पर भी अधिकार करना चाहता था, परन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। तब शेरखाँ बाबी को बड़ोदे की हुकूमत पर नियत कर वह अहमदाबाद लौट गया।

स्वर्गीय खंडेराव दामाई की पत्नी उमाबाई बड़ी वीर और साहसी स्त्री थी। वह घोड़े और हाथी की सवारी करने में अत्यन्त कुशल थी और अपनी सेना का संचालन स्वयं किया करती थी। उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई पीलाजी के मारे जाने की ख़बर पाकर वह बदला लेने के लिए व्यग्र हो उठी। एतदर्थ तीस-चालीस हज़ार सवारों तथा पीलाजी के पुत्र दामाजी एवं कंधाजी के साथ, जो उसकी सेवा में रहते थे, उमाबाई ने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १४३-४। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने बड़ोदा के मुखिया दल्ला को पकड़कर उससे भी धन वसूल करना चाहा। इसी अभिप्राय से वह उसे गढ़ में साथ ले गया और अन्य लोगों को उसने बाहर ही रक्खा, परन्तु दल्ला को किसी प्रकार महाराजा की मंशा का पता चल गया, जिससे वह एक तेज़ अश्व पर सवार हो क़िले से भागकर निकल गया।

नगर से तीन कोस दूर साबरमती के किनारे मौज़ा फ़ैज़ाबाद (शाहबाड़ी) में डेर कर उसने अपने लश्कर को आस-पास के गांवों को लूटने की आज्ञा दी। महाराजा ने उस समय मोमिनखां एवं जवांमर्दखां को बुलवाकर उन्हें शाही बाग की तरफ़ के हिस्से की रक्षा करने को भेजा। दूसरी तरफ़ के हिस्सों की रक्षा के लिए भंडारियां एवं जागीरदारों के साथ मारवाड़ी सेना नियुक्त की गई। उसी समय राजा बख़्तसिंह एक अच्छी सेना के साथ नागौर से आकर भाई से मिला। बख़्तसिंह सेठ खुशहालचंद भवेरी को नगर सेठाई दिये जाने के सम्बन्ध का परवाना अपने साथ लाया था, जिसके अनुसार महाराजा ने उसको खिलअत देकर नगर सेठाई का कार्य सौंप दिया। इस बीच जीवराज भंडारी का, जो अपनी वीरता का बड़ा गर्व रखता था और गुजराती तथा मारवाड़ी सवारों और पैदलों के साथ राजपुर के पास चारतोड़े में रहकर उधर की रक्षा करने के लिए नियत था, मरहटों से सामना हुआ, जिसमें वह मारा गया। इस लड़ाई के फलस्वरूप जीवराज भंडारी की सेना के घोड़े, शस्त्रास्त्र, छोटी-बड़ी तोपें, भंडे, नक़ारे आदि मरहटों के हाथ लगे। इस लड़ाई के समय महाराजा ने रत्नसिंह को जीवराज भंडारी की सहायताार्थ जाने को कहा, परन्तु वह नहीं गया और जवांमर्दखां एवं मोमिनखां को शत्रु का सामना करने के लिए कहलाकर वह बहरामपुर की तरफ़ चला गया। जवांमर्दखां और मोमिनखां शाम होते-होते शाही बाग में पहुंचे। उन्होंने लड़ना शुरू किया और मीर अबुल-कासिम आदि कई व्यक्तियों को, जो घायल हुए थे, लेकर वे लौट गये। रत्नसिंह भद्र के क़िले की दीवार के नीचे के अपने डेरे में चला गया। इन घटनाओं से लोग घबरा गये और दक्षिणी, हिन्दू एवं मुसलमान सबको लूटने लगे। रसूलाबाद के बाहरी भाग में, जहां शाही वंश के सैयदों का निवास था, दक्षिणियों ने बड़ी लूट-मार की। सैयद लड़ने के लिए तैयार हुए, पर दक्षिणियों का सैन्य बल अधिक होने से उनका कुछ बस न चला। उनमें से कई मारे गये और उनके घर-बार, दरगाह का सामान तथा एक बड़े पुस्तकालय का नाश हो गया। एक सप्ताह तक दिन में दक्षिणी और

रात में कोलियों के दल मकान खोदने, माल-मत्ता लूटने तथा घरों में आग लगाने का कार्य करते रहे। इस प्रकार मरहटों का उत्साह, जो पीलाजी के मारे जाने से कम हो गया था, पुनः बढ़ गया। जीवराज भंडारी के लश्कर का नाश करने के बाद दक्षिणी रत्नसिंह भंडारी पर चढ़े। उसके पास मरहटों का सामना करने योग्य शक्ति का अभाव होने से वह कुछ कर नहीं सकता था। अन्त में मरहटों से संधि करने का निश्चय होकर अभयकरण तथा जवांमर्दखां उमाबाई के पास सुलह की बात-चीत करने के लिए भेजे गये। वे तीन दिन तक वहां रहे और बातचीत के बाद चौथ^१ और सरदेशमुखी^२ के कायम रहने के अतिरिक्त अस्सी हजार रुपया छुट्टंद का मरहटों को देना तय हुआ। इस रकम के चुकाने का भार जवांमर्दखां ने अपने ऊपर लिया। तब उमाबाई बड़ोदा की तरफ गई। जवांमर्दखां थोड़े-थोड़े रुपये उसके पास भेजता रहा। अन्त में बीस हजार रुपये बाकी रह गये, जो उसने स्वयं रख लिये। उमाबाई के बड़ोदा पहुंचने पर शेरखां बाबी ने क्रिले को मजबूत कर उससे लड़ने की तैयारी की, पर उमाबाई ने महाराजा के साथ की अपनी सुलह की बातचीत की सूचना उस (शेरखां-बाबी) को दे दी, जिससे लड़ाई न हुई। फिर चौथ की रकम वसूल करने के लिए एक व्यक्ति को उसके पास छोड़कर वह अपने देश लौट गई^३।

(१) आमद का चौथा हिस्सा।

(२) सरदेशमुखी नामक कर के रूप में आमद का दसवां भाग लिया जाता था। यह कर चौथ से अलग लगता था।

(३) मिर्जा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १२७-६१। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का वि० सं० १७८६ (ई० स० १७३३) के फाल्गुन मास के प्रारम्भ में होना लिखा है। उससे पाया जाता है कि उक्त मास में उमाबाई सत्तर हजार क़ौज के साथ चढ़ आई तब महाराजा ने बख्तसिंह को बुलाने के साथ जोधपुर, मेरुता आदि से क़ौज बुलाई। महाराजा तथा बख्तसिंह तो क्रिले में ही रहे और सारी क़ौज के मुस्तदियों के डेरे किलकिला नदी पर हुए। कुल क़ौज बीस हजार थी।

उसी वर्ष बादशाह की तरफ से महाराजा के लिए खिलअत, रत्न-अटित सिरपेच, कलगी तथा एक हाथी लेकर स्वाजा असदुल्लाखां गुर्ज-
 बादशाह के पास से बंदार अहमदाबाद गया। इस अवसर पर मोमिन-
 महाराजा के लिए खिलअत खां आदि कई दूसरे अफसरों के लिए भी
 जाना खां आदि कई दूसरे अफसरों के लिए भी
 खिलअत भेजी गई।

उन दिनों औरंगज़ेब की छावनी का हिसाबी कामदार निज़ामुद्दीन-
 खां का पुत्र मीर गाज़ीउद्दीनखां था। वह बड़ा धनवान था। रहीमयावरखां
 के चुगली करने पर महाराजा के आदमियों ने उसे
 गाज़ीउद्दीनखां से धन वसूल करना कैद कर लिया और एक बड़ी रकम लेने के बाद
 उसे छोड़ा।

उन्हीं दिनों भंडारी गिरधरदास ने महाराजा से भूठी शिकायत की
 कि राजवी राणावत के पुत्र सुलतानसिंह से भंडारी रघुनाथ मिल गया है
 और वे बादशाह से उदंडता कर रहे हैं। इसपर
 सुलतानसिंह को मरवाना महाराजा ने नाज़र दौलतराम तथा धांधल केसरी-
 सिंह को लिखा कि वे सुलतानसिंह एवं भंडारी रघुनाथ को मार डालें।
 इस आशय का परवाना लेकर भंडारी गिरधरदास गुजरात से जोधपुर

दुर्गादास के पुत्र अभयकरण तथा खंडेराव में भाईचारा था, जिससे महाराजा ने उसे
 उमाबाई के पास भेजा। उमाबाई ने उससे कहा कि हमारी गुजरात में चौथ लगती
 है, आपने दशाबाज़ बाजीराव से क्यों बात की और पीलाजी को क्यों मारा? अब या
 तो सम्मुख होकर युद्ध करो या चौथ दो। इसपर अभयकरण ने डेढ़ लाख रुपया देना
 ठहराकर इसकी सूचना महाराजा को दी। महाराजा की सेना के भंडारी रत्नसिंह,
 भंडारी विजयराम, मेहता जीवराज, पंचोली जालजी आदि को यह बात पसन्द नहीं
 आई और उन्होंने उमाबाई की क़ौज पर चढ़ाई कर दी। लड़ाई होने पर जीवराज मारा
 गया। इसके दूसरे दिन महाराजा ने अभयकरण को पुनः उमाबाई के पास भेजकर बात
 कराई और दो लाख रुपया देना ठहराकर उसे वापस लौटाया (जि० २, पृ० १४१)।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२। कैम्पबेल;
 गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२।

गया। नाज़िर ने तदनुसार चौहान हिन्दूसिंह के हाथ से सुलतानसिंह को मरवा दिया। भंडारी रघुनाथ कैद में था, जिसे धांधल केसरीसिंह ने सौंपने से इनकार कर दिया। इसी बीच महाराजा को वास्तविक बात का पता चल गया, जिससे भंडारी रघुनाथ की ज़िन्दगी बच गई। भंडारी गिरधर-दास से महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ। वह (गिरधरदास) इस घटना के कुछ ही समय बाद बीमार पड़कर मर गया^१।

हि० सं० ११४५ (वि० सं० १७८६ = ई० सं० १७३२) में रत्नसिंह भंडारी को अपना नायब नियतकर अपने भाई राजा बल्लसिंह के साथ महाराजा ने जोधपुर छोटे हुए दिल्ली जाने के लिए प्रस्थान किया। उसके जाते ही रत्नसिंह भंडारी ने मनमाने तौर से हुकूमत करना आरम्भ किया और वह कर के नाम से अनुचित ढंग से लोगों से धन वसूल करने लगा। उसकी देखा-देखी शहर-कोतवाल एवं बाहर के हिस्से के फ़ौजदार भी रैयत को हैरान करने और दुःख देने लगे^२।

उसी वर्ष उमावार्द के दत्तक पुत्र जादोजी ने, महाराजा के गुजरात से लौट जाने की खबर सुनकर, बीस हज़ार सवारों के साथ नायब सूबे- (रत्नसिंह) से चौथ तय करने के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में पड़नेवाले स्थानों में लूट-मार करता और खिराज वसूल करता हुआ वह शाही बाग में पहुँचा। भंडारी ने गुजराती सिपाहियों को अपनी फ़ौज में

जादोजी की महाराजा के नायब भंडारी रत्नसिंह पर चढ़ाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४०।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२-३। कैम्प-बेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाग्ने प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा अपने भाई-सहित पहले जालोर गया, जहाँ से बल्लसिंह तो नागौर गया और महाराजा कुछ समय वहाँ रहने के उपरान्त जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १४१-२)।

भर्तीकर मोमिनखां को बुलवाया और शहरपनाह के फाटक बन्द करवा एवं वहां सेना नियुक्त कर उसने अपनी मज़दूती की। मुहम्मद अल्लादीन गवर्नी लश्कर-सहित शहर के बाहरी भाग की रक्षा के लिए नियत किया गया। मरहटी सेना की टुकड़ियां शहर के बाहरी हिस्सों पर हमला करतीं, जिनके साथ मुसलमानी सेना की लड़ाई होती। इस प्रकार एक मास व्यतीत हुआ। तब भंडारी ने अपने विश्वासपात्र आदमी जादोजी के पास भेजकर यह पुछवाया कि उमाबाई के साथ सन्धि हो जाने के बाद अब इस चढ़ाई का कारण क्या है। इसपर जादोजी पहले के क्रार के मुताबिक चौथ तय कर वहां से सोरठ की तरफ चला गया और आपस में सुलह हो गई।

उन दिनों शेरखां बाबी बड़ोदे का काम संभालता था। वह कुछ समय के लिए अपनी जागीर वाड़ासिनोर का बन्दोबस्त करने गया।

बड़ोदे पर मरहटों का
अधिकार होना

उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर पीलाजी गायकवाड़ के भाई महादजी ने बड़ोदा के पास के जम्बूसर के परगने पर कब्ज़ा कर लिया। फिर पादरा के मुखिया दल्ला और धीरमगांव के देसाई के उत्तेजित करने पर उसने बड़ोदा पर घेरा डालने का विचार किया। सोनगढ़ से दामाजीराव ने उसकी सहायता के लिए फ़ौज रवाना की। इसपर मुहम्मद सरवाज़ ने, जिसको शेरखां बाबी अपनी अनुपस्थिति में बड़ोदा का प्रबन्ध करने के लिए छोड़ गया था, शहरपनाह के फाटक आदि मज़बूत कर युद्ध की तैयारी की। शेरखां ने इसकी खबर मिलने पर भंडारी से मदद मंगवाई और वह स्वयं भी रवाना हुआ। भंडारी ने मोमिनखां को लिखा कि शेरखां के पहुंचते ही वह उसकी मदद कर मरहटों को बाहर निकाल दे। शेरखां फ़ौज एकत्र कर करीब डेढ़ मास तक पड़ा रहा। फिर उसके माही नदी पार करने की खबर पाते ही महादजी, उसका मार्ग रोकना आवश्यक समझा। बहुतसी सेना के साथ उसके मुकाबले के लिए गया। शेरखां और

उसके साथी बड़ी वीरता से लड़े, पर दक्षिणियों का बल अधिक होने से उनको सफलता नहीं मिली और बड़ोदा पर महादजी का अधिकार हो गया। मोमिनखाँ, जो उस समय मार्ग में ही था, बड़ोदा का हाल सुनकर खंभात चला गया^१। तब से ही स्थायी रूप से बड़ोदे पर मरहटों का अधिकार हो गया।

वि० सं० १७६० (ई० सं० १७३३)^२ में बख्तसिंह ने नागोर से एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर अधिकार करने के विचार से प्रस्थान किया और स्वरूपदेसर के निकट जाकर डेरे किये।

बख्तसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

उन दिनों बीकानेर के स्वामी सुजानसिंह का ज्येष्ठ पुत्र जोगवरसिंह अपनी सेना-सहित नोहर में था।

सुजानसिंह के समाचार भिजवाने पर वह अमरसर पहुंचा, जहां बीकानेर की और फौज भी उसके शामिल हो गई। इस सम्मिलित सेना के साथ जोधपुर की सेना का तालाव नाज़सर पर मुकाबिला होने पर प्रथम आक्रमण में ही बख्तसिंह की सेना के पैर उखड़ गये और वह भागकर अपने डेरों में चली गई। अनन्तर बख्तसिंह के यह समाचार जोधपुर भेजने पर अभयसिंह स्वयं एक बड़ी सेना के साथ उससे जा मिला। फिर मोर्चाबन्दी हुई और युद्ध शुरू हुआ, परन्तु बीकानेरवालों ने गढ़ की रक्षा का ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया था तथा वे इतनी दृढ़ता के साथ जोधपुरवालों का सामना कर रहे थे कि अभयसिंह को विजय की आशा न रही। फिर रसद आदि का पहुंचना भी जब बन्द हो गया तो अभयसिंह ने मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) से कहलाया कि आप अपने प्रतिष्ठित व्यक्तियों

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६७-८। कैम्प-बेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४-५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में बख्तसिंह का वि० सं० १७६१ (ई० सं० १७३४) के भाद्रपद मास में बीकानेर पर चढ़कर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है। 'वीरविनोद' में भी वि० सं० १७६० ही दिया है (भाग २; पृ० ८४७)।

को भेजकर हमारे बीच सुलह करा दें। इसपर महाराणा ने चूडावत जगतसिंह (दौलतगढ़ का), मोही के भाटी सुरताणसिंह तथा पंचोली कानजी (सहीवालों का पूर्वज) को दोनों दलों में सुलह कराने के लिए भेजा। पहले तो जोधपुरवालों ने खर्च की मांग भी की, परन्तु बीकानेरवालों ने इसे स्वीकार नहीं किया। पीछे से इस शर्त पर सुलह हुई कि पीछे लौटते हुए जोधपुर के सैन्य का बीकानेरवाले पीछा न करें। तदनुसार फाल्गुन वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० २० फ़रवरी) को दोनों भाई (अभयसिंह तथा बल्लसिंह) कूचकर नागौर चले गये।

बीकानेर की प्रथम चढ़ाई में असफल होने पर भी बल्लसिंह ने आशा का परित्याग नहीं किया। बीकानेर के किलेदार नापा सांखला के

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६१। वीरविनोद; भाग २, पृ० २००-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४७।

यह घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—“वि० सं० १७६१ के भाद्रपद (ई० स० १७३४ अगस्त) मास में बल्लसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई की और गोपालपुर खरबूजी पर अधिकार करता हुआ वह बीकानेर के निकट जा पहुँचा। आश्विन के शुक्ल पक्ष में अभयसिंह भी जोधपुर से कूचकर खींवर पहुँचा, जहाँ पंचोली रामकिशन, जिसे महाराजा ने एक लाख रुपया देकर फ़ौज एकत्र करने के लिए भेजा था, चार हज़ार सवारों के साथ उससे जा मिला। बल्लसिंह का मोर्चा लक्ष्मीनारायण के मन्दिर की तरफ़ था। बीकानेरवालों ने बाहर आकर लड़ाई की, परन्तु बल्लसिंह के राजपूतों ने उन्हें गढ़ में भगा दिया। महाराजा का डेरा नगर के निकट होने पर चारों तरफ़ मोर्चे लगाये गये। बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह का कुंवर भाद्रा की तरफ़ था। वह लालसिंह कांधलोत और चार हज़ार सेना के साथ शहर में गया। चार मास तक लड़ाई चली, पर जब गढ़ टूटता न दिखा तो लालसिंह ने जाकर जोधपुरवालों को समझाया कि इस बार तो आप पधारें, फिर आयेंगे तो सारा प्रबन्ध कर दिया जायगा। इस बात का बचन देने पर अभयसिंह और बल्लसिंह नागौर गये (जि० २, पृ० १४२)।

उपर्युक्त वर्णन में महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) के आदमियों-द्वारा दोनों दलों में संधि स्थापित होना नहीं लिखा है, परन्तु “वीरविनोद” में भी इसका उल्लेख है, अतएव कोई कारण नहीं है कि उसपर अविश्वास किया जाय।

बीकानेर पर पुनः अधिकार
करने का बख्तसिंह का
विकल प्रयत्न

वंशज दौलतसिंह ने अपने स्वामी से कपट कर बख्तसिंह से बीकानेर के गढ़ पर उसका अधिकार करा देने के विषय में गुप्त रूप से बातचीत की। वह तो यह चाहता ही था। दौलतसिंह के उद्योग से जैमलसर का भाटी उदयसिंह, शिव पुरोहित, भगवानदास गोवर्द्धनोत और उसके दो पुत्र हरिदास एवं राम तथा बीकानेर के कितने ही सरदार आदि भी बख्तसिंह के शामिल हो गये। उदयसिंह के एक सम्बन्धी पड़िहार राजसी के पुत्र जैतसी की बीकानेर राज्य में बहुत चलती थी। उन दिनों कुंवर जोगवरसिंह ऊदासर में था। उदयसिंह जैतसी को साथ ले उसके पास ऊदासर चला गया। इस प्रकार बीकानेर का गढ़ अरक्षित रह गया। ऊदासर में एक रोज़ गोठ के समय उदयसिंह अधिक नशे में हो गया और ऐसी बातें करने लगा, जिनसे स्पष्ट ज्ञात होता था कि उसके मन में कोई भेद है। जैतसी ने जब अधिक दबाव डाला तो उसने सारी बातें खोलकर उससे कह दीं। जैतसी सुनते ही सावधान हो गया और आस-पास से सेना एकत्र करने के लिए उसने ऊंट-सवार रवाना किये। इतना करने के उपरान्त वह बीकानेर जाकर गढ़ के उस भाग की तरफ़ गया, जिधर पड़िहार रक्षा पर थे और उनसे रस्सी नीचे गिरवाकर वह उसके सहारे गढ़ में दाखिल हो गया। अनन्तर उसने महाराजा को जाकर इसकी सूचना दी। सुजानसिंह तत्काल जैतसी को साथ लेकर सूरजपोल पर पहुँचा तो उसने उसके ताले खुले पाये। उसी समय सब दरवाज़े मजबूती से बन्द कर दिये गये और गढ़ की रक्षा का समुचित प्रबन्ध कर तोपें दागी गईं। सांखला नाहरखां बख्तसिंह तथा उसके आदमियों को बुलाने गया हुआ था, जो पास ही में थे। जब उसने तोपों की आवाज़ सुनी तो समझ गया कि षड्यन्त्र का सारा भेद खुल गया। बख्तसिंह ने भी जान लिया कि अब आशा फलीभूत होना असम्भव है, अतएव वह अपने साथियों-सहित वहाँ से चला गया। उधर गढ़ के भीतर के सांखले मार डाले गये तथा धायभाई को गढ़ की रक्षा का भार सौंपा गया। यह

घटना वि० सं० १७६१ आषाढ वदि ११ (ई० सं० १७३४ ता० १६ जून) को हुई^१ ।

उसी वर्ष^२ महाराणा जगतसिंह (दूसरा) के राज्याभिषेकोत्सव के अवसर पर बल्लसिंह नागौर से उदयपुर गया । सवाई जयसिंह भी इस अवसर पर वहां गया हुआ था । अनन्तर हुरडा नामक स्थान में पारस्परिक एकता के सम्बन्ध में अहदनामा करने के लिए राजाओं के एकत्र होने पर^३ अभयसिंह भी वहां जाकर सम्मिलित हुआ । वहां पर उपस्थित महागजाओं में उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, कोटा, बीकानेर आदि के नरेश प्रमुख थे । वहां कुछ विचार होने के उपरान्त एक अहदनामा लिखा गया, जिसमें नीचे लिखी शर्तें स्थिर हुई—

१. सब राजा धर्म की शपथ खाते हैं कि वे एक दूसरे का दुःख-सुख में साथ देंगे । एक का मान अथवा अपमान सबका मान अथवा अपमान समझा जायगा ।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६२-३ । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४८-६ । “वीरविनोद” में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग २; पृ० २०१) । जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है, जिसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि इस चढ़ाई का सम्बन्ध केवल बल्लसिंह से ही था, अभयसिंह से नहीं । एक बार विफल-प्रयत्न होने पर पुनः बीकानेर पर अधिकार करने के लिए बल्लसिंह का पड्यन्त्र करना असम्भव नहीं है ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७६२ दिया है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है; क्योंकि आगे चलकर उसी ख्यात में उस समय महाराणा जगतसिंह (दूसरा) का राज्याभिषेकोत्सव होना भी लिखा है । महाराणा का राज्याभिषेकोत्सव वि० सं० १७६१ के ज्येष्ठ मास में हुआ था, जैसा “वीरविनोद” से भी स्पष्ट है ।

(३) राजाओं का यह सम्मेलन सवाई जयसिंह के उद्योग से हुआ था । वह मरहटों के आक्रमणों से घबरा गया था और इसीलिए उसने यह सब किया था (विस्तृत वृत्तान्त के लिए देखो मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ६३७-८) ।

२. एक के शत्रु को दूसरा अपने पास न रखेगा ।

३. वर्षा ऋतु के बाद कार्यारम्भ किया जायगा, तब सब राजा रामपुरा में एकत्र होंगे । यदि कोई किसी कारणवश स्वयं न आसके तो अपने कुंवर को भेजेगा ।

४. यदि कुंवर अनुभव की कमी से कुछ गलती करे तो महाराणा ही उसको ठीक करेगा ।

५. कोई नया काम शुरू हो तो सब एकत्र होकर करें ।

यह अहदनामा वि० सं० १७९१ श्रावण वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० १७ जुलाई) को लिखा गया । फिर सब राजा अपने-अपने स्थानों को चले गये ।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि हुरडा से प्रस्थानकर महाराजा अभयसिंह देवलिया^१ के ठिकाने में गया । देवलिया का ठिकाना पहले भिणायवालों का था, परन्तु शाहपुरा के उम्मेदसिंह ने उसे छीनकर अपने भाई ईश्वरीसिंह को दे दिया था । महाराजा ने उसे वापस छुड़ाकर

देवलिया का ठिकाना
रघुनाथसिंह को देना

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० १२१८-२१ । वंशभास्कर; भाग ४, पृ० ३२२७-८ । टॉड; राजस्थान; जि० १, पृ० ४८२-३ और टिप्पण ।

कर्नल टॉड ने इस अहदनामे की तिथि श्रावण सुदि १३ दी है और 'वंश-भास्कर' में सब राजाओं का कार्तिक सुदि में एकत्र होना लिखा है । ये दोनों बातें ठीक नहीं हैं । अहदनामे की नकल में श्रावण वदि १३ ही दी है ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है, पर उसमें भी समय गलत दिया है, जैसा कि ऊपर (पृ० ६३४, टि० २ में) बतलाया गया है । उससे यह भी पाया जाता है कि अभयसिंह ने इस अवसर पर लाल डेरा खड़ा किया था । इसपर बादशाह को यह सुझाया गया कि वह कुछ क़त्ल करनेवाला है, परन्तु भंडारी अमरसिंह ने समझा-बुझाकर उसकी दिलजमई कर दी, जिससे उसने महाराजा के पास सिरोंपाव तथा आभूषण आदि भिजवाये (जि० २, पृ० १४२-३) ।

(२) यह ठिकाना आजकल अजमेर प्रान्त के अन्तर्गत है ।

राठोड़ रघुनाथसिंह नाहरसिंहोत जोधा को दिया। महाराजा बहां तीन मास तक ठहरा और उसने शाहपुरा के गांवों से पेशकशी वसूल की। इसपर उम्मेदसिंह उसके पास उपस्थित हो गया^१।

इसके कुछ ही समय बाद सवाई जयसिंह ने खानदौरां की मारफ़्त अर्ज़ करा रणथंभोर का क़िला बादशाह से अपने नाम करा लिया। यह ख़बर मिलने पर महाराजा की तरफ़ से गढ़ बीटली-
 गढ़ बीटली की मांग पेश करना
 (तारागढ़) की मांग पेश की गई। इसपर जयसिंह को रणथंभोर का क़िला दिया जाना स्थगित रहा^२।

उसी समय के आस-पास दक्षिणियों की फ़ौज के पूना से इधर बढ़ने का समाचार मिलने पर बादशाह ने एक बड़ी फ़ौज के साथ बख़्शी नवाब ख़ानदौरां को उसके विरुद्ध भेजा। इस अवसर पर
 दक्षिणियों के खिलाफ़ महाराजा का शाही सेना के साथ जाना
 महाराजा अभयसिंह, जयसिंह (जयपुर का) तथा दुर्जन-साल (कोटा का) आदि समस्त हिन्दू नरेशों को भी ख़ानदौरां के शामिल होने की आज्ञा दी गई। इसपर सब राजा हाड़ोती में उसके शरीक हो गये। अनन्तर चंद्रावती के ठिकाने रामपुरा से तीस कोस इधर नवाब के डेरे हुए। दक्षिणियों की सेना आसेर में थी। उसके नज़दीक शाही फ़ौज का डेरा होने पर महाराजा ने उसी समय आक्रमण करने की सलाह दी, पर जयसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी और गुप्त रूप से दक्षिणियों को कहला दिया कि जमकर लड़ाई करना ठीक नहीं, अतएव मुल्क में लूट-मार करो। तदनुसार उन्होंने सांभर और मौजाबाद को लूटा तथा दिल्ली जाकर कालका के मेले में लूट-मार की। तब महाराजा अभयसिंह और नवाब दिल्ली गये। बादशाह के पूछने पर महाराजा ने सब हाल कह दिया। इसपर वह महाराजा से बड़ा खुश हुआ और उसने दक्षिणियों को तीस लाख तीस हजार पांच सौ रुपये दिये। तब वज़ीर नवाब करमदीनख़ां भी, जो

(१) जि० २, पृ० १४३-४।

(२) जोधपुर राज्य की त्थात; जि० २, पृ० १४४।

दक्षिणियों के विरुद्ध भेजा गया था, वापस दिल्ली चला गया।

वीरमगांव (भालावाड़) का परगना खालसा होने पर बुरहानुलमुल्क-
(सम्राटखान) ने वह परगना अपने प्रीतिभाजन बहरामखान के नाम करा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४४ ।

इर्विन-कृत "लेटर मुगल्स" में भी इस घटना का उल्लेख है, पर उसमें अभय-
सिंह का नाम नहीं है। उससे पाया जाता है कि सम्सामुद्दौला ने एक बड़ी कौज तथा
कितने ही राजपूत राजाओं एवं सरदारों के साथ दक्षिणियों के विरुद्ध अजमेर की तरफ
प्रस्थान किया, जहाँ महारराव का होना ज्ञात हुआ था। मार्ग में जयसिंह भी अपनी
सेना-सहित उसके शामिल हो गया। कोई लड़ाई नहीं हुई और जयसिंह के समझाने से
उस (सम्सामुद्दौला) को मरहटों की सारी शर्तें स्वीकार करनी पड़ीं। उसके अनुसार
मरहटों के नर्मदा के पार चले जाने की शर्त पर उन्हें चौथ देना मंजूर किया गया। साथ
ही मालवा से उन्हें बाइस लाख रुपया देना भी तय हुआ। शायी सेना कोटा और
बूंदी राज्यों से आगे न गई और सम्सामुद्दौला वहाँ से वापिस लौटकर ई० स० १७३५
ता० २१ या २२ मई (वि० सं० १७६२ ज्येष्ठ सुदि ११ अथवा १२) को दिल्ली पहुंचा
(जि० २, पृ० २८०-१)।

आगे चलकर जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि बादशाह
के पास इसकी शिकायत अभयसिंह ने की थी, जिससे जयसिंह उससे नाराज़ था और
उसने दक्षिणियों को मारवाड़ पर चढ़ाई करने को भड़काया। इसपर राणोजी सिंधिया
और महारराव होल्कर ने पचास हजार सेना के साथ गुजरात की तरफ से जाकर
जालोर और सोजत का विगाड़ किया। अनन्तर वे मेड़ता चले गये। उनकी सेना की
कुछ टुकड़ियाँ जोधपुर में रातानाडा तक गईं। इसपर चांपावत शक्रिसिंह आईवानोत
(रोहटका), चांपावत महासिंह भगवानदासोत (पोकरणका), पुरोहित जगा आदि ने मेड़ते
के मालकोट में भंडारी विजयराज, भंडारी मनरूप आदि के साथ रहकर लड़ाई की तैयारी
की। अन्य कितने ही परगनों की सेनाएं भी उनके शामिल हुईं और शाहपुरे का राजा
उम्मेदसिंह भारतसिंहोत सीसोदिया भी चार हजार सेना के साथ गया। महाराजा को
इसकी सूचना मिलने पर उसने वहाँ से हुक्म भेजा कि दक्षिणियों को एक दाम भी न
दे। इसके बाद दोनों तरफ से मोर्चे लगाये जाकर लड़ाई शुरू हुई, पर कुछ ही समय
में तोपों की मार से घबराकर दक्षिणियों ने युद्ध बन्द कर दिया। महाराजा ने दिल्ली से
प्रस्थान कर दिया था, लड़ाई बन्द होने की खबर पाकर उसने अपनी यात्रा स्थगित कर
दी (जि० २, पृ० १४५-६)।

रत्नसिंह भंडारी का लड़ाई
में बहरामखां को मारना

दिया। इस सम्बन्ध में बज़ीरुलमुल्क ने भंडारी रत्नसिंह के पास सूचना भेजी कि वह बहरामखां को मदद पहुंचावे। बहरामखां ने भी परगना मिलने की सनद भंडारी के पास भेजी और रवाना होने की तैयारी की। इस बीच भंडारी ने उस परगने की खेती नष्ट होने की झूठी सूचना बादशाह के पास भिजवाकर वह परगना महाराजा के नाम करवा दिया। बुरहानुलमुल्क को जब इसकी सूचना मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और बादशाह से उसकी कहा-सुनी हो गई। उसने बहरामखां से कहा कि किसी बात की चिन्ता न करते हुए वह जल्दी वीरमगांव में दाखिल होने का प्रयत्न करे। इसपर सादिकअलीखां को जूनागढ़ में अपना नायब मुक़र्रर कर वह वीरमगांव की तरफ़ अपनी सेना-सहित रवाना हुआ। भंडारी को इस बात की ख़बर मिलते ही उसने मारवाड़ी फ़ौज और मोमिनखां, शेरखां एवं सफ़्फ़-दरखां बाबी को अपने पास बुलवाया। साथ ही उसने गुजराती लिपाहियों को अपनी सेना में भर्ती किया और तोपखाना दुरुस्त कर वह लड़ने के लिए चला। थोल्का होता हुआ वह कोठ नामक स्थान में पहुंचा। वहां रहते समय उसको ख़बर मिली कि धंधुका नामक स्थान में बहरामखां आ पहुंचा है। तब बहरामखां की छावनी से सात कोस दूर हंडाला में उसने पड़ाव किया। वहां पर मोमिनखां, शेरखां एवं सफ़्फ़दरखां उसके शामिल हो गये। वहां से प्रस्थान कर धंधुका ज़िले के दमोली गांव में भंडारी ठहरा। वहां रहते समय यह तय हुआ कि इस शर्त पर सुलह का प्रयत्न किया जाय कि इस वर्ष तो बहरामखां शाही हुक़म की तामील करे और दूसरे वर्ष जैसी आह्वा हो उसका पालन किया जावे। बहरामखां ने यह शर्त स्वीकार नहीं की और लड़ने का निश्चय किया। भंडारी ने भी लड़ने का आयोजन किया और तोप की मार करंने योग्य स्थान तक आगे जाकर ठहरा। तीन दिन तक दोनों ओर से बराबर तोपें चलती रहीं। हि० स० ११४७ ता० १ जमादिउलअव्वल (वि० सं० १७६१ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७३४ ता० १६ सितंबर) को भंडारी ने अपनी सेना को तैयार

रहने की आज्ञा दी। रात बीतते बीतते भंडारी की फ़ौज ने बहरामखां के सैनिकों पर, जो नाच-रंग में मस्त थे, आक्रमण कर दिया। इस अचानक आक्रमण से मुसलमानी फ़ौज भागने लगी। बहरामखां ने अपने थोड़े से सैनिकों के साथ ठहरकर मारवाड़ी फ़ौज का सामना किया, परन्तु उसकी शक्ति कम होने से उसके साथ के कई आदमी मारे गये और वह स्वयं भी बुरी तरह घायल हुआ। उसी समय मुहम्मदकुलीखां वहां पहुंच गया, जो बहरामखां को उठाकर सीहोर की तरफ़ खाना हुआ, पर मार्ग में दो घंटे बाद ही उस (बहरामखां) की मृत्यु हो गई। मुसलमानी सेना में भगबट् मचते ही मारवाड़ी सैनिकों ने मुसलमानों का सारा सामान आदि लूट लिया। इसी बीच एक अज्ञात सैनिक ने भंडारी पर आक्रमण कर उसके सिर और कंधे पर दो घाव किये, जिससे वह दो मास में अच्छा हुआ। भंडारी के आदमियों ने आक्रमणकारी को मार डाला^१।

बहरामखां के मारे जाने का हाल भंडारी तथा मारवाड़ियों को ज्ञात नहीं हुआ। मारवाड़ियों को भय था कि उसके सिर उड़ा जाने से उधर बहुत हानि होगी, अतएव उन्होंने भंडारी को यह सुझाया कि बक्राया वसूल करने की सनद पहले मोमिनखां ने ही भेजी थी, लड़ाई करने के लिए भी उसने ही उसे तैयार किया था और लड़ाई उसी की साजिश से हुई थी, इसलिए इस अवसर से लाभ उठाकर उस (मोमिनखां) को हटा दिया जावे, जिससे उधर कोई सिर उठानेवाला ही न रहे। भंडारी की मोमिनखां के साथ एक प्रकार से मैत्री थी और यह भी पक्की खबर नहीं थी कि बहरामखां जीवित है अथवा मर गया, जिससे उसने अपने सलाहकारों की बात न मानी; परन्तु यह बात सर्वत्र फैल गई एवं मोमिन-

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १७७-८२। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग १, खंड १, पृ० ३१५-६), परन्तु उसमें सोहराबखां नाम दिया है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि मूल पुस्तक (मिरात-इ-अहमदी) में बहरामखां नाम मिलता है।

खां के कान तक पहुँची। तब बीमारी के बहाने भंडारी की आज्ञा प्राप्त कर मोमिनखां खंभात चला गया^१।

शेरखां की तबदीली के समय कलिया नाम का एक व्यक्ति मार-बाड़ी सैनिकों के साथ वीरमगांव का फौजदार मुक़र्रर किया गया था।

रतसिंह और रंगोजी
की लड़ाई

मारवाड़ियों के आने से भावसिंह देसाई को भय लगा। दामाजी के धोलका पहुँचने और चौथ तय हो जाने की खबर पाकर उसने उसको अपने यहाँ बुलाया। मरहटों ने भावसिंह के शत्रु क़सबातियों को निकालकर वीरमगांव पर क़ब्ज़ा कर लिया। कलिया ने यह सारा हाल जाकर भंडारी से कहा। उधर रंगोजी को चौथ उगाहने के लिए वीरमगांव में नियत कर दामाजी स्वदेश चला गया। उसके चले जाने के बाद हि० सं० ११४८ (वि० सं० १७६२ = ई० सं० १७३५) में, भंडारी की आज्ञा बिना चौथ उगाहना असंभव देख, रंगोजी धोलका परगने के बावला गांव में ठहरा और मरहटे लोग जगह-जगह मुसाफ़िरों को मारने-पीटने, लूटने एवं क़त्ल करने लगे। भंडारी ने रंगोजी पर चढ़ाई करने का निश्चय कर साबरमती के दूसरे किनारे जाकर आंबा तालाब पर छावनी डाली और लश्कर एकत्र करना एवं तोपखाना दुरुस्त करना शुरू किया। मरहटे सवार भंडारी की छावनी तक जाकर लूट मचा देते थे। जब भंडारी आगे बढ़ा तब मरहटों ने धोलका की तरफ़ प्रस्थान किया और भंडारी उनके पीछे-पीछे चला। रंगोजी वीरमगांव की तरफ़ गया और वहाँ के क़िले को सुरक्षित समझ उसमें ठहरा। अनन्तर उसने भावसिंह की सहायता से क़िले के कोट और बुजों की मज़बूती की एवं ईदगाह मुनसर तालाब पर, जो ऊँची जगह थी, अपने मोर्चे जमाये। ता० २६ जमादिउल्अव्वल (कार्तिक सुदि २ = ता० ६ अक्टोबर) को भंडारी भी जा पहुँचा। उसने क़िले के सामने गंगासर

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १८३-४। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़ दि बास्वे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३१६)।

के पास मोर्चा जमाया। इसी बीच बड़ोदा से ५०० सवार रंगोजी की सहायतार्थ पहुंच गये। ईदगाह के मोर्चे से तोपों की मार होने पर मारवाड़ियों के बहुत से आदमी मारे गये और कितने ही घायल हुए। ऐसी हालत देख मारवाड़ी एकाएक मरहटों पर दूढ़ पड़े और उन्होंने उनमें से बहुतों को मारकर उनकी तोपें आदि छीन लीं। फिर मारवाड़ियों ने वहां सुरंगें खोदना और मोर्चे बनाना शुरू किया। उन्हीं दिनों मरहटों के एक दूसरे सैन्य ने, जो सरताल (ठासरा) क़सबे में था, कपडवंज क़सबे पर कब्ज़ा कर लिया। इस बीच भंडारी ने मोमिनख़ां को बुलाने के लिए कई पत्र लिखे, पर कपट का संदेह होने से वह रवाना होने में ढील करता रहा। मरहटे अवसर की तलाश में थे। एक दिन भंडारी के रहने का जासूसों-द्वारा ठीक-ठीक पता लगाकर मध्याह्न के समय, जब कड़ी धूप पड़ रही थी और मारवाड़ियों के मोर्चे के बहुत से रज़क बाहर गये हुये थे, क़िले में से निकलकर ५०० मरहटों ने उनपर अचानक आक्रमण कर दिया, जिससे भंडारी घबरा गया और मुनसर तालाब के एक मन्दिर में जा छिपा। मरहटों को जब वह नहीं मिला तो वे वापिस क़िले में चले गये। भंडारी ने बाहर निकलकर क़िले को सुरंग लगाकर उड़ाने की कोशिश की, पर इसी बीच मोमिनख़ां के पास से पत्र पहुंचे, जिनसे ज्ञात हुआ कि दामाजी राव के भाई प्रतापराव और देवजी नाघेर दस हज़ार सवारों के साथ गुजरात पर बढ़ रहे हैं। पहले तो भंडारी को इस सम्वाद पर विश्वास ही नहीं हुआ, लेकिन पीछे से दिलजमई होने पर उसने वहां का घेरा उठा लिया और आधीरात के समय तोपख़ाने, भारबरदारी की गाड़ियों एवं अपने छावनीवालों को अहमदाबाद भिजवा दिया। सुबह को वह स्वयं भी शीघ्रता के साथ वहां से रवाना हो गया। प्रतापराव के आने की ख़बर रंगोजी को नहीं थी, इसलिए पहले तो वह कपट के सन्देह के कारण रुका रहा, परंतु पीछे से उसने अपने सवारों को मारवाड़ियों के पीछे भेजा, जिन्होंने सरखेज के पास पहुंचकर मारवाड़ियों के पीछे रहे हुए ज़ुल्मी उम्मेदसिंह राजपूत तथा अन्य आदमियों और जानवरों आदि को

पकड़ लिया' ।

अहमदाबाद पहुँचकर भंडारी ने किले की मज़बूती की और धन एकत्र करने के लिए वह धनी-निर्धनी सब पर अत्याचार करने लगा, जिससे

प्रतापराव की श्रुत्य वहाँ का बास छोड़कर बहुतसे लोग अन्यत्र जाने लगे । उधर वात्रक ज़िले में पहुँचकर प्रतापराव

ने वहाँ का सारा महसूल वसूल कर लिया । अनन्तर हवेली, बलाद, पेथापुर और भाला होता हुआ वह धोलका पहुँचा, जहाँ दो हजार सवार छोड़कर वह धन्धुका गया । इस बीच बाजीराव पेशवा का अनुयायी कन्थाजी, मल्हारराव होल्कर के साथ ईडर के मार्ग से होता हुआ दांता तक पहुँच गया । दक्षिणियों के भय से वहाँ रहनेवाले कितने ही धनवान व्यक्ति पहाड़ों में जा छिपे, पर उन्हें पकड़कर उन्हों (दक्षिणियों) ने दस लाख रुपये वसूल किये । फिर वड़नगर होते हुए दक्षिणी पालनपुर गये, जहाँ के स्वामी पहाड़ख़ां जालोरी ने एक लाख रुपया देना स्वीकार किया । अनन्तर कन्थाजी और मल्हारराव भीनमाल के मार्ग से मारवाड़ की ओर बढ़े तथा प्रतापराव और रंगोजी धन्धुका से काठियावाड़ एवं गोहिलवाड़ की तरफ़ गये । हि० स० ११४६ (वि० सं० १७६३ = ई० स० १७३६) में प्रतापराव, जो सोरठ के लोगों से ख़िराज वसूल करके लौट रहा था, धोलका के निकट कांकर गांव में मर गया^१ ।

रत्नसिंह भंडारी की हाकिमी में गुजरात-निवासियों पर बड़े जुल्म हुए । भूटे आरोप लगा-लगाकर वह अलग-अलग बहानों से लोगों से मन-रत्नसिंह भंडारी के जुल्म मानी रक़में वसूल करता और उनका माल-मत्ता लूट लेता । उसके जुल्म से तंग होकर कितने ही अपना

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १८६-६० । कैम्प-बेल-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३१६-७) ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६०-६३ । कैम्प-बेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१७-८ ।

घर-बार छोड़कर चले गये, कई ने आत्महत्या कर ली और कितने ही पागल हो गये एवं कितने ही अपना व्यापार बन्द कर मारवाड़ की तरफ चले गये' ।

गुजरात में मारवाड़ियों के जुल्म के कारण अमीरलुउमरा का मन महाराजा से फिर गया था । इसी बीच गुजरात के व्यापारियों में से अनेक ने बादशाह के पास उपस्थित होकर प्ररियाद की ।

महाराजा से गुजरात का
सुझाव दिया जाना

इसपर मोमिनखां महाराजा अभयसिंह के स्थान में गुजरात का सूबेदार नियत हुआ और जवांमर्दखां पाटण का हाकिम बनाया गया । जालोरी राठोड़ों के मदद्गार थे । जवांमर्दखां के पाटण पहुंचने पर पहाड़खां जालोरी ने जवांमर्दखां का विरोध किया, परन्तु अन्त में उसे पाटण खाली करना ही पड़ा । पेसा हो जाने पर मोमिनखां ने भी प्रकट रूप से नजमुद्दौला मोमिनखां बहादुर फ़ीरोज़जंग नाम धारण कर सूबेदारी का कार्य आरम्भ किया । शेरखां बाबी तटस्थ रहने की गरज़ से बालासिनोर चला गया और मोमिनखां ने अपनी मदद के लिए रंगोजी को बुलाया । उसने इस शर्त पर मारवाड़ियों को निकालने में सहायता देना स्वीकार किया कि इसमें सफल होने पर अहमदाबाद तथा खंभात को छोड़कर गुजरात की आधी आमदनी उसे दी जाय । जब रत्नसिंह को मोमिनखां की गुजरात में नियुक्ति होने की सूचना मिली तो उसने महाराजा को पत्र लिखकर इस विषय में उसकी आज्ञा जाननी चाही । इस बीच उसने कई मुसलमान अफ़सरों को खंभात में इस उद्देश्य से भेजा कि वे मोमिनखां को तब तक कुछ करने से रोके रहें, जब तक महाराजा के पास से उत्तर न आ जाय । महाराजा का रत्नसिंह के पास यह उत्तर पहुंचा कि वह भरसक मोमिनखां का विरोध करे । तदनुसार रत्नसिंह ने अहमदाबाद की रक्षा करने की तैयारी की । मोमिनखां अपनी फ़ौज के साथ नारणकेसर नामक भील के पास जाकर ठहरा । डेढ़ मास तक वहां रहने के बाद वह सोजग्रा गया, जहां जवांमर्दखां बाबी उसके शामिल हो गया । फिर

ता० १ जमादिउलअव्वल (भाद्रपद सुदि ३ = ता० २७ अगस्त) को वह जवांमर्दखां एवं रंगोजी के साथ मय तोपखाने और लश्कर के वात्रक नदी से आगे बढ़ा। अहमदाबाद के निकट कांकरिया तालाब पर डेरा कर उसने नैनपुरी की गढ़ी पर अधिकार कर लिया। अनन्तर कालूपुर दरवाजे के सामने जवांमर्दखां, सारंगपुर दरवाजे के सामने सीदी बशीर की मस्जिद में मीर अबुल्कासिम, अस्तोढ़िया दरवाजे के सामने नुरुज्जा तथा अफ़्-ज़लपुर में मलिक छुम्मी रक्खे गये और जमालपुर से लगाकर साबरमती के किनारे तक का भाग मुहम्मद मोमिन बख्शी तथा रंगोजी के सिपुर्द किया गया। भंडारी ने अपनी रत्ना के लिए दरवाजों को ईंटों से खुनवा दिया।

उन्हीं दिनों मोमिनखां के प्रबन्धकर्त्ता धिप्रयराम ने, जो सोनगढ़ से दामाजी को लाने के लिए भेजा गया था, लौटकर सूचना दी कि वह शीघ्र ही शामिल होगा। जोरावरखां भी बुला लिया गया। इसी बीच सूरत से महाराजा के प्रतिनिधियों-द्वारा भेजी गई तोपें मोमिनखां के सैनिकों ने छीन लीं। दूसरी बार जब फिर रत्नसिंह ने महाराजा को मोमिनखां के अहमदाबाद पर चढ़ आने की खबर दी तो वह नाराज़ हो कर बादशाह के सामने से चला गया। इसपर कई सरदारों ने शंकित हो-कर उसे वापिस बुलवा लिया और बादशाह पर दबाव डालकर गुजरात की सूबेदारी पुनः उस(अभयसिंह)के नाम करा दी। लेकिन गुप्त रूप से मोमिनखां को कहलाया गया कि वह महाराजा की नियुक्ति की उपेक्षा कर राठोड़ों का अधिकार वहां से हटाने में प्रयत्नशील रहे। फलतः उसने पूर्ण उत्साह के साथ अपना कार्य जारी रक्खा। इसी बीच बादशाह के पास से दूसरा आश्वापत्र पहुंचा, जिसके-द्वारा महाराजा की पुनर्नियुक्ति की पुष्टि की गई थी और फ़िदाउद्दीनखां को ५०० व्यक्तियों के साथ नगर की रक्षा का भार देकर मोमिनखां को खंभात लौटने को लिखा गया था। उसके साथ ही उसमें यह भी लिखा था कि चूंकि रत्नसिंह भंडारी ने अत्याचार-पूर्ण कृत्य किये हैं, अतएव उसके स्थान में किसी दूसरे व्यक्ति की नियुक्ति की जाय। तब तक अभयकरण राज-कार्य करे। मोमिनखां को जब शाही

आज्ञापत्र का आशय बतलाया गया तो उसने इस शर्त पर खंभात जाना स्वीकार किया कि रत्नसिंह अभयकरण को कार्य-भार सौंपकर नगर का परित्याग करे और फ़िदाउद्दीनखां को अपने आदिमियों-सहित नगर में प्रवेश करने की इजाज़त दे; परन्तु रत्नसिंह ने इसको न माना और नगर में रहकर अन्त तक अपनी रक्षा करने का निश्चय किया। इसी बीच ईसनपुर में दामाजी मोमिनखां के शामिल हो गया। रत्नसिंह को जब दामाजी और मोमिनखां के बीच की शर्त का पता चला तो उसने दामाजी के पास सन्देश भेजा कि अगर आप मेरा साथ दें तो मैं सारे सूबे की आमदनी देने तथा अपने प्रमुख व्यक्तियों को ओल में भेजने के लिए भी प्रस्तुत हूँ। दामाजी ने वह सन्देश मोमिनखां को दिखाकर कहा कि अब क्या कहते हो ? लाचार उसे भी उतना ही देना स्वीकार करना पड़ा, लेकिन खंभात के पवज़ में उसने सम्पूर्ण वीरमगांव का इलाक़ा देने की शर्त की। इसके फलस्वरूप दामाजी ने रत्नसिंह से बातचीत बन्द कर दी। अनन्तर दामाजी दूबेसर (Dudesar) की यात्रा को गया, जहाँ से लौटने पर वह और रंगाजी अहमदाबाद की विजय में लगे। उनकी प्रबल शक्ति देखकर एकबार मोमिनखां का दिल भी दहल गया, क्योंकि उसे निश्चय हो गया कि एकबार मरहटों का उधर कदम जम जाने पर उन्हें निकालना कठिन ही होगा। ऐसी दशा में उसने “मीरात-इ-अहमदी” के कर्ता को इसलिए रत्नसिंह के पास भेजा कि वह उसे बिना मार-काट के खले जाने के लिए समझावे, पर रत्नसिंह इसके लिए राज़ी न हुआ। कुछ समय बाद क़ायमअलीखां आदि की अध्यक्षता में मुसलमानों तथा बाबूराव की अध्यक्षता में मरहटों ने एक-दम आक्रमण कर अहमदाबाद पर अधिकार करने का प्रयत्न किया, पर एक भीषण लड़ाई के बाद उन्हें पीछे हटना पड़ा। मोमिनखां के घेरे की सक्ती के कारण शहर के लोगों के पास घास-दाना पहुंचना बन्द हो गया और क़िले के रक्षकों का कार्य कठिन हो गया। इस प्रकार कष्टमय जीवन व्यतीत करते हुए मारवाड़ियों ने जैसे-तैसे डेढ़ मास का समय बिताया। ऐसी परिस्थिति में भंडारी ने अपने ज़मींदारों एवं सलाहकारों को बुलाकर

उनसे राय की। उन्होंने कहा कि गत नौ मास के बीच किले की रक्षा के जो-जो उपाय हो सकते थे हमने किये। महाराजा के पास से आज्ञापत्र तो आते हैं, परन्तु किसी प्रकार की दूसरी मदद अथवा खज़ाना नहीं आता। बरसात का मौसिम भी निकट है और शहर के घास-दाने एवं युद्ध सामग्री की स्थिति भी स्पष्ट ही है। इन सब बातों पर दृष्टि रखते हुए उनकी सलाह के अनुसार भंडारी ने हि० सं० ११५० (बि० सं० १७६४ = ई० सं० १७३७) के मोहर्रम मास के अन्त में नीचे लिखी शर्तों पर सुलह करने का पैगाम मोमिनखां के पास भिजवाया—

(१) सिपाहियों की तनख्वाहें, जो बाक़ी रह गई हैं, मोमिनखां चुकावे।

(२) सामान ले जाने के जानवर, जो नष्ट हो गये हैं, उनकी पूर्ति मोमिनखां करे।

सुलह के लिये भेजे गये लोगों ने परस्पर बातचीत कर यह तय किया कि मोमिनखां एक लाख रुपया नक़्द देगा और सामान ले जाने के साधनों का प्रबंध कर देगा। साथ ही पूरे रुपयों की पहुँच तथा सामान भिजवाने एवं जब तक मारवाड़ी मार्ग में रहें तबतक के लिए फ़िदाउद्दीनखां और मुहम्मद मोमिन भंडारी के पास ओल में रहेंगे। इन सब बातों के तय हो जाने पर उसका आधा मरहटों ने देना तय किया। अनन्तर भंडारी ने जाने की तैयारी की और नई-पुरानी तोपें, बाक़ी बचा हुआ बारूद गोला, मुबारिजुलमुल्क से मिला हुआ सामान एवं माहाराजा-द्वारा सूरत से लाकर खम्भात में लगाई गई तोपें आदि साथ लेकर ता० ६ सफ़र (ज्येष्ठ सुदि ७ = ता० २५ मई) को सूर्यास्त होते-होते हाजीपुर की बुर्ज के पास के ईडर दरवाज़े से जोधपुर जाने के लिये भंडारी बाहर निकला और उसने दरवाज़ों की चाबियां मोमिनखां को सौंप दीं। उसी रात्रि को मोमिनखां की तरफ़ से मुहम्मद यूसुफ़ शहर का कोतवाल नियत हुआ।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६५-२३६।
कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१८-२०। जोधपुर राज्य की क्वाल में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है। उससे पाया जाता है कि

उसी वर्ष शाही अधिकारी खानदौरां से नाराज़गी हो जाने के कारण महाराजा ने बादशाह से स्वदेश जाने की आज्ञा प्राप्त की। भंडारी अमरसिंह ने इस अवसर पर बीच में पड़कर महाराजा का जोधपुर जाना खानदौरां से उसका मेल कराकर सांभर की क़ौजदारी उसके नाम करा दी। अनन्तर महाराजा रेवाड़ी पहुँचा, जहाँ से वह सांभर होता हुआ अजमेर जाकर आनासागर की पाल के महलों में ठहरा। वहाँ एक बरस तक निवास करने के बाद वह वि० सं० १७६४ आश्विन सुदि १० (ता० २२ सितम्बर) को वहाँ से प्रस्थान कर भेड़ते गया। वहाँ रहते समय उसने बख़्तसिंह को नागोर से बुलवाया, जो गांध सोगावा में उसके शरीक हुआ। उससे सलाहकर महाराजा ने लगभग सारे भंडारियों को कैद करवा दिया और राज्य-कार्य कायस्थों को सौंपा। अनन्तर उसने पंचोली रामकिशन को भिणाय की तरफ़ भेजा, जिसने गौड़ अमरसिंह से राजगढ़ तथा सावर के शक्ताघतों से घटियाली और पीपलाज खाली करा लिये। पीछे से जयपुर के साह नानकदास के बीच में पड़ने से परस्पर मेल हो गया। इसके बाद बख़्तसिंह तो नागोर गया और महाराजा

ढेड़-दो वर्ष तक जड़ाई होने के बाद भारबरदारी लेकर रत्नसिंह ने नगर खाली कर दिया (जि० २, पृ० १४६)।

“मिरात-ह-अहमदी” से यह भी पाया जाता है कि यह घेरा रहते समय भंडारी ने धन एकत्र करने के लिए अहमदाबाद के निवासियों पर तरह-तरह के अत्याचार किये, जिससे उनकी हालत बड़ी ख़राब हो गई। नायब बख़्शी एवं ख़बरनवीस मुजाहिदुद्दीनज़ां के (जो फ़ज़ीरी मेघ में रहा करता था और जो मस्जिदों, धर्मशालाओं एवं कुओं के बनवाने में बहुत धन खर्च करता था) पास बहुत सम्पत्ति होने का शुबहा होने से भंडारी ने उसपर झूठे आरोप लगाकर उसे अपने विश्वासपात्र फ़कीरा बसाबुल-द्वारा कैद करवा दिया। साथ ही उसका घर-बार ज़ब्त कर लिया गया और उसका पुत्र भी कैद कर उसके सामने लाया गया। अनन्तर मुजाहिदुद्दीनज़ां एवं उसके पुत्र को अनेक प्रकार की धमकियाँ देकर उनसे छिपे हुए धन का पता पूछा गया और उनके घर की भी अच्छी तरह तलाशी ली गई, पर जब अनेक सख़्तियाँ और ख़ानबीन करने पर भी उससे एक पैसा वसूल नहीं हुआ तो भंडारी ने उसे छोड़ दिया। तब वह अपने परिवार-सहित वहाँ से बाहर निकल गया (जि० २, पृ० १२०-३०)।

जोधपुर' ।

कुछ ही समय बाद महाराजा अभयसिंह और उसके भाई बल्लभसिंह के बीच अनबन हो जाने के कारण अभयसिंह ने फ़ौज के साथ जाकर उस-
 बल्लभसिंह तथा बीकानेर के (बल्लभसिंह) के इलाक़े की सीमा के पास डेरा
 महाराजा जोरावरसिंह में किया । बल्लभसिंह की अकेले अपने भाई का सामना
 मेल होना करने की सामर्थ्य न थी, जिससे उसने बीकानेर
 के महाराजा जोरावरसिंह से मेल की बात-चीत शुरू की । जब अभयसिंह
 को इस रहस्य की खबर मिली तो वह तत्काल जोधपुर लौट गया ।

वि० सं० १७६६ (ई० सं० १७३६) में जोधपुर की चढ़ाई बीकानेर
 पर हुई । भंडारी तथा मेड़तिये आदि दस हजार फ़ौज के साथ बीकानेर
 महाराजा अभयसिंह की राज्य में प्रवेशकर उपद्रव करने लगे । पंचोली लाला,
 बीकानेर पर चढ़ाई अभयकरण दुर्गादासोत तथा कनीराम रामसिंहोत-
 (आसोप) भी एक बड़ी सेना के साथ फलोधी के
 मार्ग से कोलायत पहुंचे । तीसरी सेना पुरोहित जगन्नाथ तथा खार्दासोत
 लालसिंह की अध्यक्षता में बीकानेर पहुंच गई । जैसा कि ऊपर लिखा जा
 चुका है बल्लभसिंह तथा जोरावरसिंह में मेल की बात-चीत पहले ही शुरू
 हो गई थी और उसने बारहट दलपत को इस विषय में बात करने के लिए
 जोरावरसिंह के पास भेजा था, परन्तु जोरावरसिंह को विश्वास न होता

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४६-८ । उक्त ख्यात में एक
 जगह यह भी लिखा मिलता है कि उसी समय के आस-पास, जब बीकानेर का स्वामी
 जोरावरसिंह गोपालपुर की गढ़ी में था, बल्लभसिंह ने चढ़ाई कर उस गढ़ी को घेर लिया ।
 महाराजा की आज्ञा प्राप्त होने पर भंडारी मनरूप, भंडारी विजयराम आदि भी जाकर
 उसके शरीक हो गये । पीछे से कुछ रुपये देने और कांधलोत लालसिंह को चाकरी के
 लिए भेजने की शर्त पर सन्धि हो गई तथा खरबूजी की पट्टी बीकानेर के महाराजा ने
 बल्लभसिंह को दे दी (जि० २, पृ० १४७) । इस घटना में कितना सत्य है यह कहना
 कठिन है, क्योंकि इसका उल्लेख बीकानेर राज्य के इतिहास में नहीं मिलता ।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६३ । पाउवोट-कृत "गैज़ेटियर ऑफ़
 दि बीकानेर स्टेट" में भी इसका उल्लेख है ।

था, जिससे उसने प्रतीति के लिए प्रमाण मांगा। ब्रह्मसिंह ने तत्काल मेड़ते पर अधिकार कर अपनी सत्यता का प्रमाण दिया। इसके पश्चात् दोनों में मेल हो गया। तब महाराजा जोरावरसिंह ने कुशलसिंह (भूकरका), दौलतराम अमरावत बीका (महाजन का प्रधान) आदि को ब्रह्मसिंह के पास भेजा, जिन्होंने वापस आकर ब्रह्मसिंह और अभयसिंह के बीच वास्तव में फूट पड़ जाने की बात उससे कही। अनन्तर मेड़ता ब्रह्मावरसिंह के अर्ज करने पर मेड़ता मनरूप, एवं सिंहायच अजबराम ब्रह्मसिंह के पास भेजे गये, जिन्होंने जाकर उससे अभयसिंह की चढ़ाई का सारा हाल बतलाया। इसपर ब्रह्मसिंह ने जोरावरसिंह के पास लिख भेजा कि आप निश्चित रहें, मैं यहां से जोधपुर पर चढ़ाई करता हूं, जिससे बाध्य होकर अभयसिंह को अपनी सेना को वापस बुला लेना पड़ेगा, परन्तु आप मेरे साथ विश्वासघात न कीजियेगा। जोरावरसिंह की इच्छा स्वयं ब्रह्मसिंह की सहायतार्थ जाने की थी, परन्तु अपनी आकस्मिक बीमारी के कारण उसे रुक जाना पड़ा और ब्रह्मावरसिंह आठ हजार सेना के साथ भेजा गया। इसके बाद ब्रह्मसिंह कापरडा पहुंचा तथा अभयसिंह वीसलपुर, जहां युद्ध की तैयारी हुई, पर लड़ाई न हुई और अभयसिंह ने अपने प्रधानों को भेजकर ब्रह्मसिंह से सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार मेड़ता वापस अभयसिंह को मिल गया और जालोर की मरम्मत के तीन लाख रुपये उसे ब्रह्मसिंह को देने पड़े। तदनन्तर ब्रह्मसिंह नागौर चला गया, जहां से उसने बीकानेर के सरदारों को सिरोपाव देकर विदा किया।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६३-४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४६। “वीरविनोद” में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है। “जोधपुर राज्य की ख्यात” में अक्षरशः ऐसा वर्णन नहीं मिलता। उसमें भी एक स्थल पर नीचे लिखा वर्णन मिलता है—

“अंधारियों का उचित प्रबन्ध करने का कार्य ब्रह्मसिंह को सौंपा गया था, पर उसने उनमें से कई के साथ बड़ा अत्याचारपूर्ण व्यवहार किया, जिससे अभयसिंह ने वह कार्य अपने हाथ में ले लिया। इसपर ब्रह्मसिंह अपने भाई से नाराज़ हो गया

बीकानेर पर चढ़ाई करने में पिछली बार सफल न होने का ध्यान महाराजा अभयसिंह के हृदय में बना ही रहा। वि० सं० १७६७^१ (ई० स० १७४०) में उसने बीकानेर के विद्रोही ठाकुरों—
 अभयसिंह की बीकानेर पर दूसरी चढ़ाई
 ठाकुर लालसिंह (भाद्रा), ठाकुर संग्रामसिंह (चूरू) तथा ठाकुर भीमसिंह (महाजन)—के साथ मिलकर

पुनः बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। देशणों पहुँचकर उसने करलीजी का दर्शन किया और वहाँ के चारणों से अपने आपको उसी तरह संबोधन करने को कहा, जिस तरह वे अपने स्वामी (बीकानेर के राजा) को करते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा न किया। अनन्तर उसने बीकानेर (नगर) में प्रवेश कर तीन पहर तक लूट की जिससे लगभग एक लाख रुपये की संपत्ति उसके हाथ लगी। नगर की लूट का समाचार सुनकर कुंवर गजसिंह एवं रावल रायसिंह कितने ही साथियों के साथ विरोधी दल का सामना करने को आये, परन्तु महाराजा जोरावरसिंह ने उन्हें भी गढ़ के भीतर बुलवा लिया। महाराजा अभयसिंह का डेरा लक्ष्मीनारायण के मंदिर के निकट पुराने गढ़

और उसने आषाढ़ादि वि० सं० १७६५ (चैत्रादि १७६६ = ई० स० १७३६) के आषाढ मास में मेड़ता पर चढ़ाई की। इसपर महाराजा ने जैतसिंह सूरसिंहोत्त (मेड़तिया) तथा बोरुंदाबाजे ठाकुर को उसे समझाने के लिए भेजा, परन्तु उसने उनकी बात नहीं मानी और आगे बढ़ता हुआ भाद्रपद मास में वह गांव खांदेलाव में पहुँचा। महाराजा भी कूचकर गांव बीसलपुर में पहुँचा। महाराजा के पास बड़ी प्रौज थी और उसके सरदार लड़ाई करने के इच्छुक थे, पर महाराजा ने एक पत्र लिख कर उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया। अनन्तर बल्लसिंह बिना लखे वहाँ से कूचकर नागौर चला गया। पांच-सात दिन बाद महाराजा ने भी बीसलपुर से कूच किया। मार्गशीर्ष मास में गांव हिलोकी में बल्लसिंह महाराजा से मिला (जि० १, पृ० १४८-९)।^१ उपर्युक्त वर्षानुसार से भी दोनों साह्यों के बीच मनमुटाव होना सिद्ध है।

(१) दयालदास की कथात में वि० सं० १७६६ का प्रारम्भ दिया है (जि० २, पृ० ६४), जो ठीक नहीं है क्योंकि उक्त संवत् के फाल्गुन मास तक तो ठाकुर भीमसिंह- (महाजन) का राज्य का पक्षपाती रहना उसी कथात से सिद्ध है। जोधपुर राज्य की कथात के अनुसार वह चढ़ाई आषाढ़ादि वि० सं० १७६६ (चैत्रादि १७६७) के वैशाख मास में हुई (जि० २, पृ० १४९), जो ठीक जान पड़ता है।

के खंडहरों की तरफ़ था। अनूपसागर कुएं के पास उसकी सेना के कर्म-सोतों, देपालदासोतों एवं पृथ्वीराजोतों का मोर्चा था। दूसरा मोर्चा उसी कुएं की पूर्वी ढाल पर मनरूप जोगीदासोत तथा देवकर्ण भागचन्दोत आदि मंडलावतों का था; तीसरा मोर्चा दंगल्या (दंगली साधुओं के अखाड़े) के स्थान पर कूंपावत रघुनाथ (रामसिंहोत) और जोधा शिवसिंह (जूनियां) का था तथा दूसरी तरफ़ पीपल के वृक्षों के नीचे तोपें, पैदल सेना, रिसाला, भाटी हठीसिंह उरजोत, पाता जोगीदास मुकुन्ददासोत, मेड़तिया जैमलोत, सांवलदास एवं पंचोली लाला आदि थे। अन्य जोधपुर के सरदार भी उपयुक्त स्थानों पर नियुक्त थे। सूरसागर पूर्णरूप से आक्रमणकारियों के हाथ में था एवं गिन्नायी तालाब पर भाद्रा का विद्रोही ठाकुर लालसिंह तथा अनेक राठोड़ एवं भाटी आदि थे। उधर गढ़ के भीतर सारे बीका, बीदावत व रावतोत सरदार आदि महाराजा जोरावरसिंह की सेवा में गढ़ की रक्षार्थ उपस्थित थे और सारी सेना का संचालन भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के हाथ में था। तोपों के गोलों की लगातार वर्षा से गढ़ का बहुत नुक़सान हो रहा था। मुख्यतः “शंभुबाण” नाम की एक तोप तो क्षण-क्षण पर अपनी भयङ्करता का परिचय दे रही थी। उसको नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक था, अतएव कुंवर गजसिंह की आज्ञानुसार एक पड़िहार ने “रामचंगी” तोप के सहारे अंत में उसका नाश कर दिया, जिससे जोधपुरवालों का एक प्रबल नाशकारी शस्त्र बेकार हो गया। अनन्तर खवास अजबसिंह आनन्दरामोत तथा पड़िहार जैतसिंह भोजराजोत, भाद्रा के ठाकुर लालसिंह के पास उसे अपनी तरफ़ मिलाने के लिए गये। पीछे से महाराजा जोरावरसिंह भी गुप्त रूप से उससे मिला, परन्तु इसका कोई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि “शंभुबाण” तोप वहाँ नष्ट नहीं हुई, वरन् अमरसिंह का घेरा उठाने के बाद पंचोली जाला तथा पुरोहित जणा उसको अपने साथ ले जा रहे थे, उस समय बैलों के थक जाने से उन्होंने उसे एक दूसरी तोप के साथ भूमि में गाड़ दिया। पीछे से उसे खुदवाकर मंगलदास गण (जि० २, पृ० १५०)।

परिणाम न निकला।

कुछ दिन-दिन उग्र रूप धारण कर रहा था। इसी बीच नागौर से बल्लसिंह का भेजा हुआ केलण दूता एक पत्र लेकर आया और उसने निवेदन किया कि मेरे स्वामी ने कहलाया है कि आप निश्चिन्त होकर गढ़ की रक्षा करें और अपना एक आदमी मेरे पास भेज दें ताकि सहायता का समुचित प्रबंध किया जाय। जोरावरसिंह ने उस समय इसपर कुछ ध्यान न दिया। कुछ दिनों पश्चात् दूसरा मनुष्य बल्लसिंह के पास से आने पर आनंदरूप उसके पास भेजा गया, जिसने जाकर निवेदन किया कि गढ़ में सामग्री तो बहुत है, परन्तु बाहर से सहायता प्राप्त हुए बिना विजय पाना असम्भव है^१। बल्लसिंह ने उत्तर में कहलाया कि मैं तन-धन दोनों से तुम्हारी सहायता के लिए प्रस्तुत हूँ। फिर उसी के परामर्शानुसार आनंदरूप, धांधल कल्याणदास के साथ जयपुर के सवाई जयसिंह के पास से सहायता प्राप्त करने के लिए भेजा गया, परन्तु जयसिंह को बल्लसिंह की तरफ से कुछ सन्देह था, जिससे उसने कहलाया कि पहले आप मेड़ता से लें, मैं भी निश्चय आऊंगा। यह संदेश प्राप्त होते ही मेड़ता पर अधिकार कर बल्लसिंह ने अपनी सच्चाई का प्रमाण दिया^२। कुछ समय बाद आनंदरूप ने जयसिंह से कहा कि आपने सहायता देना तो स्वीकार कर ही

(१) जोधपुर राज्य की क्वात में लिखा है कि अभयसिंह के किले को घेर लेने पर भीतर रसद की कमी हो गई तो उसके पास आदमी भेजकर जोरावरसिंह ने कहा-जाया कि यदि आप भारवरदारी देना मन्जूर करें तो हम किला छोड़कर चले जायें, पर यह शर्त स्वीकार न हुई। इस बीच बल्लसिंह रसद आदि सामान नागौर से बीकानेर-बाखों के पास भेजता रहा। पीछे से जोरावरसिंह ने मेड़ता बल्लावरमल को उस (बल्लसिंह) के पास से सहायता खाने के लिए भेजा (जि० २, पृ० १४६)। इयाजदास की क्वात से इस बर्षान में थोड़ा अन्तर अवरब है, जो स्वामाबिक ही है, परन्तु इससे ऐतिहासिक सत्य में किसी प्रकार का अन्तर नहीं पड़ता।

(२) जोधपुर राज्य की क्वात से भी पाया जाता है कि बल्लसिंह ने मेड़ता पर अधिकार कर लिया था और जयसिंह उससे वहीं आकर मिलता था (जि० २, पृ० १४०)।

लिया है, अब आप इस आशय का एक पत्र बीकानेर लिख दें । जयसिंह ने उसी समय महाराजा जोरावरसिंह के नाम खरीता लिख दिया और हंसी में उससे पूछा कि तुम्हारी करणीजी और लक्ष्मीनारायणजी इस अवसर पर कहां चले गये ? चतुर आनन्दरूप ने तुरत उत्तर दिया कि उनका आवेश इस समय आप में ही हो गया है, क्योंकि आप हमारी सहायता के लिए तैयार हो गये हैं । जयसिंह आनन्दरूप की इस अनूठी उक्ति से अत्यन्त प्रसन्न हुआ । इसी अवसर पर उसके पास सूचना पहुंची कि बादशाह मुहम्मदशाह^१ के पास से इस आशय का पत्र बीकानेर आया है कि यदि वहां अभयसिंह का अधिकार हो गया तब भी वह बाहर निकाल दिया जायगा, जिसके पाने से बीकानेरवालों में नई स्फूर्ति एवं साहस का संचार हो गया है ।

अनन्तर जयसिंह ने बीस हजार सेना के साथ राजामल खत्री को जोधपुर पर भेजा । बरतसिंह उस समय मेड़ते के पास गांव जालोड़े में था तथा मेड़ता में अभयसिंह की तरफ़ के पंचोली मेहकरण आदि दस हजार फ़ौज के साथ थे । राजामल के आने का समाचार मिलते ही उन्होंने बरतसिंह पर हमला किया, परन्तु उनको विजय प्राप्त न हुई । पीछे से राजामल भी बरतसिंह के शामिल हो गया । जयसिंह ने स्वयं अबतक इस लड़ाई में कोई भाग नहीं लिया था । जब बार-बार उससे आग्रह किया गया तो उसने इस विषय में अपने सरदारों से राय ली । अधिकांश लोगों की तो यह राय थी कि अभयसिंह उसका संबंधी (जामाता) है, दूसरे इस युद्ध में अपरिमित धन व्यय होगा; अतएव चढ़ाई करना युक्तिसंगत नहीं है । शिबसिंह (सीकर) ने कहा कि जोधपुर का बीकानेर पर अधिकार होना पड़ोसी राज्यों के लिए हानिकारक सिद्ध होगा, इसलिये शुक में ही इसका कोई उपाय करना ठीक है । जयसिंह के मन में भी उसकी

(१) दयालदास ने इसके स्थान में अहमदशाह लिखा है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि उस समय दिल्ली के तख़्त पर मुहम्मदशाह ही था ।

बात बैठ गई और उसने तीन लाख सेना के साथ जोधपुर पर चढ़ाई कर दी। जब अभयसिंह को इस चढ़ाई की सूचना मिली तो उसने उदयपुर आदमी भेजकर वहां के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बीकानेर के साथ सन्धि करा देने के लिये बुलाया। अभयसिंह यह चाहता था कि यदि बीकानेर वाले झुक जायें तो वह वापस खला जाय, परन्तु जब बीकानेरवालों ने उसकी अपमानजनक शर्त स्वीकार न की और स्पष्ट कहला दिया कि हमारी ओर से उत्तर जयसिंह देगा तो अभयसिंह को इतने दिनों के परिश्रम के बाद भी निराश होकर लौट जाना पड़ा। इस अवसर पर लौटती हुई जोधपुर की सेना को बीकानेर की फ़ौज ने बुरी तरह लूटा।

अभयसिंह भागा-भागा एक हजार सवारों के साथ जोधपुर पहुंचा, क्योंकि जयसिंह की तरफ़ से उसे पूरा-पूरा भय था, परन्तु जयसिंह उस समय तक मार्ग में ही था। उसका वास्तविक उद्देश्य जोधपुर पर अधिकार करना न था। वह तो केवल अभयसिंह को बीकानेर से हटाना और उससे कुछ धन वसूलकर स्वदेश लौट जाना चाहता था। अभयसिंह के पहुंचते ही उससे २१ लाख

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी लिखा है कि जयसिंह ने यह सोचकर कि बीकानेर पर अधिकार कर लेने से अभयसिंह की शक्ति बढ़ जायगी, तत्काल उसे लिखा कि बीकानेर पर से घेरा उठा लो। जब उसने ऐसा न किया, तो उसने जोधपुर पर चढ़ाई कर दी (जि० २, पृ० १४६-४७)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४-६६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४०-१। “वीरविनोद” (भाग २, पृ० ४०२-३) में भी इस घटना का लगभग ऊपर जैसा ही वर्णन है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ यह घटना दी है (जि० २, पृ० १४६-४७)। इससे यह निश्चित है कि अभयसिंह की चढ़ाई जिस समय बीकानेर पर हुई थी, उस समय जयसिंह ने जोधपुर पर चढ़ाई की और बगतसिंह भी जोरावरसिंह का सहायक हो गया, जिससे अभयसिंह को असफल होकर जोधपुर लौटना पड़ा।

रुपये वसूल कर वह वहां से लौट गया। इस धन में से ११ लाख के तो वे आभूषण थे, जो जयसिंह ने अपनी पुत्री के अभयसिंह के साथ विवाह के अवसर पर उसे दिये थे, परन्तु जयसिंह ने यह कहकर उन्हें स्वीकार कर लिया कि अब ये जोधपुर की निजी सम्पत्ति हैं, अतएव इन्हें लेने में कोई दोष नहीं है^२।

महाराजा जयसिंह की जोधपुर पर की विगत चढ़ाई में बल्लतसिंह को आशा हो गई थी कि इससे उसका जोधपुर की गद्दी पर अधिकार करने का स्वार्थ भी सिद्ध होगा, परन्तु जब जयसिंह केवल धन प्राप्त कर लौट गया तो उसकी सारी आशा धूल में मिल गई। वह जयसिंह का विरोधी बन गया और उसने अपने भाई से मेल कर लिया। अनन्तर उसने ससैन्य टुंडाड़ (जयपुर राज्य) पर चढ़ाई की। यह खबर जयसिंह को मिलने पर वह धौलपुर से फ़ौज के साथ उसका सामना करने को गया। गंगवाणा नामक स्थान में दोनों का सामना हुआ। कुछ देर की

(१) “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि महाराणा जगतसिंह (दूसरा) ८०००० सेना के साथ जयसिंह की सहायतार्थ उदयपुर से रवाना होकर पुष्कर तक पहुँच गया था। वहां उसे यह खबर मिली कि अभयसिंह ने जयसिंह से सन्धि कर ली है। इसपर वह पुष्कर से ही उदयपुर लौट गया (चतुर्थ भाग, पृ० ३२६८-३३०१)। “वीरवनोद” से पाया जाता है कि महाराणा ने जयसिंह द्वारा इस अवसर पर सहायता मंगवाये जाने पर सलूबर के राक्षत केसरीसिंह को सेना के साथ भेज दिया था (भाग २, पृ० १२२४)। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि जयसिंह ने अन्य कितने ही राजाओं को भी अपनी सहायतार्थ बुलाया था, जिनसे महाराणा ने मुलाकात की।

(२) दयालदास की रूपात; जि० २, पत्र ६६-७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५१।

जोधपुर राज्य की रूपात में २० लाख रुपया देना लिखा है और उससे पाया जाता है कि मंडारी रघुनाथ ने प्रयत्नकर यह सन्धि कराई थी (जि० २, पृ० १५१)। “वीरवनोद” (भाग २, पृ० ८४८) तथा “वंशभास्कर” (चतुर्थ भाग, पृ० ६३००) में भी २० लाख रुपया ही दिया है।

लड़ाई के बाद जयसिंह ने बरतसिंह को भगा दिया। अभयसिंह उस समय आलखियावास में था। बरतसिंह उसके पास चला गया। जयसिंह ने अजमेर पहुंचकर अभयसिंह को युद्ध की चुनौती दी, पर भंडारी रघुनाथ ने बीच में पड़कर मेल करा दिया। अनन्तर जयसिंह ने मेहता आनन्दरूप से कहा कि तुम अपने स्वामी (महाराजा जोरावरसिंह) को लिखो कि वह नागोर पर चढ़ाई करे और शीघ्र आकर मुझे मिले। जोरावरसिंह उस समय चूरू में था। यह समाचार वहां पहुंचने पर उसने नागोर पर आक्रमण कर वहां का बड़ा बिगाड़ किया; परन्तु जयसिंह के पास वह न गया। कुछ समय बीत जाने पर जयसिंह ने फिर इस बारे में आनन्दरूप से कहा ॥ तब आनन्दरूप स्वयं जोरावरसिंह के पास गया, पर जब उसने उसके प्रस्थान करने का विचार न देखा तो वह लौटकर जयसिंह के पास जाने के लिए खाना हुआ, परन्तु मार्ग में ही पुष्कर के पास बसी गांव में उसका देहान्त हो गया। इसके बाद ही भंडारी रघुनाथ ने पूजा के सामान का हाथी तथा अन्य सामान आदि जयसिंह से पीछा बरतसिंह को दिलाया^१।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस लड़ाई का भिन्न वर्णन मिलता है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

“एक दिन महाराजा अभयसिंह ने दुर्गादास के पौत्र अभयकरण को एक फूल भेंट किया। इसपर अभयकरण ने उत्तर दिया कि फूल या तो पगड़ी में लगाया जाता है या नाक से सूंघा जाता है, पर हमारी तो पगड़ी और नाक दोनों जयसिंह ले गया, अतएव हम फूल लेकर क्या करेंगे? यह सुनकर महाराजा ने उसी समय जयपुर पर चढ़ाई करने का प्रबन्ध किया और स्वयं राई का बारा में डेरा किया। वहां बरतसिंह के पास से लिखा हुआ आया कि आप अभयकरण को मेरे पास भिजवा दें, मुझे कुछ अर्ज करनी है। उसके पहुंचने पर बरतसिंह ने उसके द्वारा कहाया कि आप जालोर मुझे दे दें तो मैं मेड़ता छोड़ दूं और मेरे उपस्थित होने

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६७। पाउसेट; मैजेस्टियर ऑब् डि ब्रीकानेर स्टेट; पृ० ५३। वीरविनोद; भाग २, पृ० १२२४।

पर मुझे ३०० रुपया रोज़ दिया जाय तो मैं जयपुर जाकर जयसिंह से युद्ध करूँ। इन दोनों बातों को महाराजा ने स्वीकार कर लिया। आवश्यक दि० सं० १७६७ (चैत्रादि १७६८ = ई० सं० १७४१) के ज्येष्ठ मास में महाराजा का डेरा बीसलपुर में हुआ, जहाँ अजमेर ज़िले के भिलाय, केकड़ी आदि के राजपूत सैनिक भी जाकर उसके शरीक हो गये। महाराजा ने इसकी सूचना बरतसिंह को दी। अनन्तर मेड़ता में डेरा होने पर बरतसिंह ने महाराजा से कहा कि जहाँ भी जयसिंह मिलेगा, हम उससे युद्ध करेंगे। महाराजा-द्वारा जालोर दिये जाने पर बरतसिंह ने मेड़ता से अधिकार हटा लिया। वहाँ से चलकर महाराजा रीयां में ठहरा तथा बरतसिंह ने जाकर अजमेर पर अधिकार कर लिया। इसकी खबर मिलने पर आगरे से प्रस्थान कर जयसिंह गाँव ऊंटड़ा में ठहरा। बरतसिंह गंगवाणा पहुँचा, जहाँ दोनों की सेनाओं में युद्ध हुआ^१। जयसिंह के पास ५०००० फ़ौज थी, जिसमें शाहपुरा का राजा सीसोदिया उम्मेदसिंह^२ और भल्लाय का ठाकुर हरोल में थे। बरतसिंह के पास केवल ५००० सेना थी, फिर भी वह बड़ी बहादुरी से लड़ा, यहां तक कि वह दो-तीन बार शत्रु सेना के एक छोर से दूसरे छोर तक निकल गया। इस लड़ाई में जयसिंह की फ़ौज के बहुतसे आदमी काम आये, साथ ही बरतसिंह के पक्ष के भी अधिकांश सैनिक मारे गये और केवल थोड़े से बच रहे। इसपर उस (बरतसिंह) के सरदार रजोत जोधा सरदारसिंह (दुगोली) ने उसको रणक्षेत्र का परित्याग करने पर मजबूर किया। जयसिंह के चढ़कर जाने पर बरतसिंह ने अभयसिंह को सहायता को आने के लिए लिखा था, पर वह नहीं गया; क्योंकि पहले वह (बरतसिंह) जयसिंह को जोधपुर पर चढ़ा लाया था। पीछे से जब

(१) जोधपुर राज्य की क्वात में इस लड़ाई का समय आवश्यक दि० सं० १७६७ (चैत्रादि १७६८) आषाढ वदि ६ (ई० सं० १७४१ ता० २७ मई) दिया है (जि० २, पृ० १५३)। “बीरबिनोद” में भी यही समय लिखा है (भाग २, पृ० ८४८)।

(२) इस लड़ाई में उम्मेदसिंह के दो भाई शेरसिंह और कुशलसिंह, जो जयसिंह के पक्ष में लड़ रहे थे, काम आये (बांकीदास; ऐतिहासिक बातें; संख्या २१६०)।

दोनों भाई पुष्कर में मिले, तो इस विषय में बरतसिंह ने अपने भाई को बड़ा उपालम्भ दिया। कुछ समय के बाद अभयसिंह ने पुनः युद्ध की तैयारी की। जयसिंह उस समय गांव लाडपुरा में था, पर भंडारी रघुनाथ ने यह कहकर उसे पेसा करने से रोक दिया कि इससे दोनों राज्यों की स्थिति कमज़ोर हो जायगी। उसी के प्रयत्न से जयसिंह के परबतसर, केकड़ी आदि सात परगने तथा बरतसिंह से छीना हुआ देव प्रतिमा का हाथीघापस देने की शर्त पर दोनों राजाओं में मेल हो गया। तब जयसिंह तो जयपुर खला गया और अभयसिंह मेड़ता, जहां उसका डेरा दूदासर तालाब पर हुआ। वहां रहते समय उसने जालोर का अधिकार बरतसिंह को दिया।”

उपर्युक्त दोनों वर्णनों में कुछ भिन्नता अवश्य है, पर मुख्य घटना में कोई अनन्तर नहीं है। अधिक संभव तो यही जान पड़ता है कि जोधपुर का राज्य मिलने का अपना स्वार्थ सिद्ध न होने के कारण ही बरतसिंह ने अपने भाई से मेलकर जयसिंह पर चढ़ाई की हो। सेना थोड़ी होने पर भी पहले उसने बड़ी वीरता दिखाई, परन्तु अन्त में उसे हारकर भागना पड़ा। “वंशभास्कर” से भी पाया जाता है कि अपनी तरफ़ के ४७०० सैनिकों के मारे जाने पर बरतसिंह बचे हुए ३०० आदमियों के साथ नागौर खला गया। कछवाहों की सेना-द्वारा ठाकुर गिरधारी के मूर्ति के हाथी आदि के लूटे जाने का भी उसमें उल्लेख है और इस विजय का सारा श्रेय

(१) जि० २, पृ० १५२-४।

ढोंक का बर्‍यान उपर्युक्त बर्‍यानों से पूर्णतया विपरीत है। वह लिखता है कि गंगबाबा नामक स्थान में बरतसिंह ने भीषण आक्रमणकर जयपुर की सेना का हर तरफ़ नश करना शुरू किया। वह कई बार बिपक्षी-दल के एक सिरे से दूसरे सिरे तक निकल गया, पर अन्त में उसके पास केवल ६० व्यक्ति ही रह गये। ऐसी अवस्था में गजसिंहपुरा के स्वामी ने उसे जंगल की तरफ़ चलने का इशारा किया, पर बरतसिंह ने आगे बढ़ने का आग्रह किया और उधर जयपुर का पंचरंगा मंडा दिखाई पड़ते ही उसने पुनः आक्रमण करने की आज्ञा दी। इस अवसर पर चतुर कुंभायी (कुंभा के वंशज) ने जयसिंह को युद्ध न करने की राय दी और उसे युद्ध-क्षेत्र छोड़कर लौट जाने पर बाध्य किया। इस प्रकार राजबादा के परम बाकिभाखी, बुद्धिमान और सदैव सफलता

शाहपुरा के उम्मेदसिंह को दिया है' ।

जोधपुर राज्य की रूपाय से पाया जाता है कि इस लड़ाई के पूर्व ही जोधपुर के कई सरदारों ने अजीतसिंह के पुत्र राजबी रत्नसिंह को, जो सलेमकोट में कैद था, जोधपुर का राज्य दिलाने के लिए जयसिंह को लिखा । इसपर उसने उन्हें अन्य सरदारों को फोड़कर अपने पक्ष में करने के लिए कहलाया, जिसपर उन्होंने सरदारों से मिलकर उन्हें अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न आरम्भ किया । फिर गंगवाणा की लड़ाई हुई, जिसके बाद जयसिंह का डेरा लाडपुरा में हुआ । भंडारी मनरूप उसके साथ ही था । उससे उसने कहा कि जोधपुर के कितने ही सरदार अपने पक्ष में हो गये हैं, अतएव अब तुम जाकर कार्य पूरा करो । भंडारी मनरूप ऊपर से तो विद्रोही सरदारों के शामिल हो गया था, परन्तु भीतर ही भीतर वह अभयसिंह का पक्षपाती था । गांव रीयां में, जहां अभयसिंह था, पहुंचने पर उसने षड्यन्त्र का सारा हाल उससे कह दिया और जयसिंह के सैनिकों के पहुंचने के पूर्व ही उससे जोधपुर का समस्त प्रबन्ध कर लेने को कहा । महाराजा ने तत्काल विद्रोही सरदारों को गिरफ्तार कर सब जगह अपने

प्राप्त करनेवाले राजा को युद्ध-क्षेत्र छोड़कर जाने का अपमान सहन करना पड़ा । उसी समय से यह प्रसिद्धि हुई कि एक राठोड़ दस कछवाहों के बराबर है (जि० २, पृ० १०४१-४१) । टॉड का उपर्युक्त कथन विश्वसनीय नहीं है । बहुधा उसने जो कुछ लिखा है, वह केवल सुनी-सुनाई बातों के आधार पर ही है, जो अतिशयोक्तिपूर्ण होने के साथ ही काल्पनिक है । जयसिंह के पास बल्लसिंह से कई गुना अधिक सैन्य होने पर भी उसका सामना माना नहीं जा सकता । “वीरविनोद” (भाग २, पृ० ८४८) में भी बल्लसिंह का ही भागना लिखा है । उसमें भी लगभग ऊपर आई हुई कथाओं जैसा ही वर्णन है । सरकार-कृत “प्राक ऑब् दि मुगल एम्पायर” (जि० १, पृ० २८१-२) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है ।

(१) चतुर्थ भाग, पृ० ३३१०-११ ।

(२) भंडारी मनरूप ने इस षड्यन्त्र के आरम्भ में ही महाराजा को सावधान करने का प्रयत्न किया था, पर उस समय वह उससे मित्रा ही नहीं ।

विश्वासपात्र आदमी नियुक्त कर दिये, जिससे विद्रोही सरदारों और जयसिंह का प्रयत्न विफल हो गया। मनरूप से महाराजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसे उसने दीवान का ओहदा प्रदान किया^१।

इस घटना के प्रायः दो वर्ष बाद वि० सं० १८०० आश्विन सुदि १४ (ई० सं० १७४३ ता० २१ सितम्बर) को जयसिंह का स्वर्गवास हो गया और

उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र ईश्वरीसिंह हुआ।

महाराजा का अजमेर पर
क्रान्ति करना

इसे उपयुक्त अवसर जान महाराजा अभयसिंह ने
भंडारी सूरतराम को राठोड़ सूरजमल सरदार-

सिंहोत (आलनियावास), जोधा शिवराजसिंह, रूपनगर के राजा राजसिंह के पुत्र बहादुरसिंह एवं देवगांध, पीसांगन आदि के स्वामियों के साथ अजमेर पर भेजा। उन्होंने सर्वप्रथम सूरजमल गौड़ को निकालकर राजगढ़ पर अधिकार किया। अनन्तर भिणाय, रामसर और पुष्कर पर भी उनका कब्जा हो गया। उसी वर्ष अभयसिंह ने भी मेड़ते से प्रस्थान किया। गांध डांगावास में पहुंचने पर बल्लसिंह भी नागौर से चलकर उसके शामिल हो गया। वहां से चलकर दोनों के डेरे अजमेर में हुए। अनन्तर उसके छातड़ी में पहुंचने पर कोटा का भट गोविंदराम ५००० सेना के साथ उससे मिल गया। इस प्रकार उसके पास सब मिलाकर ३०००० फौज हो गई। उधर जयपुर से ईश्वरीसिंह ने भी उसके मुकाबले के लिए प्रस्थान कर गांध डांगी में डेरा किया। बल्लसिंह की इच्छा तो उससे लड़ाई करने की थी, पर पुरोहित जगन्नाथ ने राजामल खत्री की मारकत बात ठहराकर दोनों पक्षों में मेल करा दिया। इससे नाराज़ होकर बल्लसिंह नागौर चला गया। अनन्तर दोनों महाराजाओं में परस्पर मुलाकात और आनासागर के महलों में गोठ हुई। इस बीच अभयसिंह ने चांदी की तुला की। इसके बाद ईश्वरीसिंह तो जयपुर गया, पर अभयसिंह का डेरा छातड़ी में ही रहा^२।

(१) जि० २, पृ० १५५-६।

(२) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० २, पृ० १५७। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८४८-९।

वि० सं० १८०१ (ई० सं० १७४४) में जयपुर के महाराणा जगत-सिंह (दूसरा) तथा कोटा के महाराव दुर्जनसाल ने जयपुर का राज्य माधोसिंह को और बूंदी उम्मेदसिंह को दिलाने के इरादे से सेना-सहित प्रस्थान किया। पंढेर गांव के निकट बूंदी से दलेलसिंह और जयपुर से ईश्वरीसिंह भी मुक्ताबले के लिए गये। उस समय जयपुर के मंत्री राजामल खत्री ने महाराणा के पास जाकर उसे समझाया और पांच लाख रुपये की आय का टोक का इलाक़ा माधोसिंह को दिलाने की शर्त कर उसे वापस लौटा दिया। इससे दुर्जनसाल बड़ा अप्रसन्न हुआ और अपने पूर्व निश्चय के अनुसार उसने बूंदी पर चढ़ाई करने की तैयारी की एवं अपने सेनापति नागर ब्राह्मण गोविंदराम को पत्र देकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के पास से सहायता लाने के लिए भेजा। वह वहां बहुत समय तक रहा, पर जब महाराजा की तरफ से कोई उत्तर न मिला और वह सेना भेजने में टाल-टूल करता रहा, तो वह (गोविंदराम) वहां से लौटा। मार्ग में अजमेर में उसकी गुजरात के सूबेदार फ़ख़रुद्दौला से मुलाक़ात हुई, जिसे एक लाख रुपया देना ठहराकर उसने अपनी सहायता के लिए राज़ी किया। फ़ख़रुद्दौला ने हाइों की सेना के साथ बूंदी जाकर वहां उम्मेदसिंह का अधिकार करा दिया, पर कुछ ही समय पीछे ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को हटाकर बूंदी का अधिकार दलेलसिंह को दिला दिया^१।

(१) महाराव बुधसिंह को बूंदी से हटाकर सवाई जयसिंह ने वहां का अधिकार करवड़ के सालमसिंह के पुत्र दलेलसिंह को दे दिया। तब बुधसिंह बेगू (मेवाड़) जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसका पुत्र उम्मेदसिंह था, जिसने पुनः बूंदी का राज्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया।

(२) वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३३२५-७३। गंगासहाय; वंशप्रकाश; पृ० १६७-६।

जोधपुर राज्य की ब्यात में इस घटना का जो वर्णन दिया है, उसमें बूंदी का

बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह का निःसन्तान देहान्त हो जाने पर, उसके चाचा आनन्दसिंह के ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंह के होते हुए भी, जोधपुर की सहायता से अमरसिंह वहां के सरदारों ने वि० सं० १८०३ में उस (अमर-सिंह) के छोटे भाई गजसिंह को, जो सब भाइयों में अधिक बुद्धिमान था, बीकानेर की गद्दी पर बैठाया। अमरसिंह इससे बड़ा नाराज़ हुआ और अजमेर में अभयसिंह के रहते समय उसके पास चला गया। महाजन का ठाकुर भीमसिंह तथा भाद्रा का लालसिंह उसके पास पहले से ही थे। उन्होंने अमरसिंह को ही बीकानेर की गद्दी दिलाने का निश्चय किया। अनन्तर अभयसिंह ने अपने बहुत से सरदारों एवं भीमसिंह, लालसिंह तथा अमरसिंह के साथ एक विशाल सेना बीकानेर पर भेजी, जो मार्ग में लूट-मार करती ही सरूपदेसर के पास पहुंची। बीकानेरवाले जोधपुर के विगत हमलों के कारण सतर्क रहने लगे थे। इस अवसर पर बीकों, बीदावतों, रावतों, घणीरों, भाटियों, रूप-वतों, कर्मसों आदि की सेनाएं एकत्र होकर शत्रु का सामना करने के लिए रामसर कुएं पर जा डटीं। कई मास तक सेनाएं एक दूसरी के सम्मुख पड़ी रहने पर भी छिट-पुट हमलों के अतिरिक्त जमकर युद्ध न हुआ। तब जोधपुरवालों ने कहलाया कि यदि भूमि के दो भाग कर दिये जायें तो हम लौट जाने को तैयार हैं, परन्तु गजसिंह ने यही उत्तर दिया कि हम इस तरह सूई की नोक के बराबर भूमि भी न देंगे और कल प्रातः तलवार के बल पर हमारी सन्धि की शर्तें तय होंगी। दूसरे दिन अपनी सेना को तीन भागों में विभक्त कर गजसिंह शत्रु के सामने जा

अधिकार उम्मेदसिंह को दिलाने का सारा श्रेय महाराजा अभयसिंह को दे दिया है और उसका ऋकहीला (?ऋकहीला) के साथ अपनी सेना सहित राजा किशोरसिंह (राजगढ़) तथा पंचोली बालकिशन को भेजना लिखा है (जि० २, पृ० १२७-८)। क्यात का यह कथन विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि "वीरविनोद" में भी बूंदी अथवा कोटा के इतिहास (भाग २, पृ० ११७ अथवा १४१) में कहीं इस लड़ाई में महाराजा अभयसिंह की सेना का भेजा जाना नहीं लिखा है।

पहुँचा। बीदावतों, रावतों और बीका राठोड़ों की बीच की अनी में महाराजा (गजसिंह) स्वयं विद्यमान था। दक्षिण की अनी में भाटी, रूपा-
वत और मंडलावत तथा बाई अनी में तारासिंह, चूरू का ठाकुर धीरजसिंह
तथा मेहता बस्तावरसिंह आदि थे। हरावल में कुशलसिंह (भूकरका),
मेहता रघुनाथसिंह तथा दौलतसिंह (वाय) और चंदावल में प्रेमसिंह
बाघसिंहोंत बीका महाराजा के अंग रत्नों-सहित था। सुजानदेसर कुपं
के पास शत्रुपक्ष में से कुछ ने एक बुर्ज बना ली थी, परन्तु बीकानेरी सेना
की दाहिनी अनी के सैनिकों ने हल्लाकर उन्हें वहाँ से भगा दिया और वहाँ
क्रुद्धा कर लिया। इसपर जोधपुर की सेना में से भंडारी रत्नचंद अपनी
सारी सेना के साथ बढ़ा। गजसिंह उस समय घोड़े पर सवार होकर लड़-
रहा था। उस घोड़े के गोली लग जाने से वह मर गया तब वह दूसरे घोड़े
पर सवार होकर लड़ने लगा। अमरसिंह उस समय तक यही समझ रहा
था कि गजसिंह हाथी पर है, अतएव उसने हाथियों की तरफ ही आक्रमण
किया। तारासिंह ने उधर घूमकर उसका मुक्ताबिला किया। इसी बीच
गजसिंह का दूसरा घोड़ा भी मारा गया, जिससे वह फिर हाथी पर ही
आरुढ़ हो गया। इतनी देर की लड़ाई में ही भंडारी (रत्नचंद), भीमसिंह
तथा अमरसिंह इतने घायल हो गये कि अधिक देर तक लड़ना उनके लिए
असम्भव हो गया। फिर महाराजा गजसिंह के हाथ का तीर भंडारी रत्न-
चंद की आंख में लगते ही शत्रु बची हुई सेना के साथ रणक्षेत्र छोड़कर
भाग गया। बीकानेर के जैतपुर के ठाकुर स्वरूपसिंह ने आगे बढ़कर
बरछी के एक वार से भंडारी का काम तमाम कर दिया। इस युद्ध में

(१) यह घटना वि० सं० १८०४ आषाढ़ वदि ३ (ई० सं० १७४७ ता०
१३ जुलाई) सोमवार को हुई, जैसा कि बीकानेर के भोंडासर नामक जैन मन्दिर के
पास से मिले हुए नीचे लिखे स्मारक से पाया जाता है—

स्वस्ति श्रीमत्शुभसंवत्सरे संवत् १८

०४ वर्षे शाके १६६६ प्रवर्त्तमाने

जोधपुर की बड़ी हानि हुई। बीकानेर के भी कितने ही सरदार मारे गये। जब इस पराजय का समाचार अभयसिंह के पास पहुँचा तो वह बड़ा दुःखित हुआ और उसने भंडारी मनरूप की अध्यक्षता में एक दूसरी सेना रवाना की, जो डीडवाणा तक गई, परन्तु उसी समय बीकानेर से फ़ौज आ जाने के कारण उसे वापस लौट जाना पड़ा। यह घटना वि० सं० १८०४ (ई० सं० १७४७) में हुई^१।

महामांगल्यप्रदमासोत्तममासे
 श्रावणमासे कृष्णपक्षे तिथौ
 तृतीयायां ३ सोमवासरे श्री-
 बीकानेर मध्ये महाराजा-
 धिराजमहाराजश्रीगज-
 [सिं] घजीविजयराज्ये काश्यप-
 गोत्रे राठोड़कांघलवंशे वर्णीरो-
 त राजश्रीअजबसंघजीततपु-
 त्रमोहकमसंघजीतस्यात्मज
 [स]बाईसंघजी जोधपुर री फो-
 ज भारी ताहीरा काम आया

(मूल लेख से)।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पन्ना ६६-७१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़
 दि बीकानेर स्टेट; पृ० २५-२६।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि जोरावरसिंह का निःसन्तान
 देहान्त होने पर उसके चाचा आनन्दसिंह का छोटा पुत्र गजसिंह बीकानेर की गद्दी पर
 बैठा और बड़े अमरसिंह को गद्दी न मिली। इसपर जोधपुर की सेना ने बीकानेर पर
 चढ़ाई की, जिसमें अमरसिंह भी साथ था। वि० सं० १८०४ के श्रावण मास में स्थापना
 होने पर जोधपुर की तरफ़ के भंडारी रजसिंह, कृपावत रघुनाथसिंह रामसिंहोत (नाड-
 सर), चापावत अमरसिंह धनराजोत (रणसी) आदि कई सरदार मारे गये (जि०
 २, पृ० १५८-६)। इस लड़ाई का परिणाम क्या हुआ वह तो उक्त ख्यात में नहीं

इसके बाद पठानों का उपद्रव बढ़ने पर बादशाह (मुहम्मदशाह) ने अमरसिंह तथा बरतसिंह को दिल्ली बुलवाया। महाराजा तो इस अवसर पर न गया, परन्तु बरतसिंह दिल्ली की तरफ बढ़ा।
 बादशाह का महाराजा और उसके भाई को खाना हुआ। इसपर महाराजा ने भंडारी मनरूप एवं चांपावत देवीसिंह महासिंहों को भेजकर उसे प्रधान करने से मना किया, परन्तु वह रुका नहीं। बादशाह ने पठानों के विरुद्ध शाहजादे अहमदशाह, वज़ीर कमरुद्दीनखां, जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह आदि को भेजा। लड़ाई होने पर कमरुद्दीनखां तो गोली लगने से मर गया और ईश्वरीसिंह भाग गया। शाहजादा लड़ता रहा और उसने पठानों को हराकर भगा दिया।

वि० सं० १८०५ (ई० सं० १७४८) में बादशाह मुहम्मदशाह का बेहान्त हो गया और उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र अहमदशाह हुआ।
 मुहम्मदशाह के जीवनकाल में ही अपनी सेनासहित महाराजा अमरसिंह का भाई बरतसिंह दिल्ली चला गया था। अहमदशाह ने गद्दीनशीन होने के बाद उसे अपनी सेवा में बहाल रक्खा। बरतसिंह अपने भाई के साथ गुजरात के सूबे में रह चुका था और उधर की सूबेदारी का उसे अनुभव था। अमीरुल्लमरा सादातखां की मारफ़्त उसने गुजरात की सूबेदारी मिलने की अर्ज़ कराई। अमरसिंह के समय मारवाड़ियों ने गुजरात

दिया है, परन्तु आगे चलकर उसमें ही भंडारी मनरूप का चांपावत देवीसिंह महासिंहों (पोकरण), उदावत कल्याणसिंह (नींबाज), मेवतिथा शेरसिंह सरदारसिंहों (रीषा) आदि के साथ पुनः बीकानेर पर भेजा जाना लिखा है (जि० २, पृ० १५-६)। इस से यह निश्चित है कि पहले भेजी हुई सेना की पराजय हुई होगी। उसमें दूसरी बार भेजी गई सेना का भी परिणाम नहीं दिया है और उसके साथ राजा बहादुरसिंह (रूपनगर) तथा अमरसिंह का भी होना लिखा है। “बीरविनोद” में भी दयालदास की कथात जैसा ही वर्णन मिलता है (भाग २, पृ० ५०३-४)।

(१) जोधपुर राज्य की कथात; जि० २, पृ० १६०।

के लोगों पर जो जुल्म किये थे उनका अमीरुलुडमरा को पता था, जिससे उसने गुजरात का सूबा बख्तसिंह को दिये जाने के पूर्व उससे निम्नलिखित शर्तों का एक इक्करारनामा लिखवाया—

- (१) शाही खालसे के जिलों पर मैं अधिकार न करूंगा और माल के अफसरों के काम में मदद देता रहूंगा ।
- (२) बादशाही अमलदारों को मैं पूर्व नियमानुसार कार्य करने दूंगा और उनके साथ अच्छा व्यवहार कर उनको प्रसन्न रखूंगा ।
- (३) मनसबदारों को तनख्वाह के एवज़ में जो जागीरें गुजरात में मिली हैं, उन्हें मैं जूझ नहीं करूंगा और उनकी रज़ामंदी के पत्र बादशाह की सेवा में भेजता रहूंगा ।
- (४) गुजरात के सूबे में रहनेवाले मुसलमानों को मैं अपने अच्छे व्यवहार से प्रसन्न रखूंगा और अकारण उनको कष्ट अथवा हानि न पहुंचाऊंगा ।
- (५) बादशाह मुहम्मदशाह के राज्यकाल में सूबेदार लोग बादशाह की सेवा में जो कुछ पेशकश भेजते थे, वह मैं भी सूबे का बन्दोबस्त करने के बाद भेजता रहूंगा ।
- (६) मुसलमानी शरह के अनुसार मुक़दमों का फ़ैसला करने के लिए मैं किसी मुसलमान व्यक्ति को नियुक्त करूंगा, नहीं तो बादशाह की तरफ़ से उसकी नियुक्ति की जावे ।

बादशाह-द्वारा इस मुखलफ़े (इक्करारनामा) की मंजूरी होने पर हि० स० ११६१ में बादशाह की तरफ़ से महाराज बख़्तसिंह को ६ पोशाकें, सरपेच तथा रत्न-जटित मूठवाली तलवार दी गई और फ़ख़रुद्दौला की बदली कर अहमदाबाद की सूबेदारी पर उसे नियत किया गया । वहां से अमीरुलुडमरा के साथ, जो जोधपुर और अजमेर की व्यवस्था के लिए जा रहा था, उसको भी जाने की आज्ञा मिली । गुजरात पहुंचने से पूर्व उस सूबे और मरहटों की वास्तविक दशा का पता लगाने के लिए बख़्तसिंह ने गुप्त रूप से अपने आदमी वहां भेजे । उन्होंने लौटकर उसे बतलाया कि

गुजरात के सूबे की दशा अच्छी नहीं है और वह बिल्कुल वीरान हो रहा है। इसी बीच बख्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलने की खबर पाकर जवांमर्दख़ां ने उस सूबे की सच्ची हालत के बारे में एक प्रार्थनापत्र बड़े-बड़े सैयदों, शेखों, सम्माननीय व्यक्तियों तथा हिन्दू-मुसलमान व्यापारियों के हस्ताक्षरों-सहित बादशाह की सेवा में भिजवाया^१। उसमें अभयसिंह के समय गुजरात की जो दशा हुई थी उसका भी पूरा-पूरा वर्णन था। ऐसी हालत में बख्तसिंह ने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना ठीक न समझा और वहां जाना मुल्तवी रक्खा^२।

पठानों के खिलाफ़ बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर, जब बख्तसिंह ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया तो अभयसिंह ने उसे पेसा करने से रोका था, पर उसने इसपर कोई ध्यान न दिया^३, फलस्वरूप दोनों भाइयों में मनमुटाव हो गया। पठानों को परास्तकर लौटने पर बादशाह अहमदशाह के समय बख्तसिंह विशाल शाही फ़ौज के साथ सांभर गया, जहां उसने गजसिंह को भी बुलाया, जिससे उसने मेल स्थापित कर लिया था। अभयसिंह को जब इसकी खबर मिली तो उसने मल्हारराव होल्कर को अपनी सहायता के लिए बुलाया। गजसिंह के आ जाने से बख्तसिंह की सैनिक शक्ति बहुत बढ़ गई। इस सम्बन्ध में उसने गजसिंह से कहा भी कि आपके मिल जाने से हम एक और एक दो नहीं बरन् ग्यारह हो गये हैं। अभयसिंह ने मरहटों की सहायता के बल पर ही अपने भाई पर आक्रमण किया था, परन्तु उसी समय जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह के भेजे हुए एक आदमी

(१) इस प्रार्थनापत्र की नक़ल “मिरात-इ-अहमदी” (जि० २, पृ० ३७६-७) में छपी है।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात इ-अहमदी; जि० २, पृ० ३७४-७। कैम्पबेल-कृत “गैज़ेटियर ऑफ़ दि बाग्बे प्रेसिडेंसी” में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३३२)।

(३) देखो ऊपर; पृ० ६६५।

के पहुंच जाने से बल्लतसिंह और मल्हारराव होल्कर की बात-चीत हो गई और उस (मल्हारराव) ने दोनों भाइयों के बीच मेल करा दिया, पर इससे आन्तरिक मनोमालिन्य दूर न हुआ^१ ।

जयपुर की गद्दी के लिए ईश्वरीसिंह का भाई माधोसिंह प्रयत्नशील था और महाराणा अगतसिंह (दूसरा) माधोसिंह के पक्ष में था। महाराणा ने जयपुर के माधोसिंह की सहायताार्थ जाना उसको वहां की गद्दी दिलाने के लिए तीन बार जयपुर पर चढ़ाई की तथा होल्कर को भी उसके पक्ष में कर लिया पर उससे कोई विशेष लाभ न हुआ। अन्तिम बार ईश्वरीसिंह ने माधोसिंह को टोड़ा देना स्वीकार कर महाराणा के साथ सन्धि की थी, पर पीछे से उसे तोड़कर उसने टोड़े पर पुनः अधिकार कर लिया^२ । इस पर माधोसिंह ने मल्हारराव होल्कर तथा रावराजा उम्मेदसिंह (बूंदी) को साथ लेकर जयपुर पर चढ़ाई की। मल्हारराव ने महाराणा से भी सहायता चाही, परन्तु उसने स्वयं न जाकर ४००० सवारों के साथ शाहपुरा के उम्मेदसिंह, बेगूं के रावत मेघसिंह, देवगढ़ के रावत जसवन्तसिंह (सांगावत),

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७१-२ । बीरबिनोद; भाग २, पृ० ५०४ । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५६-७ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि ब्रह्मदशाह के तख्त-नशीन होने पर बल्लतसिंह वहां से फ़ौज खर्च तथा सांभर, डीडवाणा, नारनोल और गुजरात की सुबेदारी प्राप्त कर लौटा। महाराजा ने इसकी खबर पाकर भंडारी मनरूप एवं चांपाबत देवीसिंह को भेज म्यारह हजार रुपया रोज़ाना देना ठहराकर बूंदी से मल्हारराव को बुलाया और बल्लतसिंह के सांभर में डेरें होने पर वह वहां पहुंचा। महाराजा का इरादा जालोर छुड़ा लेने का था, परन्तु बाद में परस्पर मेल हो जाने से वह अजमेर चला गया और बल्लतसिंह नागौर, परन्तु उसने जालोर नहीं छोड़ा (जि० २, पृ० १६०)। उक्त ख्यात में गजसिंह का बल्लतसिंह की सहायता को जाना नहीं लिखा है, पर अधिक संभव तो यही है कि वह उसकी सहायताार्थ गया हो, क्योंकि समय-समय पर बल्लतसिंह को बीकानेर से सहायता मिलती रही थी ।

(२) विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ६३७ ।

राणावत शंभुसिंह^१ और कायस्थ गुलाबराय को भेजा। जब महाराणा ने ठाकुर शिवसिंह^२ को महाराजा अभयसिंह के पास भेजा, तब उसने भी माधोसिंह की सहायता करना स्वीकार कर दो हजार सवारों-सहित रीयां के ठाकुर मेड़तिथा शेरसिंह और ऊदावत कल्याणसिंह को भेजा। वि० सं० १८०५ भाद्रपद वदि ४ (ई० स० १७४८ ता० १ अगस्त) को बगरू गांव के पास दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ। ईश्वरीसिंह इस युद्ध में परास्त हुआ। तब उसके मंत्री केशवदास खत्री ने एक मरहटे सेनापति को लालच देकर अपनी तरफ़ मिला लिया और उसके-द्वारा महाराराव होल्कर को कुछ देकर संधि कर ली। इस संधि के अनुसार ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को बूंदी और माधोसिंह को टोंक, टोड़ा, मालपुरा और नवाई नामक चार परगने पीछे दे दिये^३।

वि० सं० १८०६ (ई० स० १७४९) में महाराजा अभयसिंह रोगग्रस्त हुआ। उसकी बीमारी क्रमशः बढ़ती ही गई। अपना अन्तकाल निकट जान एक दिवस उसने अपने सरदारों को अपने पास बुलाया और कहा कि मेरे भाई बल्लसिंह ने मेरे जीते जी ही जोधपुर पर अधिकार करने का प्रयत्न किया था। मेरी मृत्यु के बाद वह केवल नागौर से ही सन्तोष न कर मेरे पुत्र रामसिंह को मार जोधपुर ले लेगा। रामसिंह कपूत और निर्बुद्धि है, इस वास्ते मुझे आशंका है कि तुम सब पलट जाओगे और उसके

महाराजा की बीमारी
और मृत्यु

(१) शंभुसिंह सनवाड़ का महाराज तथा खैराबादवाले भारतसिंह का भाई था।

(२) रूपाहेलीवालों का पूर्वज।

(३) बीरविनोद; भाग २, पृ० १२३८-९। वंशाभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३४८३-३४८७। सर जदुनाथ सरकार; फॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० १, पृ० २८५।

जोधपुर राज्य की रूपात में इस घटना का विस्तृत वर्णन तो नहीं दिया है, पर महाराराव की सहायता के लिए जोधपुर से सेना जाने और बाद में माधोसिंह को टोड़ा, टोंक और मालपुरा मिलकर परस्पर सन्धि होने का उसमें भी उल्लेख है (जि० २, पृ० १५९)। उक्त रूपात में इस घटना का समय नहीं दिया है।

अधीन न रहोगे। इसलिए तुम्हारा इरादा यदि दूसरे (बल्लतसिंह) का साथ देने का हो, तो वैसा कह दो, ताकि मैं बल्लतसिंह को जोधपुर देकर रामसिंह का प्रबन्ध कर दूँ। मुझे इस बात की विशेष चिन्ता है और यही जानने के लिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है। तब रीयां के ऊद्रावत शेरसिंह ने उत्तर दिया कि हमारे जैसे वीर राजपूतों के रहते आपको ऐसे कातर बचन कहना शोभा नहीं देता। रामसिंह के कपूत होने पर भी हम उसका साथ देंगे। यह सुनकर महाराजा ने अन्य सरदारों की भी राय जाननी चाही। इसपर आऊवा के स्वामी चांपावत कुशलसिंह ने कहा कि यह तो दिखाई पड़ रहा है कि कुंवर रामसिंह नीच लोगों की संगति में रहने के कारण अनुचित आचरण कर योग्य व्यक्तियों का आदर घटा देगा। यहाँ तक तो हम सह लेंगे, पर यदि उसने हमारे डेरे आदि बरबाद करना और हमें दुत्कार कर निकालना प्रारम्भ किया तो हमसे रहा न जायगा^१। अनन्तर आषाढ सुदि १५ (ई० स० १७४६ ता० १६ जून) सोमवार को अजमेर में रहते समय महाराजा अभयसिंह का देहान्त हो गया। इसकी खबर श्रावण वदि २ (ता० २१ जून) बुधवार को जोधपुर पहुँचने पर उसकी छः राणियां सती हुई^२।

महाराजा अभयसिंह की बारह राणियों के नाम ख्यात में मिलते हैं। उसके दो पुत्र हुए^३—

राणिया तथा सन्तति

(१) रामसिंह।

(२) जोरावरसिंह (इसका बाल्यावस्था में ही स्वर्गवास हो गया)।

महाराजा को भवन इत्यादि बनवाने का बड़ा शौक था। उसने

(१) बंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३५८३-४, छन्द १६३३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६१। उसका दाह संस्कार पुष्कर में हुआ, जहाँ उसका स्मारक टूटी-फूटी दशा में अब तक विद्यमान है।

(३) वही; जि० २, पृ० १६१-२।

कितने ही नये स्थानों का निर्माण कराने के अतिरिक्त कई पुराने स्थानों का जीर्णोद्धार भी कराया था। उसके समय में महाराजा के बनवाये हुए स्थान जोधपुर के चांदपोल के बाहर अभयसामर नामक कुएं का बनना प्रारम्भ हुआ, पर वह उसके जीवन में पूरा न हो सका। मंडोवर में महाराजा अजीतसिंह का स्मारक भी उसने बनवाना शुरू किया, पर वह भी अधूरा ही रहा। इनके अतिरिक्त उसके समय में चारवां नामक स्थान में उद्यान, कोट, महल, अठपहलू कुआं; मंडोवर में गऊमुख से इधर की तरफ ड्योढ़ी के ऊपर बंगला तथा महल एवं पहाड़ के बीच का सीतारामजी का मन्दिर; जोधपुर के गढ़ का पक्का कोट, बुर्जे एवं चोकेलाव कुआं बने^१।

महाराजा अभयसिंह को काव्य और साहित्य से अनुराग था। उसकी उदारता से प्रेरित होकर कई कवि, चारण आदि उसके आश्रय में रहते थे। चारण कविया करणीदान ने, उसके आश्रय में महाराजा की गुणग्राहकता रहकर "सूरजप्रकाश"-नामक ऐतिहासिक काव्य की रचना की, जिसमें रामचन्द्र और पुंजराज तथा उससे चलनेवाली तेरह शाखाओं के विवरण के अनन्तर जयचंद से लगाकर अजीतसिंह तक का संक्षिप्त हाल और अभयसिंह का सरबुलन्दख्वां के साथ की लड़ाई तक का विस्तृत वर्णन है। पीछे से उसने उक्त पुस्तक से सरबुलन्दख्वां के साथ की लड़ाई का आशय लेकर उसे भिन्न छन्दों में काव्य-बद्धकर "विरद-शृंगार"-नामक ग्रन्थ बनाया और उसे महाराजा को सुनाया। महाराजा ने उससे प्रसन्न होकर उसे लाखपसाव में आलायास गांव और कविराजा का खिताब देने के अतिरिक्त उसका यहां तक सम्मान किया कि वह उसको हाथी पर चढ़ाकर स्वयं अश्वारूढ़ हो मंडोर से उसके घर तक पहुंचाने

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६०-१।

(२) यह ग्रन्थ बीकानेर के राजवी महाराज कर्नल सर शैलसिंह ने वि० सं० १९२८ में 'भैरवविमोद' नाम से प्रकाशित किया है।

गया'। उपर्युक्त दोनों ग्रंथ प्रशंसात्मक दृष्टि से लिखे होने से अति-शयोक्ति-रंजित हैं। अन्य कवियों में भट्ट जगजीवन-रचित "अभयोदय"- (संस्कृत), वीरभाण-रचित "राजरूपक"^२, रसपुंज-रचित "कवित्त भी माताजी रा", एवं माधोराम-रचित "शक्त भक्ति प्रकाश", "शंकर-पचीसी" तथा "माधवराम कुंडली"^३ के उल्लेख मिलते हैं। "बिहारी सतसई" महाराजा को अधिक प्रिय होने से कवि सुरति मिश्र ने वि० सं० १७६४ में "अमरचन्द्रिका" नाम की उसकी टीका बनाई थी। रसचंद्र, सेवक, प्रयाग, माईदास, साधंतसिंह, प्रेमचंद्र, शिवचंद्र, अनंदराम, गुलालचंद्र, भीमचंद्र, पृथ्वीराय आदि अन्य कितने ही कवियों को भी उसका आश्रय प्राप्त था। "सूरजप्रकाश" से पाया जाता है कि महाराजा ने नरहर, आढ़ाकिशन, सिंढायच हरि और मेहड़ बलू को एक-एक, खेम दधिवाड़िया को २, सादूनाथ को ३ एवं आढ़ा मदेश को ५ लाख पसाव दिये थे।

अभयसिंह वीर परन्तु दुर्बल-हृदय नरेश था। राज्यारंभ से ही उसने अपने सरदारों के प्रति उपेक्षा का भाव रक्खा, जिससे समय-समय पर उनके साथ उसका विरोध होता रहा। अपने सरदारों को
महाराजा का व्यक्तित्व
खुश रखने के लिए उसने एक बार अपने प्रियपात्र

(१) इस सम्बन्ध में निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है—

अस चढ़ियो राजा अभो कवि चाढ़े गजराज ।

पोहर हके जलेश में मोहर हले महाराज ॥

इस ग्रन्थ का उल्लेख "एनुअल रिपोर्ट ऑन दि सर्च फॉर हिंदी मैनुस्क्रिप्ट्स" (ई० स० १९०१, पृ० ८२, संख्या १०५) में भी है।

(२) मिश्रबंधुविनोद; द्वितीय भाग, पृ० ७५१ ।

(३) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० १३१ ।

(४) मिश्रबंधुविनोद; द्वितीय भाग, पृ० ६७४-५ । इमाम बिहारी मिश्र, पृ० ५०; दि सेकन्ड ट्राइएनिपल रिपोर्ट ऑन दि सर्च फॉर हिन्दी मैनुस्क्रिप्ट्स; ई० स० १९०६, १० और ११; संख्या ३१४ पृ० ४२४ ।

(५) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० ६ ।

भंडारियों को कैद में डलवाया, पर वह कार्य केवल ऊपरी दिल से होने के कारण इसका स्थायी परिणाम न निकला। बकतसिंह को छोड़कर वह अपने दूसरे भाइयों को मरवाना चाहता था, जिससे वे उसके सदा विरोधी रहे और जोधपुर राज्य के आस-पास उपद्रव करते रहे। उसकी अपने पिता को मरवाने से बड़ी बदनामी हुई।

अवसर विशेष पर वह छल-छिद्र करने में भी संकोच न करता था। इससे स्वयं उसका भाई बकतसिंह, जिसको पिता को मारने के एवज़ में नागोर की जागीर मिली थी, उसको कपटी कहा करता था^१। वह कान का भी कच्चा था, जिससे साधारण सी झूठी शिकायतों पर उसने कई अच्छे-अच्छे राज-कर्मचारियों तथा अन्य लोगों के साथ बुरा सलूक किया।

पेसा अनुमान होता है कि अभयसिंह के राज्य-समय में धन का अभाव ही रहा। यही कारण था कि वह अपने सरदारों और अन्य लोगों से ज़ोर-जुल्म से अथवा ओहदों की एवज़ में बड़ी-बड़ी रकमों वसूल किया करता था। बादशाह-द्वारा गुजरात का सूबा मिलने पर उसने रुपये की वसूली के लिए वहां के निवासियों पर भांति-भांति के जुल्म किये। वह वहां के बड़े-बड़े धनी-मानी सेठों को पकड़कर कैद में डाल देता और जब तक उनसे अच्छी रकम वसूल न कर लेता उन्हें न छोड़ता। वहां रहते समय उसने गुजरात के विभिन्न ज़िलों के हाकिमों से सब मिलाकर ८५ लाख से अधिक रुपये वसूल किये^२। उसके वहां से लौटने के बाद उसके नायब रतनसिंह भंडारी ने भी प्रजा पर होनेवाले जुल्म की परिपाटी को क्लायम रक्खा, जिसका परिणाम यह हुआ कि अहमदाबाद के कितने ही निवासी स्त्री, पुरुष वहां का वास छोड़कर अन्यत्र चले गये और वह सूखा वीरान हो गया। वह ज़माना मरहटों के उत्कर्ष का था, जिनकी जगह-जगह चौथ लगने लगी थी। अभयसिंह का गुजरात पर अधिकार

(१) बांकीदास; ऐतिहासिक बातें; संख्या ४७३।

(२) इनकी क्रैडरिस्त जोधपुर राज्य की रियासत में दी है (जि० २, पृ० १३७-८)।

रहते समय मरहटों की उधर कई बार चढ़ाईयां हुईं और अभयसिंह को उन्हें चौथ देना स्वीकार करना पड़ा। अभयसिंह के जीते जी ही उसके भाई बल्लभसिंह ने बड़ी कोशिश और कई प्रकार के वायदे कर गुजरात का सूबा, जो अभयसिंह से छीन लिया गया था, पुनः प्राप्त किया, परन्तु वहां की बुरी दशा का पता पाकर उसने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना उचित न समझ अपना जाना मुत्तवही रक्खा।

अभयसिंह आराम का जीवन व्यतीत करना अधिक पसन्द करता था और अफ़ीम का उसे व्यसन था, जो उसकी अवस्था के साथ-साथ बढ़ता गया^१।

रामसिंह

रामसिंह का जन्म वि० सं० १७८७ प्रथम भाद्रपद वदि १० (ई० सं० १७३० ता० २८ जुलाई) मंगलवार को हुआ था। अपने पिता महाराजा अभयसिंह का देहांत होने पर वि० सं० १८०६ श्रावण सुदि १० (ई० सं० १७४६ ता० १३ जुलाई) गुरुवार को वह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। इस अवसर पर उसने अपने कृपापात्र नगराजी अमिया^२ को मोती (कान का चौकड़ा), कड़ा, सिर्रोपाष और अपने बांधने की ढाल, तलवार एवं कटार; चाकर चांदा को सिर्रोपाष, मोती, कड़ा एवं गांध रोइला तथा चूड़ीगर सफ़ुद्दीन को सिर्रोपाष, मोती एवं कड़ा दिया^३।

(१) सरकार; काल ऑव् दि मुगल एम्पायर; जि० १, पृ० २४४।

(२) ख्यात में अमिया का इतना सम्मान बढ़ाये जाने का कारण नहीं दिया है, परन्तु "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि उस (अमिया) की सरूपा नाम की बहिन महाराजा की "पासवान" (उपपत्नी) थी, जिससे उसने उसका इतना सम्मान बढ़ाया (चतुर्थ भाग, पृ० ३१८४-५, छन्द ३६-७)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६३। उस समय धायभाई को भी ५०००० रुपये आय की जागीर एवं अन्य राजकर्मचारी भंडारियों आदि को सिर्रोपाष मिले।

महाराजा अभयसिंह के स्वर्गवास की खबर नागोर पहुंचने पर बरतसिंह ने बड़ा शोक प्रकट किया और उसके उत्तराधिकारी रामसिंह के लिए पुरोहित विजयराज, धायभाई हरनाथ एवं अपनी धाय^१ के साथ टीके के हाथी, घोड़े आदि भिजवाये। महाराजा ने यह कहकर टीका स्वीकार करने से इनकार कर दिया कि पहले जालोर छोड़ो तब लूंगा। धाय ने जब राजमाता से इस बारे में कहा तो उसने उत्तर दिया कि रामसिंह बालक है, इठ कर बैठा है, अतएव अभी तो जालोर दे दो; दो एक मास बाद पीछा दिलवा दूंगी। नागोर में बरतसिंह के पास इसकी सूचना भिजवाने पर उसने कहलाया कि जालोर तो मेरे हिस्से में आया है, उसे मैं नहीं छोड़ सकता, अलबत्ता उसके बदले में दूसरा प्रदेश मैं महाराजा को विजय कर दिला सकता हूं, परन्तु रामसिंह ने इस बात को नामंजूर किया। तब धाय आदि टीका लेकर वापस नागोर चले गये^२।

महाराजा अभयसिंह की मृत्यु के समय फौज तथा सरदार आदि अजमेर में ही थे। सरदारों के पुत्र जोधपुर में रामसिंह के पास उपस्थित हुए। रीयां महाराजा का अपने सरदारों के साथ दुर्व्यवहार करना और रीयां के ठाकुर से उसके महाराजा के पास रहते और उनपर उसकी विशेष कृपा थी। ढोली अमिया का भी बड़ा सम्मान था, जिसके पट्टे में गांव पाल था। एक दिवस मांढा का ठाकुर कुशलसिंह कुंषावत महाराजा के पास गया। उस समय महाराजा शेरसिंह के पुत्रों के साथ खिलवत में था, जिन्हें देख कुशलसिंह पीछा लौटने लगा। जालिमसिंह ने महाराजा से कहा कि इसे भी बुलवाइये अन्यथा यह आपकी बदनामी करेगा। महाराजा ने उसे रोकने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह रुका नहीं। अनन्तर महाराजा के आदेश से पृथ्वीसिंह फ़तहसिंहोत ने पीछा

(१) “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि महाराजा ने इस धाय के साथ बड़ा अपमानजनक व्यवहार किया (चतुर्थ भाग, पृ० ३७८५, कुन्द ४२)।

(२) जोधपुर राज्य की रूपात; जि० २, पृ० १६३-४।

लौटते हुए कुशलसिंह को रोककर कहा कि राजा नादान है, तुम्हें बुलाता है तो जाते क्यों नहीं ? इसपर कुशलसिंह ने उत्तर दिया कि मैं खिलबत में नहीं रह सकता और वह चला गया। महाराजा ने पृथ्वीसिंह से कहा कि या तो कुशलसिंह को वापस लाओ या स्वयं भी चले जाओ। तब पृथ्वीसिंह भी चला गया और नागौर पहुँचा, जहाँ बल्लतसिंह ने उसे अपने पास रखकर उसके गुज़ारे का प्रबंध कर दिया। फिर राहण के ठाकुर बनेसिंह कनीरामोत से उसकी जागीर बिना किसी कारण हटाकर रामसिंह ने लालसिंह मुकुन्दसिंहोत को दे दी। इसपर बनेसिंह भी नागौर चला गया, जहाँ बल्लतसिंह ने उसे गाँव बोड़वा दिया। उन्हीं दिनों मल्हारराव के पास से टीके का हाथी, घोड़ा, सिरोपाव आदि लेकर २०० व्यक्ति रामसिंह के पास गये। महाराजा ने मल्हारराव होलकर के भेजे हुए हाथी से अपना हाथी लड़ा। ब्रह्मग्यवश महाराजा का हाथी हार गया। इससे कुछ होकर उसने मल्हारराव के हाथी को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। इसपर टीका लेकर आये हुए मरहट्टे मारने को तैयार हो गये। उसके इस आचरण से कई सरदार असह्य हो गये और उन्होंने महाराजा से कहा कि हाथी गणेश का प्रतीक होता है, अतएव उसे मारना अपशकुन है, यदि उसे मारना ही है तो किसी को दे डालिये। तब वह हाथी महाराजा ने जीवसर के ठाकुर जोरावरसिंह को दे दिया तथा राठोड़ देवीसिंह महासिंहोत (पोरण), कुशलसिंह हरनार्थसिंहोत^१ (आउवा), कनीराम रामसिंहोत (आसोप), शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), कल्याणसिंह अमरसिंहोत (नींबाज), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली), राठोड़ देवीसिंह दौलतसिंहोत (कोसाणा) आदि १८ सरदारों को

(१) “वंशभास्कर” में भी इस घटना का उल्लेख है (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८२ कुन्द, ३६-४१)।

(२) “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि महाराजा ने उसका भी अपमान किया था, परन्तु अभयसिंह के आदेश को स्मरण कर उसने उसको सहन कर लिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८२, कुन्द ४२-३)।

एक-एक हाथी दिया। रीयां के ठाकुर शेरसिंह के साथ उसके विजिया नाम का एक चाकर भी दरबार में जाया करता था। महाराजा को वह चाकर इतना पसन्द आया कि उसने शेरसिंह से उसको मांगा। इस समय तो ठाला-ठूली कर शेरसिंह विदा हुआ, परन्तु उसके डेरे पर पहुंचते ही महाराजा के अनुचर ने जाकर फिर विजिया को मांगा। शेरसिंह ने उत्तर दिया कि आज तो महाराजा चाकर मांगता है, कल कहेगा कि तुम्हारी स्त्री सुन्दर है उसे दे दो। मैं चाकर को नहीं दूंगा, महाराजा नाराज़ होंगे तो अपना मुल्क रक्खेंगे। यह सुनकर महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ और उसने शेरसिंह को जोधपुर का परित्याग कर जाने की आज्ञा दी, जिसपर वह अपने ठिकाने रीयां चला गया।

इस प्रकार महाराजा के मूर्खतापूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार बल्लतसिंह के पास नागोर चले गये। तब रामसिंह ने अपने महाराजा के रीयां जाने पर शेरसिंह का विजिया को उसे सौंपना सरदारों को एकत्र कर नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा किया। गांव खेडूली में डेरा होने पर उसके पास रहनेवाले लोगों ने उससे कहा कि आप नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा कर रहे हैं, ऐसे अवसर पर शेरसिंह का साथ होना लाभदायक होता, क्योंकि वह बल्लतसिंह का मित्र है। तब महाराजा की आज्ञानुसार देवीसिंह दौलतसिंहोत (कोसाणा का) शेरसिंह के पास गया। शेरसिंह ने जाने के लिए उत्सुकता तो दिखलाई, परन्तु यह कहा कि महाराजा स्वयं लेने आवे तो जाऊं। साथ ही उसने महाराजा को विजिया को सौंप देने का वायदा भी किया। देवीसिंह ने लौटकर महाराजा से सब बातें कहीं, जिसपर वह स्वयं रीयां गया। शेरसिंह ने सामने जाकर उसका स्वागत किया और विजिया को उसे सौंप दिया। तब महाराजा ने विजिया को कड़ा, मोती, सिरपेच, जिनोई-

(१) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० २, पृ० १६४-५। “वंशमास्कर” (चतुर्थ भाग; पृ० ३६८५, ३६२५-६) में भी महाराजा के अपमानजनक व्यवहार से तंग आकर उसके सरदारों का उसका साथ छोड़ नागोर जाना लिखा है।

(सोने का आभूषण), सिरोपाव, तुरी और कलगी प्रदान कर पालकी में सवार कराया और सवारी में अपने आगे रख अपने साथ ले गया। फिर शेरसिंह को साथ लेकर महाराजा खेड़ली पहुँचा। रीयाँ और खेड़ली के बीच शेरसिंह के घोड़ों के थकने पर उसने उसे चार बार नये घोड़े प्रदान किये।

अपने ऊपर चढ़ाई करने के महाराजा रामसिंह के इरादे का पता पाकर ब्रह्मसिंह ने आदमी भेज बीकानेर से सहायता मंगवाई। इसपर महाराजा गजसिंह १८००० सेना के साथ खाना ब्रह्मसिंह और रामसिंह के बीच लड़ाई हो

गया। अनन्तर ब्रह्मसागर होते हुए दोनों के डेरे गाँव हीलोड़ी में हुए। वहाँ रहते समय यह पता लगने पर कि महाराजा रामसिंह रुण में है ब्रह्मसिंह उधर खाना हुआ। वहाँ पहुँचने पर उसने भंडारी मनरूप को दगा से मरवा डाला, परन्तु कोई बड़ी लड़ाई नहीं हुई। इसी बीच रिणी (बीकानेर) में तारासिंह को मारकर अमरसिंह ने वहाँ अधिकार कर लिया। इस समाचार के मिलने पर भी गजसिंह ने ब्रह्मसिंह का साथ न छोड़ा और अपने कई सरदारों को सेना देकर उधर भेज दिया। पीछे से ऊंट-सवारों के साथ मेहता मनरूप को भी ब्रह्मसिंह ने पहले भेजे गये सरदारों की सहायता के लिए भेजा। रामसिंह की सेना में जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह का भेजा हुआ राजावत दलेलसिंह निर्भयसिंहोत (धूला का) ४००० सवारों के साथ था। उसने ब्रह्मावर-सिंह से बातकर ब्रह्मसिंह के जालोर छोड़ देने एवं बदले में तीन लाख

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६५-६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उसमें लिखा है कि ब्रह्मसिंह के इशारे से उसके ब्योड़ीदार गोपनदास के एक सेवक पातावत ने वि० सं० १८०६ कार्तिक सुदि २ (ई० सं० १७४६ ता० १ नवम्बर) को मनरूप को, जब वह अपने डेरे पर पालकी से उतर रहा था, मार डाला (जि० २, पृ० १६८)।

रूपये तथा अजमेर लेने की शर्त पर दोनों में सन्धि करा दी। रुपया चुकाने की अवधि छः मास निश्चित हुई। अनन्तर रामसिंह वहां से लौट गया तथा गजसिंह भी दलेलसिंह से बात-चीत कर बीकानेर गया।

इसके कुछ ही समय बाद बल्लसिंह सहायता के लिये बादशाह के बक़शी सलाबतख़ां को लेने गया। उस समय गजसिंह रिणी इलाक़े के गांव

(१) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि ईश्वरीसिंह के पास से राजावत दलेलसिंह उसकी पुत्री के विवाह का नारियल लेकर रामसिंह के पास गया हुआ था। उसका इस सन्धि में कोई हाथ नहीं रहा। थोड़ी लड़ाई के बाद बल्लसिंह ने जालोर छोड़ देने की शर्त कर सन्धि कर ली, परन्तु वहां से उसने अपना अधिकार लड़ाई बन्द होने पर भी नहीं हटाया (जि० २, पृ० १६८-९)। उक्त ख्यात से इस लड़ाई में गजसिंह का बल्लसिंह के पक्ष में होना नहीं पाया जाता, परन्तु बल्लसिंह का बीकानेरवालों से इससे बहुत पूर्व ही मेल हो गया था। ऐसी दशा में बल्लसिंह का गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना तथा उसका उसी समय जाना अविश्वसनीय नहीं है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७२-३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ इस घटना का वर्णन दिया है। उसके अनुसार सन्धि के पश्चात् रामसिंह मेकते तथा बल्लसिंह नागोर गया (जि० २, पृ० १६७-९)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सलाबतख़ां को बादशाह की तरफ़ से अजमेर का सूबा मिला हुआ था। आसोपा हरनाथसिंह ने, जो बल्लसिंह की तरफ़ से दिल्ली में रहता था, उससे बात-चीत की। पीछे से बल्लसिंह दतेला-भंमोरा में जाकर उससे मिला। उसी समय के लगभग महाराजा ने बिना किसी कारण के दिल्ली में ही आसोप का ठिकाना कूपावत खींवजी (धयाला) को दे दिया। उसके इस व्यवहार से अप्रसन्न होकर उदावत केसरीसिंह (रास), कूपावत कनीराम रामसिंहोत (आसोप), चांपावत कुशलसिंह हरनाथसिंहोत (आउबा), मुकनसिंह किशनसिंहोत (गांव नार-मंछी), जालसिंह सहसमलोत (वयाड) आदि उसके चांपावत, कूपावत और उदावत सरदार नागोर चले गये। उन दिनों बल्लसिंह तो नवाब को लेने के लिए गया था और उसका कुंवर विजयसिंह नागोर में था। उक्त ठाकुर आदि उसके शामिल होकर जोधपुर के ज़ालसे के गांवों को लूटने लगे तथा उन्होंने बीसलपुर, काकेलाब, वयाड आदि बहुत से गांव लूट लिए। इसके थोड़े समय बाद ही हंसपुर कोटड़ी (शेखावाटी) में महाराजा

मुसलमानों की सहायता से बख्तसिंह का जोधपुर पर चढ़ाई करना

मोड़ी में ठहरा हुआ था। बख्तसिंह ने उसे भी शीघ्र पहुंचने को लिखा। सलाबतख़ां के पास से सहायता लेकर बख्तसिंह के जोधपुर पहुंचने पर गजसिंह भी अपने राज्य का समुचित प्रबंध कर उससे जा मिला^१। महाराजा रामसिंह ने इस अवसर पर जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह को बुलाया। गांध सूरियावास में विपत्ती दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुसंख्यक लोग मारे गये। अनन्तर पीपाड़ में भी बड़ा युद्ध हुआ, जिसमें अमरसिंह, ठाकुर शंभुसिंह (पीसांगण) आदि रामसिंह के कई सरदार मारे गये, परन्तु कुछ निर्णय न हुआ। युद्ध से होनेवाली भयंकर हानि देखकर ईश्वरीसिंह मुसलमान सेनापति से मिल गया और वे दोनों युद्धक्षेत्र का परित्याग कर अपने-अपने स्थानों को चले गये। प्रधान सहायकों के अभाव में युद्ध जारी रखना हानिकारक ही सिद्ध होता, अतएव गजसिंह, बख्तसिंह, रामसिंह आदि भी अपने-अपने स्थानों को लौट गये^२।

रामसिंह ईश्वरीसिंह के शामिल हुआ। वहां देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण) ने, जो राज्य का प्रधान मंत्री था, पहले ईश्वरीसिंह से मिलना चाहा तो रामसिंह ने उसे हाथ से धक्का देकर हटा दिया और खींचकरण को आगे किया। इसके बाद अक्षय तृतीया की गोठ (दावत) के अवसर पर भी देवीसिंह के सामने का थाल हटाकर खींचकरण के आगे रक्खा गया। तब वह बिना भोजन किये ही अपने डेरे पर लौट गया। इस प्रकार दो बार अपमानित होने पर देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली) तथा अन्य कई सरदार महाराजा का साथ छोड़ नागौर में कुंवर विजयसिंह के पास चले गये (जि० २, पृ० १६६-७१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस अवसर पर रूपनगर- (किशनगढ़) का राजा बहादुरसिंह भी बख्तसिंह के शामिल हो गया था (जि० २, पृ० १७१)।

(२) दयासदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का लगभग ऐसा ही वर्णन मिलता है। उससे इतना अधिक पाया जाता है कि रामसिंह ने अपनी सहायता के लिए दक्षिणी सतवाजी को महाराजा ईश्वरीसिंह की मारफ़्त

सय्यद गुलामहुसैनखां-कृत "सैरुलमुताखिरीन" में इस घटना का भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि हि० स० ११६१ (वि० स० १८०५ = ई० स० १७४८) में बख्तसिंह ने जोधपुर का राज्य प्राप्त करने का उद्योग किया। बादशाह के पास उपस्थित होकर उसने सआदतखां को अपनी सहायता के लिये तैयार किया। उसके नागोर लौटने के कुछ दिनों पश्चात् सआदतखां भी फ़ौज के साथ रवाना हुआ। मार्ग में सूरजमल जाट के साथ की लड़ाई में उसकी पराजय हुई। उससे मेलकर सआदतखां के नारनोल के निकट पहुंचने पर बख्तसिंह उसके पास पहुंचा। उधर रामसिंह ने जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह की सहायता प्राप्त की। अजमेर, बूरीगढ़, शेरासिंह का गढ़ और मेड़ता होता हुआ सआदतखां पीपाड़ पहुंचा। बख्तसिंह ने उससे कहा कि इस मार्ग में रामसिंह की तोपें लगी हैं, अतएव इधर से जाना ठीक नहीं; परन्तु सआदतखां ने इसपर ध्यान न देते हुए कहा कि एक बार किसी तरफ़ मुख कर लेने पर पुरुष उसे मोड़ते नहीं। उसकी ज़िद को देखकर बख्तसिंह ने उसका साथ छोड़ दिया। सआदतखां की फ़ौज के रामसिंह की तोपों के निकट पहुंचते ही राठोड़ों ने उसपर आक्रमण कर दिया, जिससे मुसलमानी सेना का बहुत नुकसान हुआ। सआदतखां की सांगी फ़ौज बिखर गई और धूप की तीव्रता के कारण मुसलमान सिपाही व्यास से व्याकुल हो गये। उनकी

बुलवाया। गांव सूरियावास में परस्पर गोलों की लड़ाई होने पर रामसिंह के पक्ष के अमरसिंह (बीकानेर के महाराजा राजसिंह का बड़ा भाई) और पीसांगण का जोधा शंभुसिंह क्रतहसिंहों मारे गये। दोनों पक्षों के और भी बहुतसे आदमी काम आये। सतवाजी को सात हजार रुपया रोज़ाना देना तय हुआ। पीछे से कड़वाहों की मारकत बात तय होकर सन्धि हो गई। उसके अनुसार एक लाख रुपया बादशाह की नज़र का नवाब को और पचास हजार नवाब के दीवान को दिया गया तथा बादशाह की तरफ़ से लाया गया टीका, हाथी, घोड़ा वगैरह नवाब ने महाराजा रामसिंह को दिया (जि० २, पृ० १७१-२)।

(१) ख्यातों में सलाबतखां नाम दिया है और यही नाम सरकार-कृत "फ़ाख़ ऑब् दि मुग़ल एम्पायर" में भी मिलता है।

यह दशा देख राठोड़ों ने लड़ाई बन्द कर दी और उनके लिए जल की व्यवस्था कर उन्हें बिदा किया। ऐसी भीषण परिस्थिति और वर्षा ऋतु निकट देख तथा लड़ाई के विशेष व्यय पर विचार कर सआदतख़ां कुछ इकरार कर जाने के लिये तैयार हो गया। बल्लसिंह ने इसके विपरीत उसे बहुत समझाया, पर उसपर उसकी बातों का असर न हुआ और वह तीन लाख रुपये (रामसिंह से) नक़द लेकर तथा शेष के लिए क्रिस्तें मुकर्रर कर पीपाड़ से अजमेर लौट गया।

(१) आर० कैम्ब्रे एण्ड कंपनी द्वारा प्रकाशित अंग्रेज़ी अनुवाद; जि० ३, पृ० ३११-८।

सर जदुनाथ सरकार-कृत “फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर” में भी इस घटना का विस्तृत वर्णन दिया है। उससे पाया जाता है कि सलाबतख़ां बल्लसिंह का विश्वास नहीं करता था। वह युद्ध करने को भी तैयार न था, क्योंकि बल्लसिंह ने उसे भरोसा दिलाया था कि उसके रामसिंह की सेना के निकट पहुंचते ही उसके बहुतसे सरदार उस (सलाबतख़ां) से आ मिलेंगे और जब ऐसा न हुआ तो उसने ईश्वरीसिंह को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने युद्ध के प्रति अपनी अनिच्छा प्रकट की। फिर जल की तंगी होने से उसके सिपाहियों की हालत ख़राब होने लगी। इससे उसका क्रोध बढ़ गया और उसने अपने डेरों के चारों ओर तोपख़ाना लगा दिया। इसपर बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने २००० व्यक्तियों के साथ ता० ६ अप्रैल को बड़शी (सलाबतख़ां) के डेरे पर जाकर उसे शान्त किया। ईश्वरीसिंह ने भी उसके पास इस बारे में पत्र लिखा। तब सलाबतख़ां कुछ रुपये आदि लेकर मेल करने को राजी हुआ, पर कई दिनों तक जब कुछ भी तय न हुआ तो बिपची दलों में लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के कुछ आदमी मारे गये। अनन्तर ता० १६ अप्रैल को सन्धि की शर्तें तय हुईं। ईश्वरीसिंह स्वयं जाकर बल्लसिंह की मारक़त सलाबतख़ां से मिला और उसने आगरा की नायब-नाज़िमी के पयज़ २७ लाख रुपया देना तय किया। रामसिंह ने तीन लाख रुपया नक़द दिया और शेष चार लाख के लिए क्रिस्तें ठहरा लीं। बल्लसिंह को इस सन्धि से कोई लाभ न हुआ, जिससे वह नाराज़ होकर नागौर चला गया। इसके बाद ईश्वरीसिंह जयपुर, रामसिंह मेरुता और बड़शी अजमेर गया (जि० १, पृ० ३०६-१७। सिलेक्शन्स फ़्रॉम पेशवाज़ दफ़्तर; जि० ३, पृ० १६, जिएड २१, पृ० २७, ३४-५)।

इससे निश्चित है कि रामसिंह को सन्धि के समय सलाबतख़ां को धन देना पड़ा था। “वंशभास्कर” में इस घटना का बिल्कुल भिन्न वर्णन मिलता है, पर उससे भी रामसिंह का बहुतसा धन देना स्पष्ट है (अनुर्य भाग; पृ० ३५६६)।

वि० सं० १८०७ (ई० सं० १७५०) में महाराजा ईश्वरीसिंह जूहर जाकर मर गया और जयपुर की गद्दी पर उसका भाई माधोसिंह बैठा। ईश्वरी-सिंह के मरने से रामसिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। तब मारवाड़ के प्रमुख सरदारों ने, जो बरतसिंह के शामिल हो गये थे, उससे जाकर कहा कि रामसिंह इस समय केवल थोड़े से साथियों-सहित मेड़ता में है, अतः पव चढ़ाई करने का उपयुक्त अवसर है। बरतसिंह को भी यह बात जंच गई। बीकानेर से महाराजा गजसिंह इसके पूर्व ही उसके पास पहुंच गया था। दोनों की सम्मिलित सेना ने खेड़ली होते हुए दूदासर तालाब पर पहुंच वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष वदि ६ (ई० सं० १७५० ता० ११ नवम्बर) को मेड़तियों को हराकर रामसिंह के डेरे आदि लूट लिए। वहां से गजसिंह तथा बरतसिंह ने धीलाड़ा जाकर एक लाख रुपये पेशकशी के वसूल किये। पीछे जब वे सोजत में थे रामसिंह ने सेना एकत्र कर उनपर आक्रमण किया, परन्तु उसे हारकर भागना पड़ा। विजयी सेना ने उसके खेमे लूटकर उनमें आग लगा दी। इस अवसर पर जालिमसिंह किशोरसिंहोत- (मेड़तिया) ने शत्रु को रोकने का प्रयत्न किया, पर विपत्ती सेना के अधिक होने के कारण उसे अपने प्राण गंवाने पड़े। अनन्तर युद्ध करने में कोई लाभ न देख रामसिंह समझौता कर जोधपुर चला गया तथा गजसिंह और बरतसिंह नागौर गये।

(१) सरकार-कृत "फ़ाल् आब् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि रामसिंह-द्वारा अपमानित होने पर खांपावत कुशलसिंह बरतसिंह से जा मिला। अनन्तर दोनों की सम्मिलित सेना ने लूणियाबास में ई० सं० १७५० ता० २७ नवम्बर (वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष सुदि १०) को रामसिंह की सेना पर आक्रमण किया, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का शेरसिंह मेड़तिया और अन्य कई व्यक्ति तथा बरतसिंह के सहायक बीकानेर के ६-७ सरदार काम आये। स्वयं बरतसिंह के भी कई घाव आये और उसे चार मील पीछा हटना पड़ा, लेकिन अन्त में रामसिंह की पराजय हुई और वह राजधानी में भाग गया (जि० १, पृ० ३१६-१०)।

(२) दूबाखदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७४-५। पाउलेट; मैग्नेटियर ऑब् दि

बल्लतसिंह आदि के नागोर की तरफ़ प्रस्थान करते ही रामसिंह पुनः मेड़ते जा रहा', जिसकी खबर लगते ही गजसिंह तथा बल्लतसिंह ने वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि ६ (ई० सं० १७५१ ता० २१ जून) को सीधे जोधपुर पर चढ़ाई कर वहाँ चार पहर तक खूब लूट मचाई । गढ़ के भीतर भाटी सुजानसिंह तथा पोकरण के देवीसिंह के श्वसुर थे, जिन्होंने बल्लतसिंह की सेवामें उपस्थित हो गढ़ उसके सुपुर्द कर दिया' । तब किले

बीकानेर स्टेट; पृ० ५८-६ ।

जोधपुर राज्य की क्थात में भी सरदारों के कहने से बल्लतसिंह का मेड़ता पर चढ़ाई करना और उस समय उसके साथ बीकानेर के गजसिंह तथा रूपनगर- (किशनगढ़) के बहादुरसिंह का होना लिखा है । बल्लतसिंह ने सरदारों के कहने से प्रस्थान तो कर दिया, पर वह हमला करने में हीला-हवाला करता रहा । फिर वृदासर के निकट वि० सं० १८०७ कार्तिक सुदि ६ (ई० सं० १७५० ता० २८ अक्टोबर) को लड़ाई होने पर रामसिंह की तरफ़ के शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीया), सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), श्यामसिंह अभयसिंहोत (बलुंदा), डूंगरसिंह श्यामसिंहोत (बीखरगया), सुरताणसिंह कृतहसिंहोत (सेवरिया) आदि कई सरदार मारे गये तथा बल्लतसिंह की फौज के भी अनेक व्यक्ति काम आये । इसके बाद और कई लड़ाइयाँ हुई, जिनमें दुतरफ़ा बहुत से आदमी मारे गये, पर कोई परिणाम न निकला । युद्ध से होनेवाली हानि को देखकर बल्लतसिंह ने पोकरण के देवीसिंह (महासिंहोत) और कुचामण के जालिमसिंह को बुलाकर कहा कि मुझे मेड़ता वापस दिया जाय तो मैं लड़ाई बन्द कर दूँ, पर वे इसके लिए राज़ी न हुए । फिर आषाढादि वि० सं० १८०७ (वैशाख १८०८) वैशाख वदि ६ (ई० सं० १७५१ ता० ६ अप्रेल) की लड़ाई के बाद, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का राठोड़ जालिमसिंह किशोरसिंहोत (कुचामण) अपने दो कुंवरों बैनसिंह और सुरताणसिंह एवं ७० व्यक्तियों-सहित मारा गया, वह- (रामसिंह) शीघ्रता से प्रस्थान कर जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १७३-७) ।

(१) सरकार-कृत "काल आब् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जोधपुर पर आक्रमण होने पर जब रामसिंह उसकी रक्षा न कर सका तो वह जयपुर चला गया (जि० १, पृ० ३२०) ।

(२) जोधपुर राज्य की क्थात से पाया जाता है कि महाराजा रामसिंह के जोधपुर आते ही बल्लतसिंह ने पुनः मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया । इसकी खबर पाकर

में प्रवेशकर गजसिंह ने बल्लतसिंह को गद्दी पर बैठाया और इसकी बधाई दी। बल्लतसिंह ने इसके उत्तर में कहा कि यह आपकी समयोचित सहायता

रामसिंह के सरदारों ने उसे समझाया कि मेढ़ता पर बल्लतसिंह का अधिकार होना अच्छा न होगा, अतएव आप शीघ्र उधर प्रस्थान करें। महाराजा ने ऐसा ही किया और वह मेढ़ते जा रहा। हमकी खबर हरकारों ने बल्लतसिंह को देकर उससे कहा कि रामसिंह का तोपखाना अभी गंगराणे में ही अटका हुआ है। इसपर बल्लतसिंह गंगराणे गया, पर उसके वहां पहुंचने के पूर्व ही तोपखाना मेढ़ते में दाखिल हो गया। अनन्तर बल्लतसिंह ने रास के ठाकुर केशरीसिंह के कहने पर जैतारण होते हुए बलूदा पर चढ़ाई की, जहां के स्वामी फ़तहसिंह ने गांव बांजाकुड़ी में उपस्थित हो उसकी अधीनता स्वीकार की। वहां से बल्लतसिंह नींबाज गया, जहां कल्याणसिंह ने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया और वहां पड़ा हुआ महाराजा का तोपखाना उसको दिया। फिर रायपुर से भाखरसिंह के पुत्र पद्मसिंह को साथ ले वह जोधपुर की ओर अग्रसर हुआ। मार्ग में उसने बीलाबा और पाल गांवों को लूटा और आवयादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) आषाढ सुदि १ (ई० सं० १७२१ ता० २१ जून) को वह रातानाडा पहुंचा। उस समय गढ़ के प्रबन्ध के लिए क़िन्नेदार भाटी सुजानसिंह (लवेरा) तथा चौहान राव मोहकमसिंह (सांचोर) और नगर के इन्तज़ाम के लिए राठोड़ दौलतसिंह, जोधा सूरजमल दुर्जनसिंहोत (पाटोदी), भाटी महेशदास नाथावत (कीटणोद), जैतकरण मेहकरणोत (बागावास) आदि नियुक्त थे। जोधपुर के मिथी सिपाही बल्लतसिंह से मिल गये और उसके सिवांची दरवाज़े पर पहुंचने पर उन्होंने द्वार खोल दिया। इसपर भायभाई देवकरण आदि, जो शहरपनाह के मोर्चे पर थे, भागकर गढ़ में चले गये और बल्लतसिंह, गजसिंह और राजा बहादुरसिंह तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। गजसिंह ने शहर लूटने की राय दी, परन्तु बल्लतसिंह ने इसे स्वीकार न किया। भाटी सुजानसिंह एवं भायभाई देवकरण ने ज़नानी ज्योड़ी पर जाकर राणी नरुकी (रामसिंह की माता) से कहलाया कि आपके पुत्र से सरदारों का नियन्त्रण नहीं होता। आप कहीं तो रत्नसिंह और रूपसिंह (अजीतसिंह के पुत्र) को, जो क़ैद में हैं, मुक्तकर गढ़ सौंप दें। इससे बल्लतसिंह के पक्ष में गये हुए कितने ही सरदार अपनी तरफ़ आ जायेंगे; परन्तु नरुकी ने इसकी स्वीकृति नहीं दी। फिर चांपावत सूरजमल रामसिंहोत (समाडिवा) तथा जोधा उदयसिंह द्विंसिंहोत (देधाणा) ने नरुकी को भाटी सुजाणसिंह एवं चौहान मोहकमसिंह को मरवाने और गढ़ न छोड़ने की राय दी, क्योंकि उनके कथनानुसार वे दोनों बल्लतसिंह से मिले हुए थे, पर इसका भेद प्रकट हो गया, जिससे काम सधा नहीं। फिर यक्षसिंह ने पोकरण के ठाकुर को सुजानसिंह आदि से बात करने को भेजा। उसने वहां जाकर

के बल पर ही संभव हो सका है। अनन्तर गजसिंह वहां से विदा हो बीकानेर चला गया।

उत्तीस वर्ष की अपरिपक्व आयु में रामसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। वह अल्पबुद्धि, अदूरदर्शी, अभिमानी, स्वार्थपरायण और उग्र-प्रकृति का शासक था। प्रारंभ से ही कुसंगति में पड़ जाने के कारण वह दुराचारी और स्वभाव का बड़ा जिद्दी हो गया था। अमिया ढोली जैसे दो-चार नीच

महाराजा रामसिंह का
व्यक्तित्व

उन्हें समझाया कि बल्लसिंह तो पीछा नागौर चला जायगा और राज्य विजयसिंह का रहेगा, जिसपर सुजानसिंह, चौहान मोहकमसिंह, महेचा सरदारसिंह आदि गढ़ सौंपने को राजी हो गये (जि० २, पृ० १७७-८)। ख्यात के इस कथन में कुछ भिन्नता है और इससे प्रकट होता है कि बल्लसिंह के मेदते पर चढ़ाई करने की वजह से रामसिंह को डर जाना पड़ा था, पर अधिक भंगत तो मूल में दिया हुआ कथन ही प्रतीत होता है।

“फ़ाजल आँव दि मुग़ल एम्पायर” में जोधपुर पर अधिकार होने की तारीख ६० स० १७५१ ता० ८ जुलाई (वि० सं० १८०८ श्रावण वदि १२) दी है (जि० १, पृ० ३२०)।

(१) दयालदाम की ख्यात; जि० २, पत्र ७५। पाउलेट; गैज़ेटियर आँव दि बीकानेर रेट्ट: पृ० ५६। वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३६२५-३२, छन्द ८-४०।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वि० सं० १८०८ श्रावण वदि २ (६० स० १७५१ ता० २६ जून) शनिवार को रात्रि के समय बल्लसिंह के कहने पर चौहान मुहकमसिंह, महेचा सरदारसिंह और धायभाई देवकरण ने उस (बल्लसिंह) का हाथ पकड़ कर गढ़ के भीतर ले जाने के लिए उसे उठाया। अनन्तर हाथी पर सवार होकर बल्लसिंह ने गढ़ में प्रवेश किया। उस समय पोरकरण का ठाकुर उसकी ख्वासी में हाथी पर गिरा हुआ था। इसके दूसरे दिन दरबार के अवसर पर बल्लसिंह ने अपने तलवार बांधन की आज्ञा दी। सरदारों ने यह बात अश्वरी, क्योंकि उनसे तो विजयसिंह को राज्य देने की बात कही गई थी और आसोप के ठाकुर कनीराम के पुत्र दलजी ने कुछ कहना चाहता तो बल्लसिंह नाराज़ हो गया। इसपर कनीराम ने उसके तलवार बांध दी। अनन्तर सरदारों ने उसकी नज़र निज़ावल करी। दरबार के समय बीकानेर का महाराजा गजसिंह और रूपनगर का राजा बहादुरसिंह भी उपस्थित थे। इस अवसर पर बल्लसिंह ने सरदारी की पट्टी वापस बीकानेरवालों को दे दी (जि० २, पृ० १७६-८०)।

प्रकृति के व्यक्ति उसके प्रीतिभाजन थे, जिनके संसर्ग में उसका अधिक समय बीतता था। सरदारों के प्रति उसका व्यवहार अच्छा नहीं था। अपने ओढ़े स्वभाव के कारण वह उनके सम्मान का ध्यान नहीं रखता था। अपनी मृत्यु से पूर्व ही अभयसिंह को ज्ञात हो गया था कि उसका निर्बुद्धि पुत्र रामसिंह अपने सरदारों को नाराज़ कर अधिक समय तक राज्य-सुख न भोग सकेगा। इसलिए अपने अन्तिम समय में उसने अपने सरदारों को अपने निकट बुलाकर उनसे सदा रामसिंह का पक्ष लेने का अनुरोध किया था। सरदारों ने जहाँ तक संभव था, अभयसिंह के अन्तिम अनुरोध की रक्षा की और रामसिंह के दुर्व्यवहार को सहन किया, परन्तु जब उसका आचरण सीमा को पार कर गया तो उन्हें अपनी सम्मान-रक्षार्थ उसका साथ छोड़ बरतसिंह का पक्ष ग्रहण करना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्य-प्राप्ति के केवल दो वर्ष बाद ही उसे जोधपुर के सिंहासन से हाथ धोना पड़ा। उसके समय में राज्य और प्रजा दोनों की दशा बुरी रही।

बरतसिंह

महाराजा बरतसिंह का जन्म वि० सं० १७६३ भाद्रपद वदि ८ (ई० सं० १७०६ ता० २० अगस्त) को हुआ था। वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि १० (ई० सं० १७५१ ता० २२ जून) को अपने भतीजे रामसिंह की सेना को पगस्त कर उसने जोधपुर नगर पर कब्ज़ा कर लिया। उसी वर्ष श्रावण वदि २ (ता० २६ जून) शनिवार को उसने जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया और श्रावण वदि १२ (ता० ८ जुलाई) को उसका यहाँ कब्ज़ा हो गया। फिर उसने नागौर आदमी भेजकर अपने परिवार को जोधपुर बुलवा लिया।

उन दिनों भाद्राजूष का टाकुर विद्रोही हो रहा था। उसका दमन

करने के लिए महाराजा ने अपने पुत्र विजयसिंह को पांच हजार फौज के साथ भेजा। उसने वहां जाकर राज्य का थाना ठाकुरों के ठिकानों में परिवर्तन करना स्थापित किया। महाराजा ने चौरासी गांवों के साथ भाद्राजूरण का ठिकाना पाली के ठाकुर प्रेमसिंह के नाम लिख दिया। अनन्तर बख्तसिंह ने अपने टीके का मुहूर्त निकलवाया। एक दिन जब वह अकेला राजकीय भंडारों का निरीक्षण कर रहा था, दौलतखाने में देवीसिंह, केसरीसिंह, कल्याणसिंह, प्रेमसिंह, दलजी आदि सरदार जमा थे। दलजी ने उनसे कहा कि बख्तसिंह ने हमसे अभयसिंह की गद्दी पर विजयसिंह को बैठाने का वायदा किया था, परन्तु अब वह अपने लिए मुहूर्त निकलवा रहा है। यदि सलाह हो तो उसे भंडार के भीतर ही बन्द कर दिया जाय। इसपर सरदारों ने उत्तर दिया कि इसकी जल्दी क्या है, अभी तो बहुत समय है। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह तथा रास के ठाकुर केसरीसिंह ने इस मंत्रणा की सूचना गुप्त रूप से सिंघवी फ़तेहचन्द को दे दी। उसने बख्तसिंह से जाकर सारा हाल कहा, जिसपर वह भंडार के बाहर निकल आया। इसके कुछ ही समय बाद बख्तसिंह ने राजा बहादुर किशोरसिंह को हटाकर ४४ गांवों के साथ राजगढ़ की जागीर रास के ठाकुर उदावत केसरीसिंह के नाम, बलूदा की जागीर फ़तेहसिंह के छोड़ जाने पर चांदावत ज़ातिमसिंह उदयसिंहोत के नाम और कोसाणा की जागीर चांदावत बहादुरसिंह सबलसिंहोत के नाम कर दी। भाटी किशनसिंह के नाम ५०००० का पट्टा किया गया और आउवा के चांदावत जैतसिंह के पट्टे में वृद्धि की गई। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह को भी बख्तसिंह नया पट्टा देता था, परन्तु उसने लेना स्वीकार न किया। इस अवसर पर बख्तसिंह ने कोतवाल आदि अधिकारियों की भी नये सिरे से नियुक्ति की।

उन्हीं दिनों महाराजा बख्तसिंह ने अपने भाइयों रत्नसिंह और रूपसिंह को, जो कैद में थे, नागौर के क़िले में भिजवाया। फिर जब उसने उनके

अन्य विरोधियों को
सज़ा देना

अन्धे किये जाने की आज्ञा निकाली तो उन्होंने आत्मघात कर लिया। अनन्तर बल्लुसिंह ने रामसिंह की माता नरुकी को गढ़ से उतारकर उसकी सारी संपत्ति छीन ली। बल्लुसिंह के अन्य विरोधी भंडारी, पंचोली, मेहता, व्यास आदि कैद किये गये। उनमें से पंचोली लालजी का पुत्र मेहकरण हाथ-पैर काटकर मार डाला गया और जोशी हरकिशन ने आत्महत्या कर ली^१।

बादशाह की तरफ़ से
टीका मिलना

उसी वर्ष दिल्ली से बादशाह अहमदशाह की तरफ़ से टीके का हाथी, सिरोंपाव आदि लेकर व्यास हरनाथ जोधपुर गया। हरनाथ को महाराजा ने अपनी ओर से हाथी देकर विदा किया^२।

जोधपुर से अधिकार हटने के बाद रामसिंह मेड़ता से मारोठ चला गया, जहाँ परवतसर तथा सांभर के परगनों पर उसका अधिकार बना रहा^३। कुछ समय बाद उसकी तरफ़ से पुरोहित मरहटों की सहायता से रामसिंह का अजमेर पर कब्ज़ा करना जगू, भंडारी सवाईराम, जोरावरसिंह (खींवर), इंद्रसिंह (खैरवा), कूपावत खींवजी तथा चांपावत देवीसिंह मल्हारराव के पास गये^४, जो उन दिनों कुमाऊं के पहाड़ों पर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८३।

(२) वही; जि० २, पृ० १८३।

(३) वही; जि० २, पृ० १८०।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत “फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर” से पाया जाता है कि राज्य खोने पर रामसिंह ने पुरोहित जगू को भेजकर मरहटों की सहायता प्राप्त की (जि० २, पृ० १७२)। “वंशभास्कर” से पाया जाता है कि पुरोहित जगू एवं खींवर के ठाकुर के साथ स्वयं रामसिंह मरहटों के पास गया। जयभापा सिंधिया तथा मल्हारराव होकर ने उसका स्वागत किया और जयभापा ने उसके साथ अपनी पगड़ी बदली एवं उसे शीघ्र जोधपुर का राज्य दिवाने का आश्वासन दिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३६३-३१, खण्ड, ४३, ४४)।

गया हुआ था। वह उनको साथ लेकर आपा (जयआपा) के पास गया, जिसने रामसिंह से भाईचारा स्थापित कर उसकी मदद करने का वचन दिया। इसी समय दक्षिण से लिखा आने पर, उसे अचानक उधर जाना पड़ा, परन्तु जोधपुर के सरदारों के प्रार्थना करने पर उसने साहबां पटेल^१ को दस हजार क्राँज-सहित उनके साथ कर दिया। उनके मारोठ पहुँचने पर रामसिंह उन्हें तथा मेड़तियों को साथ ले अजमेर गया और उसने वहाँ क्रब्जा कर लिया^२। इसके बाद दी फलोधी पर भी रामसिंह का क्रब्जा हो गया। जब बरतसिंह को यह खबर मिली तो उसने बीकानेर से महाराजा गजसिंह को सहायता के लिए बुलाया और स्वयं सेना-सहित अजमेर की तरफ बढ़ा। लाडपुरा में दोनों एकत्र हो गये। वहाँ से चलकर दोनों पुष्कर में ठहरे। उनका आगमन सुनते ही रामसिंह और मरहटे बिना लड़े चले गये^३।

(१) टोंड-कृत “राजस्थान” में इसके स्थान में महादजी पटेल का नाम दिया है (जि० २, पृ० १०५८)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८३-४।

(३) इस सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा मिलता है कि बल्ल-सिंह ने हुए अवसर पर एक चाल चली। उसने रामसिंह के सरदारों के नाम इस आशय की चिट्ठियाँ तैयार कीं कि तुम्हारी अर्ज़ी आई, हमारा नगरा बजते ही तुम रामसिंह को गिरफ्तार कर लेना। दक्षिणियों को तो मैं मार लूँगा। इस सेवा के बदले मैं तुम्हें एक-एक लाख का पट्टा दूँगा। ये पत्र उसने क्रासिद के हाथ दक्षिणियों की चौकी की तरफ भिजवाये। क्रासिद से वह पत्र छीनकर दक्षिणियों ने साहबां पटेल को दिया। उसको पढ़ते ही उसे रामसिंह के सरदारों की तरफ से सन्देह हो गया और वह उसे लेकर रामसर चला गया। तब सब सरदार भी अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। पीछे से जब साहबां पर इस कपट का भेद सुझा तो उसने बड़ा खेद प्रकट किया और उसी समय लड़ने की तैयारी की, परन्तु सारी क्राँज बिलर जाने के कारण क्या हो सकता था। अन्तर रामसिंह मंदसोर चला गया (जि० २, पृ० १८४-५)।

इसके बिपरीत सरकार ने “तारीख-इ-आलमगीरसानी” के आधार पर “क्राल जॉन्स दि मुगल एम्पायर” में लिखा है कि ई० स० १७५२ (वि० सं० १८०३) के मई मास के अन्तिम दिनों में जयआपा सिन्धिया की अध्यक्षता में पाँच हजार मरहटी सेना रामसिंह के भेजे हुए आदिमियों के साथ बल्लसिंह के साथ युद्ध करने के लिए अजमेर

तब गजसिंह भी बीकानेर लौट गया^१।

चांदावतों को अजमेर में रखकर बल्लतसिंह गांव गृहरे में ठहरा, जहां शाहपुरा के स्वामी उम्मेदसिंह ने उसके पास उपस्थित होकर उसे एक हाथी नज़र किया। अनन्तर बल्लतसिंह ने अपने आदमी भेजकर जयपुर के महाराजा माधोसिंह से कहलाया कि आपका मल्हारराव से वैर है और मेरा आपा (जयआपा) से, अतएव हम और आप मिलकर नरबदा पार मरहटों पर कर लगा दें और मालवे को आपस में आधा-आधा बांट लें। महाराजा माधोसिंह ने उस समय इसका यह उत्तर भिजवाया कि अभी तो चौमासा (वर्षा ऋतु) है, चढ़ाई कैसे की जाय। इसपर बल्लतसिंह ने उससे मिलने के लिए जयपुर की तरफ प्रस्थान किया। उसके सोनौली पहुंचने की खबर बकीलों-द्वारा प्राप्त होने पर माधोसिंह मेंढ बरसते में वहां जाकर उससे मिला। दूसरे दिन दोनों में इस विषय पर बात-चीत हुई कि मरहटों को नरबदा के उस पार ही रोकने का क्या उपाय करना चाहिये। वहां से लौटते ही अचानक बल्लतसिंह की तबियत खराब हो गई, जो फिर न सुधरी^२। बहुत कुछ

पहुंची। उन्होंने नगर में लूट मचाकर कई घर जला दिये और विरोध करनेवालों को मार डाला। यह समाचार सुनकर बल्लतसिंह अपनी पूरी सेना के साथ अजमेर से लग-भग आठ मील दूर जाकर ठहरा। कुछ समय तक वह बिना युद्ध किये वहीं ठहरा रहा। जुलाई में उसने आक्रमण किया। एक पहाड़ी पर तोपखाना लगाया और जगह-जगह नाइफेबन्दी कर उसने मरहटी सेना पर गोलाबारी की, जिससे उधर के कई व्यक्ति और एक सेनापति मारा गया। इससे मरहटे निराश हो रामसिंह के साथ, दक्षिण की तरफ भाग गये (जि० २, पृ० १७३)।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पृ० ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० २०५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६०।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद ने “जोधपुर राज्य के महाराजाओं, राणियों, राजकुंवरों, कुंवरियों की नामावली” नामक पुस्तक में लिखा है कि उसे माधोसिंह ने ज़हर दे दिया था, जिससे उसकी मृत्यु हो गई (पृ० ६४)। टॉड उसका माधोसिंह की राठोड़ राणी द्वारा ज़हरीली पोशाक दिये जाने पर मरना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० ८६७)।

इलाज होने पर भी बरतसिंह अच्छा न हुआ और सोनौली गांव में ही वि० सं० १८०६ भाद्रपद सुदि १३ (ई० सं० १७५२ ता० २२ सितम्बर) गुरुवार को उसकी मृत्यु हो गई ।

ख्यातों आदि में कहीं बरतसिंह की राणियों और सन्तति के नाम एक स्थल पर नहीं मिलते । एक जगह उसकी मृत्यु होने पर उसकी पांच राणियों का उसके साथ सती होना लिखा है ।
 राणियां तथा सन्तति
 उसका एक पुत्र विजयसिंह था ।

महाराजा बरतसिंह का राज्य-काल एक वर्ष के करीब रहा, परन्तु उसने इसी बीच कई नवीन स्थान आदि बनवाये । जगह-जगह चौक बनवाने के लिए उसने पहले के बने हुए कई मकानों आदि को तुड़वा दिया । आनंदघन का मन्दिर उसके समय में ही बना था ।
 महाराजा के बनवाये हुए स्थान

जैसा कि ऊपर लिखा गया है बरतसिंह लगभग एक वर्ष गद्दी पर रहा, परन्तु इतनी अल्प अवधि में ही उसने जिस नृशंसता का परिचय दिया, उसका उदाहरण इतिहास में दूसरा नहीं मिलता । वीर वह था और राजनीतिज्ञ भी, इसमें सन्देह नहीं । अपनी वीरता और चानुर्य के बल पर ही जोधपुर का बड़ा राज्य उसने अपने अधिकार में कर लिया था । जोधपुर का स्वामित्व प्राप्त

सर जदुनाथ सरकार लिखता है कि वह हैजे की बीमारी से मरा (काल ऑब् दि मुगल एम्पायर; जि० २, पृ० १७४) ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८५-६ ।

दयालदास की ख्यात में बरतसिंह की मृत्यु की तिथि भाद्रपद वदि १३ वी है (जि० २, पत्र ७६), जो ठीक नहीं है । “वीरविनोद” में भी भाद्रपद सुदि १३ ही दी है (द्वितीय भाग, पृ० ५०५) । मिलान करने से उस दिन गुरुवार आता है, अतएव वही तिथि ठीक जान पड़ती है ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८६ और १८० ।

(३) वही; जि० २, पृ० १८२ ।

होने के पूर्व और उसके बाद भी उसने युद्ध से कभी मुख न मोड़ा। सखे राजपूत के समान ही उसका जीवन सदैव लड़ाई में ही बीता, परन्तु उसने अपने उसी वीरतापूर्ण काल में कई ऐसे कार्य किये, जिससे उसका नाम सदा के लिए कलंक-कालिमा से मंडित हो गया। उसकी न्यायशीलता की कई बातें प्रसिद्ध हैं, जिनसे पाया जाता है कि उसका अपनी प्रजा के साथ उदार व्यवहार रहा। चारण कवियों ने उसके द्वारा अजीतसिंह की मृत्यु होने से उसकी बदनामी की। इसपर नाराज़ होकर उसने उनकी जीविका छीन ली थी। जब महाराजा मरण शय्या पर पड़ा हुआ था और उसको होश नहीं था, उस समय पोकरण के ठाकुर देवीसिंह चांपावत ने चारणों की जीविका पुनः बहाल करने का संकल्प महाराजा के हाथ से करवा कर संकल्प का जल अपने हाथ पर भेल लिया, जिससे पीछी उनकी जीविकाएं उनको मिल गईं। उसने अपने आश्रितों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया। पिता को मारकर वह अपने हाथ पहले ही रंग चुका था। फिर राजा होते ही उसने और भी बुरे काम किये, जिनका ब्याप्तो आदि में जगह-जगह उल्लेख मिलता है। महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास उसके संबन्ध में अपनी पुस्तक “वीरविनोद” में लिखता है—“यह महाराजा अव्वल दर्जे के बहादुर, सन्नत मिज़ाज, ज़मीन के लोभी, ज़ालिम, फैयाज़ और दगाबाज़ थे। क़ौल का क़याम अपने मतलब के साथ रखते थे। इनके थोड़े से राज्य करने से ही मारवाड़ी लोगों के नाक में दम आ गया था। इसने कई लोगों के हाथ पैर कटवाये और अक्सर को मरवा डाला। ईश्वर ऐसे बेरहम राजा के हाथों में लाखों मनुष्यों का इन्तज़ाम ज़्यादा नहीं रखता।”

बारहवां अध्याय

महाराजा विजयसिंह से महाराजा मानसिंह तक

विजयसिंह

महाराजा विजयसिंह का जन्म वि० सं० १७८६ मार्गशीर्ष वदि ११ (ई० सं० १७२६ ता० ६ नवम्बर) गुरुवार को हुआ था । वि० सं० १८०६ (ई० सं० १७५२) में पिता का देहान्त होने पर वह मारोठ में उसका उत्तराधिकारी हुआ । अनन्तर उसी वर्ष माघ वदि १२ (ई० सं० १७५३ ता० ३० जनवरी) मंगलवार को जोधपुर जाकर वह वहां की गद्दी पर बैठा^१ ।

उन्हीं दिनों राजा किशोरसिंह (महाराजा अजीतसिंह का छोटा पुत्र) ने बनेड़ा के पहाड़ों से सेना एकत्र कर भिणाय पर कब्ज़ा कर लिया । मारोठ में रहते समय महाराजा बल्लसिंह ने राठोड़ केसरीसिंह बल्लसिंहोत (ऊदावत, रास) को राजगढ़ का ठिकाना देकर भाटी किशनसिंह (हठीसिंहोत) आदि कई सरदारों के साथ उधर भेजा था । उनके अजमेर के गांव न्याडावाघ में पहुंचने पर और लोग तो भाग गये, पर किशोरसिंह अपने साथियों के सहित खड़ा रहा, जिससे वह केसरीसिंह के हाथ से मारा गया^२ ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १ । टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०६० । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२१-२ ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १ ।

बल्लतसिंह के मरने के बाद रामसिंह ने एक बार फिर गया हुआ राज्य हस्तगत करने का उद्योग किया। इस कार्य की पूर्ति के लिए उसने मन्दसोर से वि० सं० १८१० में कृष्णवत खींचकर स्वयं प्रतहसिंहोत और सिंघवी जोरावरमल को चमार-गुंदा (इंदौर) में आपाजी सिंधिया के पास भेजा।

विजयसिंह का
रामसिंह के विरुद्ध गजसिंह
को सहायतार्थ बुलाना

उन्होंने उसे अपना सहायक बनाया और साथ ले मारवाड़ की तरफ प्रस्थान किया। मन्दसोर में पहुंचकर उन्होंने रामसिंह को अपने साथ ले लिया। इसकी सूचना मिलने पर विजयसिंह ने अपनी राणी शेखावत तथा कुंवरों प्रतहसिंह, भौमसिंह, सरदारसिंह आदि को जैसलमेर एवं राणी राणावत और कुंवर जालिमसिंह आदि को उदयपुर भिजवा दिया। वि० सं० १८११ (ई० सं० १७५४) में आपा के साथ रामसिंह ने जाकर कृष्णगढ़ को लूटा और वहां का अधिकार सावंतसिंह के पुत्र सरदारसिंह को सौंपा। वहां से पुष्कर होते हुए वे आलियावास पहुंचे और उसको लूटा। फिर उनका डेरा गंगारडा में हुआ। इस बीच महाराजा विजयसिंह के सैनिक मरहटों को यदा कदा तंग करते रहे^१।

उन दिनों बीकानेर का महाराजा गजसिंह अपनी सेना तथा जोधपुर के सरदारों के साथ हिसार में था। रामसिंह के मरहटों से मिलकर जोधपुर में उत्पात करने पर विजयसिंह ने गजसिंह को कहलाया कि आप शीघ्र सहायता को आवें। इसपर उस (गजसिंह) ने खींखसर के ठाकुर जोरावरसिंह (उदयसिंहोत) आदि कई सरदारों को ४००० सेना के साथ उसी समय खाना कर दिया और कुछ समय बाद वह स्वयं भी विजयसिंह से जा मिला। इसी बीच मरहटों की सेना के वज्र की ओर जाने का समाचार मिला। तब गजसिंह ने अपनी अनुपस्थिति में हिसार के परगने में उपद्रव होने की आशंका देख कुछ समय के लिए उधर जाना चाहा, परन्तु जोधपुर का उपद्रव शांत होने तक विजयसिंह ने उससे वहीं रहने

(१) जोधपुर राज्य की व्याप्त; जि० ३, पृ० १-२। सरकार; फ़ासल आंव दि मुगल एम्पायर; जि० २, पृ० १७५।

का आग्रह किया और कहा कि इधर से निवृत्त होकर हिसार पर फिर अधिकार कर लेंगे। इसपर गजसिंह वहीं ठहर गया और हिसार से बीकानेर का थाना उठा लिया गया।

अनन्तर गजसिंह ने बीकानेर से और सेना बुला ली। अब सब मिलाकर उसके पास ४०००० सेना हो गई। इसके अतिरिक्त ७००००

विजयसिंह की पराजय होना

फ़ौज विजयसिंह की थी तथा ५००० सेना के साथ किशनगढ़ का राजा बहादुरसिंह भी सहायतार्थ आया हुआ था। रामसिंह के पास इसके दूने से भी अधिक सेना थी। गजसिंह, विजयसिंह तथा बहादुरसिंह ने गंगारडा में ठहरी हुई शत्रु सेना पर तीन बार आक्रमण कर तोपों के गोलों की वर्षा की, जिससे शत्रु वहां से हटकर सात कोस दूर चौरासण गांव में चला गया। अपने सरदारों के परामर्शानुसार^१ वि० सं० १८११ आश्विन सुदि १३^३ (ई० सं० १७५४ ता० २६ सितम्बर) को फिर विजयसिंह ने अपने सहायकों के साथ शत्रु-सेना पर पहले से प्रबल आक्रमण किया। सदा की भांति ही जोधपुर की तरफ़ के राठोड़ों ने इस बार भी बड़ी वीरता का परिचय दिया, परन्तु शत्रु-सेना अधिक होने से उन्हें हारकर पीछा मेड़ता लौटना पड़ा। इस लड़ाई में

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६१। जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि बीकानेर का महाराजा इस अवसर पर विजयसिंह के साथ था (जि० ३, पृ० १-३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस लड़ाई के समय कई शकुनियों आदि तथा बहादुरसिंह, प्रेमसिंह (पाली), छत्रसिंह, दौलतसिंह आदि सरदारों ने देवीसिंह की मारकृत महाराजा को युद्ध करने से रोका था, पर उसने लड़ाई कर ही दी (जि० ३, पृ० २-३)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में आश्विन वदि १३ (ता० १४ सेप्टेम्बर) शनिवार दिया है (जि० ३, पृ० ५)। पंचांग से मिलान करने पर यह बार मिला जाता है।

संभव है दयालदास की ख्यात में लेखक दोष से वदि के स्थान में सुदि हो गया हो। “वीरविनोद” में भी आश्विन वदि १३ ही दी है (भाग २, पृ० ८५२)।

विजयसिंह की तरफ़ के बहुत से सरदार काम आये। बहादुरसिंह अपनी सारी सेना के कट जाने से कृष्णगढ़ लौट गया। सैन्य बहुत कम हो जाने से उस स्थल पर लड़ाई जारी रखना उचित न समझ विजयसिंह तथा गजसिंह भी नागोर चले गये।

(१) सरकार-कृत “काल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर” (जि० २, पृ० १७२-७६) में भी इस लड़ाई का वृत्तान्त दिया है, परन्तु उसमें दी हुई तारीख़ें भिन्न हैं।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार उसकी तरफ़ के मारे जानेवाले प्रमुख सरदारों के नाम नीचे लिखे अनुसार हैं—

(१) राठोड़ प्रेमसिंह राजसिंहोत—पाली (२) राठोड़ मोहकमसिंह पद्मसिंहोत—सरवाड़ (३) राठोड़ लालसिंह सहसमलोत—सथलाया (४) राठोड़ डम्मेदसिंह सूरजमलोत—धांधिया (५) राठोड़ जैतसिंह केसरीसिंहोत—मंडावा (६) राठोड़ बहादुरसिंह कनकसिंहोत—खाटू (७) राठोड़ लखधीर मुकन्दसिंहोत—वरणेल (८) राठोड़ भोमसिंह मुकुन्दसिंहोत—वरणेल (९) राठोड़ कीरतसिंह गोपीनाथोत—हेबतसर (१०) राठोड़ सवाईसिंह किशोरसिंहोत—मेरवास (११) राठोड़ नवासिंह पद्मसिंहोत—धामली (१२) राठोड़ जोरावरसिंह कुंपोत—समाडिया (१३) राठोड़ शुभकराय ज्ञानसिंहोत—गेठिया (१४) राठोड़ जोरावरसिंह नाहरखानोत—जैतपुर (१५) राठोड़ रायसिंह दुरजनसिंहोत—लूणवा (१६) राठोड़ सूरसिंह सांभवतसिंहोत—मारोठ (१७) राठोड़ मोतीसिंह जोधसिंहोत—मारोठ (१८) राठोड़ जुम्हारसिंह दीपसिंहोत—खारिया (१९) महेचा सरदारसिंह करणसिंहोत—थोब (२०) भाटी शुभकराय सूरसिंहोत—रामपुरा (२१) भाटी बल्लसिंह लाखावत—कंटालिया (२२) भाटी कीरतसिंह लाखावत—खारिया (२३) भाटी प्रेमसिंह मुकन्दसिंहोत—मोडावास (२४) भाटी महेशदास नाथावत—कीटणोद (२५) भाटी जैतसिंह डूंगरसिंहोत—पातां का बाड़ा।

(जि० ३, पृ० ५-६)

दयालदास की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में गजसिंह की तरफ़ के बीदावत इन्द्रभाण्य मोहकमसिंहोत (ककू), बीका कीरतसिंह किशनसिंहोत, नींबावत अखैसिंह नारायणदासोत आदि कई प्रमुख सरदार मारे गये (जि० २, पत्र ७६)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५२-३।

टॉड ने अपने ग्रन्थ “राजस्थान” में इस लड़ाई का विस्तृत वर्णन दिया है, जो

नागोर पहुँचने पर विजयसिंह ने वहाँ के गढ़ की मज़बूती कर उसमें

इस प्रकार है—

“रामसिंह के जयभापा के साथ मारवाड़ में प्रवेश करने पर विजयसिंह दो लाख सेना एकत्र कर शत्रु का सामना करने के लिए अग्रसर हुआ। पहले दिन केवल तोपों की लड़ाई हुई। दूसरा दिन भी ऐसे ही बीता और राठोड़ सेना की टुकड़ियों ने मरहटों का कई बार बिगाड़ किया। इसी बीच राठोड़ सेना ने मरहटों को परास्तकर लौटते हुए अपने ही सिलेपोशों को रामसिंह के सैनिक समझकर धोके में तोपों में गोलियाँ भरकर मौत के घाट उतार दिया। साथ ही एक घटना और हुई, जिससे राठोड़ों की जीत पराजय में परिणत हो गई। रूपनगर (कृष्णागढ़) के राज्य-वर्चित स्वामी ने, जो मरहटों की तरफ था, दूसरी ओर लड़ती हुई राठोड़ सेना में अपना एक सवार भेजा, जिसने यह प्रसिद्ध किया कि विजयसिंह तोप का गोला लगने से मर गया है, अतएव अब लड़ाई करना व्यर्थ है। यह सुनते ही राठोड़ों के हाथ-पैर ढीले पड़ गये और वे भाग निकले। इन दो घटनाओं से विजयसिंह का पक्ष कमज़ोर हो गया और उसने तथा उसके साथियों ने वहाँ से प्रयाण करना ही उचित समझा। गजसिंह और किशनगढ़ का राजा अपने-अपने स्थानों को लौट गये। विजयसिंह भी नागोर की तरफ चला, पर वह मार्ग भूल गया, जिससे उसने जालसिंह (रीया) को ठीक मार्ग तलाश करने को कहा, परन्तु वह इसकी उपेक्षा कर पूर्ववत् ही चलता रहा। खजवाना होता हुआ विजयसिंह देसवाल पहुँचा। चूंकि घोड़े थक गये थे और नागोर सोलह मील दूर था, अतएव विजयसिंह ने बिना अपना परिचय दिये एक जाट से पाँच रुपये में नागोर पहुँचा देना तय किया। जाट ने उसे बैलगाड़ी में बैठाकर पूरे वेग से अपने बैल दौड़ाये, पर इससे भी महाराजा को सन्तोष न हुआ और वह उससे बराबर अधिक वेग से हाँकने का आग्रह करता रहा। कई बार इन शब्दों के दुहराये जाने पर खीझकर अन्त में जब जाट से चुप न रहा गया तो उसने बिगाड़ कर उत्तर दिया—‘क्या हाँक-हाँक लगाई है? तुम कौन हो जो ऐसे भागे जा रहे हो? ऐसी मज़बूत बैलगाड़ी तो विजयसिंह के साथ मेड़ता में होनी चाहिये थी न कि इस प्रकार नागोर जाते हुए। ऐसा जान पड़ता है जैसे तुम्हारे पीछे दक्षिणी लगे हुए हों। अब चुप बैठना, क्योंकि मैं इससे तेज़ गाड़ी न चलाऊँगा।’ सुबह होने पर जब गाड़ीवान ने भीतर बैठी हुई सवारी को देखा तो वह महाराजा को पहचानकर अपने रात्रि के आचरण पर बड़ा लजित हुआ। नागोर पहुँचने पर पाँच रुपये देने के साथ ही विजयसिंह ने अविष्य में उसे और इनाम देने की प्रतिज्ञा की (राजस्थान; जि० २, पृ० ८६८-७० तथा १०६१-३)।” कुछ अन्तर के साथ जाट की बैलगाड़ी पर सवार हो महाराजा के नागोर जाने की कथा जोधपुर राज्य की कथात में भी मिलती है (जि० ३, पृ० १-७)।

शरण ली'। तब रामसिंह तथा जयआपा^२ ने वहां पहुंचकर ताऊसर में डेरा किया। अनन्तर मरहटों ने मोर्चाबन्दी कर रामसिंह आदि का नागौर को घेरना बि० सं० १८११ कार्तिक सुदि १५ (ई० स० १७५४ ता० ३१ अक्टोबर) गुरुवार को नागौर घेर लिया तथा ५०००० फौज के साथ जयआपा के पुत्र जनकू ने जोधपुर पर आक्रमण किया। उसका डेरा अभयसागर के पास हुआ। गढ़ में उस समय हरसोलाव का ठाकुर चांपावत सूरतसिंह, शोभावत गोयन्ददास, खींची सुन्दर आदि थे। जनकूजी के साथ की फौज ने कई बार आक्रमण किया, पर उसको भीतर प्रवेश करने का अवसर न मिला। इसी प्रकार जालोर तथा फलोधी पर भी आक्रमण हुए^३। विजयसिंह ने नागौर में रहकर शत्रु का

टोंड ने आगे चलकर (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६४ में) तीनों राजाओं (जोधपुर, बीकानेर एवं किशनगढ़) की पराजय के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्राचीन शोहा उद्धृत किया है:—

याद घणा दिन आवसी, आपावाली हेल ।

भागा तीनों भूपती, माल खजाना मेल ॥

(१) नागौर के निकट पहुंचने पर वहां के हाकिम प्रतापमल ने आगे जाकर महाराजा का स्वागत किया। अनन्तर सरदारों ने विजयसिंह से हाथी पर सवार होकर चलने की प्रार्थना की, परन्तु महाराजा ने उत्तर दिया कि मैं कौनसी विजयकर आया हूं, जो हाथी पर चढ़ूं। अन्त में सरदारों के विशेष अनुरोध करने पर महाराजा हाथी पर आरुढ़ हुआ और देवीसिंह (पोकरण) उसकी खवासी में रहा (जोधपुर राज्य की स्थात; जि० ३, पृ० ७)।

(२) सरकार-कृत “क्राल ऑव् दि मुगल एम्पायर” से पाया जाता है कि पेशवा ने जयआपा को चतुराई का आश्रय लेकर मारवाड़ का मामला शीघ्र निपटाने को कहा था। वह चाहता था कि विजयसिंह और रामसिंह में राज्य बांटकर वह मामला बिना अधिक लड़ाई के तय कर दिया जाय, पर जयआपा ने इसके विरुद्ध विजयसिंह को हराने का निश्चय स्थिर रखला (जि० २, पृ० १७६-७८)।

(३) “क्राल ऑव् दि मुगल एम्पायर” में ई० स० १७५५ ता० २१ फरवरी को मरहटों की एक टुकड़ी का अजमेर पर भी आक्रमण करना लिखा है (सरकार-कृत; जि० २, पृ० १७८)।

वीरतापूर्वक सामना किया, पर व्यर्थ होनेवाले धन-जन की हानि को रोकने के लिए अन्त में उसने महाराणा राजसिंह (द्वितीय) को लिखकर सन्धि कराने के लिए उदयपुर से चूड़ावत रावत जैतसिंह कुबेरसिंहोत (सलुंबर) को बुलाया। जैतसिंह ने नागौर जाकर जयआपा से समझौते के संबंध में बातचीत की, परन्तु कोई परिणाम न निकला^१।

मरहटों का नागौर के चारों ओर बड़ा कड़ा घेरा था। बेरसद पहुंचानेवालों के नाक-हाथ काट लेते थे। इससे महाराजा को बड़ा दुःख होता था। ऐसी स्थिति में खोखर केसरखां तथा जयआपा का मारा जाना एक गहलोत सरदार ने व्यर्थ प्राण गवाने से आपा को मारकर मरना अच्छा समझा और उसके लिए महाराजा की अनुमति मांगी। महाराजा ने भी इस कार्य के एवज़ में उन्हें दस-दस हजार का पट्टा देना स्वीकार किया। तब दोनों ने मेल करानेवालों के साथ जाकर दक्षिणियों की छावनी में दुकान लगाई। एक दिन उपयुक्त अवसर पाकर आपस में लड़ते हुए उन्होंने आपा के निकट जाकर उसे मार डाला^२, पर

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५३। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६२।

“काल ऑफ़ दि मुगल एम्पायर” से पाया जाता है कि ई० स० १७५५ के मार्च में ही नागौर में जल का अभाव और अकाल के कारण खाद्य पदार्थों की मंहगाई के सबब लोग नागौर छोड़कर जाने लगे। तब महाराजा ने गुसाईं विजयभारती को भेजकर मरहटों के साथ सन्धि करना चाहा, लेकिन जयआपा ने ५० लाख की रकम मांगी, जिससे वह चर्चा स्थगित रही। इस बीच जयआपा के दल में भी जल का अभाव होने पर वह ताऊसर में जा ठहरा। क्रूरवरी मास के अन्त में मल्हार और सखाराम बापू तथा मार्च के प्रारम्भ में रघुनाथराव ने उसकी मदद को जाना चाहा तो उसने इसे अनावश्यक बता उन्हें खौटा दिया (सरकार-कृत; जि० २, पृ० १७८-९)।

(२) जयआपा की स्मारक छत्री नागौर से ३ मील दक्षिण में विद्यमान है।

जयआपा के मारे जाने के सम्बन्ध में मिश्र-मिश्र पुस्तकों में मिश्र-मिश्र वर्णन मिलते हैं। साथ ही उनमें आपा को मारनेवालों के नाम भी मिश्र-मिश्र दिये हैं। “तयारी-क-

वे भी जीवित न बचे और मारे गये। यह खबर फैलते ही मरहटे बड़े कुछ हुए और उन्होंने बड़े भीषण वेग से विजयसिंह के राजपूतों पर आक्रमण किया। इसी लड़ाई में सलूबर का रावत जैतसिंह एवं चौहान राजसिंह अपनी सेना-सहित वीरतापूर्वक लड़ते हुए व्यर्थ मारे गये। उधर जयपुर का महाराजा माधोसिंह भी इस उद्योग में था कि जोधपुर का राज्य रामसिंह को मिले तो अपने यश में वृद्धि हो, परन्तु इसी बीच विजयसिंह के पास से आदमी आ जाने से उसने उसकी सहायता करना निश्चयकर बीकानेर से भी सेना मंगवाई, जो मेहता बरूतावरसिंह की अध्यक्षता में डीडवाणे में जयपुर की सेना के शामिल हो गई। मरहटों ने इसकी सूचना पाते ही उस फौज को घेरकर उसका आगे बढ़ना रोक दिया। इस प्रकार उधर से आई हुई सेना की सहायता से भी विजयसिंह को घंचित रहना पड़ा। जब चौदह मास तक भी घेरा न उठा तो अपने सरदारों से सलाहकर विजयसिंह एक रात्रि को एक हजार सवारों के साथ गड़ छोड़कर बीकानेर की ओर रवाना हो गया और ३६ घंटे में देशणोक जा पहुँचा।

इ.आलमगीर सानी" एवं हरिचरणदास-कृत "चहार गुलज़ार शुजाअत" के आधार पर सरकार ने अपनी पुस्तक "फ़ाज ऑब् दि मुग़ल एम्पायर" में मेल करानेवाले व्यक्तियों के साथ गये हुए राठोड़ों (राजपूतों) के साथ कहासुनी हो जाने पर जयआपा के महाराजा के प्रति अपशब्द व्यवहार करने से क्रुद्ध होकर उनका उसको मार डालना लिखा है (जि० २, पृ० १८०-१) परन्तु फ़ारसी तबारीज़ों का कथन सन्दिग्ध ही है। "चहार गुलज़ार" में जयआपा का सिर काटकर बचे हुए तीन राजपूतों का उसे लेकर बख़्तसिंह के पास जाना लिखा है (इजियट; हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया; जि० ८, पृ० २१०), पर उस समय तो जोधपुर का शासक विजयसिंह था। सरकार ने मारनेवालों को राठोड़, फ़ारसी तबारीज़ों में राजपूत और "वंशभास्कर" में ईदा (पकिहार) लिखा है। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ कथन ही अधिक माननीय है।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७१। वीरविनोद; भाग २, पृ० २०५-६। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८-१०। पाठलेट; नैज़ेटियर ऑब् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ९२।

सरकार-कृत "फ़ाज ऑब् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जयपुर तथा

विजयसिंह के आगमन का समाचार बीकानेर पहुंचने पर गजसिंह ने उसके आदर-सत्कार का समुचित प्रबंध किया और मेहता रघुनाथसिंह

विजयसिंह का बीकानेर से
गजसिंह के साथ
जयपुर जाना
आदि कई व्यक्तियों को उसका स्वागत करने के लिए भेजा। अनन्तर परस्पर मिलकर शत्रु पर आक्रमण करने के पूर्व माधोसिंह की सहायता पाना

आवश्यक समझ गजसिंह तथा विजयसिंह जयपुर गये। वहां करौली के महाराजा गोपालसिंह तथा बूंदी के राधाराजा कृष्णसिंह से उनकी भेंट हुई। कुछ ही समय बाद माधोसिंह के यहां पुत्र उत्पन्न होने से उत्सव आदि के कारण उनके रहने की अवधि बढ़ती गई और जिस कार्य के लिए वे गये थे उसके संबंध में कोई बात न हुई। एक दिन उपयुक्त अवसर देखकर विजयसिंह की सहायता की चर्चा गजसिंह ने माधोसिंह के आगे की, पर उसने कोई ध्यान न दिया। फिर जब उसने मेहता भीमसिंह आदि को इस संबंध में स्पष्ट उत्तर मांगने के लिए भेजा तो माधोसिंह की इच्छानुसार हरिहर बंगाली ने कहा कि यदि विजयसिंह को सहायता दी गई तो जयपुर को मरहटों से लोहा लेना पड़ेगा, जिसमें एक करोड़ रुपया खर्च होगा। इतना रुपया विजयसिंह दे तो उसे सहायता दी जा सकती है। यह उत्तर पाकर गजसिंह तथा विजयसिंह वहां व्यर्थ समय गंवाना उचित न समझ माधोसिंह से विदा प्राप्त करने गये। उस समय माधोसिंह ने गजसिंह को एकान्त में ले जाकर, दोनों राज्यों की पारस्परिक मैत्री का स्मरण दिलाते हुए कहा कि आपके राज्य के फलोधी आदि के ८४ गांव, जो

अन्य पड़ोसी राज्यों से सहायता मंगवाने के अतिरिक्त महाराजा ने दिल्ली में बादशाह के पास भी सहायतार्थ अपने आदमी भेजे और मरहटों को निकालने के एवज में दस हजार रुपया प्रति दिवस लड़ाई के समय देने का इत्तफाक किया, परन्तु वहां से कोई सहायता न आई। इधर हसी गीच जयसलमेर, पोकरण और जोधपुर तथा जयपुर के सरदारों के साथ आई हुई सेनाओं को मरहटों ने हराया। साथ ही पेशवा ने भी और सहायक सेना भिजवाई। इन सब कारणों एवं अकाल पड़ जाने के कारण जब गद में अधिक टिक सकना कठिन हो गया तो ई० स० १७५५ ता० १२ नवंबर को विजयसिंह अपने चार सौ अनुयायियों सहित नागौर से निकल गया (जि० २, पृ० १८२-७)।

अजीतसिंह ने जोधपुर राज्य में मिला लिये थे वे सब मैं रामसिंह से कह कर वापस दिला दूंगा। रहा विजयसिंह उसका प्रबंध यहां कर दिया जायगा (मरवाया या कैद कर दिया जायगा), परन्तु गजसिंह ने यह घृणित प्रस्ताव स्वीकार करने से इनकार कर दिया। माधोसिंह ने फिर भी बहुत ज़ोर दिया, पर वह अपने निश्चय पर स्थिर रहा। तब माधोसिंह ने उसका विवाह करने के बहाने उसे वहां रोकना चाहा, पर उसने यही उत्तर दिया कि पहले विजयसिंह को अपने राज्य की सीमा तक पहुंचा दूं, तब लौट सकता हूं। फिर माधोसिंह ने गजसिंह से कहा कि आप पधारें, मैं विजयसिंह से बातें कर लूं। गजसिंह के मन में उसकी बातों से शंका तो पैदा हो ही गई थी, उसने उसी समय प्रेमसिंह किशनसिंहोंत बीका तथा हठीसिंह वणीरोत को विजयसिंह की रक्षा पर नियुक्त कर दिया^१।

विजयसिंह के पक्ष का रीयां का ठाकुर जवानसिंह सूरजमलोत, जयपुर के नाथावतों के यहां ब्याहा था। उसकी स्त्री ने जवानसिंह को उसके स्वामी (विजयसिंह) पर चूक होने की सूचना ठीक समय पर दे दी। इसपर वह विजयसिंह को, जो उस समय माधोसिंह से बातें कर रहा था, सावधान करने के लिए गया। माधोसिंह ने लघुशंका करने के बहाने वहां से हटना चाहा, परन्तु उसी समय बीकानेर के पूर्वोक्त ठाकुरों ने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे बैठा दिया और कहा कि हमें

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७६-८१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ४०६। पाउलोट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६२-३।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि पहले विजयसिंह का पक्ष ग्रहण कर माधोसिंह दक्षिणियों से लड़ा था; पर बाद में सरदारों के यह समझने पर कि रामसिंह को जयपुर की कुंवरी ब्याही है, अतएव उसका साथ देने से उसपर एहसान ही रहेगा वह दक्षिणियों का पक्षपाती हो गया। उसने उनसे कहा कि यदि मेरे साथ तीन हज़ार फौज दी जाय तो मैं विजयसिंह को गिरफ्तार करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लेने को तैयार हूं (जि० ३, पृ० ११)।

आशंका है, अतएव आप न जावें । इसपर जयपुर के ठाकुर उनपर आक्रमण करने को उद्यत हुए, परन्तु माधोसिंह के मना करने से वे रुक गये । विजयसिंह भी पूर्वोक्त ठाकुरों के कहने पर गजसिंह के पास चला गया । अनन्तर उन ठाकुरों ने माधोसिंह से अपने आचरण की क्षमा मांग ली । गजसिंह ने भी मेहता बल्लुवरसिंह को उसके पास भेजकर उसे प्रसन्न कर लिया । फिर अपने जयपुर लौट आने तक के लिए मेहता भीमसिंह आदि को वहाँ छोड़कर गजसिंह ने विजयसिंह के साथ प्रस्थान किया ।

पाटण, पंचेरी और लोहारू होते हुए वे दोनों रिंणी पहुंचे, जहाँ नागोर से समाचार पहुंचा कि वि० सं० १८१२ माघ सुदि २ (ई० स०

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८१-२ । बीरबिनोद; भाग २, पृ० ५०६ । पाडलेट; गैज़ेटियर ऑब् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६३-४ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का कुछ भिन्नता के साथ वर्णन मिलता है, जो इस प्रकार है—

“एक दिन महाराजा विजयसिंह माधोसिंह से मिलने गया । वहाँ बाई (एजन-कुंवर किशनगढ़ के राजा की पुत्री थी, जो माधोसिंह को ब्याही थी) ने उससे कहा कि अब यहाँ आही गये हो तो कड़वाहों से सतर्क रहना; क्योंकि इनकी नीयत साफ़ नहीं दिखाई पड़ती । पीछे जब रीयां के ठाकुर जवानसिंह को धोखे की खबर मिली तो वह माधोसिंह के पास जा बैठा और उसने महाराजा (विजयसिंह) से डरे पर जाने के लिए कहा । महाराजा ने जब अपने डरे पर पहुंच जाने की खबर उसके पास भिजवाई तो वह भी उठकर उसके पास चला गया । अनन्तर दोनों दूसरे राजपूतों सहित माधोसिंह के घोड़ों पर चढ़ वहाँ से रवाना हो गये । उन्होंने गजसिंह से भी आने को कहा, परन्तु वह विवाह करने के लालच से वहीं ठहरा रहा । तंबरों की पाटण होता हुआ विजयसिंह झूमण पहुंचा, जहाँ भोपालसिंह ने उसका अस्वास्त्कार किया । वहाँ से वह सोनोर पहुंचा । कड़वाहों की पीछे आती हुई सेना डीङ्-वाया से वापस चली गई (जि० ३, पृ० ११-२) । टोंड में भी ख्यात जैसा ही इस घटना का वर्णन दिया है (राजस्थान; जि० २, पृ० ८७२-३) ।

इस संबंध में ऊपर आया हुआ दयालदास का कथन ही अधिक माननीय है । जोधपुर राज्य की ख्यात में गजसिंह द्वारा विजयसिंह की प्राण-रक्षा होने की बात ज़िपाई गई जान पड़ती है ।

मरहटों के साथ सन्धि
स्थापित होना

१७५६ ता० २ फ़रवरी) को मरहटों से संधि हो जाने के कारण उन्होंने अपना घेरा उठा लिया है'।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मरहटों से सन्धि जोधपुर के दो सरदारों—सिंघवी क़तहचंद तथा देवीसिंह महासिंहोत—के उद्योग से हुई थी। इसके अनुसार जोधपुर, नागोर, मेड़ता आदि मारवाड़ का आधा राज्य विजयसिंह को तथा जालोर, मारोठ, सोजत आदि आधा राज्य रामसिंह को मिला एवं लड़ाई बन्द करने के एवज़ में ५१००००० रुपये^१ तथा अजमेर का इलाक़ा मरहटों को देना तय हुआ^२। इस समाचार से बड़ी प्रसन्नता हुई तथा ग़जसिंह ने बहुत सा सामान भेंट में देकर विजयसिंह को जोधपुर भेजा, जहां पहुंचने पर उसने बक़तसिंह-द्वारा तारीफ़ किये हुए ५२ गांवों की सनद तथा सवा लाख रुपये नक़द भेजे, जैसी कि उसने बीकानेर में रहते समय प्रतिज्ञा की थी^३।

इसके कुछ समय बाद वि० सं० १८१३ (ई० सं० १७५६) में

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८२। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इसमें से कुछ रुपये तो उसी समय दे दिये गये और शेष के एवज़ में क़तहचंद का भाई सिंघवी बुधमल तथा अन्य कई व्यक्ति ओल में दिये गये (जि० ३, पृ० १२)। दयालदास की ख्यात के अनुसार यह रक़म २०००००० रुपये थी (जि० २, पत्र ८१)। सरकार ५०००००० खिलता है। उसके अनुसार इस रक़म का आधा एक साल में और शेष आधा अगले दो वर्षों में देना तय हुआ (फ़ाल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १८८)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२। सरकार; फ़ाल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १८८। इसी पुस्तक से पाया जाता है कि ऊपर दी हुई अन्तिम शर्त के अतिरिक्त दूसरी दो शर्तों का पालन नहीं हुआ। मरहटों को दी जाने वाली रक़म बहुत अधिक होने से ई० सं० १७५७ के जून मास में जब मरहटों की तरफ़ से रघुनाथ राजपूताने में गया तो जोधपुर के मंत्रियों ने उसके पास उपस्थित हो शर्तों में कुछ कमी करने की प्रार्थना की, परन्तु उसने सिंधिया के मामलों में हस्तक्षेप करना उचित न समझा (जि० २, पृ० १६३-४)।

(४) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८१। पाउलेट; गैज़ेटियर, ऑफ़

जोधपुर राज्य में बड़ा भीषण अकाल पड़ा। रामसिंह अपनी सुसराल भलाय (जयपुर) चला गया। उसकी अनुपस्थिति में जोधपुर के सरदारों ने जालोर, सोजत, मेड़ता आदि रामसिंह को दिये हुए परगनों पर अधिकार करने का इरादा प्रकट किया। पोंकरण के ठाकुर

विजयसिंह के मेड़ता आदि पर अधिकार करने के कारण मरहटों की पुनः चढ़ाई

देवीसिंह ने यह कहकर इसका विरोध किया कि हमने मरहटों से एक वर्ष का वादा किया है, जिसमें अभी पांच मास और शेष हैं, अतएव इतनी अवधि तक हमें शांत रहना चाहिये; परन्तु अकाल की तकलीफों के कारण जोधपुर के सरदारों की हालत दिन-दिन बिगड़ रही थी, जिससे उन्होंने महाराजा की आज्ञा प्राप्तकर आक्रमण कर ही दिया और वहां उनका अधिकार हो गया। इसकी खबर पाकर मरहटों बड़े अप्रसन्न हुए तथा जनकोजी ने स्वयं चढ़ाई करने का विचार किया, परन्तु पीछे से खानूजी जादव (यादव) उसकी आज्ञा पाकर अपनी एवं रामसिंह की सम्मिलित फ़ौज के साथ मेड़ते गया। इस अवसर पर पोंकरण के देवीसिंह ने उसका विरोध न किया। इस तरह जोधपुर के सरदारों के दो दल हो गये—एक महाराजा के पक्षमें और दूसरा उसके विपक्ष में। ऐसी दशा में राज्यभक्त सरदारों ने महाराजा को आने को लिखा। उसने सरदारसिंह- (दुगोली), रघुनाथ नरसिंहोत आदि के साथ ससैन्य जाकर कई जगह विरोधी सरदारों एवं मरहटों की सेनाओं को परास्त किया तथा पीसांगण आदि से पेशकशी वसूल की। कुछ दिनों बाद जब उसने देखा कि उसकी तरफ़ लोगों की कमी है और जितने व्यक्ति उसके साथ हैं, उनकी व्यर्थ जानें गंवाना भी ठीक नहीं हैं, तो उसने आसोप में रहते समय रघुनाथसिंह, सुरताणसिंह आदि कई व्यक्तियों को भेजकर मरहटों से सन्धि की बात की। जनकूजी, दत्तूजी आदि ने बात तयकर रामसिंह को जितनी भूमि दिलाई थी वह उसे वापस दिलवाई गई, जिसके दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६४ (इसमें केवल ४२ गांवों की सनद भेजना लिखा है)।

जोधपुर राज्य की ह्यात में इसका उल्लेख नहीं है।

अनुसार जालोर, मेड़ता आदि विजयसिंह को खाली कर देने पड़े ।

इसी बीच जोधपुर में कुछ सरदार मनमानी करने लगे । इसकी सूचना पाकर, मरहटों के साथ पुनः सन्धि स्थापित होने के बाद महाराजा ने जोधपुर की तरफ प्रस्थान किया । उन दिनों महाराजा का उपद्रवी बावरियों को मरवाना बावरियों के झुंड धाड़े मारकर बड़ा नुक़सान करते थे । उनमें नींबाज के बावरी मुख्य थे । बावरी पांचिया के झुंड के गांव कुडछीधणा को लूटकर वाघोरिया के पहाड़ में छिप जाने की खबर पाने और उस संबंध में फ़रियाद होने पर ज्योढ़ीदार अणदू, कछवाहा जैसा आदि को नागोर के आसामियों के साथ उनका प्रबंध करने के लिए भेजा । वे उन्हें समझा-बुझाकर उनके मुखियों को साथ ले आये, जिन्हें इशारा पाते ही सिलेपोशों ने मार डाला । इस प्रकार उस दिन से देश में बावरियों का उत्पात बंद हुआ । यह समाचार जब नींबाज के कल्याणसिंह के पास पहुंचा तो वह बहुत नाराज़ हुआ ।

वि० सं० १८१४ (ई० सं० १७५७) के फाल्गुन मास में विजयसिंह जोधपुर पहुंचा । उस समय कुछ सरदारों ने जाने की आज्ञा मांगी, जिसके न मिलने पर भी ठाकुर देवीसिंह (दोकरण), ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज), ठाकुर छतरसिंह (पाली), जगतसिंह तथा भाटी दौलतसिंह अपने-अपने ठिकानों को चले गये^३ ।

इन्हीं दिनों मारवाड़ के कितने एक सरदार उपद्रवी हो गये । छोटी खाट्ट का ज़ालिमसिंह, मगरासर का नारणोत हठीसिंह तथा डीड-वाणा के पास शेखावत और आथूणी की तरफ़ करमसोत लूट-मार करने लगे । इसपर उनका दमन करने के लिए नागोर से सेना भेजी गई ।

उपद्रवी सरदारों से
दंड वसूल करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३-१६ ।

(२) वही; जि० ३, पृ० १६ ।

(३) वही; जि० ३, पृ० १६-१७ ।

इससे भी जब सरदारों का उपद्रव शांत न हुआ तो धायभाई जंगू इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया। अन्य सरदारों ने जब उसके साथ जाना स्वीकार नहीं किया तब अकेले ही पांच हजार फौज एकत्र कर उसने कुछ सरदारों पर चढ़ाई की और बड़ी खाटू, भाड़ोद, मगरासर आदि ठिकानों और शेखावतों, लाडखानियों आदि से दंड वसूल किया। इसके बाद वह जोधपुर लौट गया।

मरहटों के साथ की हुई सन्धि के विपरीत महाराजा की अनुमति से उसके सरदारों ने रामसिंह की अनुपस्थिति में उसको मिले हुए इलाकों

पर कब्ज़ा कर लिया था। इससे पोकरण का ठाकुर देवीसिंह नाराज़ होकर अपने ठिकाने में बैठ रहा

महाराजा का विरोधी सर-
दारों को राजी करना

था। वि० सं० १८१५ में महाराजा ने दो बार अपना

आदमी भेजकर उसे बुलाया, पर वह गया नहीं और उसने कहला दिया कि महाराजा को तो रास का ठाकुर केसरीसिंह प्रिय है, उसको मेरी क्या आवश्यकता? तब महाराजा ने केसरीसिंह को उसे लाने के लिए भेजा, पर वह भी नाकामयाब रहा। इसी बीच ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज) का देहांत हो जाने पर बिना महाराजा की आज्ञा के ही केसरीसिंह का पुत्र दलसिंह वहां गोद चला गया। इससे महाराजा को बड़ा असन्तोष हुआ, जिससे केसरीसिंह (रास), ठाकुर मदनसिंह (जाबला) और हाड़ा दलसिंह भी उसका साथ छोड़कर चले गये और मंडोवर में ठहरे। इसकी खबर मिलने पर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद तथा पीपाड़ का ठिकाना देकर गोयन्ददास को उधर भेजा। कुछ समय बाद जगतसिंह (पाली), छत्रसिंह (आसोप), उदयसिंह (भाद्राजूण) तथा भाटी दौलतसिंह (लबेरा) भी महाराजा से विदा मांग नींबाज में केसरीसिंह के शामिल हो गये और उन्होंने रामसिंह से पत्रव्यवहार किया। यह समाचार पाकर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद को नींबाज भेजा, जो वि० सं० १८१६ (ई० सं० १७५६) में विरोधी सरदारों को अपने साथ ले जोधपुर के बल्लसागर

पर आया। महाराजा ने उनसे अपनी-अपनी हवेलियों में डेरा करने के लिए कहलाया तो उन्होंने उत्तर दिया कि आजकल धायभाई की बात मानी जाती है, यदि उसका वचन विलाया जाय तो हम सब हवेलियों में जाकर ठहरें। इसपर कह-सुनकर महाराजा ने धायभाई जगा को सरदारों के पास भेजा, जो देवीसिंह के डेरे पर बैठे थे, पर उचित आदर-सत्कार न होने से वह नाराज़ होकर वापस लौट गया। सरदार वहां से कूचकर गांव बणाड़ चले गये। तब जोधा रघुनाथसिंह, चांपावत सूरतसिंह और सिंघवी फ़लहचंद पुनः उनके पास भेजे गये। उन्होंने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया, पर सरदारों का क्रोध शान्त न हुआ। सरदारों ने कहा कि महाराजा की भूमि तो स्वामी आत्माराम रक्खेगा और उसे तो धायभाई की ज़रूरत है हमारी नहीं। अनन्तर वे वहां से कूचकर वीसलपुर गये। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उनसे बात की और वह उनका समाधान कर उन्हें अपने साथ जोधपुर ले गया, जहां वे अपनी-अपनी हवेलियों में ही ठहरें।

उसी वर्ष फाल्गुन वदि १ (ई० स० १७६० त० २ फ़रवरी) को महाराजा के गुरु स्वामी आत्माराम का देहान्त हो गया, जिसका महाराजा को बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि वह उसकी बड़ी भक्ति करता था। इसपर खींची गोवर्द्धन ने सरदारों को कहलाया कि महाराजा बड़ा उदास है, आप मिट्टी देने को आवें। तब देवीसिंह (पोरण), केसरीसिंह- (रास), छत्रसिंह (आसोप), भगवंतसिंह, रघुनाथसिंह तथा जवानसिंह वहां गये। उनके साथ के आदमी बाहर ही रोक दिये गये और फिर राणियों के आत्माराम की मृत देह का आखिरी दर्शन करने के लिए आने के बहाने फाटक का द्वार बन्द कर दिया गया। इतने में नौबाज का ठाकुर दलजी आया, जो हमरती पोल की खिड़की के मार्ग से भीतर गया, पर आगे लोहापोल के बन्द होने से वह वहीं बैठ गया। महाराजा सूरजपोल तक आत्माराम की अर्थी के साथ गया, इसके बाद सरदारों ने उसे सान्त्वन्त

(१) जोधपुर राज्य की स्थापना; जि० ३, पृ० २०-२२।

देकर पीछा भेज दिया, जिसपर वह शृंगार चौकी पर जाकर खड़ा हो गया। वहां एकान्त देख धायभाई ने उससे निवेदन किया कि इस समय सरदारों को गिरफ्तार करने का अच्छा मौका है, क्योंकि वे अकेले ही हैं। खींची गोवर्द्धन ने भी जब इस बात का अनुमोदन किया तो महाराजा ने यह कहकर एक प्रकार से अपनी सम्मति दे दी कि जो अच्छा समझो करो। तब उनके कहने से ड्योढ़ीदार गोयन्ददास महाराजा को ढाढ़स देने के बहाने उन्हें बुलाने गया। रघुनाथसिंह (नाहरसिंहोत) और जयानसिंह (सूरज-मलोत) तो कुछ आगे रवाना हो गये। पीछे से देवीसिंह, केसरीसिंह तथा छत्रसिंह ने भी, भगवन्तसिंह को आने के लिए कहकर प्रस्थान किया। नगरखाने की पोल से जाते समय जब उन्होंने लवापोल को बन्द देखा तो देवीसिंह ने कहा कि आज का दिन तो बड़ा भयावना प्रतीत होता है। केसरीसिंह ने उत्तर दिया कि कुछ नहीं केवल तुम्हारा भ्रम है। इसके बाद वे जनानी ड्योढ़ी से आगे बढ़े ही थे कि उन्हें वहां छिपे हुए राज्य के आदमियों ने निकलकर पकड़ लिया। गोयन्ददास ने, जो कुछ पीछे आ रहा था, जब बीच-बचाव करने की कोशिश की तो धायभाई के इशारे से वह भी पकड़ लिया गया। रास के ठाकुर केसरीसिंह का पुत्र दौलतसिंह, जो नाँबाज गोद गया था, पीछे से पहुंचा था और लवापोल बन्द देख बाहर ही बैठ गया था। भीतर हल्ला सुनकर वह बाहर चला तो भावसिंह ने उसे रोका, जिसपर दोनों ने एक दूसरे के घाव किये। अनन्तर दोनों द्वार खोल अन्दर ले लिये गये, जहां महाराजा ने दौलतसिंह की मरहमपट्टी करने की आज्ञा दी। अनन्तर उसका प्रबन्ध (क़ैद) किया गया। देवीसिंह, केसरीसिंह और छत्रसिंह भी क़ैद में डाल दिये गये। देवीसिंह ने क़ैदखाने में अफ-जल प्रहण करना छोड़ दिया। क़ैद की ही हालत में तीनों क्रमशः छः दिवस, तीन साल तथा एक मास बाद मर गये। दौलतसिंह पीछे से मुक्त कर दिया गया। अनन्तर महाराजा ने बीकानेर से राठोड़ कनीराम रामसिंहोत को बुलाकर आसोप और बड़लू का पट्टा उसके नाम लिख दिया।

देवीसिंह की मृत्यु का उसके पुत्र सबलसिंह को बड़ा दुःख हुआ और वह फ़ौज-सहित पाली गया, जहां उसके पास चांपावतों, कूंपावतों, उदावतों, भाटियों आदि की दस हजार सेना एकत्र विरोध करने के लिए एकत्र हुई। तब उनके विरुद्ध जोधपुर से पांच हजार हुए सरदारों पर सेना भेजना फ़ौज के साथ धायभाई जगा रवाना हुआ। नागौर से दो हजार फ़ौज आसोप कायम कर बड़लू पहुंची, जहां के स्वामी ने कुछ दिनों तक तो उसका सामना किया, परन्तु इसके बाद एक रोज़ रात्रि के समय वह वहां से निकल गया। फिर वह फ़ौज पीपाड़ गई। धायभाई के प्रस्थान करने का समाचार सुनकर सबलसिंह ने लड़ाई करने की इच्छा प्रकट की, पर पीछे से पाली के जगतसिंह ने इस कार्य की हानि दिखलाकर उसको लड़ने से मना किया, जिससे उस समय लड़ाई न हुई।

उन्हीं दिनों जोधपुर में भाखरसिंह (रायपुर) ने महाराजा से कहा कि यदि पीपाड़ की फ़ौज मेरे साथ की जाय तब दो भारी तोपें दी जायें तो मैं नींबाज खाली करालूं। इसपर फ़ौज तथा महाराजा का सेना भेजकर मेड़ता पर कब्जा करना वागण, नागण एवं अडगबाण नाम की तीन तोपों के साथ वह उधर रवाना हुआ। वहां पहुंचकर उसने एक तरफ़ मोर्चा लगाया। उसका पुत्र केसरीसिंह भी सात सौ फ़ौज के साथ उसके शामिल हो गया और सारा प्रबंध करने लगा। इस बीच बालू जोशी, जो जयपुर गया हुआ था, वहां से लौटता हुआ मेड़ते पहुंचा। जब उसने उस स्थान को खाली देखा तो जाकर इसकी सूचना महाराजा को दी और यह कहकर उसे मेड़ते पर अधिकार करने की सलाह दी कि रामसिंह को लेकर सरदार उधर आरहे हैं, जिनका वहां

पृ० ८२४। इस सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है:—

केहर देषो छत्रसल, दौलो राजकुमार ।

मरते मोड़े मारिया, चोटीवाला चार ॥

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २६।

क्रुद्ध होना अपने लिए हानिकर होगा। इसपर महाराजा ने उसे ही ड़धर जाने की अनुमति दी। नौबाज पहुँचकर उसने पंचोली रामकरख एवं खींची शिवदान से सलाह कर वहाँ से घेरा हटवा दिया। अनंतर जैतारण में कुछ तोपें रखता हुआ वह कालू पहुँचा। वहाँ रहनेवाले फ़तहसिंह रामसिंहों को जब निश्चय हो गया कि जोधपुर की सेना मेड़ता जा रही है तो उसने इसकी सूचना तत्काल पंडित के पास, जो एक सौ दक्षिणी सवारों के साथ वहाँ रहता था, भिजवाई, पर इतनी शीघ्रता में फ़ौज एकत्र करना असंभव था। इतने में तो जोधपुर की सेना वहाँ जा पहुँची और सफ़ील के उपर चढ़कर भीतर घुस गई। ऐसी स्थिति में पंडित भागकर मालकोट में चला गया। अनन्तर देराणी दरवाज़ा खोलकर सारी सेना भीतर घुस गई और उसने एक पहर तक मेड़ता में खूब लूट मचाई। फिर जगह-जगह सरदारों के पास परवाने भेजे जाने पर राठोड़ सरदारसिंह (नौबडी), राठोड़ बख़्शीराम (नोखा), राठोड़ सुलतानसिंह (कूपड़ावास) आदि मेड़ता में उपस्थित हो गये^१।

रामसिंह उस समय हरसोर में था। मेड़ते पर जोधपुर का क्रुद्ध होनेकी ख़बर पाकर उसने मेड़तियों, चांदावतों, चांपावतों, ऊदावतों आदि

की सत्रह हज़ार सेना एकत्र कर वहाँ से कूच किया और मेड़ता पहुँचकर मालकोट में ठहरा।

मेड़ते को घेरकर उसने कई बार आक्रमण कर भीतर प्रवेश करने का प्रयत्न किया, परन्तु गढ़ के भीतर के लोगों के सतर्क रहने के कारण उसे सफलता न मिली। अनन्तर गढ़ के रक्षकों ने धाय-भाई के पास रामसिंह के घेरे की सूचना भेजकर उससे सहायता चाही। धायभाई उस समय चांपावतों के प्रबन्ध में व्यग्र था। उन्हें जालोर में भगाकर वह मेड़ता की ओर चला। उसके साथ तोपखाना होने की भी ख़बर थी, जिससे रामसिंह के साथ के सरदारों ने उस समय उसे वहाँ से

(१) जोधपुर राज्य की ख़्यात; जि० ३, पृ० २६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२४।

हट जाने की सलाह दी। इसपर प्रातःकाल के समय कूचकर रामसिंह भैरुंदा चला गया तथा उसके सहायक सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। तब धायभाई परबतसर गया, जहां के कई सरदार उसकी सेवा में उपस्थित हो गये। रामसिंह परबतसर होता हुआ रूपनगर चला गया। इस बीच खैरवा, बोरुंदा, राहण आदि के विद्रोही सरदारों ने महाराजा की अधीनता स्वीकार करली, जिनकी जागीरों में राज्य की तरफ से वृद्धि की गई^१।

उन्हीं दिनों अन्य विद्रोही चांपावत सरदार राज्य में उपद्रव करते-करते सोजत तक पहुंच गये। इसपर धायभाई ने परबतसर से पंचोली रामकरण को राठोड़ पृथ्वीसिंह (फ़तहसिंहोत, चंडावल का), राठोड़ पहाड़सिंह (जैतावत, वगड़ी का), राठोड़ भूरासिंह (कूपावत, चांदेलाव का), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत, बलुंदा का), राठोड़ लालसिंह (रायमलोत, राहण का), साहबसिंह (विशनसिंहोत, बोरुंदा का), केसरीसिंह (भाखरसिंहोत, रायपुर का), जैतसिंह (भवानीसिंहोत, छीपिया का) तथा कई दूसरे छोटे-मोटे सरदारों के साथ उनका दमन करने के लिए रवाना किया। कुछ भगड़े के बाद राज्य के सरदारों ने चांपावतों का अच्छी तरह से दमन कर दिया, पर इसमें रामकरण ज़रूमी हुआ और पृथ्वीसिंह (चंडावल का) मारा गया। अनन्तर रामकरण ने कूपावतों से बात की। जगराम ने कहा कि आसोप का पट्टा दिया जाय तो मैं चाकरी स्वीकार करूँ, परन्तु आसोप का ठिकाना इससे पूर्व ही कनीराम को दिया जा चुका था, अतएव उसे गजसिंहपुरा, रडोद, रतकुडिया तथा जालपुरा का २०००० का नया पट्टा और आसोप के बराबर कुरब दिया गया। इसी प्रकार दूसरे कई सरदारों को भी नये पट्टे दिये गये, जिसपर उन्होंने राज्य की सेवा स्वीकार कर ली। चांपावतों का उस समय भी थोड़ा-थोड़ा उपद्रव जारी

(१) जोधपुर राज्य की क्वालर; जि० ३, पृ० १७-२१। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८१४-५।

था, अतएव रामकरण पुनः उनके विरुद्ध गया। गांव अटबड़ा में उसका डेरा होने पर धायभाई भी उसके शामिल हो गया। चांपावत सोजत के निकल थे। जब उन्हें यह समाचार मिला तो वे रात्रि के समय वहां से निकल गये। तब जोधपुर की सेना का सोजत पर अधिकार हो गया। अनन्तर रामकरण ने जालोर से दक्षिणियों को निकालकर वहां भी जोधपुर का अधिकार स्थापित किया। वहां से वह सांचोर गया^१।

मेड़ते में रहते समय धायभाई ने वि० सं० १८१८ (ई० सं० १७६१) में जोशी बालू को तीन हजार सेना के साथ दूसरे कुछ विरोधी सरदारों के विरुद्ध भेजा। उसने पीसांगण, गोविन्दगढ़, खरवा, मसूदा, देवलिया, टांटोटी, भिणाय (अजमेर-मेरवाड़ा के ठिकाने) आदि से पेशकशी वसूल की। बड़ली के ठाकुर ने रुपया दिया नहीं, जिसपर बालू ने धायभाई को लिखा कि मैं बड़ली और केकड़ी पर आक्रमण करूंगा, अतएव आप चार बड़े सरदारों को मेरे पास भेज दें। इसपर जोधपुर में रहते समय धायभाई ने राठोड़ जालिमसिंह (शेरसिंहोत), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत), राठोड़ दल्लसिंह (अभयसिंहोत) एवं राठोड़ सालमसिंह (लखधीरोत, सरनावड़ा का) को जाने की आज्ञा दी, परन्तु वे इसमें ढील-ढाल करते रहे। इस बीच बालू जोशी ने बड़ली, जूनिया, सावर, गुलगांव, पारा (अजमेर मेरवाड़ा के अन्य ठिकाने) आदि से पेशकशी ठहराई और राजगढ़ पर अधिकार कर लिया^२।

अनन्तर बालू ने ससैन्य अजमेर पहुंचकर उसे घेर लिया। तीन दिन तक तो दक्षिणियों ने राठोड़-सेना का सामना किया, पर जब तोपों की मार से नगरकोट की सफ़ील का कंगूरा गिर गया तो राठोड़ सेना का अजमेर पर अधिकार करने का विफल प्रयत्न वे गढ़ के भीतर चले गये। तब नगर में विजयसिंह का अधिकार स्थापित हो गया। राठोड़-सेना का डेरा वीसला तालाब पर था। उसने फिर गढ़

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २१-३२।

(२) वही; जि० ३, पृ० ३२-४।

बीटली (तारागढ़) पर घेरा डाला। दक्षिणी सरदारों ने माधवजी (महादजी) सिंधिया को लिखा कि गढ़ राठोड़ों ने घेर लिया है और सामान की कमी है, अतएव आप सहायता को जल्द आवें, अन्यथा गढ़ छूट जायगा और तीनों मुल्कों (मेवाड़, जयपुर और मारवाड़) से हमारा अधिकार हट जायगा। इसपर महादजी सिंधिया ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया और वहां (अजमेर) के अपने सैनिकों को कहला दिया कि एक सप्ताह तक डटे रहना तब तक मैं आता हूं। उसके आने का समाचार सुनकर जोधपुरवालों ने घेरे में सन्नती की। श्रावणादि वि० सं० १८१८ (वैशाख १८१९) ज्येष्ठ सुदि १० (ई० सं० १७६२ ता० १ जून) को, जब जोधपुर के सैनिक असावधान थे, दक्षिणियों ने गढ़ से बाहर निकलकर उनपर आक्रमण कर दिया, जिसमें दोनों तरफ़ के कई व्यक्ति मारे गये। इतने में जोधपुर के और सरदार सावधान हो गये और उन्होंने गोली चलाकर दक्षिणियों को पीछा गढ़ में घुसने पर बाध्य किया। इसी बीच दक्षिणियों की सहायक सेना निकट आ गई, जिसकी सूचना मिलने पर बालू घेरा उठाकर भांवता चला गया, जहां उसने गांव के पास डेरा कर अपनी रक्षा का समुचित प्रबन्ध किया। दक्षिणी सेना अजमेर पहुंची। धायभाई उन दिनों मेड़ते में था। उसने वहां से गुलाबराय आसोपा को दक्षिणियों से बात करने के लिए भेजा। महादजी ससैन्य अजमेर से कूचकर बुधवाड़ा और वहां से चलकर दूसरे दिन बालू की सेना के निकट जा पहुंचा। इस असें में जोधपुर की सेना के ऊदावत, मेड़तिये आदि कितने ही सरदार महादजी से मिल गये और उन्होंने उससे जोशी को पकड़वा देने का वायदा किया। जोशी को इसकी खबर मिलने पर उसने उन्हें रोकना चाहा, पर वे रुके नहीं। तब उसने उनका पीछा करने का इरादा किया, परन्तु इसकी हानि बतलाकर जवानसिंह ने उसे ऐसा करने से रोक दिया। सरदारों के चले जाने से जोधपुर की सेना में खलबली मच गई और लोग जोशी का साथ छोड़कर मेड़ता की तरफ़ चले गये। कुछ वहां रह गये, जिनमें देवलिया (अजमेर ज़िला) का ठाकुर रघुनाथसिंह भी था। उन्हें साथ लेकर बलूदा होता

हुआ जोशी मेड़ता पहुंचा। धायभाई को जब सारा हाल मालूम हुआ तो अपने सरदारों पर से उसका विश्वास उठ गया और उसने जोधपुर जाना चाहा। जोरावरसिंह (खींचसर का) तथा इन्द्रसिंह (बैरवा का) ने उसे आश्वासन देकर रोका और मेड़ते की मज़बूती की। इसी बीच गुलाबराय आसोपा के पास से दूत ने आकर खबर दी कि नौ लाख रुपया पेशकशी का ठहराकर उसने महादजी को पीछा लौटा दिया है^१।

महादजी के लौटते ही चांपावत आदि विद्रोही सरदार रायपुर के केसरीसिंह के साथ मारवाड़ में घुस वहां उपद्रव करने लगे। इस-

पर धायभाई ने गांव मजल और दुनाड़ा तक उनका पीछा किया, जिसपर सारे ऊदावत तो अपने-अपने घर लौट गये और चांपावत चौरासी की तरफ

गये। तब धायभाई ने प्रथम पाली पर आक्रमण कर कुछ दिनों की लड़ाई के बाद विद्रोहियों को निकाल वहां राज्य का अधिकार स्थापित किया। अनन्तर उसने रायपुर और नौबाज के विद्रोही सरदारों को भी अधीन बनाया। चांपावत और भंडारी सवाईराम उन दिनों हरसोर में थे, जहां से वे नागोर में प्रवेश करना चाहते थे। जब उन्हें पाली के अधीन हो जाने की सूचना मिली तो वे रूपनगर चले गये। इसके कुछ समय बाद ही राजकीय सेना ने जावला, गुलर आदि के विद्रोहियों का प्रबंध किया^२।

इस बीच जोशी बालू ने धायभाई की इस बात की शिकायत की कि वह राज्य के धन को बरबाद कर रहा है और उसने अपना खर्च भी बहुत बढ़ा लिया है। इसपर महाराजा ने उसे जोधपुर बुलाकर उसका रिसाला आदि बापस ले लिया। इसका धायभाई को बड़ा दुःख हुआ।

अनन्तर महाराजा ने मुंहछोत सूरतराम को अपना प्रधान मंत्री नियतकर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३४-७। वीरविनोद; भाग ३, पृ० ८२५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३७-८।

बालू जोशी को कैद किया। इसके बाद ही वि० सं० १८२१ के आश्विन मास (ई० सं० १७६४ जुलाई) में धायभाई का देहांत हो गया^१।

उन्हीं दिनों महाराजा ने मेड़ते में रहते समय जावला के ठाकुर बदनसिंह को कैद कर उसके ठिकाने पर राजकीय सेना भेज दी, जिसने वहां अधिकार कर लिया। फिर जैतसिंह के कहने पर बदनसिंह छोड़ दिया गया तो वह रूपनगर होता हुआ जयपुर चला गया^२।

वि० सं० १८२२ (ई० सं० १७६५) में उज्जैन की तरफ से महादजी सिंधिया ने पुनः मारवाड़ पर चढ़ाई की। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने एक व्यक्ति को उससे बात करने के लिए भेजा। उसने मन्दसोर पहुंच तीन लाख रुपया देना ठहराकर उसे वापस लौटाया। इस अवसर पर खानूजी (मरहटा सरदार) सन्धिबार्ता से अलग रहा। महादजी के प्रस्थान करते ही विद्रोही चांपावतों ने खानूजी को साथ ले मारवाड़ की तरफ कूच किया। इसकी खबर मिलने पर जोधपुर से मुंहणोत (मेहता) सूरतराम की अध्यक्षता में सेना रवाना हुई और मेड़ता बगैरह से भी फौजें गईं। लड़ाई होने पर दक्षिणी तथा चांपावत हारकर भाग गये। खानूजी तथा चांपावतों के लौट जाने पर सूरतराम ने पीह के ऊदावतों से पेशकशी ठहराई तथा सिंघवी भीमराज ने वसी की गद्दी को घेरकर मोहनसिंह से दंड ठहराया^३।

उसी वर्ष से राज्य में 'रेख वाब' नामक कर लगाना शुरू हुआ। वि० सं० १८२३ के वैशाख (ई० सं० १७६६ मई) में महाराजा ने नाथद्वारा जाकर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३६-४०। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ८२५)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२५।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४०-४१।

महाराजा का वैष्णव धर्म
स्वीकार करना

वैष्णव धर्म स्वीकार किया और अपने राज्य भर में मद्य और मांस की बिक्री बन्द करवा दी। उसी वर्ष कार्तिक मास (नवम्बर) में वह अन्नकूट के उत्सव पर फिर नाथद्वारा गया^१।

उन्हीं दिनों खींची गोवर्द्धन ने, जो अपनी तीर्थ-यात्रा के समय जाटों का प्रभुत्व देख चुका था, महाराजा से निवेदन किया कि यदि राठोड़ और जाट एकत्र हो जायें तो दक्षिणियों को नर्मदा नदी के उस पार ही रोका जा सकता है। इसपर महाराजा ने पंचोली परसादीराम तथा छत्रसाल

महाराजा का जाटों से मेल
करना

रघुनाथसिंहोत जोधा को इस संबंध में बातें तय करने के लिए भेजा। उन्होंने डींग में भरतपुर के स्वामी जवाहरसिंह से बात कर उसे इस कार्य के लिए राजी किया। फिर वि० सं० १८२४ (ई० सं० १७६७) में ग्रस्थान कर वे पुष्कर गये। उस समय उन्होंने मार्ग में पड़नेवाले जयपुर के गांवों को लूटा। इस से महाराजा माधोसिंह बड़ा नाराज़ हुआ। पुष्कर में जवाहरमल के डेरे होने पर महाराजा विजयसिंह वहां जाकर उससे मिला^२। ई० सं० १७६७ ता० ६ नवंबर (वि० सं० १८२४ कार्तिक सुदि १५) को पुष्कर के किनारे जवाहरसिंह और विजयसिंह पगड़ीबदल भाई बने और राजपूतों एवं जाटों के एकत्र होकर मरहटों और नजीबख़ां (रहेला) को दबाने के संबंध में परस्पर प्रतिज्ञायें हुईं। विजयसिंह ने माधोसिंह को भी इस ऐक्य को दृढ़ करने के लिए पुष्कर में आने को लिखा, पर उस अभिमानी कछवाहे ने जाने से इनकार कर यह उत्तर दिया कि आपने जाट के साथ, जो हमारा खिराजगुज़ार है और हमारा परवाना प्राप्त होते ही सदा हमारी सेवा में उपस्थित हो जाया करता है, बराबरी का आसन ग्रहणकर अपनी प्रतिष्ठा गिरा दी है। केवल महाराणा (उदयपुर का), रावराजा (बूंदी का) और आप हमारी बराबरी के राजाओं में हैं। इस उत्तर से

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४३।

जवाहरसिंह का क्रोध माधोसिंह पर अत्यंत ही बढ़ गया। जब अपने आचरण के लिए विजयसिंह ने खेद प्रकट किया तो माधोसिंह ने अपनी बीमारी का कारण बतलाकर उपस्थित होने में विवशता प्रकट की। इसी बीच जवाहरसिंह ने आक्रमण करने का भय दिखलाकर माधोसिंह से कुछ भूमि मांगी, जिसपर उसने उदयपुर से फ़ौज मंगवाने के अतिरिक्त ज़ाबते के लिए दक्षिणियों की सेना भी बुलवाली। इस अवसर पर उसके पास अपनी ५०००० सेना के अतिरिक्त उदयपुर की ३०००, कोटा की ३००० और दक्षिणियों की १०००० सेना हो गई। विजयसिंह की ओर से जवाहरसिंह से छेड़ छाड़ न करने के लिए कहलाने पर उस (माधोसिंह) ने अपना वकील भेज विश्वास दिलाया तब महाराजा ने जाटों को विदा किया और कुछ दूर तक वह स्वयं उनके साथ गया। अनन्तर वह अपनी कुछ सेना उनके साथ देकर सांभर होता हुआ मारोठ लौट गया। अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत कछवाहों की सेना ने लौटती हुई जाटों की सेना पर आक्रमण कर दिया। गांव मावड़ा (जयपुर राज्य) में दोनों दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई, जिसमें कछवाहों की तरफ़ के राजा हरसहाय और उसका भाई गुरुसहाय खत्री तथा धूला का राजावत दलेलसिंह एवं उसका पुत्र लक्ष्मणसिंह आदि मारे गये तथा जाटों के साथ की राठोड़-सेना के सूरतसिंह पद्मसिंहों

(१) सरकार; फ़ाल अाव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० ५२३। सूर्यमल; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३७२०, छन्द २१-४। सिलेक्शंस फ़ॉर्म दि पेशवाज़ दफ़्तर; जि० २६, पृ० १६२, १६४-५।

(२) इन चारों की स्मारक छतरियां मावड़े के विशाल रणक्षेत्र में बनी हुई हैं। उनके अतिरिक्त और भी बीसों चबूतरे, वीर पुरुषों के स्मारक और छतरियां वहां विद्यमान हैं, जो मावड़ा के भीषण युद्ध की स्मृति दिलाती हैं। हरसहाय की छतरी पर वि० सं० १८२५ (ई० सं० १७६८) का लेख है। दलेलसिंह और उसके पुत्र लक्ष्मणसिंह की छतरियों पर वि० सं० १८२७ (ई० सं० १७७०) के लेख हैं। ये छतरियां यहां पीछे से बनाई गई हैं। दोनों पिता-पुत्र की मृत्यु तो मावड़ा में ही हुई थी, पर उनका दाह संस्कार उनके अधीनस्थ गांव बवाई

तथा चांगवत, पातावत, मेड़तिया आदि सरदार काम आये। इस लड़ाई के समय फ्रांसीसी समरू भी जाटों की तरफ था। अन्त में जाटों के पक्ष के मुसलमान सैनिकों के पैर उखड़ जाने के कारण उनकी फ़ौज के दूसरे विभागों में भी भगदड़ मच गई। कुछ जाटों ने जयपुर पर आक्रमण करने का विचार किया था, परन्तु जब उन्होंने अपनी सेना के हारने का समाचार सुना तो वे भी लौट गये। महाराजा विजयसिंह को जब इस

में हुआ, जो पपुरना नामक स्थान से चार मील दूर है वहां उनकी छतरियां बनी हुई हैं, जिनपर वि० सं० १८२४ पौष वदि ६ (ई० सं० १७६७ ता० १४ दिसंबर) के लेख हैं। दलेलसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में नाचती हुई स्त्रियों (अप्सराओं) के चित्र बने हैं। उसके पुत्र लचमणसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में तीन वृत्त हैं, जिनमें सुन्दर चित्र बने हैं। सबसे नीचे के वृत्त में समुद्र-मंथन तथा अश्वतारों आदि के चित्र हैं। उसके ऊपर के वृत्त में मावड़े की लड़ाई का चित्र है, जिसमें सैकड़ों सवार लड़ते हुए दिखाये गये हैं। एक स्थल पर हाथी पर बैठे हुए जवाहरसिंह पर अश्वारूढ़ दलेलसिंह को भाला मारते हुए बतलाया गया है। उसके घोड़े के दोनों अगले पैर हाथी की सूंड पर लगे हुए हैं। ऊपर के वृत्त में राम-रावण युद्ध के चित्र हैं।

(१) समरू का मूल नाम वाक्टर रैनहार्ड था। उसका जन्म ई० सं० १७२० (वि० सं० १७७७) में हुआ था। वह फ्रांस से एक फ्रांसीसी जहाज़ में ख़लासी होकर यहां आया था। पांडीचेरी में जहाज़ को छोड़कर सौमसं नाम से वह सेना में भर्ती हुआ, जिससे अन्य लोग उसको सौम्रे कहते थे और हिन्दुस्तानी समरू। फिर वहां से भागकर वह ढाका में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेना में भर्ती हुआ, परन्तु १८ दिन बाद नौकरी छोड़कर चन्द्रनगर चला गया। तदनंतर अवध के नवाब सफ़्दरजंग के यहां वह नौकर हुआ। वहां से भी काम छोड़कर वह सिराजुद्दौला और मीर कासिम की सेवा में रहा। उस समय पटना में उसने छल से कई अंग्रेज़ों को मार डाला। वहां से भागकर वह ई० सं० १७६३ (वि० सं० १८२०) में अवध के नवाब वज़ीर के पास जा रहा। वहां भी स्थिर न रहकर भरतपुर और जयपुर राज्यों की सेवा में रहने के बाद वह बाद-शाह शाहआलम के वज़ीर नज़रुद्दौला की सेवा में चला गया, जहां उसे सरधना का इलाका जागीर में मिला। उसने काश्मीर की रहनेवाली जार्जियन ज़ेबुखिसा से विवाह किया, जो बेगम समरू के नाम से प्रसिद्ध हुई। समरू का देहांत आगरे में ई० सं० १७७८ (वि० सं० १८३५) में हुआ (बकलेंड; डिक्शनरी ऑफ़ इण्डियन बायग्राफी; पृ० ३७२। एच्० काम्प्टन; यूरोपियन मिजिटरी एड्वेंचर्स ऑफ़ हिन्दुस्तान; पृ० ४००-४०२)।

घटना की सूचना मिली तो उसने जयपुर के वकील को बड़ा उपालम्भ दिया' ।

उसी वर्ष फाल्गुन मास में जयपुर के महाराजा माधोसिंह का देहांत हो गया । तब जाटों के पीछे गई हुई कछवाहों की सेना वापस

जयपुर चली गई । उधर महाराजा विजयसिंह की दक्षिणियों का महाराजा की सेना भी, जो जाटों की सहायतार्थ गई हुई थी, सेना का पीछा करना

वापस नागोर की तरफ लौटी । कछवाहों ने इस अवसर पर दक्षिणियों को कहलाया कि राठोड़ जाटों से धन लेकर जा रहे हैं, जो उनसे छीनने का बड़ा अच्छा मौका है । यह जानते ही दक्षिणी प्रस्थान कर राठोड़ों के पीछे परबतसर तक गये । मेहता सूरतराम ने जब मेड़ते जाकर महाराजा को इसकी खबर दी तो उसने बातकर दक्षिणियों को वापस लौटा दिया । तब नागोर की फ़ौज मेड़ता लौट गई^१ ।

उदयपुर के महाराणा राजसिंह (दूसरा) की मृत्यु के समय उसकी भाली राणी गर्भवती थी, परन्तु अन्तःपुर से अरिसिंह (राजसिंह का

चाचा और महाराणा जगतसिंह (द्वितीय) का दूसरा पुत्र) के भय से सरदारों के पूछने पर महाराजा का गोडवाड़ पर अधिकार होना

कहला दिया गया कि उसके गर्भ नहीं है । इसपर सरदारों ने अरिसिंह को ही, जो हक्रदार था, वि० सं० १८१७ चैत्र वदि १३ (ई० स० १७६१ ता० ३ अप्रैल) को मेवाड़ की गद्दी पर बिठाया । अरिसिंह स्वभाव का बहुत उग्र और क्रोधी था । उसने गद्दी पर बैठते ही सरदारों का अपमान करना शुरू किया, जिससे वे उसके विरोधी हो गये । इसी बीच भाली राणी के गर्भवती होने का समाचार कुछ-कुछ प्रकट हो गया । कुछ समय बाद उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम रत्नसिंह रक्खा गया । उसकी परवरिश उसके मामा जसवन्तसिंह (गोगुंदा का स्वामी)

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४४-६ । वंशशास्त्र; पृ० ३७२१-७, जून्द् संख्या १-२२ ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४६-७ ।

के यहाँ हुई'। सरदार महाराणा से अप्रसन्न तो थे ही, अब वे उसे पदच्युत करने तथा उसके स्थान में रत्नसिंह को गद्दी पर बैठाने का षड्योग करने लगे। महाराणा ने ऐसी अवस्था देख दमन नीति से कार्य लिया, पर उसका परिणाम उलटा ही हुआ^१। बीच में सरदारों को नाराज़ करने की

(१) पसूद गांव के निवासी आसिया बख्तराम-कृत "कीरति प्रकाश" से पाया जाता है कि रत्नसिंह को जोधपुर के महाराजा विजयसिंह के पास भी ले गये थे—

पूत राजसी पहल, कढ़े नग मात तोत कर ।
जा पहुँचे जोधाण, दीह वह प्रछन रहे दुर ।
सुताज गढ़ यक समय, पूछ सिंसु कवण कहो पत ।
भण नृप तुभ भतीज, सही रतना राजड़ सुत ।
यम बजा वयण मुण राण उत, दीधा खत बध बूदसी ।
पेदास हुआ बावल प्रकट, खबर रखण वन खूचसी ॥
यसड़ा खत उणवार, आय प्रछन उदयापुर ।
राय गुलाब करग, चढत बंचे कथ चातुर ।
सुण जालि कथ सरब, राण हूँता किय जाहर ।
बहन रतन सुण वयण, अधप अरसीह धखे उर ।
कर तोल खाग यम वयण कह, जरेहु संघर जंगरी ।
भरलेऊं भेल मयणाग भुज, अठे बेल इकलिंगरी ॥

हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से ।

(२) इस अवसर पर अरिसिंह ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि अरिसिंह की तरफ़ से उक्त महाराजा के पास वकील पहुँचने पर उसने सेना व्यय देने के इत्तफ़ाक़ पर सिंघवी क़तहचंद और भीमराज को अपनी सेना के साथ भेजा और उनके साथ नागौर की सेना भी करदी, जिसने जाकर भांडेसर में मुक़ाम किया। वहाँ कुंमलगढ़ से रत्नसिंह के वकील भी पहुँचे और उन्होंने उनसे कहा कि जितना रुपया अरिसिंह देगा, उतना हम दे देंगे, तुम रत्नसिंह की मदद करो। फिर रत्नसिंह की तरफ़ से रुपये मिल जाने पर भांडेसर से सेना बिखेर दी गई और जोधपुर के दोनों मुत्सद्दी वापस चले गये। रत्नसिंह की तरफ़ से खीबसर के ठाकुर जोरावरसिंह के पास सहायता देने के लिए रक़म भेजी गई,

कई और भी घटनाएं हुई, जिससे विरोध बढ़ता ही गया। रत्नसिंह अधिक समय तक जीवित न रहा और सात वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। इसपर सरदारों ने उसी अवस्था के एक दूसरे बालक को रत्नसिंह घोषितकर महाराणा को राज्यच्युत करने का अपना प्रयत्न जारी रक्खा। माधवराव सिंधिया ने रत्नसिंह का पक्ष लेकर वि० सं० १८२५ (ई० स० १८६८) में क्षिप्रा नदी के निकट महाराणा की सेना को हराया और उदयपुर को घेर लिया। नगर का समुचित प्रबन्ध होने के कारण छः मास तक घेरा रहने पर भी वह वहां अधिकार न कर सका। उधर उदयपुर में खाद्य-सामग्री का धीरे-धीरे अभाव होने लगा। तब उदयपुरवालों ने संधि की चर्चा शुरू की। माधवराव भी यही चाहता था। अन्त में ६२½ लाख रुपये मिलने की शर्त पर उसने घेरा उठा लिया। उस समय किये गये शर्तनामे के अनुसार फ़र्जी रत्नसिंह का मन्दसोर में रहना निश्चित होकर महाराणा ने उसके लिए ७५००० रुपये आय की जागीर निकाल दी। पर वह मन्दसोर जाकर न रहा और विद्रोही सरदारों एवं महापुरुषों की फ़ौज के साथ मेवाड़ में लूट-मार करने लगा। महाराणा को जब यह खबर मिली तो उसने विद्रोहियों को हराकर भगा दिया। एक साल तक शान्त रहने के अनन्तर विद्रोही सरदार पुनः उपद्रव करने लगे। रत्नसिंह का कुंभलगढ़ पर अधिकार था, जहां रहकर वह मेवाड़ के गोड़वाड़ ज़िले पर भी अधि-

जिससे वह अपने राजपूतों-सहित रत्नसिंह के शामिल हो गया। रत्नसिंह दो वर्ष तक तो जवाहरसिंह को तन्त्रवाह देता रहा, उसके बाद सेरा (सायरा) का परगना देना स्थिर हुआ (जि० ३, पृ० ४७)। दयालदास लिखता है कि मेवाड़ का गृहकलह बढ़ाने में विजयसिंह का लाभ था और वह गोड़वाड़ को अपने राज्य में मिलाना चाहता था (दयालदास की कथात; जि० २, पत्र ६२)।

(१) ये दावूपंथी साधु थे, जो जयपुर की सेना में बड़ी संख्या में रहते थे और वहीं से रत्नसिंह के पक्षवाले इन्हें मेवाड़ में लाये थे। इनको महापुरुष भी कहते थे। अबतक ये जयपुर की सेना में किसी क्रूर विद्यमान हैं। ये विवाह नहीं करते हैं।

कार करने का प्रयत्न करने लगा। इसपर महाराणा ने अपने काका महाराज बाघसिंह को दूसरे कई सरदारों एवं सेना के साथ विद्रोहियों के विरुद्ध भेजा। उन्होंने विद्रोहियों पर विजय तो प्राप्त की, पर कुंभलगढ़ पर रत्नसिंह का ही अधिकार बना रहा। महाराज बाघसिंह ने गोड़वाड़ का प्रबंध करने के पीछे उदयपुर लौटकर महाराणा से निवेदन किया कि गोड़वाड़ पर अधिकार रखने के लिए वहां यथेष्ट सेना का होना ज़रूरी है। इसपर महाराणा ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि रत्नसिंह को दबाने के लिए वह अपनी तीन हज़ार सेना कुछ समय के लिए नाथद्वारे में रखे और जब तक वह सेना वहां रहे, तब तक उसके बेतन के लिए गोड़वाड़ की आय लेता रहे; परन्तु वहां के सरदार हमारे ही अधीन रहेंगे। इसपर महाराजा ने उत्तर भिजवाया कि आम तौर से २०० सवार तथा ५०० सिपाही रहेंगे, और लड़ाई के समय तीन हज़ार सेना कर दी जायगी। तदनुसार महाराजा

(१) इस संबंध के पत्र-व्यवहार के सिलसिले में विजयसिंह ने जो वायदा किया था उसका उल्लेख महाराणा के प्रधान और मुसाहिब कायस्थ जसवंतराय के नाम के वि० सं० १८२७ पौष सुदि १३ (ई० स० १७७६ ता० ३० दिसम्बर) के मेहता श्रीचंद के लिखे पत्र में हुआ है, जिसका आशय इस प्रकार है—

“गोड़वाड़ के लिए रावत अर्जुनसिंह (कुरावड़ का) का पत्र आया, जिसमें यह बात लिखी है कि वहां के सरदार महाराणा के अधीन रहेंगे और खालसा होगा वह महाराजा (विजयसिंह) को दिया जायगा। इस पत्र को महाराजा के सामने पेश करने पर हुक्म हुआ कि ठीक है, सरदारों पर महाराणा प्रसन्नता से अपना अधिकार रखें और खालसा हमको दें, परन्तु इतनी सना वहां नहीं रह सकती। दो सौ सवार तथा पांच सौ पैदल महाराणा की सेवा में उपस्थित रहेंगे और जब कभी सेना की चढ़ाई होगी उस समय ३००० सवारों की सेना प्रस्तुत कर दी जायगी। उदयपुर के सलाहकार (भांजगढ़वाले) तरह-तरह के वहम पैदा करते हैं, परन्तु यहां वहम जैसी बात नहीं है। उनको साक-साक लिखा दिया जावे कि किसी बात का वहम न करें। दीवान (महाराणा) जितने दिन हमारी सेना रखेंगे, उतने दिन गोड़वाड़ के परगने पर हमारा अमल रहेगा और जिस दिन महाराणा हमारी सेना को रुखसत दे देंगे, उसी दिन गोड़वाड़ के परगने पर हम पीछा उनका अधिकार करा देंगे।”

वीरविनोद; भाग २, पृ० १५७२।

ने सेना नाथद्वारे में भेजकर गोड़वाड़ के परगने पर अधिकार कर लिया, परन्तु रत्नसिंह को कुंभलमेर से निकालने का प्रयत्न न किया। महाराणा के कई बार लिखने पर भी जब महाराजा ने कोई ध्यान न दिया तो उस- (महाराणा) ने उसको गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने को लिखा, परन्तु विजयसिंह ने लालच में आकर उस समय इसे टाल दिया। वि० सं० १८२८ के माघ (ई० सं० १७७२ के फ़रवरी) मास में महाराजा विजयसिंह, महाराजा गजसिंह (बीकानेर का) तथा राजा बहादुरसिंह (कृष्णगढ़) तीनों नाथद्वारा गये और महाराणा भी वहां पहुंचा। गोड़वाड़ के संबंध में चर्चा छिड़ने पर नाथद्वारा के गोस्वामी और महाराजा गजसिंह ने महाराजा विजयसिंह को गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने के लिए बहुत समझाया, परन्तु महाराजा ने स्पष्ट रूप से कोई बात स्वीकार न की^१। उस समय करमसोत ठाकुर जोरावरसिंह (खींवसर का) ने महाराजा विजयसिंह पर गोड़वाड़ के लिए अधिक दबाव देख उत्तर दिया कि विजयसिंह हमारे मालिक हैं, पर ज़मीन देना इनके अधिकार की बात नहीं है। जब तक पचास हज़ार राठोड़ों के धड़ पर सिर है, गोड़वाड़ नहीं दी जावेगी। इससे यह चर्चा बंद हो गई और परस्पर विवाद बढ़ता देख लिज्जचित्त हो महाराणा उदयपुर को और तीनों राजा अपने-अपने देश की तरफ़ खाना हुए। मार्ग में गजसिंह ने विजयसिंह के कहने पर रीयां के ठाकुर ज़ालिमसिंह से, जो बहुत बिगाड़ करता था, उसका समझौता करा दिया और फिर वह बीकानेर को लौटा^२।

वि० सं० १८२६ (ई० सं० १७७२) में राज्यच्युत महाराजा रामसिंह का देहांत हो गया^३। इस घटना से जो गड़बड़ी पैदा हो गई उससे लाभ उठाकर

(१) मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ६७०।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६२-३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७०। जोशी तिलोकसी की ख्यात; पृ० १४, १०१।

(३) वीरविनोद से पाया जाता है कि इसकी मृत्यु जयपुर में हुई (भाग २, पृ० ८५५)।

रामसिंह के मरने पर
महाराजा की सेना का
उसके हिस्से के सांभर पर
कब्जा करना

केशोदासोत, सुरताणोत, रघुनाथसिंहोत आदि
मेड़तियों की २००० सेना के साथ जाकर नांवा के
हाकिम मनरूप उपाध्याय ने सांभर पर कब्जा कर

लिया। इसकी सूचना महाराजा को मिलने पर वह उस (मनरूप) से बड़ा
प्रसन्न हुआ और उसने उसे ही वहां का हाकिम नियत किया^१।

इसके बाद महाराजा ने राज्य की अवस्था करनेवाले सरदारों के
प्रबंध की ओर ध्यान दिया। चांपावत जैतसिंह (आउवा) का अन्य सरदारों
के साथ ठीक व्यवहार नहीं था, जिसकी महाराजा
आउवा के ठाकुर को बल
से मरवाना
के पास कई बार शिकायत हो चुकी थी। वि० सं०

१८३१ के भाद्रपद मास में महाराजा ने इंद्रसिंह
(खैरवा), सवाईसिंह (पोकरण), कर्णसिंह (खींवर), जैतसिंह आदि
अपने बड़े-बड़े सरदारों को गढ़ में बुलवाया। जैसे ही जैतसिंह महाराजा
के पास उपस्थित हो मुजरा करने के लिए झुका, वैसे ही सिंघवी खूबचंद ने
कटारी के दो बार कर उसे मार डाला। अनन्तर आउवा पर कब्जा करने
के लिए आज्ञा होने पर सिंघवी बनेचंद ने ५०० सवारों के साथ वहां जाकर
राज्य का अधिकार स्थापित किया। उन्हीं दिनों सिंघवी भीमराज पर
महाराजा की कृपा बढ़ी। उसके पुत्र को परबतसर का हाकिम बनाने के
साथ महाराजा ने उस (भीमराज) को बकशी के पद पर नियुक्त किया^२।

वि० सं० १८३४ (ई० सं० १७७७) में दक्षिणी आंबाजी इंग्लिया अपनी
सेना सहित छुंढाड़ की तरफ आया। उस समय महाराजा के वकीलों ने
महाराजा को लिखा कि वह उसे खिराज न दे।
दक्षिणी आंबाजी के विरुद्ध
सेना भेजना
इसपर महाराजा ने सिंघवी भीमराज के साथ १५
हज़ार सेना खाना की। इसकी निश्चित सूचना
मिलने पर आंबाजी मेवाड़ चला गया^३।

(१) जोधपुर राज्य की ख्याल; जि० ३, पृ० ४८।

(२) वही; जि० ३, पृ० ५१-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२५-६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्याल; जि० ३, पृ० ५५।

उसी वर्ष कार्तिक मास में महाराजकुमार फ़तहसिंह बीमार पड़ा। बहुत कुछ चिकित्सा होने पर भी उसकी हालत न सुधरी और कार्तिक सुदि ३ (ई० स० १७७७ ता० ३ नवंबर) को कुंवर फ़तहसिंह का देहांत उसका देहांत हो गया^१।

इसके कुछ ही समय बाद बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर राजसिंह के बीच किसी कारणवश विरोध उत्पन्न हुआ। इसपर महाराजा ने मुंहणोत सवाईराम को बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उनके कुंवर में विरोध की उत्पत्ति उधर जाने की आज्ञा दी। उसने नागौर पहुंचकर सेना एकत्र की, पर इसी बीच पिता और पुत्र के बीच का भगड़ा शांत हो गया, जिससे सवाईराम का उधर जाना स्थगित रहा^२।

अनंतर सवाईराम को मसूदा की तरफ़ जाने और रायपुर के विद्रोही ठाकुर को समझाने की आज्ञा दी गई। इसपर नागौर से प्रस्थान कर वह मेड़ता पहुंचा, जहां से उसने शंभूदान चौहान को रायपुर के ठाकुर के पास बातचीत करने के लिए भेजा। इस बीच कुछ फ़ौज ने जाकर मसूदा से धन वसूल किया। शंभुदान ने जाकर रायपुर के ठाकुर केसरीसिंह को आश्वासन देने का प्रयत्न किया, परन्तु वह महाराजा की तरफ़ से छल होने के संदेह के कारण दरबार में जाकर चाकरी करने के लिए तैयार न हुआ। तब सवाईराम के कहलाने पर दौलतसिंह (नींबाज का) जवानसिंह (रास का), भारतसिंह (लांघिया का) तथा जैतसिंह (छीपिया का) आदि रायपुर के स्वामी का दमन करने के लिए भेजे गये। जोधपुर की सेना का बहुत समय तक तो केसरीसिंह ने बड़ी धीरता के साथ सामना किया, परन्तु अन्त में उसे हारकर मेवाड़ में शरण लेनी पड़ी। इस प्रकार रायपुर पर जोधपुर राज्य का अधिकार हो गया। पीछे से महाराजा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ५४।

(२) वही; जि० ३, पृ० ५५।

ने रायपुर की जागीर केसरीसिंह के पुत्र फ़तहसिंह के नाम कर दी^१।

सिंध के हैदराबाद और उमरकोट^२ का स्वामी मियां गुलामअलीख़ां किलोड़ा था। लीखी ताजा तथा सावटिया ताजा उसके दीवान एवं टाल-पुरिया बीजड़ फ़ौजदार था। क्रमशः बीजड़ ने बड़ी शक्ति प्राप्त कर ली, यहां तक कि उसने मियां को एक प्रकार से बन्दीकर लीखियों तथा सावटियों को वहां से निकाल दिया^३। हैदराबाद का क़िला गुलामअली की माता के

महाराजा विजयसिंह का
उमरकोट पर क़ब्ज़ा होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १५-७।

(२) उमरकोट सुमरा जाति के उमर नाम के सरदार ने बसाया था, जिससे उसका नाम उमरकोट पड़ा, परन्तु उसके बसाये जाने के समय का पता नहीं चलता (इम्पीरियल गैज़ेटियर; जि० २४, पृ० ११८)।

टॉड लिखता है कि मुसलमानों का आधिपत्य उमरकोट पर स्थापित होने से पूर्व वहां सोड़ा (परमार) राजपूतों का अधिकार था और वह उनकी राजधानी थी। क्रमशः राठोड़ों एवं उमरकोट के वर्तमान शासक वंश के पूर्वजों ने वहां से उनका प्रभुत्व हटाया। महाराजा विजयसिंह के राज्यकाल में कलोड़ा जाति का मियां नूरमोहम्मद सिंध का शासक था। जब कन्दहार की सेना ने उसे वहां से निकाला तो वह जैसलमेर जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसके ज्येष्ठ पुत्र अंतरख़ां तथा उसके भाइयों ने बहादुरख़ां खड़रानी की शरण ली। इसी बीच उनका एक अनौरस भाई गुलामशाह हैदराबाद की गद्दी का मालिक बन बैठा। दाउदपोतों ने अंतरख़ां आदि का पक्ष ग्रहण किया और गुलामशाह को हटाने के लिए खड़रानी जाति के सरदारों तथा अंतरख़ां के साथ उन्होंने हैदराबाद की तरफ़ प्रस्थान किया। गुलामशाह उनका सामना करने को आगे बढ़ा। उबौरा नामक स्थान में विरोधी दलों का सामना होने पर गुलामशाह की विजय हुई। अंतरख़ां क्रोध कर सिंधु नदी के द्वीप गज-का-कोट में भेज दिया गया। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र सरफ़राज़ हुआ (राजस्थान; जि० ३, पृ० १२८७-८)।

(३) टॉड-कृत “राजस्थान” से पाया जाता है कि गुलामशाह के उत्तराधिकारी सरफ़राज़ ने बीजड़ की बहिन से शादी करनी चाही थी, जो उस (बीजड़) के पिता ने मंजूर न की। इसका परिणाम यह हुआ कि सरफ़राज़ ने तमाम टालपुरियों को मरवाना शुरू किया। बीजड़ किसी प्रकार बच गया और उसने गुलामशाह के वंशजों से बदला लेना शुरू किया (जि० ३, पृ० १२८८-९)।

अधिकार में रहा। वह उसने टालपुरियों को नहीं सौंपा। बीजड़ के पास प्रचुर संपत्ति थी और वह बड़ा शक्तिशाली था। वह मियां के पास जाता तो उससे सदा यही कहता कि मैं तो आपका सेवक हूँ, पर एक प्रकार से वही स्वामी था। टालपुरियों को केवल इतने से ही संतोष न हुआ। उन्होंने मारवाड़ और सिन्ध की सीमा पर गिराव के निकट पराऊ की गड़ियां गिराईं। अनन्तर ५०००० सेना के साथ जाकर टालपुरियों ने पोकरण, फलोधी और कोटड़ा को दबाने का विचार किया। जब इसकी खबर महाराजा विजयसिंह के पास पहुंची तो उसे बड़ी चिन्ता हुई और उसने मुंहणोत सवाईराम एवं सिंघवी भीमराज आदिसे सलाह की। उन्होंने कहा कि राज्य की तरफ से टालपुरियों का दमन करने के लिए सेना भेजनी चाहिये। अनन्तर महाराजा ने सोजत से सिंघवी खूबचंद को बुलाकर उससे भी इस संबंध में राय की। उसने कहा कि निश्चित रूपसे कुछ भी करने के पूर्व वकील भेजकर उधर की परिस्थिति समझना आवश्यक है। महाराजा ने इसपर यह कार्य उसे ही सौंप दिया। उसने सोजत के एक चतुर कार्यकर्ता सेवक (भोजक) थानजी एवं नोदिया के भाटी प्रतापसिंह को सिंध की तरफ भेजा। उनके बीजड़ के पास पहुंचने पर उसने दोनों की बड़ी ख़ातिर की और कहा कि मैं तो महाराजा का सेवक हूँ, परन्तु उसके मन में उन्हें कपट ही जान पड़ा। वहां से लौटते समय उन्होंने बीजड़ के वकील शेख रहमतअली को अपने साथ ले लिया और जोधपुर पहुंचकर बीजड़ के कपट की बात महाराजा से कही। इसपर महाराजा ने उसका अन्त करने का निश्चय किया। सिंघवी खूबचन्द ने स्वयं इस कार्य के लिए जाने की इच्छा प्रकट की, पर महाराजा ने उसे जाने न दिया। तब मांडणोत हरनाथसिंह एवं पाता मुहकमसिंह ने बीजड़ को मारने का कार्य अपने ऊपर लिया। थानजी को साथ लेकर वे जोधपुर के वकीलों की हैसियत से बीजड़ के पास पहुंचे। थानजी को तो उन्होंने वहां से लौटा दिया और बीजड़ से कहलाया कि जोधपुर से पत्र आया है जो आपको एकान्त में दिखलाना है। इसपर बीजड़ ने उन्हें अपने पास बुलाया। इस अवसर से

लाम उठाकर उन्होंने बीजड़ का खात्मा कर दिया और स्वयं भी बारहट जोगीदास आदि कई व्यक्तियों के साथ मारे गये। यह घटना वि० सं० १८३६ कार्तिक वदि १२ (ई० सं० १७७६ ता० ५ नवंबर) को हुई। इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों के वंशजों को महाराजा ने गांध, कुपं आदि दिये।

गुलामअलीखां इस घटना के पूर्व ही डेरा गाज़ीखां में चला गया था। उसने काबुल के पठानों को सहायतार्थ बुलाया और जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि उमरकोट सदैव से ही भारतवर्ष का एक भाग रहा है, अतएव वह में आपको देता हूं। इसपर महाराजा ने भी उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया। उन्हीं दिनों सिंघवी खूबचंद ने हैदराबाद (सिंध) के क़िले को अधीन करने का विचार प्रकट किया। उसी समय मियां (अब्दुलनबीखां—गुलामअलीखां का पुत्र) ने जोधपुर से फ़ौज भेजने को लिखा। ताजा सावटिया आदि, जो बीजड़ के भय से भुज की तरफ़ चले गये थे, उन्हीं दिनों जोधपुर आकर रातानाड़ा में ठहरे। ताजा लीखी चतुर व्यक्ति था। उसने महाराजा से मिलकर उमरकोट दिये जाने के संबंध में पक्की बात-चीत की। उधर बीजड़ के मारे जाते ही उसके पुत्र अब्दुल्ला, भाई फ़तहखां तथा साले मिर्ज़ा ने महाराजा के पास कहलाया कि बीजड़ को मारा तो क्या मारा, हम सब बीजड़ ही बीजड़ हैं और उन्होंने पचास हजार फ़ौज एकत्र कर ली। इधर जोधपुर की तरफ़ से पोकरण, आसोप वगैरह की आठों मिसलें तैयार हुईं और सिंघवी शिवचंद, बनेचंद तथा भीनमाल से लोढ़ा साहामल आकर उक्त सेना के साथ शामिल हो गये। इस प्रकार जोधपुर की सात-आठ हजार सेना एकत्र हुई और सांचोर, भाटकी तथा वीरावाव होती हुई सिंध की ओर अग्रसर हुई। चोवारी में उक्त सेना के डेरे होने पर टाल-पुरियों की फ़ौज अधिक होने के कारण, रक्षा के लिए चारों ओर खाइयां आदि खोदकर मोर्चाबन्दी की गई। वि० सं० १८३७ माघ सुदि १० (ई० सं० १७८१ ता० ४ फ़रवरी) को विरोधी दलों में सामना होने पर अल्प-संख्यक राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े। इस लड़ाई में दोनों ओर से खूब

गोलियां चलीं और पोकरण के ७२ आदमियों में से ७१ रणक्षेत्र में जूझते हुए मारे गये। केवल एक जीवित डरों को लौटा। धीरे-धीरे राठोड़-सेना में गोली-बारूद की कमी हो गई। दिन भर तो किसी प्रकार युद्ध जारी रक्खा गया, पर रात्रि होने पर जोधपुर के सरदारों ने युद्धक्षेत्र से हट जाने का निश्चय किया। तदनुसार एक-एक कर सब सरदार वहां से निकल गये। आसोप का ठाकुर महेशदान तथा सिंघवी खूबचंद सबके निकल जाने पर गये। इसके दूसरे दिन बचे हुए राठोड़ों से चोवारी में टालपुरियों ने फिर लड़ाई की, जिसके बाद वे सिंध को लौट गये। महाराजा को यह समाचार मिलने पर वह खूबचंद से अप्रसन्न नहीं हुआ, क्योंकि लड़ने के सामान की कमी तथा फ़ौज थोड़ी होने से युद्ध जारी रखने में व्यर्थ जन-हानि होने के अतिरिक्त लाभ नहीं होता। इस युद्ध में पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने बड़ी वीरता दिखाई थी। खूबचंद के इस संबंध में निवेदन करने पर महाराजा ने वि० सं० १८३६ में उस (सवाईसिंह) को प्रधान मंत्री का पद प्रदान करने के साथ पालकी, मोतियों की कंठी, सिरपेच, तलवार, कटार आदि दी। पीछे से काबुल के टोपीवाले पठानों ने मियां की मदद को जाकर उमरकोट को घेर लिया। गढ़ के भीतर उस समय फ़तहख़ां था, जो गिरफ़्तार कर लिया गया, पर वह वहां से किसी प्रकार निकल गया। मियां के पास उन दिनों जोधपुर की तरफ़ से सेवग थानजी वकील था। उसने टालपुरियों तथा मियां में बात ठहराकर उन्हें उसका अधीन बना दिया। जब टालपुरिये मीठा मेहराण (सिन्धु नदी) के उस पार ठहरे थे वहां से बीजड़ के संबंधी अब्दुल, फ़तहख़ां तथा मिर्ज़ी ५०० व्यक्तियों के साथ मियां के पास उपस्थित हो गये, जिन्हें उसने पीछे से दगा से मरवा डाला। अनन्तर मियां ने उमरकोट महाराजा को सौंप दिया, जहां सेवग थानजी ने जाकर दरबार का अधिकार स्थापित किया। उन दिनों भंडारी गंगाराम गिराव में था। उसने बीजड़-द्वारा वहां बनाई हुई पिराऊ की गढ़ी नष्ट कर दी। हैदराबाद पर पूर्वानुसार मियां की माता का ही अधिकार रहा। इन भगड़ों में यद्यपि टालपुरियों

के बहुत से आदमी मारे जा चुके थे तथापि उनकी शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। उन्होंने क्रतुहञ्जली की अध्यक्षता में पुनः सिर उठाया और पठानों के जाते ही सिंध में जाकर मियां से लड़ाई की। इस लड़ाई में मियां की फ़ौज का फ़ौजदार ताजा सावटिया काम आया तथा मियां डेरा गाज़ीख़ां एवं ताजा लीखी भुज की तरफ़ चले गये। ऐसी परिस्थिति में महाराजा ने सिंधवी भीमराज तथा कई अन्य व्यक्तियों को उमरकोट के प्रबंध के लिए जाने को कहा, पर उन्होंने यह कहकर जाने से इनकार कर दिया कि जिसने उमरकोट लिया है वही भेजा जाय। इसपर ख़ुबचंद को जाने की आज्ञा हुई, परन्तु उसके संबंधियों ने उसे जाने न दिया। तब उसकी बहन का पुत्र लोढ़ा साहामल भेजा गया, जिसने जाकर उमरकोट पर कब्ज़ा किया। यह ख़बर टालपुरियों को मिलने पर उन्होंने तत्काल उमरकोट को घेर लिया। क़िले के भीतर खाद्य-सामग्री की बहुत कमी थी, लोगों को नपा-तुला अन्न मिला करता था, लेकिन इतना होने पर भी साहामल बड़ी धीरता से टालपुरियों का सामना कर रहा था। यह समाचार जोधपुर पहुंचने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। तब जोधा शिवदानसिंह भारत-सिंहोत, जिसे ख़ुबचंद ने लाडलू का पट्टा दिलवाया था, अपने सम्बन्धियों एवं ८०० आदिमियों के साथ महाराजा के पास गया और उसने टालपुरियों से युद्ध करने के लिए जाने की इच्छा प्रकट की। महाराजा ने अपनी स्वीकृति देने के साथ ही मेहता लालचन्द बागरेचा, सिंधवी चैनमल बाघ-मल्लोत (कोलियावाला), पातावत सरदारों, सिलेपोशों आदि को उसके साथ कर दिया। गिराव में जाकर सिंधवी बनेचन्द भी उक्त सेना के साथ मिल गया। उनके उमरकोट की तरफ़ बढ़ने का समाचार पाकर टालपुरियों ने दो कोस सामने आकर उनपर आक्रमण किया। वि० सं० १८३६ के माघ मास (ई० सं० १७८३ फ़रवरी) में दोनों दलों में ख़ूब लड़ाई हुई। पातावतों ने रसद की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया और जोधा राठोड़ों ने टालपुरियों से लोहा लिया। इस लड़ाई में दोनों बरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये। फिर जब टालपुरियों ने पातावतों पर

आक्रमण किया तो उन्होंने उनपर एक साथ गोलियों की ऐसी मार की कि उन्हें हारकर पीछा हटना पड़ा। इस प्रकार युद्ध में विजय प्राप्तकर राठोड़ों ने उमरकोट से टालपुरियों का घेरा उठा दिया। इस लड़ाई में काम आने अथवा अच्छी सेवा बजाने के उपलक्ष्य में जोधा शिवदानसिंह भारतसिंहोत के भाई पद्मसिंह, जोधा मालुमसिंह भारतसिंहोत के पुत्र रणजीतसिंह एवं जोधा जयसिंह, रामसिंह, उम्मेदसिंह आदि को आभूषण आदि दिये जाने के साथ ही उनकी जागीरों में वृद्धि की गई। राठोड़ों-द्वारा पराजित होकर टालपुरियों ने उमरकोट विजय करने की आशा छोड़ दी और वे फ़तहअली की अध्यक्षता में सिंध की दूसरी तरफ़ चले गये। इतने दिनों तक तो मियां की मां ने हैदराबाद पर अपना क़ब्ज़ा कायम रक्खा, पर अब फ़तहअली ने उसे कैद कर वि० सं० १८४० (ई० स० १७८३) में वहां अधिकार कर लिया। इस प्रकार टालपुरियों ने, जो पहले साधारण सेवक थे, सिंध का स्वामित्व प्राप्त किया। मियां गुलामअलीख़ां की डेरा गाज़ीख़ां में, जहां वह पहले से ही चला गया था, मृत्यु हुई। उसके पुत्र बहुत समय तक पोकरण में जाकर रहे। फिर वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) में उनके जोधपुर जाने पर महाराजा ने उन्हें फलोधी की चुंगी उगाहने का हक़ और इंदावड़ गांव दिया, जो अब तक उनके वंशजों के पास है। जिस समय उमरकोट पर जोधपुर का अधिकार स्थापित हुआ, वहां की हालत अच्छी नहीं थी और प्रबंध के लिए दूसरे इलाक़ों से धन भेजना पड़ता था। उमरकोट में तीन बरस तक रहने के अनन्तर वि० सं० १८४२ (ई० स० १७८५) में लोढ़ा साहामल जोधपुर लौट गया और उसके स्थान में सिंघवी चैनमल की नियुक्ति हुई।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके पुत्र राजसिंह के बीच मनमुटाव होने का उल्लेख ऊपर आ गया है। वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में राजसिंह देशणोक से जोधपुर चला आया, जहां महाराजा विजयसिंह ने उसे आदर-

पूर्वक अपने पास रक्खा^१ ।

दिल्ली की बादशाहत की कमजोरी की हालत में राजपूताने के कई राजाओं ने बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर उस (बादशाह) के नाम के सिक्के बनाने के लिए अपने-अपने राज्यों में टकसालें खोलीं। इसपर महाराजा विजयसिंह ने भी वि० सं० १८३८ (ई० सं० १७८१) में शाहआलम (दूसरा) के समय उसकी आज्ञा से अपनी राजधानी में टकसाल खोली, जहां वि० सं० १८१५ (ई० सं० १८५८) तक उक्त बादशाह के नाम के सोने, चांदी और तांबे के सिक्के बनते रहे। महाराजा विजयसिंह के समय बनने से ये सिक्के लोगों में “विजयशाही” कहलाते हैं और उनपर नाम उक्त बादशाह का है^२ ।

वि० सं० १८४२ (ई० सं० १७८५) में महाराजा गजसिंह के पत्र लिखने पर महाराजा विजयसिंह ने अपने बहुत से सैनिकों को साथ देकर महाराजा गजसिंह का कुंवर राजसिंह को बीकानेर विदा किया। कुछ दिनों बाद गजसिंह ने अपने दूसरे पुत्रों सुखतानसिंह, अजबसिंह और मोहकमसिंह को भेजकर राजसिंह के सीढ़ियां चढ़ते समय उसे कैद करवा दिया। जोधपुर से आये हुए सरदारों ने लड़ाई करनी चाही, परन्तु विजयसिंह ने यह कहलाकर उन्हें वापस बुलवा लिया कि वह गजसिंह का कुंवर है, वह जो चाहे उसके साथ करे^३ ।

वि० सं० १८४४ (ई० सं० १७८७) में महाराजा गजसिंह का देहांत होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र राजसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। गजसिंह

(१) दयालदास की ब्यात; जि० २, पत्र ६४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७२।

(२) देखो मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० १६-२०।

(३) दयालदास की ब्यात; जि० २, पत्र ६४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७२।

राजसिंह के बीकानेर का स्वामी होने पर उसके छोटे भाइयों का जोधपुर जाना

की दृग्ध क्रिया होने के बाद ही देवीकुंड से उस-
(राजसिंह) के भाई सुलतानसिंह^१, मोहकमसिंह^२
तथा अजबसिंह^३ जोधपुर चले गये ।

वि० सं० १८४४ (ई० सं० १७८७) में जब माधोजी सिंधिया ने जयपुर पर चढ़ाई की तो वहां के महाराजा प्रतापसिंह ने महाराजा विजयसिंह से

(१) दयालदास की ख्यात में सुलतानसिंह को महाराजा गजसिंह का पन्द्रहवां पुत्र लिखा है, परन्तु पाउलेट के “गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट”, “ताज़ीमी राजर्षों ठाकुर और खवासवालों की पुस्तक” तथा अन्य जगह उसे गजसिंह का दूसरा पुत्र लिखा है । सुलतानसिंह बीकानेर से जोधपुर और वहां से उदयपुर गया, जहां महाराणा भीमसिंह ने उसे जागीर देकर अपने पास रक्खा । मेवाड़ में रहते समय उसने अपनी पुत्री पद्मकुंवरी का विवाह महाराणा भीमसिंह से किया, जिसने पीछोला लालाब के तट पर भीमपद्मेश्वर नाम का शिवालय बनवाया । उक्त शिवालय की प्रशस्ति में उसके पितृपक्ष की महाराजा रायसिंह से लगाकर गजसिंह तक वंशावली दी है । उसमें उसकी सूरतसिंह का कनिष्ठ भ्राता लिखा है—

तस्माच्छ्रीगजसिंहभूपतिमहाराजान्ववायोभ्यभू-

तस्मात् सूरतसिंहइंद्रविभवो राठोडवंशैकभूः ।

तद्भ्राता सूरतानसिंह इति यः...कनिष्ठोभवत्-

तज्जा पद्मकुमारिकेयमतुला श्रीभीमसिंहप्रिया ॥ २४ ॥

सुलतानसिंह के पुत्र गुमानसिंह और अलैसिंह के बीकानेर जाने पर महाराजा राजसिंह ने गुमानसिंह को बगेश्वर और अलैसिंह को आलसर की जागीर दी ।

(२) मोहकमसिंह के वंशजों के पास सांईसर का ठिकाना है ।

(३) जोधपुर में अजबसिंह को जोहावट की जागीर मिली थी । वहां से वह जयपुर गया, जहां भी उसे जागीर मिली ।

(४) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४ ।

(५) जयपुर के महाराजा पृथ्वीसिंह की मृत्यु होने पर प्रतापसिंह वहां का स्वामी हुआ । पृथ्वीसिंह का एक पुत्र मानसिंह था, जो उस समय उसकी जनिहाब मेज दिया गया । कुछ वर्षों पश्चात् उसके सिंधिया के पास पहुंचने पर उसने उसको जयपुर की गद्दी दिलाने के लिए चढ़ाई की । इस चढ़ाई के समय अलवर राज्य का संस्थापक भावेदी का राव प्रतापसिंह मरहटों की तरफ था ।

महाराजा विजयसिंह का
जयपुर के महाराजा की
सहायता करना

सहायता की प्रार्थना की। इसपर विजयसिंह ने सिधवी भीमराज को सेना देकर वहां भेजा। माधोजी सिंधिया को जब इसकी सूचना मिली तो उसने अपने पास रहनेवाले जोधपुर के वकील से कहा कि जयपुर के लिए महाराजा मुझ से वैर क्यों बांधता है? उस समय वकील ने उसे समझाया कि जोधपुर की सेना जयपुर की सहायता के लिए नहीं बल्कि अपनी सीमा के प्रबंध के लिए जा रही है। तब माधोजी ने उसका समाधान कर उसे इस विषय में महाराजा को लिखने को कहा। उधर भीमराज अपनी बीस हजार सेना के साथ सांभर जा पहुंचा। इसी बीच हमदानी^१ को भी महाराजा ने आगरा आदि पर अधिकार कराने का वचन देकर अपने पक्ष में कर लिया। उसके साथ इस्माइलबेग^२ भी था। इसपर माधोजी ने पुनः जोधपुर के वकील से इस संबंध में कहा तो उसने बात टाल दी। तब माधोजी ने उसे आश्वासन दिया कि मैं जोधपुर पर आक्रमण नहीं करूंगा और वह मथुरा की तरफ चला गया। अनन्तर राठोड़-सेना ने कागलिया के बाग में डेरा किया। कुछ सरदारों का वहां से आगे बढ़ने का इरादा नहीं था, परन्तु हमदानी के समझाने पर फिर यही राय रही कि मरहटों को देश से बाहर कर देने का यह अच्छा अवसर खोना नहीं चाहिये। वहां से बसी तथा बासका में डेरा करती हुई राठोड़-सेना आगे बढ़ी। सिंधिया राठोड़ों के पीछे आने की खबर पाकर लालसोट की पहाड़ियों में जा रहा। राठोड़ों को जब यह पता लगा कि मरहटे पीछे चाटसू की तरफ बढ़ रहे

(१) इसका पूरा नाम मुहम्मदबेग हमदानी था। यह मुगल सल्तनत के मीरबख्शी मिर्ज़ा नज़रुख़ां जुलिकारहौला के चार मुख्य सेनानायकों में से एक था। यह जितना चतुर था, उतना ही धोखेबाज़ और खूंखार था। इसके चरित्र-बल एवं युद्ध-प्रियता के कारण मिर्ज़ा नज़रुख़ां की मृत्यु होने पर उसके अधिकांश अनुयायी हमदानी के शामिल हो गये और इसने धीरे-धीरे काफ़ी शक्ति प्राप्त कर ली।

(२) यह मुहम्मदबेग हमदानी का भतीजा और अपने समय का बड़ा लड़ाकू सरदार था। मुगल बादशाहत का अवसान समीप जान, यह भी अपने लिए, अन्य मुगल सरदारों के समान, हिन्दुस्तान में एक विशाल रियासत स्थापित करना चाहता था।

हैं तो वे महाराजा प्रतापसिंह के साथ प्रस्थान कर बीड़ियाणा तथा माधोगढ़ होते हुए तुंगा नामक स्थान में पहुँचे, जहाँ कछवाहों की और सेना भी आकर शामिल हो गई। उन्होंने मरहटों के पास रसद का पहुँचना रोक दिया। राठोड़ तथा अन्य लोग दौड़-दौड़ कर उनको बड़ा तंग करते। मरहटों ने जब यह अवस्था देखी तो युद्ध करने का निश्चय किया और अपना तोपखाना आगे रवाना किया। विपत्ती दलों में मुठभेड़ होने पर दोनों तरफ से तोपों की भीषण लड़ाई हुई। अनन्तर राठोड़ों ने पैदल ही तोपखाने पर प्रबल आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में राठोड़ों की तरफ के राठोड़ हररूप गजसिंहोत (नथावड़ी का), राठोड़ दलेलसिंह जोरावरसिंहोत (ढावा का), राठोड़ उदयसिंह भगवंतसिंहोत (दुमाणी का), राठोड़ दलेलसिंह संप्रामसिंहोत (तिगरा का), राठोड़ नाथूसिंह जालिमसिंहोत (घोड़ावड़ का) आदि कितने ही प्रमुख सरदार काम आये तथा कितने ही घायल हुए। कुछ समय की लड़ाई के बाद ही राठोड़ों और कछवाहों की सम्मिलित सेना ने मरहटों के तीन तोपखाने छीन लिये और उनपर ऐसी बुरी मार की कि उन्हें पीछे हटना पड़ा। फिर वे उन्हें मारते हुए उनके डेरों तक ले गये। अनन्तर तोपों से गोलों की मारकर दो ही दिवस में राठोड़ों ने मरहटों को भागने पर बाध्य किया। भागती हुई मरहटों की सेना का तोपखाना, डेरे आदि राठोड़ों की सेना ने लूटे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ५७-६६। ग्रांट डफ़; हिस्ट्री ऑफ़ दि मरहटज़; भाग २, पृ० १८१। सरकार-कृत “फ़ाल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर” में इस लड़ाई का भिन्न वर्णन मिलता है।

टॉड-कृत “राजस्थान” में भी इस लड़ाई का उल्लेख है। उसके अनुसार भी इस लड़ाई में राठोड़ों और कछवाहों की सम्मिलित सेना के साथ इस्माइलबेग और हमदानी शामिल थे। उसमें राजपूतों की पूरी विजय हुई और उन्होंने डी बोहने की अध्यक्षता में आई हुई सिंधिया की सुशिक्षित सेना को हराकर भगा दिया। इस सम्बन्ध में राठोड़ों के चारण ने कछवाहों की ओर संकेत करते हुए निम्नांकित पद कहा—

उदलती आँबेर ने राखी राठोड़ों

(जि० २, पृ० ८७५-७६)।

इस विजय की सूचना और लड़ाई का पूरा विवरण महाराजा को लिखने के अनन्तर राठोड़ों की सेना इस्माइलबेग एवं महाराजा प्रतापसिंह के साथ दक्षिणियों के पीछे गई। उस सेना ने आगरा पहुंच-
 अजमेर पर राठोड़ों का अधिकार होना कर उसपर कब्ज़ा कर लिया। अनन्तर जोधपुर की सेना के सिंघवी धनराज ने मेड़ता से अजमेर जाकर शहर पर घेरा डाला। वहां पर रहनेवाली दक्षिणियों की सेना गढ़ बीटली (तारागढ़) में चली गई। इसपर राठोड़-सेना ने उसे भी घेर लिया। नागोर, जालोर आदि में राजकीय आबादा पहुंचने पर वहां से सहायक सेनाएं तथा तोपखाना आ गया। दो मास तक लड़ने के बाद जब गढ़ में रसद की कमी हो गई तो अजमेर से मरहटों ने सिंधिया के पास सहायता भेजने के लिए लिखा, जिसपर उसने किशनगढ़ के चकील से सलाहकर आंबाजी को ससैन्य भेजा। मार्ग में किशनगढ़ की सहायता भी उसे प्राप्त हो गई। राठोड़ों की सेना के साथ उनकी कई बार लड़ाइयां हुईं और राठोड़ों की सेना के गुमानसिंह (खवास का) आदि कई प्रमुख व्यक्ति मारे गये, परन्तु अन्त में विजयभी राठोड़ों के ही हाथ रही और उन्होंने दक्षिणियों को भगाने में सफलता पाई। फिर राजकीय सेना श्रीनगर खाली कराकर रामसर गई। वहां के चांदावत स्वामी ने क़रीब दस दिन तक तो मुक़ाबला किया, इसके बाद वह सुलह कर वहां से हट गया। चांदावतों को अधीन कर राजकीय सेना अजमेर गई। बीटली में मियां मिर्ज़ा लड़ रहा था। उसने जब देखा कि आंबाजी तो चला गया और अब युद्ध करना हानिकारक ही है तो वह भी बात ठहराकर २० हज़ार

इस वाक्यवाच्य का बहुत बुरा असर कड़वाहों पर हुआ, जैसा कि आगे बत-
 लाया जायगा।

खालसोट की कड़वाहों तथा राठोड़ों के साथ की मरहटों की लड़ाई का विवरण सिंधिया की तरफ़ के एक अंग्रेज़ के लिखे हुए ई० स० १७८७ ता० १८ जुलाई (वि० सं० १८४४ प्रथम आबण सुदि प्रथम १४) के दो पन्नों में भी मिलता है (देखो; पूना रेज़िडेंसी करेसपॉन्डेंस; जि० १, पृ० २११ तथा २१४ (पत्र संख्या १३२ तथा १३७)।

रुपया लेना तय कर वहां से चला गया। महाराजा ने उसे घटियाली तक पहुंचाया^१।

उसी वर्ष महाराजा विजयसिंह ने करकेड़ी के राजा अमरसिंह के नाम रुपनगर की जागीर लिख दी और अपनी सेना को लिखा कि रुपनगर और कृष्णगढ़, दोनों खाली कराले। तदनुसार दोनों स्थानों पर घेरा डाला गया, परन्तु जब इसमें व्यय विशेष होने लगा, तो यह कार्य स्थगित रक्खा गया^२।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र राजसिंह वि० सं० १८४४ वैशाख वदि २ (ई० स० १७८७ ता० ४ अप्रैल) को वहां की गद्दीपर बैठा^३, परन्तु २१ दिन राज्य करने के बाद ही उसकी भी मृत्यु हो गई^४। उसका एक पुत्र प्रतापसिंह था। पिता की मृत्यु होने पर वह सूरतसिंह की संरक्षकता में बीकानेर की गद्दी पर बैठाया गया। राज-कार्य

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ६६-७०। टॉड-कृत “राजस्थान” में भी इस घटना का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८७६)।

डब्ल्यू० पामर ने सी० डब्ल्यू० मेलेट के नाम सिंधिया की छावनी से ई० स० १७८७ ता० २६ दिसंबर (वि० स० १८४४ पौष वदि २) को एक पत्र लिखा था। उसमें उसने लिखा था कि जोधपुर के राजा ने अजमेर पर अधिकार कर लिया है (पूना रेज़िडेंसी कलेक्शन्स; जि० १, पृ० २७४, पत्र संख्या १६३)। इसके बाद के ता० २६ दिसंबर (पौष वदि २) के अर्ल कार्नवालिस के नाम के पत्र में डब्ल्यू० पामर लिखता है कि अजमेर के विषय में कोई खबर नहीं मिली, पर हमारी छावनी में इसका विरोध किया जाता है (वही; जि० १, पृ० २७४); परन्तु ऊपर आये हुए ख्यात के कथन से निश्चित है कि अजमेर पर विजयसिंह का कब्ज़ा हो गया था।

सरकार भी अजमेर पर विजयसिंह का अधिकार होना लिखता है (फ्रांज़ ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर; जि० ३, पृ० ४१२ और टिप्पण)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७०। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ५३३-४।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४।

(४) महाराजा राजसिंह का बीकानेर का मृत्यु स्मारक देख।

सारा उसका चाचा सूरतसिंह ही करता था। धीरे-धीरे जब सरदारों पर उसका प्रभाव जम गया, तो उसने प्रतापसिंह का अन्त करने का निश्चय किया, परन्तु इस कार्य में उस (प्रतापसिंह) की बड़ी बहिन ने बाध डाली। तब सूरतसिंह ने उसका विवाह नरवर में कर दिया। उसके विदा होने के बाद ही प्रतापसिंह अपने महलों में मरा हुआ पाया गया। कहा जाता है कि 'सूरतसिंह ने अपने हाथों से गला घोटकर उसे मारा था'। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सूरतसिंह के गद्दी बैठने के कुछ समय बाद ही महाराजा विजयसिंह ने उससे कहलाया कि तुम राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को मारकर बीकानेर के स्वामी हुए हो, अतएव कुछ रुपये भरो नहीं तो सुख से राज्य नहीं करने पाओगे। तब सूरतसिंह ने उत्तर दिया कि मेरे लिए टीका भेजो (अर्थात् मुझे राजा स्वीकार करो) तो मैं तीन लाख रुपये दूँ। अनन्तर जोधपुर से टीका जाने पर सूरतसिंह ने रुपये भेज दिये^१।

अनन्तर माधोजी सिंधिया ने अलवर का परित्याग कर आगरे की तरफ प्रस्थान किया। यह खबर पाकर इस्माइलबेग ने राठोड़ों के पास

(१) डॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११३म-४०।

बीकानेर राज्य की ख्यातों आदि में प्रतापसिंह का उल्लेख तो अवश्य आया है, पर उसका गद्दी बैठना नहीं लिखा है; परन्तु ठाकुर बहादुरसिंह लिखित "बीदावतों की ख्यात" से इसकी पुष्टि होती है (जि० २, पृ० २३१)। मरहटों (सिंधिया) के जोधपुर के खबरनवीस कृष्णाजी ने अपने स्वामी के नाम ता० ५ जून ई० स० १७८७ (आषाढ वदि ४ वि० सं० १८४४) को एक पत्र लिखा था। उसमें भी लिखा है कि राजसिंह का क्रिया-कर्म हो जाने पर प्रतिष्ठित सरदारों ने सूरतसिंह को राजा बनाना चाहा, परन्तु उसके यह कहने पर कि जिस राज्य के लिए मेरे बचे भाई की ऐसी दशा हुई वह मुझे नहीं चाहिये, उन्होंने राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को गद्दी पर बैठाया और शासक की वास्तवस्था होने के कारण सब राजकार्य सूरतसिंह करता रहा।

(२) जि० ३, पृ० ७०। दयालदास की ख्यात तथा बीकानेर राज्य के इतिहास से संबंध रखनेवाली अन्य पुस्तकों में बीकानेर राज्य से रुपये दिये जाने का उल्लेख नहीं है।

इस्माइलबेग की दक्षिणियों
से लड़ाई

सहायता के लिए लिखा। भीमराज ने तो राठोड़ों को उधर जाने की आज्ञा दे दी, परन्तु इसी बीच जयपुर का महाराजा प्रतापसिंह उन्हें अपने विवाह में तंवरों की पाटण में ले गया, जिससे इस्माइलबेग को अकेले ही दक्षिणियों से लोहा लेना पड़ा। तीसरे आक्रमण में उसने उन्हें हराकर भगा दिया और धौलपुर पर भी कब्ज़ा कर लिया^१।

इसके कुछ ही समय बाद बादशाह (शाहआलम, दूसरा) दिल्ली से प्रस्थान कर रेवाड़ी पहुँचा। वहाँ कछवाहों तथा राठोड़ों की सेनाएं भी उसके शामिल हो गईं। महाराजा प्रतापसिंह तथा अन्य लोगोंने बादशाह को नज़रें पेश कीं और बादशाह की तरफ़ से उन्हें भी सिरोपाख आदि दिये गये। राठोड़ों और कछवाहों दोनों ने बादशाह से निवेदन किया कि आप यदि कूच करें तो दक्षिणियों को नर्मदा पार भगा दें। बादशाह ने उत्तर दिया कि दक्षिणी मुझे पांच हजार रुपये रोज़ देते हैं, यदि इतना ही तुम लोग देना मंज़ूर करो तो जहाँ चाहें वहाँ कूच किया जा सकता है। इसपर राठोड़ों और कछवाहों ने परस्पर सलाह कर बादशाह को दो लाख रुपयों की भूठी हुंडियाँ दीं और उसका वहाँ से दिल्ली की तरफ़ कूच कराया। उन्हीं दिनों भीमारी फैल जाने के कारण जोधपुर की सेना के रीयां, बगड़ी आदि कई ठिकानों के ठाकुरों की मृत्यु हो गई^२।

इसके बाद जोधपुर की सारी सेना भी अपने-अपने ठिकानों को लौट गई। सिंघवी भीमराज मेड़ता होता हुआ जोधपुर पहुँचा। उसकी अच्छी कारगुज़ारी के कारण महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसकी इज्ज़त औरों से अधिक बढ़ाई। यह देख कितने ही सरदार उससे जलने लगे। उन्होंने महाराजा से उसकी भूठी शिकायत की

कुछ सरदारों का महाराजा
से भीमराज की शिकायत
करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७०-१।

(२) वही; जि० ३, पृ० ७१-७३।

कि दक्षिणियों से एक लाख रुपया ले लेने के कारण ही उसने उनका पीछा न किया। इसपर महाराजा भीमराज से अप्रसन्न हो गया, परन्तु पीछे से सारी बातें ठीक-ठीक मालूम हो जाने पर उसकी नाराज़गी दूर हो गई^१।

उसी वर्ष पौष मास में जोधपुर की सेना ने किशनगढ़ पर घेरा डाला था। सात मास के घेरे के बाद क्रमशः रूपनगर एवं किशनगढ़ पर राज्य का अधिकार हो गया। तब वहां के स्वामी प्रतापसिंह ने तीस लाख रुपया देना ठहाराकर सुलह कर ली। इस रकम में से दो लाख तो उसने नक़द दिये और पचास हज़ार के गहने तथा शेष पचास हज़ार दो किशतों में देना तय किया। अनन्तर प्रतापसिंह के महाराजा के पास उपस्थित होने पर उसने उसका उचित सत्कार किया^२।

वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८६) में महादजी ने सेना एकत्र कर धौलपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। इस अवसर पर मरहटी सेना के एक बड़े भाग का संचालन एवं तोपखाना डी बोइने इस्माइलबेग पर मरहटों की चढ़ाई के हाथ में था। यह देखकर इस्माइलबेग ने जयपुर और जोधपुर के शासकों को लिखा कि आप दस हज़ार फ़ौज भेज दें तो मैं दक्षिणियों को निकाल दूँ। फ़ौज तो दोनों में से किसी ने न भेजी, परन्तु जोधपुर से महाराजा विजयसिंह ने अपने कार्यकर्त्ताओं से रायकर तीस हज़ार रुपयों की हुंडी अपने दिल्ली के वकील के नाम भेज दी। इस बीच मुलामक्रादिर रुहेला^३ ने सोलह हज़ार फ़ौज के साथ जाकर डीग को लूटा और फिर वह इस्माइलबेग के शामिल हो गया, जिसने मरहटों से जीते हुए मुल्क में से आधा उसे देना स्वीकार किया। दूसरे दिन सुबह जब सिंधिया ने उनपर

(१) जोधपुर राज्य की क्यात; जि० ३, पृ० ७४।

(२) जोधपुर राज्य की क्यात; जि० ३, पृ० ७४-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० २३७।

(३) यह रुहेला सरदार नजीबुद्दौला का पौत्र एवं अमीरख़ुदमरा ज़ाबिताखाँ का पुत्र था। इसका इतिहास यथास्थान आगे दिया जायगा।

आक्रमण किया तो गुलामकादिर की फौज के पैर उलड़ गये और वह दिल्ली की तरफ भाग गया। इस्माइलबेग ने इसके बाद भी एक पहर तक दक्षिणियों का मुकाबला किया, पर अन्त में उसे भी रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा। दक्षिणियों ने उसका पीछा किया, तब वह जमुना पार कर दिल्ली पहुँचा। गुलामकादिर ने दिल्ली पहुँचते ही बादशाह (शाहआलम) को क्रोध कर उसकी आखें फोड़ दीं और उसके दो शहजादों को मार डाला। इस घटना की खबर मिलने पर सिंधिया ने आगरे से प्रस्थान किया और इस्माइलबेग के पास अपने आदमी भेजकर उसे अपने पक्ष में कर लिया। अनन्तर उन्होंने वहाँ से धन आदि ले जाते हुए गुलामकादिर पर आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में गुलामकादिर की पराजय हुई और उसने भागने की कोशिश की, परन्तु एक ब्राह्मण के घर से जहाँ वह छिपा हुआ था, वह क्रोध कर लिया गया। सिंधिया ने उसकी आखें निकलवाकर उसे मरवा दिया और इस्माइलबेग को, नजमकुली के अधिकार में जो भूमि थी उसपर कब्जा करने को कहा। इसपर इस्माइलबेग दस हजार फौज के साथ कूचकर रेवाड़ी पहुँचा, जहाँ अधिकार कर उसने गोकुलगढ़ छीन लिया। अनन्तर नजमकुली के साथ उसकी लड़ाई शुरू हुई। इसी समय मारवाड़ के बकीलों, तंवर कर्णसिंह तथा भंडारीवि रधीचंद ने समझा-बुझा कर एका कर दोनों में भूमि विभाजित करा दी^१।

महाराजा विजयसिंह का मरहटों के साथ विरोध पहले से ही चला आता था। उनकी प्रभुता का अन्त करने के लिए वह सतत प्रयत्नशील

(१) सरकार-कृत “फ़ाल ऑफ़ दि मुग़ल एम्पायर” में इन घटनाओं का विस्तृत विवरण मिलता है (जि० ३, पृ० ३६३-४००)।

(२) जोधपुर राज्य की स्थापना; जि० ३, पृ० ७६-८। दत्तात्रय बळवंत फार्सेनीस-संगृहीत “जोधपुर येथील राजकारणें” (लेखांक ८, पृ० २५) में भी नजमकुली और इस्माइलबेग की लड़ाई के समय जोधपुर के उपर्युक्त बकीलों का वहाँ होना लिखा है। यह पुस्तक मराठी भाषा में है और इसमें जोधपुर में रहनेवाले पेशवा के बकील कुम्हारजी जगन्नाथ के अपने स्वामी को लिखे गये जोधपुर आदि कई राज्यों के सम्बन्ध के ३३ पत्रों का संग्रह है।

महाराजा का अंग्रेज़ सर-
कार के साथ पत्रव्यवहार

रहता था। उन दिनों अंग्रेज़ों का प्रभुत्व भारतवर्ष के पूर्वी भाग पर स्थापित हो चुका था। उनकी शक्ति को दूसरे लोग भी स्वीकार करने लगे थे। उससे लाभ उठाने के लिए महाराजा विजयसिंह ने लॉर्ड कॉर्नवालिस से पत्र व्यवहार किया, पर उसका कोई परिणाम न निकला। उसने लॉर्ड कॉर्नवालिस को कई पत्र लिखे थे, जिनमें से एक पेशवा के अंग्रेज़ी दफ्तर में अब तक विद्यमान है, जिसका आशय नीचे दिया जाता है—

“श्रीमान् ! आपके दो मित्रतापूर्ण पत्रों का, जो मुझे लगभग एक ही समय में मिले थे और जिनको पढ़कर मुझे बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ था, उत्तर दिया जा चुका है। मुझे विश्वास है कि मेरे उत्तर देख लिए गये होंगे। मेरे मित्र, अंग्रेज़ जाति के पूर्वी देशों में प्रवेश करने के दिन से ही उनके अच्छे स्वभाव की—जो उन देशों के शासकों एवं ज़मींदारों को कष्ट पहुंचाने अथवा उन्हें उनके स्थानों से हटाने के विरुद्ध है—महिमा सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश की तरह फैल गई है। इसी गुण के कारण इस जाति का वैभव दिन-दिन बढ़ रहा है। यह जानकर हिन्दुस्तान के राजाओं और ज़मींदारों की भावनाएं भी बदल गई हैं। उनके दिलों में इस बात का विश्वास जम गया है कि हिन्दुस्तान की सल्तनत—जो अत्याचारियों के जुलूम की आंधी से झुलस गई है और जिसने हर नवागत जाति के हाथों दुःख पाया है और जहां के अत्याचारी मरहटे यह चाहते हैं कि उनके राज्य-प्रसार में कोई शक्ति बाधक न हो—अंग्रेज़ों की सहायता प्राप्त होने से पुनः उन्नत हो सकती है। यह उन्नति ऐसी होगी, जिसका कभी अवसान न होगा और स्वयं अंग्रेज़ों की सफलता भी इतनी प्रभावशाली हो जायगी कि उसका कभी नाश न होगा। भाग्य के अपरिवर्तनशील विधान के कारण भारत विनाश की ओर बढ़ा और अनेक बड़े तथा सम्माननीय घरानों का नाश निश्चित सा हो गया, क्योंकि सिंधिया ने अचानक अवतीर्ण होकर हिन्दुस्तानियों के साथ दया करना एवं उनके घरों का नाश करना शुरू किया। जिस किसी के साथ भी उसने इक़रारनामा किया उसके

साथ ही उसने असत्यतापूर्ण व्यवहार किया। प्रथम उसने अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया। फिर उस सेना के अध्यक्ष को सिन्धिया ने वादे कर तब तक धोखे में रक्खा जब तक कि उसका ग्वालियर के क़िले पर अधिकार न हो गया। दूसरी बार उसने अमीरुलउमरा नवाब अफ़ासियाबख़ां को मित्रता का वचन देकर निमंत्रित किया और धर्म की अनेक क्रसमें खाकर वह उसके शामिल हो गया। ज्योंही उसको अपने इस कार्य में सफलता मिली उसने उसको धोखे से मार डाला। उसके वंशजों के साथ उसने कैसा व्यवहार किया, वह दुनिया जानती है। स्वयं आपको भी वह सब ज्ञात है। इस समय मरहटों का सब से पहला इरादा यह है कि वे अंग्रेज़ों के शत्रु बनकर उन्हें धोखा दें और उधर युद्ध की अग्नि प्रज्वलित करें। लेकिन जब तक सिन्धिया इधर के राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) की तरफ़ से निश्चित नहीं हो जाता, तब तक वह अंग्रेज़ों के साथ मित्रता करने के लिए झूठे वायदे करता रहेगा। यदि आज ही हमारे साथ उसका समझौता हो जाय तो वह अंग्रेज़ों के साथ युद्ध करने में देर न करेगा। लेकिन हमको इस जाति के वचनों पर बिल्कुल भरोसा नहीं है। ईश्वर की कृपा से आपको सारी बातों और परिस्थिति का पूरा-पूरा ज्ञान है तथा आप सच-झूठ को पहचानने में समर्थ हैं। मुझे विश्वास है कि आप मरहटों से बात करने के पूर्व प्रत्येक बात का पूरा-पूरा विचार करेंगे।

“मैंने सुना है कि कुछ स्वार्थी लोग आपको झूठी ख़बरें देते हैं। फिर भी मुझे विश्वास है कि आप उनकी छलपूर्ण बातों पर कान न देंगे और न उनके धोखे में फँसेंगे। सृष्टि के आरंभ से ही हम भारतवर्ष के ज़मींदार रहे हैं और इस देश की समृद्धि तथा निर्धनता, इसकी सफलता, इसकी भलाई बुराई हम पर ही निर्भर है। आप सदा अपने धायदों पर स्थिर रहे हैं, इसलिए हम आपकी वैभव-वृद्धि तथा सफलता की कामना करते हैं। आपका हमारे साथ सन्धि कर लेना कई प्रकार से लाभप्रद सिद्ध होगा। हम अपने किये हुए धायदों से कभी पीछे न हटेंगे। मैंने

सेठ रामसिंह को आपके पास अपनी आन्तरिक अभिलाषा प्रकट करने के लिए भेजा है। मैं चाहता हूँ कि जो कुछ वह आपके समक्ष प्रकट करे उसे आप सत्य और छल-छिद्र-रहित समझें। ईश्वर की कृपा से आपकी उद्द सरकार भारत के पूर्वी भाग में क्रायम हो गई है। यदि ईश्वर की कृपा से हम दो राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) तथा अंग्रेजों के बीच सन्धि स्थापित हो जाय तो आवश्यकता पड़ने पर राजपूत आपकी और आप राजपूतों की मदद करेंगे। आपकी सरकार सदैव के लिए स्थापित हो जायगी और सारे हिन्दुस्तान के मामले तय करने का हम सम्मिलित प्रयत्न करेंगे। इस प्रकार अंग्रेजों की अभिलाषा पूर्ण हो जायगी। यदि मरहट्टे विजयी हो गये तो एक न एक दिन अंग्रेजों को उनकी शक्ति के दुष्प्रभाव का अनुभव करना पड़ेगा। मैंने यह सब केवल सूचनार्थ लिखा है।”

इस्माइलबेग और महादजी सिंधिया में वैर तो पहले से ही चला आता था। कई बार उसे माधोजी सिंधिया की विशाल वाहिनी के हाथों हार खानी पड़ी थी। वि० सं० १८४७ (ई० सं० १७६०) में जयपुर तथा जोधपुर के राजाओं की सहायता प्राप्त कर वह (इस्माइलबेग) अजमेर जा पहुँचा।

सिंधिया ने सर्वप्रथम उसकी सेना के लोगों में फूट डालने का प्रयत्न किया, परन्तु जब इससे कोई लाभ न हुआ तो उसने मथुरा से लकवा दावाँ

(१) पूना रेजिडेंसी केसपॉन्डेंस; जि० १ (सर जदुनाथ सरकार-सम्पादित)
पृ० ३६१-३, पत्र संख्या २५८।

(२) लकवा दादा लाह, सारस्वत (शेखावाटी) ब्राह्मण था। उसके पूर्वजों ने सारवंतवाड़ी राज्य के पारखा और आरोबा के देसाइयों को बीजापुर के सुलतान से सरदारी दिखाई थी। इसी कृतज्ञता के कारण उन्होंने लकवा के पूर्वजों को आरोबा व खीखली गांवों में जागीरें दीं थीं, जो अब तक उनके वंश में चली आती हैं। युवा होने पर लकवा सिंधिया के मुख्य मुत्सद्दी बालोबा तात्या पागनीस के पास चला गया और वहाँ प्रारम्भ में अहलकार तथा पीछे से सिंधिया के २२ रिसालों का अक्रसर बना। सेनापति जिवबा दादा की अभ्यक्षता में वह अपने अधीनस्थ रिसालों के साथ कई लकवा-

और डी बोहने की अध्यक्षता में अपनी सेना विद्रोही को दंड देने तथा राजपूत राजाओं का दमन करने के लिए भेजी। ई० स० १७६० ता० २० जून (वि० सं० १८४७ प्रथम आषाढ सुदि ८) को तवरों की पाटण (जयपुर राज्य) में उनका शत्रु दल से सामना हुआ। कहा जाता है कि इस लड़ाई के समय जयपुर का महाराजा प्रतापसिंह अपने राज्य को नष्ट न करने का ध्यान मरहटों से लेकर लड़ाई से अलग हट गया, जिससे राठोड़ों की पराजय हो गई। इस युद्ध के संबंध का विस्तृत वर्णन डी बोहने ने अपने ता० २४ के पत्र में किया था, जो संक्षेप में इस प्रकार है—

इहां लड़ा, जिससे उसकी प्रसिद्धि हुई। इस्माइलबेग के साथ आगरा के युद्ध में उसने बहुत वीरता दिखाई, जिसपर उसे “शमशेर जंगबहादुर” की उपाधि मिली। फिर वह पाटण के युद्ध में इस्माइलबेग से, लाखौरी के युद्ध में होल्कर की सेना से और अजमेर की लड़ाइयों में राठोड़ों से भी लड़ा। इन लड़ाइयों से उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया। दौलतराव सिंधिया के समय वह राजपूताने का सुवेदार नियत हुआ। फिर वह उदयपुर गया, जहां जॉर्ज टामस से उसकी लड़ाई होती रही। वि० सं० १८२६ माघ सुदि २ (ई० स० १८०३ ता० २७ जनवरी) को सलूंवर में ज्वर से उसका देहांत हुआ (नरहर ध्यांकाजी राजाध्यक्ष; जिवबा दादा बची बांचे जीवनचरित्र [मराठी]; पृ० १२४-३२, १३६-४० और २६७)।

(१) उसका पूरा नाम बेनोइ ला बॉर्न था और जन्म ई० स० १७५१ ता० ८ मार्च (वि० सं० १८०७ चैत्र वदि ७) को फ्रांस के कैम्बरी नगर में हुआ था। ई० स० १७७८ (वि० सं० १८३५) में २७ वर्ष की अवस्था में वह भारतवर्ष पहुंचा। कुछ समय तक उसने मद्रास की देशी फौज के साथ कार्य किया, पर वहां उन्नति के लिए विशेष संभावना न देखकर वह इस्तीफा देकर कलकत्ता गया। ई० स० १७८३ (वि० सं० १८४०) के प्रारंभ में वह लखनऊ और फिर वहां से दिल्ली गया, परन्तु बादशाह शाहआलम से उसकी मुलाकात न हो सकी। फिर आगरे में मिर्जा शही (बादशाह का बज़ीर) की तरफ से भी निराश हो उसने माधोजी सिंधिया की सेवा स्वीकार कर ली। उसकी तरफ से उसने कई बड़ी लड़ाइयां लड़ीं और जीतीं, जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर किया गया है। दौलतराव सिंधिया के समय ई० स० १७९५ (वि० सं० १८५२) में उसने स्वास्थ्य बिगड़ जाने के कारण वहां से भी इस्तीफा दे दिया और वह इंग्लैंड चला गया। वहां से वह अपनी जन्मभूमि कैम्बरी (Chambary) गया, जहां उसका ई० स० १८३० ता० २१ जून (वि० सं० १८८७ आषाढ सुदि १) को देहान्त हो गया।

“ता० ८ और ९ रमजान (ता० २३ और २४ मई) की भीषण गोलाबारी के बाद जो हमारी छोटी-बड़ी लड़ाइयां हुईं, उनका आपको ज्ञान होगा। मैंने दुश्मन को तंग करने का बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु उसकी सैनिक शक्ति तथा तोपखाने की अधिकता के कारण उसमें सफलता नहीं मिली। अन्त में मैंने अपनी सेना को तीन भागों में विभाजित करने का इरादा किया। इस प्रकार जब मैं शत्रु से थोड़ी दूर पर जा पहुंचा तो मैंने मरहटे सवारों को अपनी सेना के खंदावल (पीछे) तथा दोनों पार्श्व में रक्खा। दो पहर तक इस्माइलबेग की तरफ से आक्रमण होने की व्यर्थ आशा देखी गई। तीन बजे के लगभग कहीं शत्रु की दाहिनी अनी के सवारों के साथ मरहटे सवारों की मुठभेड़ हुई। शत्रु की संख्या धीरे-धीरे ५-६ हजार हो गई, पर वे मारकर भगा दिये गये। इससे मेरा उत्साह बढ़ा। शत्रु को उस सुरक्षित स्थान से हटाने के लिए एक घंटे तक दोनों तरफ से भीषण गोलाबारी होने के बाद मैंने अपनी सेना को आगे बढ़ने की आज्ञा दी। शत्रु के अधिक निकट पहुंचने पर तोपों के मुंह में बन्दूकों की गोलियां भरकर चलाई गईं। संख्या निकट थी। शत्रु हम पर आक्रमण करने के लिए व्यग्र थे। हमारी तरफ से बहुत से देशी बरक्रंदाज़ मारे जा चुके थे। ऐसी दशा देख मैंने अपने सैनिकों को तुरन्त आक्रमण करने की आज्ञा दे दी, जिसका उसी समय पालन किया गया। इस हाथोंहाथ की लड़ाई से घबराकर शत्रु एक दम भाग गये और उनकी बंदूकें, हाथी, घोड़े आदि सामान हमारे हाथ लगा। शत्रु की छुड़-सवार सेना तो दो हजार आदमी और घोड़े कटाकर उसी समय भाग गई और पैदल सेना ने पाटण नगर में शरण ली। सुबह होने पर उसे भी आत्म-समर्पण करना पड़ा। इस समय मेरे पास १२००० व्यक्ति क़ैद में हैं, जिन्हें मैंने सुरक्षित रूप से जमुना के उस पार पहुंचा देने का वचन दिया है। शत्रु सेना में १२००० राठोड़, ६००० कछवाहे, ७००० मुगल, इस्माइलबेग तथा अल्लाहयारबेगखां की अध्यक्षता में, १२००० पैदल, १०० तोपें, ५००० तैलंगे, ४००० रोहिले, ५००० साधु एवं बहुतसी तोपें थीं। मेरी फ़ौज केवल

१०००० थी।हमारी विजय सचमुच आश्चर्यप्रद है, क्योंकि केवल मुट्ठी भर सेना के सहारे हमने इतनी बड़ी सेना पर विजय प्राप्त करने में सफलता पाई है। ईश्वर को अनेक धन्यवाद है कि मैं सिंधिया की आशा पूर्ण करने में समर्थ हुआ।”

‘कलकत्ता गज़ट’ में प्रकाशित इसी लड़ाई के एक दूसरे वृत्तान्त से कुछ नई बातें ज्ञात होती हैं, जिनका उल्लेख करना भी आवश्यक है। उससे पाया जाता है कि यह लड़ाई ता० २३ मई को प्रारम्भ हुई थी, परन्तु शुरू-शुरू में शत्रु की संख्या बहुत अधिक होने के कारण कोई विशेष लाभ न हुआ^१। फिर शत्रु का ता० २० जून को युद्ध करने का इरादा जानकर

(१) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचर्स ऑफ़ हिन्दुस्तान; पृ० ११-३।

आगरे से लिखे हुए ता० २३ जून, २६ जून और ११ जुलाई ई० स० १७६० के डब्ल्यू० पामर के और लगभग उसी समय के महादजी सिंधिया के अर्ल ऑफ़ कार्नवालिस के नाम के पत्रों में भी पाटण में राठोड़ों की पराजय होने का उल्लेख है (पूना रेजिडेंसी कॉरिसपांडेंस; जि० १, पृ० ३६६-७०, पत्र संख्या २६०-३)। गोविंद सखाराम सरदेसाई-द्वारा संपादित “महादजी शिंदे ह्यांची कागदपत्रें” में भी इसका उल्लेख है (पत्र संख्या १७४)। डब्ल्यू० पामर के ता० ११ अगस्त ई० स० १७६० के अर्ल ऑफ़ कार्नवालिस के नाम के पत्र से पाया जाता है कि इसी लड़ाई के बाद विजयसिंह बीमार पड़ गया (पूना रेजिडेंसी कॉरिसपांडेंस; जि० १, पृ० ३७०-१, पत्र संख्या २६४)।

टॉड के अनुसार तुंगा नामक स्थान की लड़ाई में जो अपमान कड़वाहों का राठोड़-चारण के हाथ हुआ था (देखो ऊपर पृ० ७३१-७) उसका ध्यान उन्हें बना रहा और पाटण की लड़ाई में वे राठोड़ों को नीचा दिखाने की गरज से मरहटों से मिलकर युद्धक्षेत्र छोड़ गये। फिर भी सदैव की भांति राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े और डी बोहने की तोपों के मुंह तक जा पहुंचे, पर अन्त में उनकी पराजय हुई और उन्हें भागना पड़ा। इस प्रकार अपना बदला लेकर जयपुर के कड़वाहों को यह दोहा कहने का अवसर प्राप्त हुआ—

घोड़ा जोड़ा पागड़ी, मुठवालीर मरोड़।

पाटण में पधरायगा, रकम पांच राठोड़ ॥

राजस्थान; जि० २, पृ० ८७६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में आबयादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि

डी बोइने आगे बढ़ा और मुठभेड़ होने पर केवल तीन घंटे की लड़ाई के बाद उसने इस्मालबेग को पूरी तरह हरा दिया। सिंधिया को जब अपनी सेना की विजय का समाचार ज्ञात हुआ तो राजपूत राजाओं का पूर्णरूप से दमन करने के लिए उसने डी बोइने को जोधपुर पर आक्रमण करने की आज्ञा भिजवाई। इस आज्ञा के प्राप्त होते ही डी बोइने ने सर्वप्रथम अजमेर पर अधिकार करने का इरादा किया, क्योंकि जयपुर तथा जोधपुर के बीच में होने से उस समय उसका बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। वह वहां ता० १५ अगस्त को पहुंचा। घेरा डाला गया, परन्तु शीघ्र उसका कोई लाभदायक परिणाम होता दिखाई न दिया। अतएव दो हजार सवार एवं पर्याप्त पैदल सेना वहां छोड़कर शेष सेना के साथ उसने जोधपुर की तरफ प्रस्थान किया। उसकी सेना के एक अफसर ने अपने

१८४७) ज्येष्ठ सुदि ११ (ई० स० १७६० ता० २४ मई) को दक्षिणियों की सेना का पाटण पहुंचना लिखा है। उसके अनुसार प्रारम्भ में डी बोइने की पराजय हुई, जिसपर सिंधिया ने धन का लालच देकर राठोड़ों की तरफ के कितने ही प्रमुख व्यक्तियों—बनेचंद, साहामल, सूरजमल (कुचामन) आदि—को रणक्षेत्र से हटा दिया। साथ ही इस्मालबेग भी चला गया, जिससे राठोड़ों की सेना को वहां से हटना पड़ा (जि० ३, पृ० ८०-१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर पर अधिकार करने के पूर्व दक्षिणियों की सेना ने क्रमशः सांभर एवं परबतसर पर कब्जा किया था (जि० ३, पृ० ८४)।

टॉड लिखता है कि इस चढ़ाई के समय किशनगढ़ का बहादुरसिंह (?) डी बोइने से जा मिला और उसका पथप्रदर्शक बन गया (जि० २, पृ० ८७८)। टॉड के ग्रन्थ में दिया हुआ बहादुरसिंह नाम ग़लत है, क्योंकि उसका तो वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में ही देहांत हो गया था। वस्तुतः यह नाम प्रतापसिंह (बहादुरसिंह का पौत्र) होना चाहिये, जो उस समय वहां का राजा था। “वीर-विनोद” से पाया जाता है कि करकेबी के स्वामी अमरसिंह पर महाराजा विजयसिंह की विशेष कृपा होने तथा उसको रूपनगर दे देने के कारण मन ही मन प्रतापसिंह विजयसिंह से वैर रखता था (भाग २, पृ० ५३२-४)। इसीलिए मराठों का जोधपुर पर आक्रमण होने पर वह उनके शरीक हो गया होगा।

ई० स० १७६० ता० १ सितम्बर (वि० सं० १८४७ भाद्रपद वदि ७) के पत्र में इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है—

“यद्यपि इस गढ़ को घेरे हुए हमें १५ दिन हो गये हैं, लेकिन अभी तक हमारे घेरे का कोई असर नहीं हुआ है। हमारी तोपें भी बेकार सी हैं। किले तक पहुँचने का तंग मार्ग प्राकृतिक रूप से ही इतना सुरक्षित है कि ऊपर से कुछ बड़े पत्थरों को लुढ़काकर ही हमें सहज में रोका जा सकता है। उन पत्थरों से उत्पन्न होनेवाली आवाज़ की समता मैं वज्र से करता हूँ। मुझे आशंका है कि घेरे की अवधि बढ़ानी पड़ेगी, क्योंकि गढ़ के भीतर लोगों के पास ६ मास तक के लिए जल और साल भर के लिए भोजन-सामग्री मौजूद है। मैं समझता हूँ कि हमें अपनी सेना के दो भाग कर एक यहाँ रखना और दूसरा मेड़ते में भेजना पड़ेगा, जहाँ शत्रु के होने का समाचार मिला है। विजयसिंह ने डी बोइने को सिंधिया का साथ छोड़ने के एवज़ में अजमेर और उसके आस-पास की पचास कोस तक की भूमि देने को कहा, परन्तु उसने उत्तर दिया कि जयपुर और जोधपुर तो पहले से ही सिंधिया ने मेरे नाम कर दिये हैं।”

मेड़ते की डी बोइने की सेना की लड़ाई का हाल उसके ही एक दूसरे अफ़सर ने अपने ई० स० १७६० ता० १३ सितम्बर (वि० सं० १८४७ भाद्रपद सुदि ५) के पत्र में इस प्रकार किया है—

“सत्रह दिनों तक अजमेर पर घेरा रहने के बाद जब मेड़ते में शत्रु की तैयारी का पता लगा तो दो हजार सवारों को वहाँ छोड़कर हमारे जेनरल (डी बोइने) ने शेष सेना के साथ मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया।”

(१) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरसे ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० १५।

(२) डॉ० क्लृ “राजस्थान” से पाया जाता है कि मार्ग में लूणी के धल में डी बोइने का तोपखाना फंस जाने की खबर मिलने पर आउवा के शिवसिंह एवं आसोप के महीदास (? महेशदास) ने उसी समय उसपर आक्रमण करने की राय दी। अन्य सरदारों ने भी यही सलाह दी, परन्तु खूबचंद ने इस्माइलबेग के आ जाने तक कुछ स्थगित रखने की राय दी, जिससे एक उपयुक्त अवसर राठोड़ों ने हाथ से छो दिया (जि० २, पृ० ८७८-९)।

अकाल के कारण हर जगह पानी की बड़ी कमी थी, जिससे हमें लंबे मार्ग का अनुसरण करना पड़ा। हम लोग ता० ८ को रीयां पहुंचे। आधीरात को वहां से प्रस्थान कर जब हम शत्रु सेना के निकट पहुंचे तो हमने उसपर भीषण गोला-बारी की। हमारे साथ का मरहटा सरदार उसी समय शत्रु पर आक्रमण करना चाहता था, परन्तु जेनरल डी बोइने ने अपनी सेना के थकी होने तथा समय की अनुपयुक्तता के कारण उसे ऐसा करने से रोक दिया। शत्रु के पास ३०००० सवार, १००००० पैदल तथा २५ तोपें थीं^१। हम लोगों के पास सवार तो लगभग उतने ही थे, परन्तु पैदल सेना कम और तोपें ८० थीं। ता० १० को प्रातःकाल ही हमें शत्रु की ओर बढ़ने की आज्ञा हुई। उसी समय भीषण गोलाबारी शुरू हुई और कुछ ही देर बाद हमारी तरफ़ की तोपों के मुंह में बन्दूकों की गोलियां भरकर छोड़ी गईं। तोपों की अधिकता होने से हमने शीघ्र ही शत्रु को वहां से हटा दिया। उसी समय सिंधिया के एक फ्रांसीसी अफसर ने इस प्रारंभिक सफलता से उत्साहित होकर बिना किसी प्रकार की आज्ञा के ही अपनी सेना की तीन टुकड़ियों के साथ शत्रु पर आक्रमण कर दिया। इस मीके से लाभ उठाकर राठोड़ों ने उसपर ऐसा प्रबल आक्रमण किया कि उसे पीछे हटना पड़ा। अनन्तर उन्होंने हमारी प्रधान सेना पर भी चारों तरफ़ से आक्रमण किया। उस समय जेनरल डी बोइने की दूरदर्शिता एवं समयानुकूल युद्धचातुरी के कारण ही हमारी रक्षा हुई। उस फ्रांसीसी अफसर की गलती का पता लगते ही उस (जेनरल डी बोइने) ने हमारी सेना को एक खोखले वर्ग के रूप में सुसज्जित कर दिया, जिससे शत्रु को निकट पहुंचने पर हर तरफ़ हमारी सेना से लोहा लेना पड़े। इस प्रकार उनकी गति रुक गई और नौ बजते-बजते उन्हें वहां से पीछे हटना पड़ा। दस बजे के करीब हमारा शत्रु के डेरों पर अधिकार हो गया और तीन बजे के लगभग हमने आक्रमण

(१) टॉड के अनुसार इस अवसर पर बीकानेर की सेना भी राठोड़ों की सहायताार्थ गई थी, पर युद्ध प्रारंभ होने के पूर्व ही अपने देश की रक्षा के हेतु वह लौट गई (जि० २, पृ० ८७६)।

कर मेड़ता पर अधिकार कर लिया। तीन दिवस तक वहां ऐसी लूट मची कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इस लड़ाई में हमारी तरफ़ के छः-सात सौ व्यक्ति काम आये। राठोड़ों का सेनाध्यक्ष भंडारी गंगाराम वहां से भागता हुआ पकड़ा गया। केसरिया वस्त्र धारणकर लड़नेवाले राठोड़ों की वीरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। मैंने स्वयं देखा कि उनके दस-दस, बीस-बीस के जत्थे हमारी हज़ारों की तादाद की सेना पर आक्रमण करते और वीरतापूर्वक लड़ते हुए मारे जाते थे। राठोड़ों की तरफ़ के पांच सरदार मारे गये, जिनमें राजा का भतीजा और सेना का बख़शी भी शामिल थे। जब उन पांचों ने देखा कि भाग निकलना असंभव है तो वे अपने ग्यारह साथियों सहित घोड़ों से उतर पड़े और लड़ते हुए मारे गये। इस विजय का सारा श्रेय हमारे जेनरल को है। इस्माइलबेग लड़ाई के दूसरे दिन नागौर पहुंचा।”

इस लड़ाई के बाद शीघ्रता से एकत्रित किये हुए अपने आदमियों के साथ इस्माइलबेग महाराजा विजयसिंह से जाकर मिला। उसने महाराजा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में राठोड़ों की तरफ़ के ठाकुर बिसनसिंह (चाणोद), ठाकुर शिवसिंह (देवजी), शेखावत ज़ालिमसिंह (बलादा), ठाकुर महेशदास (आसोप), ठाकुर मालुमसिंह (नाडसर), ठाकुर जगतसिंह (पाली), ठाकुर सूरजमल (हरियाडाणा), ठाकुर भारतसिंह अर्जुनसिंहोत (सुदानी) आदि कितने ही सरदार काम आये एवं आउठा का शिवसिंह आदि घायल हुए (जि० ३, पृ० ६०-१)। टॉड-कृत “राजस्थान” से भी इसकी पुष्टि होती है (जि० २, पृ० ८८०)।

ऐसी प्रसिद्धि है कि आसोप के ठाकुर महेशदास के मेड़ता के युद्ध में मारे जाने पर भी महाराजा ने आसोप की जागीर जगरामसिंह छत्रसिंहोत (गजसिंहपुरा) के नाम, जो किसी लड़ाई से भाग आया था, करदी थी; परन्तु उसी समय किसी चारण के निम्नलिखित दोहा कहने पर वह उसने पीछी महेशदास के वंशजों के नाम करदी—

मरज्यो मती महेश ज्यों, राढ़ बिचै पग रोप ।

भगड़ा में भागो जगो, उण पाई आसोप ॥

ठाकुर भूरसिंह शेखावत; विविध संग्रह; पृ० ११७ ।

(२) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचर्स ऑव हिन्दुस्तान; पृ० ६०-११ ।

से युद्ध जारी रखने का बहुत आग्रह किया और फ़ौज एकत्र करने का भी प्रयत्न किया, परन्तु अन्त में दिसंबर मास में महाराजा ने कोआपुर (Koapur) में डी बोइने के पास अपना वकील भेजकर संधि की बातचीत की। एक बड़ी रकम और अजमेर का स्वादिये जाने की शर्त पर सुलह हो गई। अजमेर लकवा दादा को दे दिया गया। सन्धि हो जाने पर डी बोइने ने वापस मथुरा की तरफ़ प्रस्थान किया। ई० स० १७६१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १८४७ पौष वदि १२) को वहां पहुंचने पर उसका बड़ा स्वागत हुआ और माधोजी सिंधिया ने इनाम-इकराम देकर उसे सम्मानित किया। इस विजय के कारण डी बोइने की सेना “चेरी (उड़ाकू) फ़ौज” के नाम से प्रसिद्ध हुई।

महाराजा के गुलाबराय नाम की जाट जाति की एक पासवान थी, जिसपर उसकी विशेष कृपा थी। वह उसके कहने में चलता था तथा एक प्रकार से राज्य-कार्य का संचालन उसके इशारे से ही होता था^३। वि० सं० १८४८ (ई० स० १७६१) में महाराजा ने जालोर का पट्टा उसके नाम

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार साठ लाख रुपया मिलने की शर्त पर मरहटी सेना ने लौट जाना स्वीकार किया। इस रकम का आधा हिस्सा तो उसी समय दे दिया गया और शेष आधे के चुकाये जाने तक के लिए सांभर, नांवा, परबतसर, मारोठ तथा मेवता दक्षिणियों के कब्जे में रख दिये गये और कुछ व्यक्ति ओल में सौंपे गये। पीछे से ख़ास आज्ञापत्र पहुंचने पर सिंघवी धनराज ने अजमेर का गढ़ खाली कर दक्षिणियों को सौंप दिया (जि० ३, पृ० ६८-६)। टॉड भी केवल ६० लाख रुपया ही देना लिखता है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०७४)। “वीरविनोद” में भी ६० लाख ही दिया है (जि० २, पृ० ८२६)।

(२) हर्बर्ट कॉम्पटन; यूरोपियन मिलिटरी एडवेंचर्स ऑफ़ हिंदुस्तान; पृ० ६२। गोविंद सखाराम सरदेसाई द्वारा संपादित “महादजी शिंदे झांची कागदपत्रें” में भी सांभर, अजमेर और मेवता में दक्षिणियों की विजय होने का उल्लेख है (पत्र संख्या ५७६)।

(३) दत्तात्रेय बलवंत पार्सनीस-संगृहीत “जोधपुर येथील राजकारणें” (खेळांक २०, पृ० ५८) में लिखा है कि इसी पासवान के कारण राज्य में ख़राबी होती गई।

कर दिया, जिसपर उसने अपने कार्यकर्ता वहाँ भेज दिये। गुलाबराय की महाराजा की शेखावत राणी से नहीं बनती थी, क्योंकि वचपन में उस- (शेखावत) का पौत्र भीमसिंह, गुलाबराय के पुत्र तेजसिंह से लड़ा करता था। इस वजह से अपने पुत्र तेजसिंह की मृत्यु हो जाने पर गुलाबराय की कृपा देवड़ी राणी के पुत्रों पर बढ़ गई और वह कुंवर गुमानसिंह के पुत्र मानसिंह को गोद लिए हुए पुत्र के समान रखती थी। उसके कहने पर अधिकांश सरदारों का विरोध होते हुए भी महाराजा ने शेरसिंह (देवड़ी राणी के पुत्र) को अपना युवराज नियत किया^१। फलस्वरूप कितने ही चांपावत, कृपावत, ऊदावत और मेड़तिये सरदार महाराजा से अप्रसन्न हो देश में लूट-मार एवं बिगाड़ करने लगे और मालकोसणी में एकत्र हुए^२। ऐसी दशा देख गुलाबराय ने शेरसिंह तथा मानसिंह को जालोर भिजवा दिया। इसी बीच गढ़ के अन्य सरदार भी महाराजा का साथ छोड़कर चले गये और गांव हुंगली में ठहरे। तब फाल्गुन वदि १२ (ई० स० १७६२ ता० १६ फरवरी) को रात्रि के समय महाराजा ने विरोधी सरदारों को मनाने के लिए प्रस्थान किया और डीगाडी, वीसलपुर एवं भावी होता हुआ वह मालकोसणी पहुँचा, जहाँ सारे सरदार उसके पास उपस्थित हो गये। उन्हीं दिनों महाराजा ने सीसोदणी राणी से उत्पन्न कुंवर जालिमसिंह से उसका पट्टा नांवा हटाकर शेरसिंह के नाम कर दिया। इसपर जालिमसिंह अप्रसन्न होकर वगड़ी में लूट-मार करता हुआ बीलाड़ा पहुँचा, जहाँ महाराजा की तरफ से चांपावत जेतमाल (धामणी का) उसको

(१) “जोधपुर येथील राजकारणें” में लिखा है कि पासवान ने सब सरदारों से कहा कि बड़ा सरदार एक हाथी और छोटा सरदार एक घोड़ा नज़र कर शेरसिंह को राजा स्वीकार करे। इसपर सब सरदार बड़े नाराज़ हुए और रास के ठाकुर जवानसिंह ने कहा कि हम जिसको राजा बनायेंगे वही राजा होगा (लेखांक २०, पृ० ६४)।

(२) “जोधपुर येथील राजकारणें” से पाया जाता है कि पासवान सरदारों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार करती थी। उसने जवानसिंह आदि सरदारों के गांव ज़ब्त कर लिये, जिससे वे एकत्र होकर उसके शास का उद्योग करने लगे (लेखांक २०, पृ० ६४)।

समझाने के लिए गया। अनन्तर सरदारों आदि के समझाने और विश्वास दिलाने पर भावणादि वि० सं० १८४८ (चैत्रादि १८४९) वैशाख वदि ७ (ई० सं० १७६२ ता० १३ अप्रैल) को जालिमसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया, जिसे उसने गोड़वाड़ का इलाका देने के साथ ही देसूरी की बहाली का खास रुक्का लिखकर दे दिया^१।

महाराजा की पासवान गुलाबराय के असद्व्यवहार और प्रभाव से प्रायः सब सरदार उससे अप्रसन्न रहते थे। जैसा ऊपर लिखा गया है गुलाबराय मानसिंह के पक्ष में थी और सरदार भीमसिंह के, जो वास्तविक हक्रदार था। भीमसिंह का बढ़ता हुआ प्रभुत्व देखकर और नगर में उसका बन्दोबस्त हो जाने पर गुलाबराय ने महाराजा को लिखा कि भीमसिंह मुझे मरवा देगा। तब महाराजा की तरफ से पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह और रास का ठाकुर जवानसिंह उसके पास गये और उन्होंने भूटा आश्वामन देकर उसे गढ़ में चलने पर राजी किया। जैसे ही वह पालकी में बैठने लगी, सरदारों के आदमियों ने उसे चूककर मार डाला और उसका सामान आदि लूट लिया^२। यह घटना वैशाख वदि १०

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ६६-१०१। बीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६। टोंड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७७।

(२) “जोधपुर येथील राजकारणें” से पाया जाता है कि सरदारों ने पहले जो प्रयत्न पासवान को मारने का किया, उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। उसमें लिखा है कि जब विजयसिंह भंडारी को पासवान ने दीवान नियुक्त किया तो सरदारों को बहुत बुरा लगा और उन्होंने आपस में राय की कि अब क्या करना चाहिये, क्योंकि सब राजपूतों की हज्जत जाती है, राज्य अष्ट हो रहा है और राजा पराधीन (पासवान के अधीन) हो गया है। अनन्तर सरदारों ने एक होकर रत्नसिंह (कुंपावत) को, जिसके पास २०००० राजपूत थे, अपनी ओर मिलाने की सलाह की। जवानसिंह (रास) और सवाईसिंह अर्द्धरात्रि के समय रत्नसिंह के पास गये और उन्होंने उसे अपनी तरफ मिलाया। दूसरे दिन बाग में जाकर पासवान को जैद करने का निश्चय हुआ। सरदारों में से एक खीबसरवाले भीमसिंह ने बदलकर पासवान को बहुरंग की सूचना दे दी। फलस्वरूप वि० सं० १८४८ पौष सुदि ८ (ई० सं० १७६२ ता० १ जनवरी) रविवार को, जिस दिवस सरदार

ता० १६ अप्रैल) सोमवार को हुई और इस कार्य को करने में पाली का ठाकुर रूपावत सरदारसिंह मुख्य था। गुलाबराय पर चूक होने की खबर बहुत समय तक महाराजा को नहीं हुई।

अनन्तर जालिमसिंह को मालकोसणी में ही रज सरदारों ने महाराजा को लेकर प्रस्थान किया और वैशाख वदि १४ (ता० २० अप्रैल)

सरदारों का समझाकर
भीमसिंह को गढ़ से हटाना

को चैनपुरा में डेरे कर वे वैशाख सुदि ६ (ता० २७ अप्रैल) को बालसमंद पहुंचे। उस समय महाराजा के साथ सूरजमल शोभासिंहोत (कुचामण),

रिडमलसिंह (मीठड़ी), फ़तहसिंह श्यामसिंहोत (बलुंदा), बिड़दसिंह बरूतावरसिंहोत (रीयां) एवं हरिसिंह शेरसिंहोत (चंडावल) थे, जो भीमसिंह के बड़यन्त्र में शरीक नहीं थे। उन्हीं दिनों सरदारों से प्रोत्साहन पाकर भीमसिंह ने जोधपुर के गढ़ और नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण को लिखा कि भीमसिंह के पक्ष के सरदारों का बिगाड़ करो। इसपर साहामल ने उन सरदारों का बिगाड़ करना शुरू किया और उनका बहुत सा मुल्क लूट लिया। अनन्तर भाद्रपद वदि १२ (ता० १४ अगस्त) मंगलवार को महाराजा का डेरा डीगाड़ी में हुआ। इस प्रकार महाराजा को बाहर रहते जब दस मास हो गये तो सवाईसिंह आदि सरदारों ने जाकर भीमसिंह को गढ़ छोड़ने के लिए समझाया, जिसपर सिवाणा का अधिकार

बाग में पहुंचे, पासवान वहां नहीं मिली, जिससे उनका इरादा सफल नहीं हुआ। वह इससे पूर्व ही महाराजा के पास चली गई थी (लेखांक २०, पृ० ६४-२)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६। टोंड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६। सूर्यमल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३६२०,।

गुलाबराय ने गुलाबसागर तालाब, नगर के भीतर का उद्यान एवं उसका कुंड, जालोर के गढ़ के महल, सोजत का कोट और कुंजबिहारी का मंदिर बनवाया था (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०६)।

प्राप्तकर वह धावणादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि १८५०) चैत्र सुदि ८ (ई० सं० १७६३ ता० २० मार्च) को गढ़ का परित्याग कर चला गया । उसी रात महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया^१ ।

गढ़ में प्रवेश करने के बाद महाराजा ने पहला कार्य यह किया कि सिंघवी अखैराज को इस्माइलबेग की सेना के साथ भीमसिंह को पकड़ लाने के लिए भेजा । दिन निकलते-निकलते वह महाराजा का भीमसिंह के पीछे सेना भेजना भंवर गांव में जा पहुंचा, जहां भीमसिंह ठहरा हुआ था । वहां दोनों दलों में सामना होने पर भीमसिंह को सकुशल सिंघाणा तक पहुंचाने के लिए गये हुए सरदारों में से कुछ तो राजकीय सेना का सामना करने के लिए रुक गये और सवाईसिंह भीमसिंह को साथ ले पोकरण चला गया । इधर शाम तक लड़ाई होती रही, जिसमें हरीसिंह (चंडावल), सूरजमल (कुचामण), दानसिंह (सेवरिया) आदि काम आये तथा फ़तहसिंह (बलुंदा) घायल हुआ । फिर भीमसिंह के निकल जाने की खबर पाकर महाराजा ने खास रुक्का लिख अपनी सेना को वापस बुला लिया । साथ ही मृत सरदारों के यहां जाकर महाराजा ने उनकी तसल्ली की और उनके उत्तराधिकारियों को जागीरें आदि दी^२ ।

गौड़ाटी (गौड़ों की चौरासी) और मेड़ता वगैरह के सरदार भीमसिंह के बङ्ग्यंत्र में शामिल थे, अतएव महाराजा ने बङ्गशी अखैराज सिंघवी अखैराज सिंघवी को भेज-को उधर भेजा । उसने वहां पहुंचकर गूलर, कर विरोधी ठिकानों से जावला, भखरी, बड़, बोरामड़, खालड़, बूडसू, दंड लेना मोरेड़ और बिदियाद से पेशकशी वसूल की । इनके

(१) जोधपुर राज्य की स्थात; जि० ३, पृ० १०२-३ । बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८२६ । टोंड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६ ।

(२) जोधपुर राज्य की स्थात; जि० ३, पृ० १०३-४ । बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८२६-७ । सूर्यमल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३६२१-२ । टोंड; राजस्थान, जि० २, पृ० १०७६-७ ।

अतिरिक्त उसने ऊदावतों के ठिकाने बंबाल का गढ़ गिरा दिया, जहां अजीतसिंह ऊदावत लड़कर मारा गया^१।

उन्हीं दिनों के आस-पास महाराजा ने परबतसर का परगना जालिमसिंह के नाम कर दिया। वहां कुंवर ने अपनी तरफ से उदयपुर के मुत्सद्दी पीतांबरदास को भेजा। उसने वहां इतना अच्छा प्रबंध किया कि परबतसर अब तक “पीतांबरधारा” कहलाता है^२।

कुंवर जालिमसिंह को
परबतसर का परगना देना

महाराजा की वृद्धावस्था तो थी ही। ऐसे में वायु का प्रकोप हो जाने से उसका सारा शरीर रह गया। वि० सं० १८५० आषाढ वदि १० (ता० ३ जुलाई) बुधवार को उसकी तबियत अधिक खराब हुई। इसके चार दिन बाद आषाढ वदि १४ (ता० ७ जुलाई) को अर्द्धरात्रि के समय उसका स्वर्गवास हो गया^३।

महाराजा की बीमारी और
मृत्यु

(१) जोधपुर राज्य की ग्यात; जि० ३, पृ० १०४।

(२) वही; जि० ३, पृ० १०५।

(३) वही; जि० ३, पृ० १०५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५७। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७७। दत्तात्रेय बलवंत पार्सनीस-संगृहीत “जोधपुर बेथील राजकारणों” से भी इसकी पुष्टि होती है (लेखांक २३, पृ० ८०)।

उसी पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि अपनी मृत्यु से तीन दिन पूर्व महाराजा विजयसिंह ने पद्मसिंह बारहट, गढमल वैद्य तथा शंभुदान धायभाई को अपने पास बुलाकर कहा कि मेरी गद्दी को एक रूप से चलाने के लिए दस वर्षीय सुरसिंह- (सामन्तसिंह का पुत्र) को राज्य देना। भीमसिंह को तो सर्वथा गद्दी पर बैठाया न जाय, क्योंकि उससे बल्लेबा मितेगा नहीं। कदाचित् उसको बैठाया तो देश में क्लिंतर होगा और मैं तुम्हारा दामनगरी रहूंगा। महाराजा की मृत्यु होने पर उपर्युक्त व्यक्तियों ने समस्त मुत्सद्दियों को उसकी अंतिम इच्छा की सूचना तो दी, परन्तु उससे अधिक वे कुछ न कर सके और भीमसिंह जैसलमेर से जाकर जोधपुर का स्वामी बन गया (जोधपुर बेथील राजकारणों; लेखांक २६, पृ० ८३-४)।

महाराजा विजयसिंह के सात राणियां थीं, जिनसे उसके निम्न-
लिखित सात पुत्र हुए^१—(१) फ़तहसिंह,^२ (२) भीमसिंह,^३ (३)
जगलमसिंह,^४ (४) सरदारसिंह,^५ (५) शेरसिंह,
राणियां तथा संतति (६) गुमानसिंह,^६ और (७) सांवतसिंह^७ ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०७-६ । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५७-८ । टोंड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७५ ।

(२) जन्म वि० सं० १८०४ श्रावण वदि ४ (ई० स० १७४७ ता० १४ जुलाई) । वि० सं० १८३४ कार्तिक सुदी ८ (ई० स० १७७७ ता० ८ नवंबर) को इसकी निस्सन्तान मृत्यु हो गई ।

(३) जन्म वि० सं० १८०६ द्वितीय भाद्रपद सुदि १० (ई० स० १७४९ ता० १० सितंबर) । मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि १३ (ई० स० १७६९ ता० ४ मई) । इसका पुत्र भीमसिंह, फ़तहसिंह की गोद गया और विजयसिंह की मृत्यु के बाद जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ ।

(४) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०६ (चैत्रादि १८०७) आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५० ता० २८ जून) । मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२५) में सिरियारे के घाटे पर कालुवली गांव में हुई । इसे क्रमशः नावां, गोडवाड और पर-बतसर के इलाक़े जमीन में मिले थे ।

(५) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०८ (चैत्रादि १८०९) ज्येष्ठ सुदि १३ (ई० स० १७५२ ता० १४ मई) । मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७६९ ता० २८ अप्रैल) ।

(६) जन्म वि० सं० १८१८ कार्तिक सुदि ६ (ई० स० १७६१ ता० ६ नवंबर) । मृत्यु वि० सं० १८४८ आश्विन वदि १३ (ई० स० १७९१ ता० २६ सितंबर) । इसका पुत्र मानसिंह, भीमसिंह के पीछे जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ । दत्तात्रेय बलवंत पारसीस-संगुद्दीत “जोधपुर येथील राजकर्यों” में पासवान गुलाबराय का गुमानसिंह को विष देकर मरवाना लिखा है (लेखांक २०, पृ० ६३) ।

(७) जन्म वि० सं० १८२५ फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १७६९ ता० १५ मार्च) । इसको तथा इसके पुत्र सूरसिंह को, जिसका जन्म वि० सं० १८४१ कार्तिक सुदि ३ (ई० स० १७८४ ता० १७ अक्टोबर) को हुआ था, भीमसिंह ने वि० सं० १८५१ (ई० स० १७९४) में चूक कर मरवाया ।

महाराजा विजयसिंह ने पूरे चालीस वर्षों तक जोधपुर पर राज्य किया, पर उसके इस दीर्घ शासनकाल में राज्य में कभी पूर्ण शान्ति का निवास न रहा। उसके राज्य का प्रारम्भिक समय अपने-बचेरे भाई रामसिंह (राज्यव्युत्) के साथ के बखेड़ों में बीता। सरदारों के झगड़े तो न्यूनाधिक अंत तक बने ही रहे। इसका कारण उसका सरदारों के प्रति अनुचित व्यवहार और छोटे लोगों की तरफ विशेष झुकाव था।

अपने शत्रु अथवा विरोधी का अंत करने में छल का प्रभय लेने में वह अपने पूर्वजों से कम न था। जयआपा सिंधिया के कठिन घेरे के अवसर पर जब उसको इराने में वह समर्थ न हुआ तो उसने उसे छल से मरवा दिया। यही नहीं जिन सरदारों पर राज्य का अस्तित्व क़ायम रहता है, उनमें से भी कई को उसने दगा से मरवाया। राजपूत जाति के इतिहास में शत्रु से दगा करने के उदाहरण बहुत कम देखने में आते हैं और इस दृष्टि से उसके ये कार्य प्रशंसनीय नहीं कहे जा सकते। इसका परिणाम भी जोधपुर राज्य के लिए बुरा हुआ, क्योंकि इससे मरहटों का रोष बढ़ गया और सरदार भी विरोधाचरण करने लगे। इससे उनके मारवाड़ पर कई आक्रमण हुए, जिनसे राज्य के धन-जन की प्रत्येक बार बड़ी क्षति हुई। इससे राज्य की आर्थिक स्थिति भी गिरी और प्रजा भी दुःखी रही। मरहटों के इस बढ़े हुए प्रभुत्व का वह अन्त करना चाहता था। इसके लिए उसने राजपूताना के विभिन्न राजाओं को एक करने का उद्योग भी किया, पर उसमें वह सफल न हो सका। पीछे से अंग्रेजों के पैर भारतवर्ष में जमने पर उसने उनसे भी इस संबंध में पत्रव्यवहार किया, पर उसका भी कोई परिणाम न निकला।

वह सदैव अपने कुछ विशेष प्रियपात्रों के कहने का अनुसरण किया करता था और अपनी बुद्धि का बिल्कुल उपयोग नहीं करता था। सरदारों और उसके बीच निरंतर विरोध रहने का एक प्रमुख कारण यह भी था कि अपने ज्येष्ठ पुत्र फ़तहसिंह की मृत्यु के बाद उसने अपनी पासवान

गुलाबराय की मर्जी के अनुसार कभी एक कभी दूसरे (शेरसिंह और ज़ालिमसिंह) पुत्र को अपना उत्तराधिकारी नियत किया । यही नहीं, अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व उसने अपने छोटे पुत्रों में से सावंतसिंह के पुत्र सूरसिंह को गद्दी दिलाने के लिए अपने कर्मचारियों से अनुरोध किया था । इससे स्पष्ट है कि वह दृढ़चित्त न था । उसके जीते जी ही उसके पौत्र भीमसिंह ने राज्य पर अधिकार कर लिया था, जिसे उसने क्षमा प्रदान करने पर भी पीछे से सेना भेजकर गिरफ्तार करना चाहा । उसके इस अविवेकपूर्ण आचरण का परिणाम यह हुआ कि उसकी मृत्यु के बाद शेरसिंह, सावंतसिंह और सूरसिंह निरपराध मारे गये । गोड़वाड़ के संबंध में भी महाराणा से की हुई अपनी प्रतिज्ञा का उसने पालन नहीं किया । यह इलाका उसे कुछ शतों के साथ रत्नसिंह को कुंभलगढ़ से निकालने के एवज़ में मिला था, पर रत्नसिंह को निकालना तो दूर वह सारा का सारा इलाका स्वयं हज़म कर गया ।

उसकी पासवान गुलाबराय का उसके ऊपर विशेष प्रभुत्व था । वह उसके कहने में इतना डो गया था कि एक प्रकार से सारा राज्यकार्य उसके इशारे से ही होता था । वह जो कहती वही होता था । कविराजा श्यामलदास के शब्दों में—“इन(महाराजा)को जहांगीर और (पासवान को) नूरजहां का नमूना कहना चाहिये ।” पासवान का बढ़ता हुआ प्रभुत्व और दुर्व्यवहार सरदारों को बड़ा असह्य था, जिससे उन्होंने साज़िश कर अन्त में उसे छल से मरवा दिया ।

उसने स्वयं कभी किसी युद्ध में वीरता का परिचय नहीं दिया और ऐसे अवसरों पर सदा पीठ ही दिखाई । वस्तुतः उसके वीर, स्वामीभक्त और कर्मनिष्ठ सरदारों और कर्मचारियों के बल पर ही उसका राज्य क़ायम रहा था ।

इन सब बुराइयों के होते हुए भी विजयसिंह में कई गुण थे । वह अच्छी सेवा करनेवाले व्यक्तियों का उचित आदर-सत्कार करता और उनको जागीरें आदि देकर सम्मानित करता था । वह धार्मिक वृत्ति का

नरेश था और मदिरा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त था। उसने अपने राज्य में मांस और मदिरा की बिक्री बन्द करवा दी थी। उसके समय में राज्य का विस्तार ही हुआ, जिसका कारण उसकी कूट नीति-युक्त चालें ही थीं।

उसके समय की रचनाओं में एक पुस्तक का पता चलता है। बार-हट विशनसिंह नामक कवि ने महाराजा विजयसिंह के नाम पर “विजय-विलास” नामक काव्य-ग्रंथ की रचना की थी। उसके समय में कई तालाब और अन्य स्थान आदि बनने का भी उल्लेख मिलता है।

महाराजा भीमसिंह

महाराजा भीमसिंह का जन्म श्रावणादि वि० सं० १८२२ (चैत्रादि १८२३) आषाढ सुदि १२ (ई० सं० १७६६ ता० १६ जुलाई) को हुआ था।

जन्म तथा गद्दीनशीनी

महाराजा विजयसिंह की मृत्यु के समय वह जैसलमेर में था, जहां वह विवाह करने के निमित्त गया था। विजयसिंह के देहांत की खबर मिलते ही वह तत्काल वहां से प्रस्थान कर पोकरण पहुंचा, जहां से सवाईसिंह को साथ ले श्रावणादि वि० सं० १८४६ (चैत्रादि १८४०) आषाढ सुदि ६ (ई० सं० १७६३ ता० १७ जुलाई) को रात्रि के समय वह लखणापोल (जोधपुर) पहुंचा। उस समय धायभाई शंभूदान, दीवान भंडारी भानीदास, बक्शी सिंघवी अखैराज, ओझा रामदत्त आदि ने उसके पास उपस्थित हो उससे महाराजा विजयसिंह के कुंवरों—शेरसिंह, सावंतसिंह आदि—तथा महाराजा अजीतसिंह के पुत्र प्रतापसिंह और छोटे-मोटे कार्यकर्ताओं को हानि न पहुंचाने का वचन

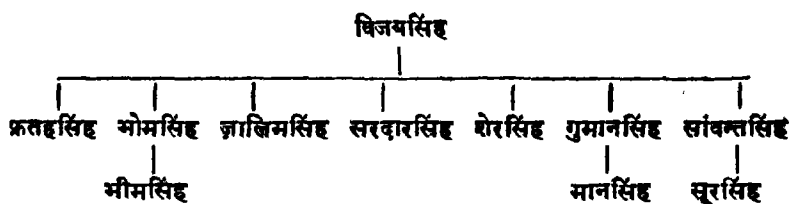
(१) इस ग्रंथ के प्रारम्भ में राव जोधा से लगाकर महाराजा अजीतसिंह तक वंशावली और फिर बख्तसिंह और विजयसिंह का हाल है। बख्तसिंह का हाल कुछ अधिक विस्तार से है। विजयसिंह के वर्णन में केवल उसकी गद्दीनशीनी और आपाजी सिंधिया के साथ की उसकी लड़ाई का हाल है। उक्त ग्रंथ की जो प्रतिलिपि हमारे देखने में आई उसमें पिछला भाग नहीं है, जिससे उसके निर्माणकाल का परिचय देना कठिन है।

मांगा। भीमसिंह ने उसी समय वचन दे दिया और पोरकण के ठाकुर सवाईसिंह ने भी उसकी पुष्टि कर दी। तब उपर्युक्त व्यक्तियों ने गढ़ के द्वार खोल उसे भीतर लिया और सलामी की तोपें दागी गईं, जिनकी आवाज़ सुनकर मृत महाराजा के पुत्र ज़ालिमसिंह तथा पौत्र मानसिंह, जो जोधपुर जाकर उस समय वहां हीशे खावत के तालाब पर लोढ़ा साहामल, आसोप के ठाकुर कृपावत रत्नसिंह, जसूरी के ठाकुर मेड़तिया पहाड़सिंह आदि के साथ ठहरे हुए थे, राज्य मिलने की आशा न देख प्रातःकाल के समय वहां से रवाना हो गये और मुल्क में लूट-मार करने लगे^१। आषाढ सुदि १२ (ता० २० जुलाई) को भीमसिंह ने सिंहासनासीन होने के पश्चात् सिंघवी बनराज को मेड़ता भेजा। उसने वहां पहुंचकर समुचित प्रबंध किया और लोढ़ा साहामल के चढ़ आने पर उसे हराया^२।

(१) टैंड-कृत “राजस्थान में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि ज़ालिमसिंह को भीमसिंह की सेना ने पीछा कर हराया, जिसपर वह उदयपुर चला गया, जहां राणा ने उसके नाम जागीर निकाज दी। वहां पर ही उसका जीवन व्यतीत हुआ (जि० २, पृ० १०७७)।

(२) जोधपुर राज्य की कथात; जि० ३, पृ० ११६-२०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८१८।

महाराजा विजयसिंह के जीवनकाल में तथा उसकी मृत्यु के पीछे भी राज्याधिकार प्राप्त करने के लिए भीमसिंह और ज़ालिमसिंह ने बख्ते के किये थे। इस संबंध में अधिक प्रकाश डालने के लिए नीचे विजयसिंह का वंशवृक्ष दिया जाता है—



उपर्युक्त वंशवृक्ष से प्रकट है कि महाराजा विजयसिंह का ज्येष्ठ कुंवर ऋतहसिंह था, जिसकी वि० सं० १८३४ में निस्संतान मृत्यु हो गई। ऋतहसिंह से छोटा भोमसिंह था।

लोढ़ा साहामल का बलूदा के ठाकुर चांदावत प्रतहसिंह श्याम-
सिंहोत से, जो जोधपुर में रहता था, वैर था। वि० सं० १८५० भाद्रपद
सुदि ४ (ई० सं० १७६३ ता० ६ सितंबर) को
साहामल का दमन करना

साहामल ने बलूदा पर चढ़ाई कर वहां बड़ा नुक-
सान किया। अनन्तर वह जैतारण होता हुआ बीलाड़े चला गया। वहां
वह अपने भाई मेहकरण के शामिल रहने लगा। मानसिंह पीछा जालोर
और जालिमसिंह गांव सिरियारी (मेरवाड़ा) जा रहा। महाराजा भीम-
सिंह ने जोधपुर से सर्वप्रथम बकशी सिंघवी अखैराज को लोढ़ा साहामल
एवं मेहकरण के विरुद्ध भेजा। उसके पहुंचने पर साहामल तो किसी
प्रकार निकल गया, परन्तु मेहकरण ने केसरिया धारणकर युद्ध किया
और लड़ता हुआ कार्तिक वदि १ (ता० २० अक्टोबर) को मारा गया।
इस लड़ाई में चंडावल के ठाकुर विशनसिंह ने अच्छी धीरता बतलाई।
इस प्रकार बीलाड़े पर राजकीय अधिकार स्थापित हुआ। साहामल
और आसोप का ठाकुर रतनसिंह आदि सोजत, गोड़वाड़ आदि परगनों
में होते हुए मेवाड़ में गये। उन दिनों साहामल का पुत्र कल्याणमल
इस्माइलबेग की फौज के साथ डीडवाणे में था। मारोठ के हाकिम
सिंघवी द्विन्वूमल ने गोड़ावाटी एवं चौरासी के सरदारों-सहित जाकर
उससे भगड़ा किया, जिसपर वह भाग गया और उसकी फौज को

उसकी भी पहचान ही मृत्यु हो गई थी, जिससे उसका पुत्र भीमसिंह राजपूताने में प्रच-
लित प्रथा के अनुसार वास्तविक हकदार था। किंतु उदयपुर की राजकुमारी से विवाह
होने के समय विजयसिंह ने यह हक़ार किया था कि उससे जो पुत्र उत्पन्न होगा,
वही हक़दार माना जायगा। इस कारण से जालिमसिंह भी अपने को हक़दार समझता
था। उसको विजयसिंह ने भी अपना उत्तराधिकारी मान लिया था। पीछे से अपनी
पासवान गुलाबराय के कहने से उसने शेरसिंह को युवराज बनाया। फिर अपनी मृत्यु
से कुछ पूर्व उसने अपने सबसे छोटे पुत्र सांमतसिंह के पुत्र सूरसिंह को राज्याधिकारी
बनाने की इच्छा अपने कर्मचारियों के सामने प्रकट की। इन सब बातों का परिणाम यह
हुआ कि उसके पिछले समय में राज्य के लिए कलह का सूत्रपात हो गया।

राजकीय सेना ने लूट लिया^१।

अनन्तर सेना के साथ जाकर सिंघवी अखैराज ने देसूरी वर कब्ज़ा किया। इस लड़ाई में अखैराज के भाई इन्द्रराज के गोली लगी। फिर उस-
 (अखैराज)ने जालोर, गोडवाड़ आदि परगनों में समु-
 सिंघवी अखैराज का उपद्रव
 के स्थानों का प्रबंध करना
 खित प्रबन्ध किया। इससे आमदनी में पर्याप्त वृद्धि
 हुई। लगभग उसी समय महाराजा ने पोकरण के ठाकुर
 के साथ अपने अन्य कृपापात्र व्यक्तियों को अतिरिक्त जागीरें आदि दीं^२।

भीमसिंह को अपने भाइयों की तरफ से खदैव खटका बना रहता
 था, अतएव उसने अवसर प्राप्त होते ही शेरसिंह एवं सावंतसिंह तथा उसके
 पुत्र सूरसिंह को मरवा डाला और इस प्रकार
 महाराजा को अपने भाइयों
 को मरवाना
 निरपराध व्यक्तियों की हिंसा का पाप उठाकर
 उसने अपना मार्ग निष्कण्टक किया^३।

राज्य के बखेड़ों में प्रारम्भ से ही उलझे रहने पर भी महाराजा का
 अपने सरदारों की तरफ पूरा-पूरा ध्यान था। उसने पुराने सरदारों के पट्टे
 पूर्ववत् बहाल रखने के साथ ही उनमें से कई को
 लकवा दादा की मारवाड़
 पर चढ़ाई
 नये गांव प्रदान किये थे। पोकरण का सवाई-
 सिंह फलोधी का इलाक़ा अपने नाम लिखाना
 चाहता था, परन्तु सिंघवी जोधराज ने समझा-बुझाकर महाराजा को ऐसा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२०।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२०।

(३) बीरविनोद; भाग २, पृ० ८५८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी शेरसिंह,
 सावंतसिंह एवं सूरसिंह को मरवाने का उल्लेख है (जि० ३, पृ० १०८-९)। डॉड के
 अनुसार भीमसिंह ने सरदारसिंह को भी मरवा दिया। शेरसिंह की उसने आँखें
 निकलवाई थीं। पीछे से उसने आत्महत्या कर ली (जि० २, पृ० १०७७-८)।

(४) ख्यात के अनुसार महाराजा ने कुचामय के ठाकुर मेरुतिया शिवनाथसिंह
 को परबतसर परगने का गांव गंगावा, बलूदा के ठाकुर प्रतहसिंह चांदावत को गांव
 बयाह एवं केकीदड़ा तथा चंडावत के ठाकुर कृपावत विशनसिंह को गांव अटवड़ा और
 सबाखिया दिये।

करने से रोक दिया, क्योंकि इससे दूसरे सरदारों की नाराज़गी के बढ़ जाने की आशंका थी। इससे सवाईसिंह बड़ा अप्रसन्न हुआ। कुछ समय बाद जब वह गंगास्नान के लिए रवाना हुआ तो मार्ग में दिल्ली जाकर दक्षिणियों से मिला। इसके बाद वि० सं० १८५१ (ई० सं० १७६४) में लकवा दादा ने मारवाड़ पर चढ़ाई की। उस समय महाराजा ने सवाईसिंह की ही मार-फ़त बात कर कुछ रुपया देना ठहराकर उसे वहां से वापस लौटाया। अनन्तर महाराजा ने सवाईसिंह को अतिरिक्त पट्टा दिया^१।

वि० सं० १८५२ (ई० सं० १७६५) में महाराजा ने राज्य के कार्यकर्त्ताओं में हेर-फेर किये। उसी वर्ष सेना-
 भंडारी शोभाचंद का घाणेराम पर भेजा जाना सहित भंडारी शोभाचंद घाणेराम पर गया, परन्तु वहां उसका अधिकार न हो सका^२।

वि० सं० १८५३ (ई० सं० १७६६) में भंडारी भानीदास के स्थान में सिंघवी जोधराज का पुत्र दीवान हुआ। कार्य सारा जोधराज करता था, परन्तु वह किसी सरदार की भी खातिरदारी नहीं जालोर पर सेना भेजना करता था, जिससे वे सब उससे अप्रसन्न रहते थे। उन दिनों मानसिंह जालोर में रहकर अपने को स्वतन्त्र राजा मानता था^३। महाराजा भीमसिंह की बहुत समय से यह अभिलाषा थी कि किसी प्रकार वहां अपना कब्ज़ा हो जाय। वि० सं० १८५४ (ई० सं० १७६७) में महाराजा ने फ़ौज देकर बड़शी सिंघवी अख्तराज को जालोर पर भेजा। उसने वहां जाकर घेरा डाला, परन्तु जालोर परगने में राजकीय अधिकार स्थापित हो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२०-२१।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२१।

(३) आब्यादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) वैशाख वदि १ (ई० सं० १७६८ ता० १ अप्रैल) रविवार के जालोर से मानसिंह के भेजे हुए उदयपुर के महाराजा भीमसिंह के नाम के पत्र से स्पष्ट है कि मानसिंह अपने को एक राज्य का स्वामी समझता था और अपनी उपाधि 'राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्री' लिखता था (वीरविनोद; भाग २, पृ० १५७४)।

जाने पर भी जब कई मास तक घेरा रहने पर गढ़ और नगर पर कब्ज़ा करने में वह समर्थ न हुआ तो महाराजा की आज्ञा से वह कैद कर लिया गया। कई मास तक कैद में रहने के बाद ६०००० रुपया देने की शर्त पर वह मुक्त किया जाकर पुनः बख्शी के पद पर नियुक्त किया गया। इस चढ़ाई के समय मानसिंह ने उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम इस आशय का पत्र भेजा कि यहाँ कार्य उत्पन्न हुआ है, इसलिये आंबाजी की सेना सहित कूचकर अखिल घाटा उतरकर आ जावें; इधर से मैं आपके शामिल होकर गोड़वाड़ आपको दिला दूंगा। महाराजा विजयसिंह की उदयपुर की राणी से उत्पन्न उसके पुत्र जालिमसिंह को महाराणा जोधपुर की गद्दी दिलाना चाहता था, अतएव वह स्वयं तो न गया; परन्तु यह अवसर जालिमसिंह के लिए उपयुक्त समझ उसने अपनी सेना के साथ उसको रवाना किया। महाराजा भीमसिंह को इसकी सूचना मिलने पर उसने जालिमसिंह को रोकने के लिए सिंधवी वनराज को भेजा, जिसने उस- (जालिमसिंह) के पहुंचने के पूर्व ही सिरियारी गांव में डेरा डाला और उधर का मार्ग बन्द कर दिया। जालिमसिंह आंबाजी की सेना के साथ काछबली (मेरवाड़ा) गांव में ठहरा रहा। उस समय उसके भाग्य ने साथ न दिया और कुछ समय बाद ही श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) आषाढ़ वदि ५ (ई० सं० १७६८ ता० ३ जून) को उसकी वहीं मृत्यु हो गई, जिससे भीमसिंह को जालिमसिंह की तरफ़ का खुटका जाता रहा।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२१-२।

(२) बीरबिनोद; भाग २, पृ० १५७४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०८। “जोधपुर येथील राज कार्यों” से पाया जाता है कि महाराणा भीमसिंह ने सिंधिया को जालिमसिंह का मददगार बनाकर उसके भारकृत नागौर और मारवाड़ का आधा राज्य उस (जालिमसिंह) को दिला यह क्काड़ा मिटाने की बातचीत चलाई थी (खेळांक २१); परन्तु भीमसिंह के राज्य का वास्तविक हकदार होने से मारवाड़ के अधिकांश सरदार उसके पक्ष में थे और जालिमसिंह का पक्ष कमजोर था, जिससे क्काड़ा तय न हुआ और विरोध चार वर्ष तक चलता रहा।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि जालोर के घेरे में सफलता न मिलने के कारण, अखैराज कैद कर लिया गया था, परन्तु उक्त परगने में सिंघवी बनराज तथा चैनकरण फ़ौज के साथ थे । मानसिंह की फ़ौज से जोधपुर की सेना की लड़ाई मानसिंह की तरफ़ से सिंघवी शंभूमल पालनपुर आकर अरबों (मुसलमानों) की फ़ौज ले आया । जालोर परगने के गांव मांडोली में उसका जोधपुर की फ़ौज से सामना हुआ, जिसमें पहले तो शंभूमल और अरबों की हार हुई, परन्तु पीछे से वर्षा आ जाने के कारण जोधपुर की सेना बिसर गई और सिंघवी बनराज तथा चंडावल का विशनसिंह घायल हुए ।

महाराजा भीमसिंह की सगाई जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह की बहिन से और उस (प्रतापसिंह) की सगाई महाराजा विजयसिंह की पौत्री (कुंवर फ़तहसिंह की पुत्री) अभयकुंवर-बाई से हुई थी । श्रावणादि वि० सं० १८५७ (चैत्रादि १८५८) के आषाढ मास में दोनों नरेश पुष्कर गये, जहां दोनों विवाह बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुए । इस अवसर पर महाराजा भीमसिंह की बारात के साथ सवाईसिंह (पोरण), माधोसिंह (आडवा), विशनसिंह (चंडावल), करणीदान (काणाणा), शंभूसिंह (नींबाज) आदि अनेक चांपावत, कुंपावत, ऊदावत, करणोत, मेड़तिया और जोधा सरदार थे । विवाह के पश्चात् जैतारण, बीलाड़ा, सोजत तथा पाली होता हुआ महाराजा जोधपुर लौटे ।

महाराजा के विवाह के लिए पुष्कर चले जाने पर, मानसिंह ने उसकी अनुपस्थिति में अपने आदमियों सहित जाकर पाली को लूटा और वहां के कुछ लोगों को पकड़ लिया । यह समा-मानसिंह का पाली लूटना चार जालोर परगने में महाराजा की तरफ़ के सिंघवी चैनकरण एवं चंदावल बहादुरसिंह को मिलने पर वे सेना सहित साक-

(१) जोधपुर राज्य की क्यात; जि० ३, पृ० १२२ ।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२३-७ ।

दड़ा गांव में पहुंचे। पहले उन्होंने शांति के साथ मानसिंह को समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु जब उसने कोई ध्यान न दिया तो लड़ाई हुई और मानसिंह को बाध्य होकर वह स्थान छोड़ना पड़ा। इस लड़ाई में महाराजा की तरफ़ का रामा का ठाकुर अमरसिंह जोधा और मानसिंह के पक्ष का केजडला के ठाकुर जसवंतसिंह का भाई मारा गया। अन्य कितने ही

(१) इस लड़ाई के विषय में ऐसी प्रसिद्धि है कि मानसिंह के पक्ष के सरदारों में से हरसोलाव ठिकाने के छोटे भाइयों में से चांपावत कर्णसिंह (साखावास) ने मानसिंह के चारों तरफ़ से घिर जाने पर उससे कहा कि आप यहां से चले जाँव अन्यथा मारे जायेंगे। इसपर मानसिंह वहां से निकलकर जालोर चला गया और उसके स्थान में कर्णसिंह ने जोधपुर की सेना का धीरतापूर्वक मुकाबिला किया, जिससे मानसिंह की प्राण-रक्षा हुई। महाराजा भीमसिंह का देहांत होने पर जब मानसिंह गद्दी पर बैठा तब भीमसिंह की मृत्यु के बाद उत्पन्न धोंकलसिंह का अधिकांश सरदारों ने पक्ष लिया। उस समय कर्णसिंह ने भी धोंकलसिंह का पक्ष ग्रहण किया। इससे नाराज़ होकर मानसिंह ने कर्णसिंह की साखावास की जागीर ज़ब्त कर ली। कर्णसिंह की तरफ़ से अपनी पूर्व सेवा का स्मरण दिलाये जाने पर महाराजा मानसिंह ने उसके पास वह दोहा लिख भेजा—

पिंडरी गई प्रतीत, गाढ़ रिजक दोनों गया।

चांपा हवे नचीत, कनक उडावो करणसी ॥

भाषार्थ—तुम्हारे शरीर का विश्वास जाता रहा और साथ में तुम्हारी दृढ़ता और रिजक (निर्वाह का साधन) दोनों चले गये। हे चांपावत कर्णसिंह ! अब निश्चित होकर कनक (काग अथवा पतंग) उड़ाओ।

इसके उत्तर में कर्णसिंह ने महाराजा की सेवामें नीचे लिखा दोहा कहलाया—

पिंडरी हुती प्रतीत, साकदड़े देखी सही।

इण घर आई रीत, दुरगो सफ़रां दागियो ॥

भाषार्थ—मेरे शरीर का विश्वास साकदड़े में भली प्रकार देखा गया है, परन्तु इस घर में ऐसी ही रीति है कि दुर्गा का भी दाह संस्कार चिम्रा के तट पर हुआ अर्थात् अपनी मृत्यु के समय वह अपनी जन्मभूमि तक न देख सका।

टॉड-हूट “राजस्थान” से पाया जाता है कि इस लड़ाई में मानसिंह अवश्य पकड़ा जाता; परन्तु आहोर का ठाकुर उसे बचाकर निकाल ले गया (जि० २, पृ० १०७६)।

व्यक्ति भी काम आये। इस विजय का समाचार पुष्कर में महाराजा भीमसिंह के पास पहुंचने पर उसने चैनकरण आदि को गांव आदि देकर सम्मानित किया^१।

अनन्तर महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी बनराज ने पुनः ससैन्य जाकर जालोर पर घेरा डाला। उन्हीं दिनों भंडारी धीरजमल ने फ़ौजकशी कर गांव भइया, गेंडा, सनावड़ा आदि से धन वसूल किया। चौरासी के ठाकुर भी उपद्रवी हो रहे थे। धीरजमल ने परबतसर परगने में जाकर बड़ के ठाकुर अजीतसिंह से पचीस हजार रुपये लिये और गांव मोटड़े में बनवाई हुई उसकी गद्दी को गिरा दिया। तब पोरकरण के ठाकुर सवाईसिंह का पुत्र सालिमसिंह, आउवा का ठाकुर माधोसिंह, रोहट का ठाकुर कल्याणसिंह, आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, चंडावल का ठाकुर विशनसिंह, रास का ठाकुर जवानसिंह, नींबाज का ठाकुर शंभूसिंह, रीयां का ठाकुर विहदसिंह एवं अन्य कितने ही छोटे-बड़े सरदार गांव कालू में एकत्र होकर उपद्रव करने लगे। धीरजमल ने ससैन्य जाकर उन्हें भी परास्त किया, जिससे उपद्रवी सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। अनन्तर धीरजमल ने गांव धनेरिया एवं रास की गढ़ियां गिराई और लांबिया पर क़ब्ज़ा किया। फिर नींबाज जाकर वहाँ छः मास तक लड़ा। उसके घेरे के समय ही वहाँ का ठाकुर शंभुसिंह मर गया। तब उसके पुत्र सुलतानसिंह के अधीनता स्वीकार कर लेने पर नींबाज, बराटिया एवं सोगावास का २५००० का पट्टा उसके नाम कर दिया गया। अनन्तर धीरजमल परबतसर की तरफ़ गया, जिसके बाद उसने दक्षिणियों को रुपया दे सांभर से उनका क़ब्ज़ा हटाया और अजमेर के संबंध में भी उनसे बात ठहराई^२।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२७-८।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२८-९।

जालोर पर सिंघवी बनराज का घेरा था। उसके पास कुछ छोटे-मोटे सरदार तथा मुसलमानों की सेना थी। पीछे से भंडारी धीरजमल भी अपनी सेना के साथ उसके शरीक हो गया और मोर्चा अधिक दृढ़ किया गया। इसपर निकाले हुए सरदारों ने नींबाज में रहते समय सिंघवी जोधराज को, जो दीवान का कार्य करता था, मारने की मंत्रणा की। आडवा के ठाकुर के यहां कार्य करनेवाले गांव सानेई के भाटी साहबसिंह ने यह कार्य करने का जिम्मा अपने ऊपर लिया। तदनुसार जोधपुर पहुंच खेजड़ला के कामदार मेहता मलूकचंद को साथ ले वह जोधराज की हवेली पर गया, जहां जाकर उसने भेद गुप्त रखने की दृष्टि से उस (जोधराज) से सरदारों की खातिरी का रुक्का लिखवाया। फिर वि० सं० १८५६ भाद्रपद वदि २ (ई० स० १८०२ ता० १५ अगस्त) को रात्रि के समय सीढ़ी के सहारे उसके शयनागार में प्रवेशकर भाटी साहबसिंह ने जोधराज को सोते समय मार डाला। इसका पता लगने पर मलूकचंद मार डाला गया और आडवा, आसोप, चंडावल, रोहट, रास तथा नींबाज के पट्टे जूझ कर लिये गये। साथ ही सिंघवी इन्द्रराज ने ससैन्य विरोधी सरदारों पर चढ़ाई की और उनके शामिल रहनेवाले लोगों से धन वसूल किया। उसके चढ़ आने से सरदार मेवाड़ में होकर कोटा खले गये।

विरोधी सरदारों को राज्य से बाहर निकाल इन्द्रराज भी जालोर पहुंचा। अनन्तर वि० सं० १८६० श्रावण सुदि ७ (ई० स० १८०३ ता० २५ जुलाई) को इन्द्रराज, बनराज और गुलराज तीनों भाइयों तथा भंडारी गंगाराम ने एक साथ चार तरफ से जालोर पर आक्रमण कर दिया। एक बड़ी लड़ाई के बाद नगर पर उनका अधिकार हो गया और वहां के लोग बड़ में घुस गये। इस लड़ाई में सिंघवी बनराज गोली लगने से मर गया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने इन्द्रराज के पुत्र कृतहराज को आभूषण

महाराजा की सेना का
जालोर पर कब्जा करना

आदि प्रदान किये' ।

जालोर पर घेरा पड़ा हुआ था, उन्हीं दिनों महाराजा को अवीठ की बीमारी हुई और उसीसे कार्तिक सुदि ४ (ता० १६ अक्टोबर) को उसका देहांत हो गया^१ । महाराजा के कोई सन्तान न होने से उस समय गढ़ में उपस्थित कार्यकर्ताओं ने तत्काल राजकीय कोठारों में मोहर लगा दी । महाराजा की ग्यारह राणियों के नाम मिलते हैं, जिनमें से आठ उसके साथ सती हुई^२ ।

महाराजा भीमसिंह ने केवल दस वर्ष तक ही शासन किया, पर इतने थोड़े समय में ही उसने जिस क्रूर और उग्र स्वभाव का परिचय दिया, वह एक शासक के लिए सर्वथा अनुपयुक्त था । गद्दी बैठते ही उसने अपने उन भाइयों आदि के खून से अपने हाथ रंगे, जिनकी तरफ से उसे बाधा पहुंचने का खतरा था । उसने यह कार्य करके एक प्रकार से शाहजहां, औरंगज़ेब आदि मुसलमान बादशाहों का ही अनुसरण किया । उसका बस चलता तो वह मानसिंह को भी जीवित न छोड़ता, पर इसी बीच उसका देहांत हो गया, जिससे उसकी इच्छा मन में ही रह गई । उसका राज्य के सरदारों से भी अच्छा व्यवहार नहीं था, जिससे अधिकांश सरदार उसके विरोधी ही रहे और उनसे उसका अंत तक झगड़ा बना रहा । उसकी सारी शक्तियां उधर लगी रहने से वह कोई लोक-हित का कार्य न कर सका । फिर भी इमानदारी से सेवा करनेवाले लोगों का वह पूरा आदर करता था । ओझा रामदत्त के नाम के वि० सं० १८५० आश्विन सुदि ४ (ई० सं० १७६३ ता० ११ अगस्त के परवाने में महाराजा ने उसकी सेवा की बड़ी प्रशंसा की थी ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३० ।

(२) दीड जिल्ला है कि जालोर पर जोधपुर का इतनी ज़म्बी अवधि तक घेरा पड़ा रहने से क्रमशः गढ़ के भीतर का सामान ख़त्म होने लगा और स्वयं मानसिंह भी चबरा गया । संभव था कि इस बार उसका अंत हो जाता, परन्तु इसी बीच महाराजा भीमसिंह का देहांत हो जाने से स्थिति बदल गई (जि० ३, पृ० १०७६-८०) ।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३०-१ ।

जोधपुर में रहनेवाला मरहटों का वकील कृष्णाजी जगन्नाथ अपने स्वामी के नाम के अपने एक पत्र में भीमसिंह के बारे में लिखता है कि वह खुशामद-पसंद, शराबी एवं कामुक नरेश है। राज्य कार्य सवाईसिंह के सुपुर्देकर वह दिन-रात खियों में निमग्न रहता है और नगर की खियों तक को एकट्ठा मंगता है।

महाराजा भीमसिंह के वर्णन का बीस सर्गों का "भीमप्रबंध" नाम का एक संस्कृत काव्य मिला है, जिसको महाराजा भीमसिंह की आज्ञा से भट्ट हरिवंश ने बनाया था। इस काव्य का रचयिता हरिवंश, भट्ट लाल का पुत्र और महाराजा अजीतसिंह के पौराणिक शिव भट्ट का पौत्र एवं श्रीमाली, ब्राह्मण था। इस काव्य में क्रमशः भीमसिंह और उसके पूर्वजों का इतिहास विशेष रूप से नहीं, किन्तु भीमसिंह के भिन्न-भिन्न स्थानों की वसंत क्रीड़ा, वंश वर्णन, भ्रातृवर्ग संबंध, विवाह वर्णन, वसंत वर्णन, अमात्यादि राजप्रकृति वर्णन, राई का बाग में वसंत क्रीड़ा वर्णन, बालसमंद के बाग में वसंत क्रीड़ा वर्णन, सूरसागर के बाग में वसंत क्रीड़ा वर्णन, मंडोवर के बाग में वसंत क्रीड़ा वर्णन, मंडोवर पंचकुंड आदि की यात्रा का वर्णन, मोतीमहल में वसंत क्रीड़ा वर्णन, वसंत क्रीड़ा वर्णन में जातकोत्सव वर्णन, विज्ञप्ति प्रस्ताव वर्णन, मृगया विहार, सकल सामन्त वर्णन, मंत्रिवर्ग वर्णन, कोष्ठरक्षक वर्णन, कार्याधिकारियों का वर्णन, सख महलों का वर्णन और क्रिश्ने का वर्णन है। इस काव्य से पाया जाता है कि वह संस्कृत-प्रेमी और

(१) जोधपुर वेथील राजकारणें; लेखांक २६, पृ० ८४।

(२) पौराणिकोऽजीतनराधिपस्य भट्टः शिवस्तस्य सुतो हि लालः ॥

तदात्मजोऽहं हरिवंशभट्टो नृपाज्ञया काव्यमिदं चकार ॥

भीमप्रबंध; सर्ग २०, श्लोक ११०।

इति श्रीभीमप्रबंधे महाकाव्ये श्रीमालिब्राह्मणकुलजातभट्टहरिवंशकृतौ दुर्गादिवर्णनेनामविंशतितमः सर्गः समाप्तश्चायं ग्रंथः।

(३) इति श्री.....कृतौ वंशवर्णने राज्यलामः, भ्रातृवर्ग-संबंधिवर्गवर्णनं, विवाहवर्णनं, वसंतवर्णनं, अमात्यादिराजप्रकृतिवर्णनं,



महागजा मानसिंह

विलास-प्रिय राजा था। यह भी सुना जाता है कि उसके समय में कवि रामकृष्ण ने “अलंकारसमुच्चय” नामक पुस्तक की रचना की थी।

उसकी मुहर में निम्नलिखित लेख नागरी अक्षरों में खुदा हुआ मिलता है—

“श्रीकृष्णचरणशरणराजराजेश्वरमहाराजाधिराजमहाराजश्रीभीमसिं-
घजीकस्य मुद्रिका”

इससे स्पष्ट है कि वह कृष्ण का भक्त था।

मानसिंह

महाराजा मानसिंह का जन्म वि० सं० १८३६ माघ सुदि द्वितीय
११ (ई० स० १७८३ ता० १३ फरवरी) गुरुवार को हुआ था। ऊपर

भीमसिंह के वृत्तांत में जालोर के घेरे का वर्णन
महाराजा का जन्म और गद्दीनशानी आ गया है। जोधपुर राज्य की सेना ने जालोर के

गढ़ का घेरा इतना कठिन कर दिया था कि रसद
आदि की तंगी हो जाने के कारण मानसिंह ने गढ़ खाली कर देने का
इरादा किया और इस सम्बन्ध में उसने सिधवी इन्द्रराज से बात चलाई।
यह बात वि० सं० १८६० आश्विन सुदि १ (ई० स० १८०३ ता० १६ सित-
ंबर) को हुई। इन्द्रराज भी इसके लिए तैयार हो गया एवं दीवाली के दिन
गढ़ खाली कर देने की बात तय हुई। गढ़ के भीतर जलन्धरनाथ का एक

राजिकोद्याने वसंतक्रीडावर्णनं, बालसिंधूद्याने वसन्तक्रीडावर्णनं, सूर-
सागरोद्याने वसन्तक्रीडावर्णनं, मंडोवरोद्याने वसंतक्रीडावर्णनं, मंडोवर-
पंचकुण्डबैजनाथमंडलेश्वरभोगशैलनागनदीवर्णनं, नागनदीयात्रावर्णनं,
मुक्ताफलहर्म्यं लक्ष्मीगृहे वसन्तक्रीडावर्णनं, वसन्तक्रीडावर्णने जातको-
त्सववर्णनं, गौरीयात्रावर्णनं, विज्ञप्तिप्रस्ताववर्णनं, मृगयाविहारः, सकल-
सामन्तवर्णनं, मंत्रिवर्गवर्णनं, कोष्टरक्षकादिवर्णनं, अधिकारादिवर्णनं,
सकलहर्म्यवर्णनं, दुर्गादिवर्णनं.....

(इसी प्रकार भिन्न-भिन्न सगों के अन्त में लिखा मिलता है)

मन्दिर था, जहाँ का पुजारी आयस देवनाथ था। मानसिंह वहाँ दर्शनार्थ जाया करता था। आयस देवनाथ ने महाराजा से एक दिन निवेदन किया कि मुझे जलन्धरनाथ की आज्ञा हुई है कि यदि कार्तिक सुदि ६ तक महाराजा गढ़ नहीं छोड़े तो गढ़ उससे कभी नहीं छूटेगा और जोधपुर का राज्य भी उसे ही मिल जायगा। इसपर महाराजा ने उससे कहा कि यदि ऐसा हुआ तो मैं आपको वचन देता हूँ कि मेरे राज्य में आपकी ही आज्ञा चलेगी। दीवाली निकट आने पर इन्द्रराज ने गढ़ खाली कर देने के लिए कहलाया तो महाराजा ने उत्तर दिया कि कार्तिक सुदि ६ तक ठहरो, फिर मैं गढ़ अवश्य खाली कर दूंगा और इस बात की पक्की लिखा-पढ़ी कर दी। इसी बीच कार्तिक सुदि ४ (ता० १६ अक्टोबर) को जोधपुर में महाराजा भीमसिंह का स्वर्गवास हो गया। तब भंडारी शिवचंद, धाय-भाई शंभूदान, मुंहणोत हानमल आदि ने जोधपुर से सिंघवी इन्द्रराज को लिखा कि घेरा जिस प्रकार है उसी प्रकार रखना, महाराणी के गर्भ है। सवाईसिंह को पोकरण से बुलाया है। उसके आने पर जैसा निश्चय होगा लिखा जायगा। यह समाचार कार्तिक सुदि ५ (ता० २० अक्टोबर) को जालोर पहुंचने पर इन्द्रराज आदि ने परस्पर विचार कर यह तय किया कि मानसिंह को ही राजा बना देना उचित है, क्योंकि वह जवान और सब प्रकार से योग्य है। अनन्तर उन्होंने ललवाणी अमरचंद को मानसिंह के पास भेजकर भीमसिंह के देहांत की सूचना दी, जिसपर उसने इन्द्रराज एवं गंगाराम को अपने पास बुलाया। उन्होंने उससे कहा कि आप जोधपुर पधारें। उनकी यही राय देखकर मानसिंह ने उनकी खातिरी के खास रुक्रे लिख दिये और सरदारों आदि के पट्टे निश्चित कर उनकी मान-मर्यादा में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आने का इत्तारानामा भी लिख दिया। तब इन्द्रराज ने दूत भेजकर जोधपुर लिखा कि विजयसिंह के युवा पौत्र मानसिंह के होते हुए और कोई सलाह निश्चित करना ठीक नहीं। विजयसिंह के समान ही मानसिंह किसी सरदार का बिगाड़ नहीं करेगा, इसका हमने वचन ले लिया है, अतएव इस विषय में किसी प्रकार की

शंका न करें। इस पत्र के जोधपुर पहुँचने पर वहाँ के लोगों ने अपनी कमज़ोरी और सारी फ़ौज जालोर के अधिकारियों के पास होने के कारण इन्द्रराज के पास उत्तर भिजवाया कि मज़ीं आवे जैसा करो, हमें उज़ नहीं है, पर सरदारों के संबंध में पक्की लिखा-पढ़ी अवश्य करा लेना। सवाईसिंह ने जब जोधपुर पहुँचकर यह हाल सुना तो वह मृत महाराजा भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भवती होने अथवा मानसिंह को राजा बनाये जाने के संबंध में अपनी राय न ली जाने के कारण सरदारों के विचार से सहमत नहीं हुआ, पर वह अकेला क्या कर सकता था। अनन्तर जालोर से प्रस्थान कर मानसिंह गांव सालावास पहुँचा, जहाँ निकट के छोटे-मोटे सरदार एवं परबतसर से भंडारी धीरजमल तथा जोधपुर से सवाईसिंह, शिवनाथसिंह आदि उसके पास उपस्थित हो गये। महाराजा ने सब का यथोचित सत्कार किया। जोधपुर नगर के निकट पहुँचने पर मानसिंह हाथी पर आरुढ़ हुआ, जिसके पीछे चंवर करने के लिए पोकरण का सवाईसिंह बैठा। इस प्रकार वि० सं० १८६० मार्गशीर्ष वदि ७ (ई० सं० १८०३ ता० ५ नवंबर) को मानसिंह जोधपुर के गढ़ में दाखिल हुआ और उसी समय शेष सरदार आदि भी उसके पास उपस्थित हो गये^१।

मानसिंह के गढ़ में दाखिल होने से पूर्व ही सवाईसिंह आदि सरदारों की राय से भीमसिंह की दो राणियों—देरावरी तथा तंवराणी—को चोपासणी भिजवा दिया गया था। पहले के विरोधी सरदारों को, जो भीमसिंह के समय अलग हो गये थे और अब मानसिंह के पास उपस्थित हो गये थे, राणियों का चोपासणी रहना अनुचित प्रतीत हुआ और उन्होंने इस संबंध में मानसिंह से कहा तो उसने उत्तर दिया कि मैंने तो उन्हें भिजवाया नहीं है, आप समझाकर ले आवें। इसपर सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि देरावरी राणी गर्भवती है, कदाचित् उसके पुत्र हुआ तो उसका क्या प्रबंध

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १-५ । वीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६० ।

होगा ? तब महाराजा ने इस बात का रक्का लिख दिया कि यदि उक्त महाराणी के पुत्र हुआ तो वही जोधपुर का शासक होगा तथा मैं जालोर चला जाऊंगा और यदि पुत्री हुई तो उसका विवाह जयपुर अथवा उदयपुर कर दिया जायगा। वह रक्का चोपासणी के गुसाईं विठ्ठलराय को सौंप दिया गया। पीछे चोपासणी से राणियों ने प्रस्थान किया और वे सवाईसिंह आदि सरदारों की राय के अनुसार जोधपुर पहुंचकर तलहटी के महलों में ही ठहर गईं; जहां महाराजा की तरफ से चौकी पहरें का पूरा-पूरा प्रबंध कर दिया गया^१।

इसके बाद माघ सुदि ५ (ई० स० १८०४ ता० १७ जनवरी) को मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। इस अवसर पर उसने पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह को अपना प्रधान मंत्री नियतकर भंडारी गंगाराम को दीवान, सिंघवी मेघराज अजै-राजोत को बख्शी, सिंघवी इन्द्रराज को मुसाहिब तथा सिंघवी कुशलराज और उसके भाई सुखराज को क्रमशः जालोर एवं सोजत का हाकिम बनाया^२।

मानसिंह के जालोर में रहते समय सिंघवी जोरावरमल के पुत्र उसका साथ छोड़कर भीमसिंह के शामिल हो गये थे। जोधपुर का राज्य प्राप्त करने के बाद महाराजा ने उन्हें हाज़िर होने को कहलाया तो जीतमल और सूरजमल तो आ गये, परन्तु फ़तहमल एवं शंभूमल नहीं आये और क्रमशः सिरोही तथा आउवा में बने रहे^३।

(१) डॉड लिखता है कि महाराजा ने पुत्र होने पर उसे नागोर और सिवाया की जागीर एवं पुत्री होने पर उसका विवाह हुंठाड़ (जयपुर) में कर देने का वचन दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६०। दयालदास की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का ऐसा ही उल्लेख मिलता है (जि० २, पत्र १७)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६।

(४) वही; जि० ४, पृ० ६।

कुछ समय बाद यह संवाद प्रसिद्ध हुआ कि तलहटी के मइलों में, जहाँ महाराजा भीमसिंह की राखियां रहती थीं, देरावरी राणी के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ है और वह भाटी छत्रसिंह के साथ ठाकुर सवाईसिंह आदि की सहायता से खेतड़ी पहुँचा दिया गया है^१। उसका नाम धोकलसिंह रक्खा गया। इस बात की खबर महाराजा को होने पर वह सवाईसिंह से नाराज़ हो गया। पीछे से महाराजा की मर्ज़ी न होने पर भी सवाईसिंह अपने पाँच-सात सौ आदमियों के साथ पोकरण चला गया^२। भीमसिंह के पुत्र होने की कथा को महाराजा अपने विरोधियों का प्रपंच मानने लगा।

ई० स० १८०३ (वि० सं० १८६०) में लॉर्ड वेलेज़ली के समय अंग्रेज़ों की ईस्ट इंडिया कम्पनी ने, जिसका उत्तरी भारत में काफ़ी प्रभुत्व बढ़ गया था, महाराजा मानसिंह के साथ संधि की बातचीत की। दोनों पक्षों में परस्पर मैत्री रखने, जोधपुर राज्य के खिराज से मुक्त रहने, अक्सर उपस्थित होने पर सहायता देने और अपनी सेवा में अंग्रेज़ों अथवा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से तो यही पाया जाता है कि महाराजा पुत्रोत्पत्ति की बात को विरोधियों का प्रपंच मानता था, परन्तु जोधपुर के कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों के मुख से सुना गया कि महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी एक राखी से पुत्र अवश्य उत्पन्न हुआ था। उसके वास्तविक हज़रदार होने के कारण ही पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह उसके पक्ष में हो गया था। पुत्रोत्पत्ति की पुष्टि एक बात से और होती है। पोकरण के ठाकुर की अनुपस्थिति में ही जो पत्र जोधपुर के अधिकारियों ने सिंचवी इन्द्रराज के पास जालोर लिखा था उसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि मृत महाराजा की राखी के गर्भ है (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २)। ऐसी दशा में पीछे से पुत्र होना अचरज की बात नहीं है। राजपूताने की कई रियासतों—उदयपुर, जयपुर आदि—में ऐसी घटनाएँ होने के उदाहरण पाये जाते हैं।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

दयालदास की ख्यात में भी जगभग ऐसा ही उल्लेख है (जि० २, पत्र १७)।

फ्रांसीसियों को नौकर रखने के पूर्व कम्पनी की राय लेने आदि के संबंध का एक अहदनामा तैयार हुआ, जिसपर वि० सं० १८६० पौष सुदि ६ (ई० स० १८०३ ता० २२ दिसंबर) को कम्पनी की तरफ से माननीय जेनरल जेर्ार्ड लेक का हस्ताक्षर अकबराबाद सूबे के सरहिन्द नामक स्थान में हुआ । ई० स० १८०४ ता० १५ जनवरी (वि० सं० १८६० माघ सुदि ३) को गवर्नर जेनरल ने भी उसके विषय में अपनी स्वीकृति दे दी, पर महाराजा ने एक दूसरा ही संधिपत्र अपनी तरफ से पेश किया । साथ ही उसने अंग्रेजों के शत्रु जसवंतराव होल्कर से मेल कर लिया, जिससे उपर्युक्त अहदनामा पीछे से रह कर दिया गया^१ ।

उसी वर्ष चैत्र मास में जसवन्तराव होल्कर अंग्रेजों के मुक्ताबले में डींग की लड़ाई में हारकर मारवाड़ में गया और अजमेर के गांव हर-
माड़े में ठहरा । महाराजा ने उसके मुक्ताबले के लिए मेड़तियों की सेना के साथ सिंघवी गुलराज, भंडारी धीरजमल और बलूदे के ठाकुर शिवनाथ-
सिंह को भेजा । युद्ध आरंभ होने के पूर्व ही लोढ़ा कल्याणमल ने वकील भेजकर होल्कर से बात ठहरा ली, जिससे महाराजा और उसके बीच भाई-
भ्राता स्थापित हो गया । अनन्तर जसवन्तराव वहां से प्रस्थान कर मालवा चला गया^२ ।

उन्हीं दिनों सिंघवी जोधराज का पुत्र विजयराज भागकर बगड़ी जा रहा । उसी समय के आसपास पंचोली गोपालदास को कैद कर
उसपर पचास हजार रुपया दंड लगाया गया,
महाराजा का पंचोली गोपाल-
दास पर दंड लगाना जिसमें से केवल बाइस हजार ही वसूल हुए ।
अनन्तर वह सांभर का कार्यकर्ता नियुक्त हुआ^३ ।

(१) एन्सिलन; ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़; जि० ३, पृ० ११४ तथा १२६-७ ।

(२) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० ४, पृ० १४ । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१ ।

(३) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० ४, पृ० १४-५ ।

जालोर के घेरे के समय आयस' देवनाथ ने जैसी भविष्यवाणी की थी, वैसी ही घटित होने के कारण महाराजा की उसपर आस्था इतनी बढ़ गई कि उसने सोड़ सरूप को उसे लाने के लिए भेजा। वह बड़े सम्मान के साथ उसे जोधपुर लाया। महाराजा ने एक कोस आगे जाकर उसकी अगवानी की और उसे ही अपना गुरु बनाया। आयस देवनाथ के साथ उसके अन्य चार भाई भी आये थे। गुलाबसागर के ऊपर मन्दिर बनाकर वहाँ की सेवा का कार्य सूरतनाथ को सौंपा गया। धीरे-धीरे राज्य-कार्य में देवनाथ की सलाह प्रधान मानी जाने लगी^१।

महाराजा भीमसिंह ने सिंहासनारूढ़ होते ही शेरसिंह, सूरसिंह आदि को चूक कर मरवा दिया था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है^३।

महाराजा मानसिंह ने जोधपुर का राज्य मिलने पर शेरसिंह आदि को मारने-
वालों को मरवाना
उनको मारने में जिन-जिन का हाथ था, उनको बड़ी बुरी तरह मरवाया। अहीर नगा माथे में कील ठोक कर मारा गया और एक दूसरा व्यक्ति हाथी के पैरों में बंधवाकर मारा गया। इसके कुछ समय बाद ही भंडारी शिवचंद शोभाचंदोत, धायभाई शंभूदान, रामकिशन, सिंघवी ज्ञानमल, और अन्य कई व्यक्ति कैद किये गये^४।

उन्हीं दिनों मारोठ के ठाकुर महेशदान ने अपनी पुत्री की सगाई खेतड़ी के राजा अभयसिंह के पुत्र के साथ की। महाराजा ने जब उसे पेसा करने से रोका तो वह उसकी बात पर ध्यान न दे अपने ठिकाने मारोठ जा रहा। पीछे जब मेहता साहबचंद फौज लेकर गौड़ाटी में गया तो कुछ सरदारों से दंड वसूल करना।

(१) कनफड़ा साधू।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(३) देखो ऊपर; पृ० ७६६।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १५-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

महेशदान ने खेतड़ी में विवाह न करने का वचन दे अपनी सफ़ाई कर ली। अनन्तर आचरियावास (जयपुर राज्य) तथा दूसरे छोटे-मोटे ठिकानों से उसने दंड के रुपये वसूल किये ।

महाराजा भीमसिंह के समय उसके बुरे व्यवहार से तंग आकर कितने ही प्रतिष्ठित सरदार उसका साथ छोड़कर दूसरे राज्यों में चले गये

महाराजा भीमसिंह के
समय राज्य छोड़कर चले
जानेवाले सरदारों को
पीछा बुलाना

थे । मानसिंह ने उन्हें वापिस बुलाकर उनके पट्टे आदि पूर्ववत् बहाल कर दिये । उनमें माधोसिंह चांपावत (आडवा का), केसरीसिंह (आसोप का), जवानसिंह (रास का), सुलतानसिंह (नींबाज का)

आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । उसी समय उसने आसिया चारण बांकीदास^१

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १६ ।

(२) कविराजा बांकीदास जोधपुर राज्य के पचपट्टा परगने के भांडियावास गांव का निवासी आशिया कुल का चारण था । वि० सं० १८२८ (ई० सं० १७७१) में उसका जन्म हुआ । कविता का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने के अनन्तर वह वि० सं० १८२४ (ई० सं० १७६७) में जोधपुर गया और वहां उसने भाषा कान्य और संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया, जिससे उसकी बड़ी ख्याति हुई तथा उसकी रचनाएं भी प्रसाद गुणयुक्त होने लगीं । वि० सं० १८६० (ई० सं० १८०३) में जालोर से जाकर महाराजा मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा, उस समय उसने अपने राज्याभिषेक के अवसर पर उसको लाख पसाव दिया और फिर उसको कविराजा की उपाधि से विभूषित कर अपना दरबारी कवि बनाया । बांकीदास बड़ा सत्यवादी और निर्भीक व्यक्ति था । राजा हो अथवा राणी, प्रत्येक के संबंध में वह सत्य बात कहने में कभी संकोच न करता था । महाराजा उसका बड़ा आदर करता था, परन्तु एक बार जब बांकीदास ने नार्थों के विरुद्ध एक छन्द कहा तो वह उससे नाराज़ हो गया और उसने उसको बंदी करना चाहा । यह देख वह शीघ्रगामी जूट पर सवार होकर मारवाड़ छोड़ उदयपुर चला गया । वहां के स्वामी महाराणा भीमसिंह ने, जो बड़ा दानी और कान्यप्रेमी नरेश था तथा उसको आग्रहपूर्वक अपने यहां बुलाना चाहता था, उसे अपने यहां रखा । महाराजा मानसिंह भी कान्य का ज्ञाता, मर्मज्ञ, विद्यानुरागी और गुणग्राहक नरेश था, अतएव उसको बांकीदास की अविद्यमानता खटकने लगी । निदान उसने आग्रहपूर्वक उसको उदयपुर से जोधपुर बुलवा लिया । इतिहास और अन्य भाषाओं का बांकीदास को समुचित ज्ञान था । एक बार महाराजा मानसिंह के समय जोधपुर में ईरान से कोई एलची आया ।

(गांव भांडियावास का रहनेवाला) को लाख पसाव^१, दूसरे दो-एक चारणों को कड़े तथा मोती एवं उत्तम सेवा बजा लाने के एवज में मेड़तिया रत्नसिंह पहाड़सिंहोत आदि कई व्यक्तियों को गांव आदि दिये^२।

उसी वर्ष (वि० सं० १८६१ में) महाराजा का विवाह बीकानेर

महाराजा का बीकानेर के गांव लाखसर के बरूणावर-सिंह की पुत्री से विवाह होना

राज्य के गांव लाखसर के स्वामी तंवर बरूणावर-सिंह की पुत्री के साथ हुआ, जिसके नाम दस हजार का पट्टा किया गया^३।

महाराजा भीमसिंह के जालोर के घेरे के समय मानसिंह ने द्विफा-जत की दृष्टि से अपने ज्ञानाने एवं कुंवर छत्रसिंह को महाराज वैरीशाल

उसने महाराजा से किसी इतिहास के जानकार व्यक्ति को बुलवाया। तब महाराजा ने बांकीदास को उऊ एलची के पास भेजा। बातचीत होने पर ईरानी एलची बांकीदास के केवल भारतवर्ष ही नहीं, सुदूरवर्ती देशों के इतिहास की भी जानकारी से बड़ा प्रभावित हुआ। वि० सं० १८७० (ई० सं० १८१३) में महाराजा मानसिंह की राजकुमारी सिरैकुंवर का विवाह रूपनगर में जयपुर के महाराजा जगतसिंह से और जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह से हुआ। उस समय हिंदी भाषा के महाकवि पद्माकर से उस (बांकीदास) की काव्य-चर्चा हुई, जिसमें बांकीदास का पक्ष प्रबल रहा। बांकीदास की ६२ वर्ष की आयु में वि० सं० १८६० (ई० सं० १७३३) में मृत्यु हुई, जिसका महाराजा मानसिंह को पूरा दुःख हुआ तथा स्वयं उसने उसकी प्रशंसा में कुछ दोहे बनाये और उन्हें अपने मुख से कहकर खेद प्रकट किया। कविराजा बांकीदास-रचित कोई बड़ा ग्रंथ तो नहीं मिलता, परन्तु कई छोटे छोटे काव्य मिले हैं, जिनमें से काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने “बांकीदास ग्रंथावली” के पहले भाग में ७, दूसरे भाग में १० और तीसरे भाग में १० काव्य बालाबद्ध राजपूत चारण पुस्तकमाला में प्रकाशित किये हैं। उसकी वीर रस की कविताएं बड़ी प्रभावशालिनी होती थीं। उसने अपने जीवनकाल में लगभग तीन हजार ऐतिहासिक बातों का संग्रह किया था, जो बड़ा महत्वपूर्ण है। उससे कई स्थलों पर इतिहास की गुथियां सुलभाने में बड़ी मदद मिलती है।

(१) लाख पसाव में महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) के समय से केवल १५०० रुपये ही दिये जाते थे (देखो मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० ४, प्रथम खंड, पृ० ४७० टि० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १६-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १८।

महाराजा का सिरौही पर
सेना भेजना

के पास सिरौही भेजा था, परन्तु उसने महाराजा भीमसिंह के साथ की अपनी मैत्री में अन्तर आने के भय से उनको अपने यहां रखने से इनकार कर दिया, जिससे उनको लौटना पड़ा। लौटते समय कुंवर छत्रसिंह की आंख एक दरङ्ग की शाख लगने से जाती रही^१। महाराव के इस बर्ताव से मानसिंह उससे नाराज़ हो गया। उसका बदला लेने के लिए वि० सं० १८६० में महाराजा मानसिंह ने मुंहणोत ज्ञानमल एवं मेहता अखैचंद की सलाह के अनुसार नवलमल (ज्ञानमल का पुत्र) तथा सूरजमल जालोरी को आसोप, नींबाज, रास, लांबिया, रीयां, बलुंदा, रायण आदि के सरदारों, १०००० फ़ौज और तोपखाने के साथ सिरौही पर भेजा। उनके सिरौही राज्य में प्रवेश करते ही वहां के भोमिये भील, मीने आदि पहाड़ों में चले गये। अनन्तर सिरौही के पाड़ीव, कालिंद्री, बुवाड़ा आदि के उमरावों पर दंड निर्धारित कर वि० सं० १८६१ के प्रारम्भ में जोधपुर की सेना ने सिरौही नगर पर आक्रमण कर वहां अधिकार कर लिया। इसपर महाराव सिरौही छोड़कर भीतरोट परगने में चला गया। इस समाचार के जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने बड़ी खुशी मनाई^२।

उसी अवसर पर महाराजा ने घाणेरव के ठाकुर मेड़तिया दुर्जनसिंह पर, जिसपर वह पहले से ही नाराज़ था, मेहता साहबचंद को फ़ौज देकर भेजा। उसकी सेना में कई छोटे-मोटे सरदारों के अतिरिक्त उदयपुर से आई हुई नागों की फ़ौज भी थी। घाणेरव में लड़ाई चल रही थी उन्हीं दिनों दुर्जनसिंह मर गया। उसके संबंधियों ने जोधपुर की सेना के साथ लड़ाई की, जिससे दो बार हमला करने पर भी जोधपुर की सेना वहां अधिकार करने में समर्थ न हुई। अन्त में जब अत्यंत कड़ा मोर्चा लगाया गया, तो बाघ सामग्री की कमी हो जाने के कारण लाचार हो गड़वालों ने बात

(१) मेरा; सिरौही राज्य का इतिहास; पृ० २७६-७।

(२) जोधपुर राज्य की स्थल; जि० ४, पृ० २३। वीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६१।

ठहराकर गढ़ खाली कर दिया। इस प्रकार घाणेराय पर जोधपुर का अधिकार स्थापित हुआ और वहां का कोट नष्ट कर दिया गया। इस समाचार के मिलने पर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई और मेहता साहब-चंद का छोटा भाई माणकचंद वहां का हाकिम नियत हुआ।

सिरोही नगर पर जोधपुर राज्य का कब्ज़ा हो जाने पर वहां का राय भीतरोट परगने में जा रहा था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है। वहां रहते हुए मुल्क में बिगाड़ करने लगा। साथ ही भील, मीणे आदि भी उपद्रव करते थे। उधर खालसा किये हुए घाणेराय, चाणोद एवं नारलाई ठिकानों के सरदार भी पर्वतों का आश्रय लेकर नित्य बिगाड़ करते थे, जिससे उधर का प्रबन्ध करने में भी बड़ी कठिनता होती थी। महाराजा को इस सम्बन्ध में पूरी चिन्ता थी। इसपर ज्योढ़ीदार नथकरण ने महाराजा को उपर्युक्त स्थानों के प्रबन्ध में हेर-फेर करने की राय दी, जिसे महाराजा ने भी स्वीकार किया। तदनुसार सिंघवी गुलराज और भंडारी गंगाराम सिरोही तथा सिंघवी फ़तहराज घाणेराय के प्रबन्ध के लिए भेजे गये। भंडारी मानमल तथा उसका भाई बक्षतावरमल फ़तहराज के साथ गये। गुलराज तथा गंगाराम ने सिरोही पहुंचकर उचित स्थान पर धाना स्थापित किया और जगह-जगह उपद्रवी मीणों आदि तथा महाराव की सेना से लड़ाई कर उन्हें हराया। उधर घाणेराय में भेजे हुए हाकिमों ने भी वहां उत्तम प्रबन्ध कर अराजकता मिटाई। इसी बीच छागांणी कचरदास के ताल्लुके के गांव मुरडावा में बिगाड़ होने का समाचार मिलने पर इस सम्बन्ध में सिंघवी इन्द्रराज को लिखा गया, जिसने गांव कैलवाद में धाना स्थापित किया और वहां पंचोली अस्मैमल को रख समुचित व्यवस्था की।

सिंघवी जोरावरमल के पुत्र जालोर से ही मानसिंह का साथ छोड़कर भीमसिंह के पास चले गये थे। उनमें से जीतमल नौबाज जा रहा था।

(१) जोधपुर राज्य की स्थिति; जि० ४, पृ० २१-२। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८११।

(२) जोधपुर राज्य की स्थिति; जि० ४, पृ० २४-५।

सिधवी जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि का कैद होना मानसिंह ने सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् उन्हें बुलाया तो जीतमल तथा सूरजमल तो उपस्थित हो गये, परन्तु क्रतुहमल तथा शंभूमल नहीं आये थे। उनमें अपनी तरफ से विश्वास उत्पन्न कराने के लिए मानसिंह ने जीतमल को नागौर का हाकिम नियुक्त किया। वि० सं० १८६१ के माघ मास में जीतमल ने अपने पुत्र इन्द्रमल का विवाह स्थिर किया। उसमें क्रतुहमल और शंभूमल के शरीक होने की संभावना थी। महाराजा उनसे अप्रसन्न तो था ही उसने उन्हें गिरफ्तार करने के लिए मूंडवा के मेले का प्रबंध करने के बहाने धांधल उदयराम को पचास सवारों के साथ उधर भेज दिया। शंभूमल तथा क्रतुहमल तो उक्त विवाह में शरीक न हुए, परन्तु उनके पुत्र गंभीरमल तथा धीरजमल गये, जिन्हें विवाह समाप्त होते ही सपरिवार उदयराम ने पकड़ लिया। स्त्रियां तो नागौर के क़िले में रक्खी गईं और पुरुष—जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि—सलेमकोट (जोधपुर) में रक्खे गये। अनन्तर देवनाथ के उद्योग से रुपये देने पर अन्य सब तो छोड़ दिये गये, केवल जीतमल कैद में बना रहा^१।

नाथ संप्रदाय के महामन्दिर नामक विशाल मन्दिर के निर्माण का कार्य मानसिंह की राज्य-प्राप्ति के समय ही शुरू कर दिया गया था। उसके सम्पूर्ण हो जाने पर वि० सं० १८६१ माघ सुदि ५ (ई० सं० १८०५ ता० ४ फ़रवरी) को उसकी प्रतिष्ठा हुई और देवनाथ वहां का अधिकारी नियत किया गया^२।

आषाढादि वि० सं० १८६१ (चैत्रादि १८६२) के आषाढ मास में केतड़ी, भूभाणू, नवलगढ़, सीकर आदि के समस्त शेखावतों को साथ ले भाटी छत्रसिंह तथा तंवर मदनसिंह ने धोकलसिंह के नाम से डीडवाणे पर अधिकार कर लिया और वहां खूब लूट-मार की, जिससे वहां का

धोकलसिंह के पक्षपाती सरदारों का डीडवाणे में उपद्रव करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १५।

(२) वही; जि० ४, पृ० २६।

हाकिम भागकर दौलतपुर चला गया। यह खबर जोधपुर पहुँचने पर मुहणोत ज्ञानमल फ़ौज के साथ उधर गया। अन्य सरदारों और हाकिमों को भी डीङवाणा जाने की आज्ञा हुई, जिसपर कुचामण, मीठड़ी, मारोठ आदि के सरदार भी ज्ञानमल की सेना के शामिल हो गये। इस फ़ौज के निकट पहुँचते ही धिद्रोही डीङवाणे का परित्याग कर चले गये। तब जोधपुर की सेना ने उनका छोड़ा हुआ सामान लूट लिया और डीङवाणे पर राज्य का अधिकार स्थापित हुआ^१।

महाराजा अभयसिंह का एक बिवाह शाहपुरा (शेखावाटी का) में हुआ था। शेखावतों से नाराज़गी और भाड़ोद के गांव दयालपुर के मोहनसिंह

महाराजा का सेना भेज
शाहपुरा मोहनसिंह को
दिलाना

पर कृपा होने के कारण महाराजा ने ज्ञानमल को लिखा कि वह जाकर शाहपुरे पर मोहनसिंह का अधिकार करा दे। तदनुसार डीङवाणा से चलकर जोधपुर की सेना ने शाहपुरे पर आक्रमण किया। दस दिन की लड़ाई के पश्चात् वहां जोधपुर की सेना का अधिकार हो गया और वह इलाक़ा मोहनसिंह को दे दिया गया। इस लड़ाई में किले की एक भुर्ज गिर जाने से फ़ौज के बहुत से आदमी मारे गये^२।

भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह का संबंध जयपुर के महाराणा भीमसिंह की पुत्री कृष्णकुमारी से हुआ था; परन्तु वि० सं० १८६० (ई० सं०

जयपुर की राजकुमारी
कृष्णकुमारी के विवाह के
लिए जयपुर और जोधपुर
के राजाओं के बीच विवाद
होना

१८०३) में महाराजा भीमसिंह का देहांत हो गया तब महाराणा ने अपनी पुत्री की सगाई जयपुर के महाराजा जगतसिंह के साथ कर दी। पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह की पौत्री की सगाई भी जयसिंह के साथ हुई थी। उस समय वैवाहिक कार्य जयपुर में होना तय हुआ था। तदनुसार सवाईसिंह ने अपनी पौत्री को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २६-७।

पोकरण से जयपुर ले जाना चाहता । इसकी खबर मिलने पर महाराजा भानसिंह ने सवाईसिंह से कहलाया कि ऐसा करना उचित नहीं है, यदि विवाह ही करना है तो पोकरण बारात बुलाकर विवाह करो । इसके उत्तर में सवाईसिंह ने पूछा निवेदन कराया कि आपका कहना ठीक है, पर मेरा भाई उम्मेदसिंह जयपुर में रहता है, जिसकी इधेली से विवाह होगा । इसमें कोई अपमान की बात नहीं है । हां, आपके लिए एक बात विचारणीय है । उदयपुर के महाराजा की पुत्री का संबंध महाराजा भीमसिंह के साथ तय हुआ था, अब उसका ही संबंध जयपुर हो रहा है, यह कैसे ठीक कहा जा सकता है ? इसपर महाराजा ने अपने सेवकों से इस विषय में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि सगाई तो अवश्य हुई थी, परन्तु टीका नहीं आया और इसी बीच महाराजा (भीमसिंह) का देहांत हो गया । तब महाराजा ने जयपुर के पंचोली सताबराय को इस संबंध में महाराजा से कहने के लिए लिखा । साथ ही उसने उदयपुर भी कहलाया कि आप यह संबंध अब जयपुर कैसे कर रहे हैं, परन्तु उदयपुरवालों ने इसपर किंचित् ध्यान न दिया और टीका जयपुर रखाना कर दिया । यह समाचार महाराजा को मिलते ही वह बिना विशेष सोच-विचार किये ही बि० सं० १८६२ माघ वदि आमावास्या (ई० सं० १८०६ ता० १६ जनवरी) को शीघ्रतापूर्वक कूचकर मेड़ते पहुंचा । वहां से उसने शेखावाटी में रक्खी हुई अपनी सेना को बुलवाया और सिराही की अपनी सेना को भी शीघ्र आने को लिखा । इसके साथ ही जसवंतराव होल्कर को भी उसने सहायतार्थ आने को लिखा और मारवाड़ के अन्य छोटे-मोटे सरदारों के पास भी आने के लिए आज्ञापत्र भेजे । इस तरह मेड़ते में १५ दिन में लग-भग ५०००० फौज उसके पास एकत्र हो गई । उदयपुर से टीका ले जानेवालों के खारी के ढाबे में ठहरने का पता पाकर, महाराजा ने स्वयं उनपर जाने का इरादा प्रकट किया, परन्तु इस कार्य का अनौचित्य बतलाकर सिंघवी इन्द्रराज ने अपने जाने की आज्ञा प्राप्त की । आउवा, आलोप आदि के सरदारों की २०००० सेना के साथ इन्द्रराज के टीका रोकने के लिए प्रस्थान करने की सूचना

पाकर उदयपुर से टीका ले जानेवाले व्यक्ति शाहपुरा (मेवाड़) चले गये । तब वह (इन्द्रराज) शाहपुरे पर सेना लेकर गया, जिसपर शाहपुरावालों ने टीका वापस उदयपुर भिजवाने की शर्त कर उसे लौटाया । इस बीच अपनी तथा परदेसियों की मिलाकर एक लाख फौज महाराजा के पास लमा हो गई । जसवंतराव ने भी कहलाया कि मेरे पहुंचने में अब देर नहीं है । उधर जयपुर के महाराजा जगतसिंह ने भी जयपुर के बाहर जाकर सेना एकत्र करना शुरू किया । उस समय उसके दीवान रायचंद ने उसे समझाया कि राठोड़ों के पास विशाल फौज है और होकर भी शीघ्र उनसे मिल जायगा । तब जगतसिंह ने आगे कूच न किया । इस बीच महाराजा भेड़ते से प्रस्थान कर आलणियावास पहुंचा, जहां सवाईसिंह का पुत्र हिम्मतसिंह उसके पास उपस्थित हो गया । सेनाओं का दोनों ओर जमाव हो गया था और संभव था कि परस्पर लड़ाई भी हो जाती, परन्तु सिंघवी इन्द्रराज ने ललचायी अमरचंद को जयपुर के दीवान रायचंद के पास भेजकर कहलाया कि हम आप तो सदा एक रहे हैं, हमारा आपस में विरोध करना ठीक नहीं । सीसोदिये तो सदा हमसे अलग रहे हैं । अंत में यह तय हुआ कि उदयपुर की पुत्री के साथ दोनों महाराजाओं में से कोई भी विवाह न करे और महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ और मानसिंह की पुत्री सिरिकंबरबाई का विवाह जगतसिंह के साथ हो । इस संबंध में परस्पर लिखा-पढ़ी हो जाने पर जोधपुर की तरफ से टीका लेकर व्यास चतुर्भुज तथा आसोप, नींबाज आदि के सरदार जयपुर और जयपुर से टीका लेकर हलदिया चतुर्भुज तथा अन्य व्यक्ति जोधपुर गये । इसके बाद गांव नांव के नाके पर महाराजा का जसवंतराव से मिलना हुआ, पर उसके साथ बराबरी का व्यवहार न होने से वह मन ही मन महाराजा से नाराज़ हो गया । फिर वहां से जसवंतराव दक्षिण लौट गया ।

इसके कुछ समय बाद ही महाराजा ने ड्योढ़ीदार आसायच नथकरण

(१) जोधपुर राज्य की रियासत; जि० ४, पृ० २७-६ । बीरबिनोद; भाग ३, पृ० ८६१-२ ।

को सवाईसिंह को लाने के लिए पोकरण भेजा, पर उसने आने से इनकार कर दिया। मथकरण ने लौटकर सारी धोकलसिंह के पक्षपाती हकीकत महाराजा से कही, परन्तु महाराजा ने मुंहणोत ज्ञानमल के बहकाने से नथमल को भी सवाईसिंह से मिला हुआ होने का सन्देह कर कैद करवा दिया। तदनंतर सवाईसिंह भी, जो भीमसिंह के पुत्र धोकलसिंह को जोधपुर का राजा बनाना चाहता था, प्रत्यक्षरूप से मानसिंह का विरोधी बनकर धोकलसिंह का सहायक बन गया और बड़लू का ठाकुर कृपावत शार्दूलसिंह भी धोकलसिंह के पक्ष में हो गया। रास के ऊदावत ठाकुर जवानसिंह ने भी युद्ध के अवसर पर धोकलसिंह का पक्ष ग्रहण करने का निश्चय किया। शार्दूलसिंह का बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह से मेल-जोल था। उसके द्वारा बातचीत होने पर सूरतसिंह ने भी उस (धोकलसिंह) का ही पक्ष लेना स्वीकार कर लिया। गीजगढ़ के ठाकुर उम्मेदसिंह द्वारा उदयपुर का टीका वापस जाने से उत्पन्न बदनामी की बात सुझाये जाने और सवाईसिंह के प्रतिष्ठा-बद्ध होने पर जयपुर का महाराजा जगतसिंह भी महाराजा मानसिंह से बदला लेने को तैयार हो गया।

उसी वर्ष आश्विन मास में महाराजा नांद से मेड़ते गया। जोधपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३०-१। दयालदास की ख्यात से पाया जाता है कि धोकलसिंह को सहायता देने के एवज में विरोधी दल ने महाराजा जगतसिंह को सांभर का इलाका और फौज-खर्च देना स्वीकार किया। बीकानेर की सहायता के बिना सफल होना असंभव देख जगतसिंह ने एक पत्र देकर सवाईसिंह को बीकानेर भेजा। सवाईसिंह ने महाराजा सूरतसिंह को सहायता देने के बदले में ८५ गांवों के साथ फलोधी का परगना, जो अजीतसिंह के समय जोधपुर राज्य में मिला खिया गया था, वापस दिये जाने के संबंध में तहरीर कर दी। उस समय मानसिंह ने भी सूरतसिंह से कहलाया कि फलोधी तो मैं ही आपको दे दूंगा, आप मेरे विरोधियों को सहायता न दें; परन्तु उसने मानसिंह का कथन स्वीकार न किया और मेहता ज्ञानजी, पुरोहित जवानजी आदि को आठ हजार फौज के साथ भेजकर वि० सं० १८६३ फरवरी ३ (ई० स० १८०७ ता २५ फरवरी) को फलोधी पर अधिकार कर लिया। उधर जयपुर की सेना ने सांभर पर कब्जा किया (जि० २, पृ० ६७-८)।

की विगत चढ़ाई में बहुत खर्च हुआ था, जिससे देश में दंड लगाया गया।

महाराजा का सेना भेजकर उपद्रवी सरदारों का दमन करना
उन्हीं दिनों घाखेराव, चाणोद और नारलाई के मेड़तियों ने, जो मेवाड़ में थे, पाली में जाकर उसको लूटा। इसपर मेहता साहबचंद उनपर

भेजा गया, जिसके साथ केसरीसिंह (बगड़ी), बरूशीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली) आदि सरदार, दस हजार फ़ौज और नागों की सेना थी। उन्होंने वहां पहुंचकर सोजत, पाली और गोड़वाड़ का समुचित प्रबंध किया, जिसपर विद्रोही सरदार पहाड़ियों में चले गये^१।

मुंहणोत ज्ञानमल तथा अलैचंद आदि जालोर के समय के कार्यकर्ताओं की सलाह से मेड़ता के मुक़ाम पर महाराजा ने सिंघवी इन्द्रराज, मानसिंह और भोकलसिंह के पक्षपातियों के बीच लड़ाई होना
गुलराज, भंडारी गंगाराम, भंडारी मानमल आदि कतिपय व्यक्तियों को कैद करवा दिया। इन्द्रराज और गंगाराम जोधपुर के सलेमकोट में, गुलराज की बीमारी के कारण वह अपने मकान में तथा अन्य लोग मेड़ता की कचहरी में रक्खे गये^२। इस समाचार के ज्ञात होते ही चांदावल बहादुरसिंह (मेड़तिया, कुड़कीवालों का पूर्वज) जयपुर जाकर महाराजा के विरोधियों से मिल गया। सवाईसिंह ने यह खबर सुनकर हंसते हुए कहा कि दोनों बनियों ने मेरी सलाह के बिना मानसिंह को गद्दी पर बैठाया, जिसका फल

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३१।

(२) इस घटना के कुछ समय बाद मानसिंह ने सिंघवी इन्द्रराज और भंडारी गंगाराम को मेहता अलैचंद के समझाने पर मरवा देने की आज्ञा जोधपुर भिजवाई। इसके उत्तर में ठाकुर अनादसिंह (आहोर) ने मानसिंह के पास अर्जी भिजवाई कि पक्ष-स्परिक शत्रुता के कारण झूठी शिकायतों पर आपने इन्हें कैद करवाया है और अब मारने का हुक्म निकाला है। ये दोनों नौकर वही हैं, जिन्होंने आपको जालोर से जोधपुर लाकर गद्दी बैठाया है। यदि ये दोनों सवाईसिंह के साथी होते तो आपको जोधपुर न ज्ञाते। इनको बंदी किया वहां तक तो ठीक, परन्तु मरवाने की मेरी सलाह नहीं है; क्योंकि ऐसे नौकर मिल न सकेंगे। इसपर महाराजा ने अपना पहले का हुक्म रद्द कर दिया (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३२)।

शीघ्र ही उन्हें मिल गया। फिर वह भी अपनी सेना के साथ जयपुर चला गया^१। ठाकुर शार्दूलसिंह (बड़लू) के लिखने पर महाराजा सूरतसिंह ने भी ससैन्य बीकानेर से धोकलसिंह की सहायतार्थ प्रस्थान किया। खेतड़ी से शेखावत अभयसिंह भी पर्याप्त मनुष्यों के साथ जयपुर पहुंचा। महाराजा जगतसिंह ने भी अपने डेरे बाहर करवाये^२। उन दिनों मानसिंह की तरफ से जयपुर में वकील के पद पर अमरचंद लल-बाणी नियुक्त था, परन्तु उसकी मृत्यु हो गई। तब उसके स्थान में मोदी दीनानाथ नियत हुआ। उसने सवाईसिंह के जयपुर पहुंचने और महाराजा जगतसिंह का डेरा बाहर होने का समाचार मानसिंह के पास भिजवाया, जिसपर उसने मेड़ता से परबतसर की तरफ कूच किया। वहां उसके आदेशानुसार उसके अधीनस्थ सरदार उपस्थित हो गये। उस समय बूंदी के महाराव राजा विशनसिंह तथा किशनगढ़ के महाराजा कल्याणसिंह की ओर से भी सेनाएं मानसिंह की सहायतार्थ पहुंचीं। साथ ही उसने जसवंतराव होल्कर को भी सहायता के लिए आने को लिखा। उधर विरोधी दल में बीकानेर का स्वामी सूरतसिंह^३ और शाहपुरा (मेवाड़) का राजा अमरसिंह अपनी-अपनी सेनाओं के साथ जाकर शरीक हो गये। उस समय पच्चीस लाख रुपये जगतसिंह ने इस मुहिम के लिए अपने खजाने से निकलवाये। मानसिंह के सहायक सरदारों को भी सवाईसिंह ने अपने

(१) टॉड-कृत “राजस्थान” से पाया जाता है कि सवाईसिंह अपने साथ धोकलसिंह को भी जयपुर ले गया, जहां महाराजा जगतसिंह ने उसे अपने शामिल भोजन कराया (जि० २, पृ० १०८३)।

(२) मेजर जेनरल सर जॉन मालकम-कृत “रिपोर्ट ऑन दि प्रॉक्सिमां मालवा एण्ड एड्जवाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स” (ई० स० १९२७ का संस्करण) से पाया जाता है कि चढ़ाई करने के पूर्व जयपुर के वकीलों ने अंग्रेजों को अपने पक्ष में करने का और उनकी सहायता प्राप्त करने का बहुत उद्योग किया, परन्तु वे इसमें सफल न हुए (पृ० १४५ और टि० ३)

(३) दयालदास की रूयत के अनुसार वह खाटू तथा पलसाणा के बीच शरीक हुआ था (जि० २, पत्र ६८)।

पक्ष में हो जाने के लिए कहलाया। इसपर रास के ऊदावत ठाकुर जवानसिंह ने उत्तर में कहलाया कि अभी आकर क्या करेंगे, यहां पर जो सरदार हैं उनको अपने शामिल ही समझना। आउवा और आसोप के ठाकुर यहां हैं, परंतु वे महाराजा को युद्ध नहीं करने देंगे और उसे लेकर लौट जायेंगे। युद्ध के समय अन्य सरदार भी आपके शामिल हो जायेंगे। अनन्तर सब सरदारों ने सवाईसिंह के पास उपस्थित होकर उपर्युक्त बातें पक्षे तौर पर तय कीं। बलूदा के मेड़तिया चांदावत शिवसिंह ने भी सवाईसिंह का पक्ष लेना स्वीकार किया।

जसवंतराव होल्कर से जब मानसिंह की मुलाकात हुई थी उस समय मीरखां (अमीरखां, टोंक के नवाबों का पूर्वज) को सम्मान देने में उसने इनकारी की थी, इसलिए उससे अप्रसन्न होकर वह सवाईसिंह के प्रयत्न से होल्कर के शामिल हो गया। मानसिंह के बुलाने पर जसवंतराव रवाना होकर किशनगढ़ के गांव तीहोद में जाकर ठहरा, जहां से उसने मानसिंह को खर्च भेजने के लिए लिखा। उस समय मानसिंह के पास खर्च की तंगी थी, जिससे उसने बालकृष्ण के मन्दिर के आभूषण, रत्न आदि तथा महाराजा विजयसिंह के समय बनवाये हुए सोने और चांदी के बर्तन अपने काम में लिये। साथ ही प्रजा से भी ज़ोर-ज़बर्दस्ती से धन वसूल किया गया। इसी बीच सवाईसिंह ने महाराजा जगतसिंह द्वारा दो-तीन लाख रुपये जसवंतराव के पास भिजवाकर उसे दोनों पक्षों में से किसी का भी साथ न देने के लिए राज़ी किया। फलतः जब मानसिंह ने अब्दुल्ला के साथ जसवंतराव के पास खर्च के लिए रुपये भिजवाये तो उसने यह कहकर उन्हें स्वीकार न किया कि इतनी थोड़ी रकम से मेरा काम नहीं चल सकता। अनन्तर गोंगोली के मुक़ाम पर मानसिंह स्वयं उससे जाकर मिला, पर वह (जसवंतराव) उसका साथ न देकर दक्षिण

(१) मालकम लिखता है कि चढ़ाई होते ही सिंधिया तथा होल्कर ने अपने-अपने आदिमियों को उससे लाभ उठाने के लिए भेजा (रिपोर्ट ऑन दि प्राविस ऑब् मालवा एण्ड पंजाबिंग डिस्ट्रिक्ट्स; पृ० १४५-६)।

की तरफ चला गया। जयपुर का महाराजा जगतसिंह एवं बीकानेर का महाराजा सूरतसिंह करीब एक लाख सेना के साथ मारोठ पहुंचे। उनके परदेशी सैनिकों की संख्या अधिक होने से जगतसिंह को अपनी विजय के संबंध में आशंका थी। सवाईसिंह ने उसकी शंका निर्मूल करने का भर-सक प्रयत्न किया, परन्तु जब वह उसमें सफल न हुआ तो वह अकेला ही मीरखां आदि की सेना-सहित महाराजा मानसिंह के मुक्काबिले के लिए आगे बढ़ा और नाहरगढ़ के नाके होता हुआ गींगोली पहुंचा। यह समाचार मिलने पर महाराजा मानसिंह भी सेना-सहित लड़ने को सन्नद्ध हुआ, परन्तु तोप की एक आवाज़ होते ही हरसोलाव, सेनणी, पूनलू, सधलाणा, चवां, सवराड़, पाली, गजसिंहपुरा, चंडावल, बगड़ी, खींसर, बेराई, देवलिया, रीयां, मारोठ तथा बलूदा के सरदार महाराजा की सेना से अलग होकर धोकलसिंह के सहायकों के शामिल हो गये। महाराजा मानसिंह के पक्ष में केवल आसोप का कृपावत केसरीसिंह, आडवा का चांपावत बल्लावरसिंह, नांबाज का ऊदावत सुरताणसिंह, रास का ऊदावत जवानसिंह, लांबिया का ऊदावत भानसिंह, कुचामण का मेड़तिया शिवनाथ-सिंह, बूड़सू का मेड़तिया प्रतापसिंह और खेजड़ला का भाटी जसवंतसिंह रह गये। महाराजा ने आक्रमण करने की आज्ञा दी, परन्तु जवानसिंह- (रास) ने यह कहकर उसे रोक दिया कि इतनी थोड़ी सेना के साथ शत्रु का सामना करने में लाभ नहीं होगा, अतएव पीछा जोधपुर चलना चाहिये। महाराजा ने फिर भी लड़ने का आग्रह किया, पर उक्त सरदार तथा धांधल उदयराम ने जबरन उसका घोड़ा फेर दिया। जो सामान आदि जोधपुर के सरदार अपने साथ ले जा सके वह तो वे ले गये, शेष सामान तोपखाना, खज़ाना, फ़ीलखाना, फ़र्रांशखाना आदि जयपुर की सेना ने लूट लिया। इस अवसर पर जयपुरवालों ने खोखर, अडाणी, श्यामपुरा और गींगोली गांवों को भी लूटा। मारोठ पहले ही लूटा जा चुका था।

(१) दयालदास की कथात में इस घटना का समय वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि २ (ई० स० १८०७ ता० ११ मार्च) दिया है (जि० २, पत्र ६८)।

परबतसर के पड़िहार किलेदार ने वहां की चाभियां शत्रुओं को सौंप दीं। इस विजय का समाचार मिलने पर महाराजा जगतसिंह एवं सूरतसिंह मारोठ से कूचकर परबतसर पहुंचे। फाल्गुन सुदि में महाराजा मानसिंह मेड़ता पहुंचा। वह जालोर जाना चाहता था, परन्तु कुचामण के ठाकुर शिवनाथ-सिंह तथा हिन्दालखां ने कहा कि यदि आप जालोर जायेंगे तो जोधपुर गंवा बैठेंगे, अतएव आप जोधपुर ही चलें। इसपर वह जोधपुर गया और वहां पहुंचकर नगर तथा किले की उसने मज़बूती की। इसी बीच मार्ग से रास का ठाकुर अपने परिवार को रास से निकालने के बहाने रुहसत लेकर खाना हो गया और शत्रु से जा मिला। अनन्तर सवाईसिंह के आदेशानुसार उसके पत्न के एक दल ने अचानक नागौर पर चढ़ाई कर वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि १५ (ई० सं० १८०७ ता० २३ मार्च) को वहां क़ब्ज़ा कर लिया। उसी समय के आस-पास सोजत पर भी शत्रु पक्ष के लोगों ने अधिकार कर लिया। इस अवसर पर पाली का चांपावत ज्ञानसिंह, बगड़ी का जेतावत केसरीसिंह और चंडावल का कूपावत बक़्शी-राम, जो मोड़वाड़ में घाणेराम के ठाकुर को दंड देनेवाली सेना में मेड़ता साहबचंद के साथ थे, आकर सोजत पर शत्रुपक्ष का अधिकार कराने में सहायक हो गये थे।

परबतसर में रहते समय महाराजा जगतसिंह के दीवान रायचंद ने उससे कहा कि अब अपनी इज्जत काफ़ी रह गई है, अतएव अब आप उदयपुर में विवाह कर जयपुर चलें। जब इस संबंध में महाराजा ने सवाई-सिंह से कहा तो उसने उत्तर दिया कि पहले आप जोधपुर चलें। हमारे वहां पहुंचते ही मानसिंह अपने परिवार-सहित जालोर चला जायगा और इस प्रकार जोधपुर की गद्दी पर आप धोकलसिंह को बैठा सकेंगे, जिससे आपके यश में वृद्धि होगी। फिर आप भले ही उदयपुर में विवाह कर जयपुर चले जाना। जगतसिंह ने उसकी राय मान ली और सवाईसिंह को सेना-सहित जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करने की आज्ञा दी। मेड़ता तथा पीपाड़ होता हुआ तथा मार्ग में पड़नेवाले गांवों को लूटता हुआ वि० सं० १८६३

चैत्र वदि ७ (ता० ३० मार्च) को पर्याप्त फौज के साथ सवाईसिंह जोधपुर पहुंचा । अपना डेरा मंडोवर में रखकर उसने वहां घेरा लगाया । पीछे से भखरी, रीयां, कालू एवं बलूदा के मार्ग से होते हुए महाराजा जगतसिंह और सूरतसिंह भी वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि (ई० सं० १८०७ अप्रैल) में जोधपुर पहुंचे और नगर के चारों तरफ मोर्चे लगाये गये । ऐसी परिस्थिति में महाराजा मानसिंह ने पहले के क़ैद किये हुए व्यक्तियों को मुक्तकर उनसे अपनी सेवा दिखलाने के लिए कहा । उनमें से सिधवी जोराबरमल के पुत्र जीतमल तथा धायभाई शंभूदान नगर की रक्षा करते हुए सात दिन तक शत्रु से लड़ने के बाद सवाईसिंह के शामिल हो गये । फिर इन्द्रराज और गंगाराम तथा नथकरण को, जो उपर्युक्त व्यक्तियों के साथ ही क़ैदकर सलेमकोट में रक्खे गये थे, महाराजा ने मुक्त कर दिया । इन्द्रराज और गंगाराम ने महाराजा की आज्ञानुसार सवाईसिंह से मिलकर संधि के विषय में बातचीत की, पर उसने उसपर विशेष ध्यान न दिया और कहा कि महाराजों का बनाया हुआ राजा नहीं हो सकता । मानसिंह से कहो कि जालोर चला जाय, जोधपुर पर भीमसिंह का पुत्र राज्य करेगा । इसपर इन्द्रराज और गंगाराम गढ़ तो नहीं, परन्तु नगर सौंप देने का वचन देकर लौट गये । मानसिंह के पास पहुंचकर उन्होंने उससे जोधपुर नगर विरोधियों को सौंप दुर्ग में स्थिर रहकर युद्ध का प्रबंध करने को कहा । तदनुसार इन्द्रराज के पुत्र फ़तहराज, भंडारी गंगाराम के पुत्र भानीराम, करणोत इन्द्रकरण (समदड़ी), महेश जसवंतसिंह (जसोल), अनाईसिंह राजसिंहोत (आहोर), चांपावत उदयरज (दासपां), आयस देवनाथ, सूरतनाथ तथा अन्य कितने ही व्यक्तियों के साथ महाराजा ने जोधपुर के दुर्ग में निवास रख उसकी रक्षा का प्रबंध कर युद्ध का आयोजन किया । इन्द्रराज तथा गंगाराम वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि ११ (ई० सं० १८०७ ता० १८ अप्रैल) को नगर शत्रु के हवाले

(१) टॉड के अनुसार उस समय उसके पास पांच हजार सेना थी, जिसमें बिथान (विरु) स्वामी, चौहान, मही आदि शामिल थे (वि० २, पृ० १०८५) ।

कर केसरीसिंह (आसोप), बरतावरसिंह (आउवा), सुरताणसिंह (नौबाज), शिवनाथसिंह (कुचामण), प्रतापसिंह (बूड़सू) और भानसिंह (लांबिया) तथा अन्य रिसाले के साथ बाहर निकल गये और नगर में धोकलसिंह के नाम की आन फिर गई । महाराजा मानसिंह ने सवाईसिंह एवं रास के ठाकुर जवानसिंह के पास उस समय इस आशय के खास रुके भेजे कि आप अपने घरानों की चाल पर ध्यान रखें और उसी समय इन्द्रराज ने सवाईसिंह को कहा कि नागौर तो तुम्हारे कब्जे में ही है, अब जो परगने कहाँ में धोकलसिंह को दिलाने को तैयार हूँ । सवाईसिंह ने इसका उत्तर यह दिया कि महाराजा मानसिंह जोधपुर छोड़कर जालोर चले जायें तथा जगतसिंह का इस चढ़ाई में जो बाइस लाख रुपया खर्च हुआ है वह चुका दें तो सुलह हो सकती है । अनन्तर इन्द्रराज और गंगाराम—आउवा, आसोप और नौबाज के सरदारों—सहित—शेखावतों की सहायता से बावरा गये, जहाँ से उन्होंने लोढ़ा कल्याणमल को दौलतराव (सिंधिया) को सहायतार्थ लाने के लिए भेजा । इसी बीच मीरखाँ तथा सवाईसिंह के बीच खर्च की बाबत कहा-सुनी हो गई, जिससे मीरखाँ उसका साथ छोड़कर चला गया । इस बात का पता मिलने पर इन्द्रराज ने मीरखाँ से बातचीत की और सवाईसिंह के पक्ष के बलूदा के ठाकुर शिवसिंहकी प्रजा से ३०००० रुपया वसूलकर मीरखाँ को दे उसे अपने पक्ष में किया । तब भंडारी पृथ्वीराज के साथ मीरखाँ ने ढूँढ़ाड़ की तरफ़ जाकर वहाँ लूट-मार शुरू की । उन्हीं दिनों भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामबक्श, ठाकुर प्रतापसिंह आदि ने कुछ सेना एकत्रित कर परबतसर और डीडवाणा में पुनः मानसिंह का अधिकार स्थापित किया और इन्द्रराज आदि ने बावरा में

(१) उन्हीं दिनों उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम आवणादि वि० सं० १८६३ (वैशाख १८६४) वैशाख वदि ६ (ई० सं० १८०७ ता० १ मई) शुक्रवार को धोकलसिंह की तरफ़ से इस आशय का एक पत्र भेजा गया कि गोबिन्द पर अधिकार कर लिया जावे, पर वहाँ भी उस समय कलह मच रहा था, इसलिये इस पत्र का कुछ भी परिणाम न निकला (वीरविनोद; भाग २, पृ० १५७४) ।

रहते हुए कई सरदारों को पुनः महाराजा के पक्ष में कर लिया। उसी समय जयपुर के दीवान रायचंद ने खर्च भेजना बंद कर दिया और महाराजा जगतसिंह को लिखा कि फ़ौज का खर्च सवाईसिंह को देना चाहिये। इसका परिणाम यह हुआ कि खर्च के अभाव में जयपुर की सेना में दिन-दिन तंगी होने लगी। इतना होने पर भी जोधपुर के घेरे में कमी नहीं हुई। सीकर के शेरशाहत राव लक्ष्मणसिंह ने दौलतपुरा जाकर वहाँ के गढ़ को घेर लिया। पड़िहार अमरदास और लाड़खानी दौलतपुर के गढ़ में चले गये तथा सामान इकट्ठा कर दो मास तक लड़ते रहे। तब लक्ष्मणसिंह वहाँ से लौट गया। उस समय जोधपुर, जालोर, सिवाणा, दौलतपुरा, बाली, शिव, उमरकोट आदि के गढ़ों पर महाराजा मानसिंह का अधिकार रहा और बाक़ी सारे मुल्क पर विपक्षियों का अधिकार हो गया तथा तहसील की आय वे लेने लगे। शत्रु-सेना ने लूट-मार कर राज्य का बहुत बिगाड़ किया। उस समय जोधपुर नगर भी लूट-द्वारा बरबाद हो जाता, परंतु पंचोली गोपालदास ने सवाईसिंह को कहलाया कि नगर की क्यों बरबादी कराते हो। वाजिबी पैदाइश होगी, वह मैं देता ही रहूंगा। इसपर सवाईसिंह ने उसको वहाँ का कोतवाल बनाकर, हाकिम के पद का अधिकार और सायर का प्रबंध भी सौंप दिया।

वि० सं० १८६४ के आरम्भ में शत्रुओं ने दुर्ग के फ़तहपोल दरवाज़े के पास सुरंग लगाई, जिसकी दुर्गवालों को सूचना मिलने पर उन्होंने जलता हुआ तेल शत्रु के सैनिकों पर डाला, जिससे कई आदमी जल गये और कई भाग गये। फ़तहपोल दरवाज़े की रक्षा का भार खेजड़ला के भाटी सरदार पर था। उसके सैनिकों ने दुर्ग के बाहिर निकलकर भगड़ा किया। राणीसर की बुर्ज की तरफ़ भी क्रिले में सुरंग लगाई गई, जिससे वहाँ भी भगड़ा हुआ और तंवर बहादुरसिंह काम आया, जिसकी छत्री

(१) “ वंशभास्कर ” से पाया जाता है कि शत्रु-सेना ने लूट-मार करने के अतिरिक्त वहाँ की स्त्रियों को पकड़-पकड़ कर दो-दो पैसे में बेचा (चतुर्थ भाग; पृ० ३६६७)। “ बीरबिनोद ” से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८६४)।

राखीसर में है। लखणापोल दरवाजे के बाहर रासोलाई में जैपुर के दादू-पंथी साधुओं का मोरचा था। उनपर रात्रि के समय किले की छिड़की कोलकर जसोल के ठाकुर जसवंतसिंह आदि ने आक्रमण किया और वहां से उनका मोरचा उठा दिया। उस समय जसवंतसिंह का राजपूत सोढ़ा कीर्तिसिंह धीरतापूर्वक लड़कर काम आया। उसकी छत्री जयपोल के बाहर बनी हुई है। इसी प्रकार राखी का चौहान श्यामसिंह भी उसी समय वहां काम आया। उसकी भी स्मारक छत्री जोधपुर के किले के जयपोल द्वार के बाहर बनी हुई है। इस रीति से शत्रु से निरंतर युद्ध होता रहा।

लोढ़ा कल्याणमल दौलतराव सिंधिया के पास से सेना लेकर आया। उसमें आंवा इंग्लिया^१ और जान बेप्टिष्ट^२ (Jean Baptiste) प्रमुख थे। उस समय ठाकुर स्वार्हसिंह (पोकरण), केसरीसिंह (बगड़ी), शिवसिंह (बलुंदा), ज्ञानसिंह (पाली), बख्शीराम (चंडावल) आदि सरदार दो हजार सेना के साथ वि० सं० १८६४ श्रावण वदि ११ (ई० सं० १८०७ ता० ३० जुलाई) को सिंधिया की सेना का सामना करने के लिए रवाना हुए और मेड़ता के गांव देवरिया में पहुंचे। उन लोगों ने सिंधवी इंद्रराज के पास समाचार भेजा कि तुम आकर हमसे मिलो, ताकि कोई बात निश्चित की जाय। इसपर इंद्रराज ने भी कुड़की जाकर मुकाम किया। उस समय इंद्रराज ने नागोर, डीडवाणा, कोलिया, मेड़ता, परबतसर, मारोठ, सांभर और नांवा के परगने धोकलसिंह को देने और जोधपुर, जालोर, सोजत, जैतारण, सिवाणा, पचपद्रा, पाली, देसूरी, शिव, उमरकोट तथा फलोधी के परगने मानसिंह के लिये रखने का प्रस्ताव किया। स्वार्हसिंह ने नागोर आदि मानसिंह को

(१) यह माधवराव और दौलतराव सिंधिया का सेनापति तथा राजनैतिक सलाहकार था।

(२) यह माइकेल फिलोज का छोटा पुत्र था और देशी लोगों में “जान बत्तीसी” के नाम से प्रसिद्ध था। सिन्धिया की सेना में यह कप्तान था और इसने उसकी तरफ से कई बड़ी लड़ाइयां लड़ी थीं। यह सैंतालीस साल तक उसकी सेवा में रहा था।

और जोधपुर-धोकलसिंह को दिलाने की बात कही, परन्तु कोई बात तय नहीं हुई और तीन-चार दिन तक बहस चलती रही। इस बीच ठाकुर सवाईसिंह ने आंबा इंग्लिया और जान बेण्टिष्ट को अपनी तरफ़ मिला लिया। उन्होंने सवाईसिंह के शामिल जाकर मुक़ाम किया। इससे इन्द्रराज के साथ की बातचीत रुक गई और सवाईसिंह ने सिंघवी चैनकरण को जान बेण्टिष्ट के साथ सोजत तथा जैतारण जाने का हुक्म दिया। उन्होंने लांबिया, नींबाज, आडवा आदि ठिकानों से रुपये वसूल किये और परब-तसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर अधिकार कर लिया।

आषण सुदि ५ (ता० ८ अगस्त) को सवाईसिंह ने पुनः जोधपुर पहुँच वहाँ के घेरे को बढ़ाया। इन्द्रराज उसके पास से रवाना होकर किश नगढ़ गया। वहाँ से उसकी तरफ़ से भंडारी पृथ्वीराज और कुचामण का

(१) दयालदास की ख्यात में इस संबंध में भिन्न वर्णन मिलता है। उसमें लिखा है—“सात मास तक जोधपुर के गढ़ पर तोपों की मार होने के पश्चात् गढ़ के भीतर से राणियों के कहलाने पर, सूरतसिंह ने सिंघोरिया की भाखरी से अपनी तोपें हटवा दीं। मानसिंह भी इस लड़ाई से तंग आकर गढ़ का परित्याग करने के विचार में था। उसने अपने कुछ सरदारों को इस संबंध में शर्तें तय करने के लिए भेजा। महाराजा सूरतसिंह-द्वारा छल न होने का आश्वासन मिलने पर माधोसिंह (आडवा), सुलतानसिंह (नींबाज), केसरीसिंह (आसोप), शिवनाथसिंह (कुचामण) तथा इन्द्रराज सूरतसिंह के पास गये और उन्होंने उससे कहा कि यदि आप गढ़ के भीतर का हमारा सामान आदमी भेजकर जालोर भिजवा देने तथा मारवाड़ और जोधपुर का जो भी प्रबंध हो उसमें मानसिंह को भी शरीक रखने का वचन दें तो एक मास में गढ़ खाली कर दिया जायगा। इसपर सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि हमें यह शर्तें स्वीकार हैं, पर साथ ही आपको सारा फ़ौज खर्च देना होगा तथा जब तक धोकलसिंह नाबालिग है तब तक जोधपुर का प्रबंध जयपुर नरेश के हाथ में रहेगा। सवाईसिंह की दूसरी शर्त सन्धि के लिए गये हुए सरदारों को मंजूर न हुई। तब सवाईसिंह ने एकांत में सूरतसिंह से कहा कि यदि आपकी अभिलाषा धोकलसिंह को राज्य दिलाने की हो तो आप इन सरदारों को छल से मरवा दें; परन्तु वचनबद्ध होने से सूरतसिंह ने ऐसा कुत्सित कार्य करने से इनकार कर दिया। अनन्तर उसने सिरोपाव आदि देकर आये हुए सरदारों को ससम्मान विदा किया (जि० २, पत्र १८-६)।”

ठाकुर शिवनाथसिंह मीरखां के पास गये । शिवनाथसिंह ने चार-पांच लाख रुपये देने का मीरखां को इक़रार लिखकर कहा कि जयपुर से शिवलाल बरूशी जोधपुर जाने के लिए रवाना हुआ है, उसको भगड़ाकर बिगाड़ने पर एक लाख रुपया दिया जायगा और बाक़ी रक़म हमारे शामिल रहने पर अदा कर दी जायगी । यदि इसके विपरीत होगा तो मैं तुम्हारे शामिल भोजन कर मुसलमान हो जाऊंगा । इस प्रकार का वचन हो जाने पर महाराजा मानसिंह ने जोधपुर से रत्न, आभूषण आदि उसके पास भेजे । सरदारों ने भी ज़ेवर और रुपये भेजे । बलूदा के ठाकुर शिवसिंह ने भी देवरिया के मुक़ाम से एक ढ़ज़ार रुपये और अपनी जमीयत के घोड़े इन्द्रराज के पास भेजे । फिर रत्न और आभूषण बेच तथा इधर-उधर से रक़म वसूलकर एक लाख रुपया इक़ठा कर इन्द्रराज ने मीरखां के पास भेज दिया । कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह तथा बूडसू के प्रतापसिंह आदि की मिलाकर उस समय मानसिंह की अच्छी सेना बन गई और मीरखां को साथ लेकर इस सेना ने कूच किया । जयपुर के बरूशी शिवलाल का मुक़ाम फागी में था । राठोड़ों ने वहां पहुंच उसका मुक़ाबला किया, जिसमें मानसिंह के सहायक राठोड़ों की विजय हुई और शिवलाल भाग गया । अनन्तर राठोड़ों ने उसके डेरे और माल-असबाब को लूट लिया । उस समय भंडारी चतुर्भुज और उपाध्याय रामदान ने परबतसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर पुनः महाराजा मानसिंह का प्रभुत्व स्थापित किया । उस समय बड़ के ठाकुर अजीतसिंह ने महाराजा के ५०० सैनिकों को दो मास तक अपने यहां रखकर उनका सारा खर्चा बर्दाश्त किया ।

शिवलाल के साथ की सेना को नष्टकर मीरखां तथा शिवनाथसिंह ने जयपुर की सेना का पीछा कर टुंडाड़ को लूटना आरंभ किया । उन्होंने जयपुर से तीन कोस दूर झुठवाड़ा गांव में अपने मुक़ाम रक्खे और वहां के

(१) मालकम-कृत “रिपोर्ट ऑन् दि प्राविन्स ऑव् मालवा एण्ड एड्जवाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स” से पाया जाता है कि अमीरखां के विरोधी हो जाने पर बरूशी शिवलाल मानसिंह से खड़ाई करने के लिए भेजा गया (पृ० १४६), परन्तु यह कथन ठीक नहीं है ।

बाग के सारे दरख्त कटवा डाले। राठोड़ों की सेना के भय से जयपुर नगर के दरवाजे बंद कर दिये गये। भंडारी पृथ्वीराज और शिवनाथसिंह ने जयपुर जाकर एक दिन गोलाबारी भी की^१। तदनंतर मीरखां और शेरसिंह ने झुठवाड़े से कूच किया और किशनगढ़ से सिंघवी इंद्रराज, ठाकुर बरूतावरसिंह (आडवा), केसरीसिंह (आसोप), सुरताणसिंह (नीबाज), भानसिंह (लांबिया), थानसिंह (सुमेल), तथा भाटी आदि और परबतसर की तरफ से भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामदान, अजीतसिंह (बडू), मंगलसिंह (बोड़ावड़), मोहकमसिंह (खालड़), जुभारसिंह (मन्नाणा), रघुनाथसिंह (तोसीणा), फ़तहसिंह (सरना-वड़ा), प्रतापसिंह (कालियाटड़ा), बरूतावरसिंह (पीह) आदि पांच हजार सेना के साथ जाकर इंद्रराज के शामिल हो गये। भाद्रपद महीने में मीरखां भी हरमाड़े में इंद्रराज के शामिल हुआ। वहीं ठाकुर शंभुसिंह (कंटालिया) और भारतसिंह (आलणियावास) भी उन लोगों के शामिल हुए। भंडारी पृथ्वीराज के साथवाले थांवल्ले के ऊदावतों और गोविंददासोत मेड़तियों ने जयपुर के कई गांवों को लूटा^२।

(१) टॉड-कृत “राजस्थान” में इससे भिन्न बर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि अमीरखां के जयपुर पर चढ़ाई करने पर महाराजा जगतसिंह ने जयपुर में रक्खे हुए अपने सेनाध्यक्ष को उसे सज़ा देने को लिखा। इसपर शिवलाल ने उसका आगे बढ़ना रोककर उसे लूणी की तरफ़ भगा दिया और गोविंदगढ़ एवं हरसूरी नामक स्थानों पर उसपर अचानक आक्रमण कर उसे फागी (फागी) नामक स्थान तक पीछे हटने पर मजबूर किया। इस प्रकार उसे जयपुर की सीमा के बाहर निकालकर शिवलाल ने पीछा जयपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। टोंक के निकट पीपला में पहुंचने पर जब अमीरखां को शिवलाल के वापस जाने का समाचार मिला तो उसने मुहम्मदशाहखां एवं राजाबहादुर को सहायतार्थ बुलाकर जयपुर की सेना पर हमला कर दिया और उसे हराकर वह जयपुर के द्वार तक जा पहुंचा (जि० २, पृ० १०८७)।

मालकम-कृत “रिपोर्ट ऑन दि प्रॉक्सिमा ऑब् मालवा एण्ड एड्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स” में भी लगभग ऐसा ही बर्णन है (पृ० १४६)।

(२) मीरखां और इन्द्रराज के साथ उस समय काफ़ी सेना हो गई थी।

फिर मीरखां ने इंदराज से सेना-व्यय मांगा, तब इंदराज ने परबत सर के मेड़तियों से अस्सी हजार रुपये तलब किये। इसपर बड़ू के महा-जन चतुर्भुज ने एक लाख रुपये का बराड़ (कर) प्रजा पर डाला। चंडवाणी जोशी श्रीकिशन तथा घड़िया राजाराम अजमेर में व्यापार करते थे, उनको इंदराज ने बोहरा बनाकर एक लाख रुपया मीरखां को देने की जमानत दिलाई। फिर मीरखां और इंदराज के सेना के साथ जयपुर की तरफ बढ़ने का समाचार महाराजा जगतसिंह को मिला। इसपर उसने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह और धोकलसिंह के पक्षपाती सवाईसिंह आदि को एकत्रित किया, परंतु एक दूसरे पर दोषारोपण करने के अतिरिक्त विशेष कुछ न हुआ। तब सवाईसिंह के बहुत कुछ रोकने पर भी महाराजा जगतसिंह ने कुछ ध्यान न दिया और भाद्रपद सुदि १३ (ता० १४ सितंबर) को उसने जोधपुर से कूच कर दिया। इसी प्रकार महाराजा

उन्होंने भी हंडाड़ का मुलक लूटा और वहां की औरतों को पकड़-पकड़ कर एक-एक छदाम में बेचा। इस लूट में उनके हाथ प्रचुर धन लगा (वंशमास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३६७२)। “बीरविनोद” से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८६४)।

(१) टॉड के अनुसार जगतसिंह, सूरतसिंह के बाद गया था। वह लिखता है कि पहले तो सवाईसिंह आदि ने अमीरखां की विजय का समाचार उसके पास कई दिन तक पहुंचाया ही नहीं। पीछे से जब एक विशेष हरकारे ने यह समाचार उसे दिया तो वह इतना घबरा गया कि उसने मरहटे सरदारों को बुलाकर सुरक्षित रूप से जयपुर पहुंचा देने के एवज में उन्हें १२ लाख रुपया देना ठहराया। यही नहीं उसने अमीरखां को भी नौ लाख रुपया देने का वायदा किया, ताकि वह मार्ग में उसे रोके नहीं (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८७-८)। मालकम-कृत रिपोर्ट ऑफ़ दि प्रोविंस ऑफ़ मालवा एण्ड एन्-ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स” में भी जगतसिंह का अमीरखां आदि को रुपया देने का उल्लेख है (पृ० १४७)। दयालदास की कथात से भी पाया जाता है कि जगतसिंह सूरतसिंह के बाद गया था। घेरे के समय ही अचानक सूरतसिंह मोतीफिरा की बीमारी से प्रसन्न हुआ। तब उसने जगतसिंह से सलाहकर अपनी सेना वहीं छोड़ बीकानेर की तरफ प्रस्थान किया। बि० सं० १८६४ आश्विन वदि १३ (ई० सं० १८०७ ता० २६ सितम्बर) को वह नाग तालाब होता हुआ भवाद पहुंचा, जहां कुछ दिन बाद ही जगतसिंह अपनी सारी सेना-सहित उससे मिल गया। महाराजा सूरतसिंह ने जब जयपुर नरेश से

सूरतसिंह भी बीकानेर की तरफ़ रवाना हुआ। सवाईसिंह आदि भी उसी रात्रि को अपने डेरे-डंडे उठाकर सेना-सहित चले गये। जितना सामान वे साथ ले जा सके ले गये और बाक़ी जला दिया। अनंतर उन्होंने नागौर जाकर डेरे डाले।

भाद्रपद सुदि १४ (ता० १५ सितंबर) को प्रातःकाल महाराज मानसिंह को जयपुर और बीकानेर के महाराजाओं के चले जाने तथा जोधपुर शत्रुओं से रहित होने का समाचार मिला। तब उसने नगर और दुर्ग के द्वार खुलवाये और स्वयं नगर में जाकर आयस देवनाथ को महामंदिर में ठहराया। नागरिकों ने महाराजा के पास उपस्थित होकर पंचोली गोपालदास की प्रशंसा की, जिसपर महाराजा ने उसकी तसल्ली की।

मीरखां और इंद्रराज को महाराजा जगतसिंह के जयपुर की तरफ़ लौटने का समाचार मिलने पर उन्होंने उस तरफ़ कूच किया। मार्ग में जयपुर की सेना के ऊंट और घोड़ों को गोविंददासोत मेड़तियों ने दो-तीन मुक़ामों पर लूटा। उन्होंने कई जयपुरी सैनिकों के नाक-कान भी काटे। महाराजा जगतसिंह का नोसल (दांता) में मुक़ाम होने पर मीरखां और इंद्रराज भी वहां जा पहुंचे। यद्यपि महाराजा जगतसिंह के पास पर्याप्त सेना विद्यमान थी, परंतु सफ़र के कारण सैनिकों के थके हुए होने से वे युद्ध के अयोग्य थे तथापि उनमें से दस हजार सैनिकों से मीरखां और इंद्रराज ने मुक़ाबला किया। जयपुरी सेना के पैर उखड़ गये। अंत में जयपुर के दीवान रायचंद्र ने एक लाख रुपये इंद्रराज के पास भेजकर कुशलतापूर्वक महाराजा जगतसिंह को जयपुर पहुंचा दिया।

इस प्रकार मीरखां और इंद्रराज के सम्मिलित प्रयत्न से जोधपुर का घेरा तो उठ गया; परंतु नागौर में ठाकुर सवाईसिंह के साथ ठाकुर बन्नीराम (चंडावल), झानसिंह (पाली), केसरीसिंह (बगड़ी),

अचानक घेरा उठाने का कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया कि आपके जाते ही मेरा चित्त भी चढ़ाई से हट गया, इसीलिए मैं घेरा उठाकर चला आया हूं (जि० २, पन्ना १६)।

(१) दयाबदास की वधात (जि० २, पन्ना १६) से भी इसकी पुष्टि होती है।

ज़ालिमसिंह (हरसोलाख), प्रतापसिंह (खींवसर), भाटी उम्मेदसिंह (लबेरा) आदि के अतिरिक्त नागोर और जेतारण पट्टी के लाडणू, दुगोली, लोटोती आदि के सरदारों का गिरोह था, जिनसे महाराजा को सदा आतंक रहता था। महाराजा ने उपर्युक्त लड़ाई में उत्तम सेवा करने के एवज़ में अपने अनेक कर्मचारियों एवं सरदारों आदि को इनाम-इकराम और ओहदे आदि देकर सम्मानित किया।

अमीरखां के जयपुर से जोधपुर लौटने पर महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया तथा “नवाब” की

महाराजा का अमीरखां-
द्वारा चुक करा सवाईसिंह
आदि को मरवाना

उपाधि और बराबर बैठने का सम्मान दिया।
गांव पाटवा तथा डांगावास का पट्टा और खर्च के
एवज़ में दरीबा, नावां आदि गांव उसे दिये गये।

अनन्तर एक दिवस महाराजा ने मीरखां से एकांत में कहा कि आपने मेरे राज्य की रक्षा की उसकी मैं प्रशंसा कहां तक करूं। अब सवाईसिंह ने जो मेरा अपमान किया है, उसका बदला किसी प्रकार लेना चाहिये। इसपर अमीरखां ने इस कार्य का भार अपने ऊपर लिया और थोड़े समय में ही उसे मार डालने का वायदा किया। इस संबंध में उसने सवाईसिंह तथा उसके साथियों को धोखा देने का एक कार्यक्रम निश्चित किया। तदनुसार वि० सं० १८६४ के पौष तथा माघ मास में उसने जोधपुर से खर्च का तक्राज़ा किया। उधर से पूर्व निश्चय के अनुसार कुछ हीला-हवाला किया गया तो वह जोधपुर का विरोधी बन आस-पास के गांवों में लूट-मार करने लगा। जोधपुर से कई व्यक्ति उसके पास सुलह करने के लिए भेजे गये, परंतु उसपर उनका कोई असर नहीं हुआ। यह समाचार जब नागोर में सवाईसिंह को मिला तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने अमीरखां को कहलाया कि तुम धर्म-कर्मपूर्वक हमारी सहायता करने का क्रार कर हमारे शामिल हो जाओ तो तुम्हारा खर्चा हम दे देंगे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३१-४८। बीरविनोद; भाग २, पृ० ८६३-४। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८३-४।

अमीरखां तो यह चाहता ही था, उसने इस बात को स्वीकार कर मूंडवे में डेरा किया। ठाकुर सवाईसिंह ने उसको जोधपुर की तरफ बढ़ने के लिए कहलाया तो उसने उत्तर दिया कि एक बार मैं स्वयं ठाकुर साहब से मिलकर बातचीत करूंगा और खर्चे की पूरी व्यवस्था हो जाने पर ही आगे कार्यवाही करूंगा। इसपर ठाकुर सवाईसिंह ने उसको नागौर बुलवाया, जिसपर वह मूंडवा से दो सौ आदमियों के साथ वहां गया। वि० सं० १८६४ चैत्र वदि १४ (ई० सं० १८०८ ता० २५ मार्च) को तारकीन की दरगाह (मसजिद) में सवाईसिंह आदि से अमीरखां की मुलाकात हुई। उनकी परस्पर एकांत में दो घड़ी तक बातचीत होकर सब बातें तय हुईं। फिर सवाईसिंह, बक्शीराम, झानसिंह, केसरीसिंह प्रभृति सरदारों ने एकत्रित रूप से बातचीत कर उसको विदा किया। अमीरखां ने कहा कि मेरी सेना के सैनिकों ने वेतन के लिए बड़ा तक्काज़ा कर रखा है, इसलिए मैं मूंडवे जाता हूं। कल मेरे यहां आपकी मिहमाननवाज़ी की जावेगी, आप मूंडवे आवें, वहाँ सब बातें पक्की कर ली जावेगी। आप लोग जमाखातिर रखें, कुछ ही दिनों में हम जोधपुर मानसिंह से लुढ़ा लेंगे। इस प्रकार कुरान बीच में रख अपना विश्वास दिलाने के अनन्तर अमीरखां पीछा मूंडवे गया।

आवणादि वि० सं० १८६४ (चैत्रादि १८६५) चैत्र सुदि २ (ई० सं० १८०८ ता० २६ मार्च) को उपर्युक्त चारों सरदार अपने दो सहस्र सैनिकों के साथ मूंडवा पहुंचे। वहां अमीरखां की तरफ से उनकी मेहमानी की गई और रात्रि को वे वहीं रहे। उस समय अमीरखां ने सवाईसिंह को कहलाया कि आप सिपाहियों की चढ़ी हुई तनक्वाह चुका देने की तसल्ली कर दें तब वे जोधपुर को रवाना होंगे। इस बात पर विश्वास कर ठाकुर सवाईसिंह (पोकरण), बक्शीराम (चंडावल), झानसिंह (पाली) और केसरीसिंह (बगड़ी) अमीरखां के डेरों में गये, जहां एक बड़ा शामियाना लगा हुआ था, जिसमें एक फ़र्श बिछा था। उसके चारों ओर

मुसलमान सैनिक तोपें लगाये बैठे थे। चारों सरदार उस शामियाने में बैठ गये और उनके साथ के एक सहस्र आदमी भी वहीं मौजूद रहे। सवाईसिंह आदि सरदारों ने मुहम्मदखां को, जो वहां सिपाहियों के साथ विद्यमान था, कहा कि तुम्हारी चढ़ी हुई तनखाह हम चुका देंगे। इसपर मुहम्मदखां ने कहा कि मैं नवाब साहब को बुलाकर लाता हूँ। फिर मुहम्मदखां, अमीरखां के पास गया। अमीरखां की पत्नी का भाई भी मुहम्मदखां के साथ सरदारों के पास से उठकर जाने लगा तो उसको सवाईसिंह ने बातचीत करने के निमित्त रोक लिया। सवाईसिंह आदि अमीरखां और मुहम्मदखां के आने की प्रतीक्षा में बैठे हुए थे। इतने में पूर्व निर्दिष्ट योजना के अनुसार उपर्युक्त चारों सरदारों का प्राण-हरण करने के लिए अमीरखां की तरफ से संकेत पाते ही उसके सैनिकों ने शामियाने की रस्सियां काट डालीं, जिससे शामियाना गिर गया और वे चारों सरदार, जो शामियाने के भीतर बैठे हुए थे, दब गये। ऊपर से उनपर अमीरखां के सैनिकों ने तोपों से गोलों की वर्षा की, जिससे सब वहां के वहां ही भुन गये। सवाईसिंह आदि के साथ के सैनिकों का, जो शामियाने के आस-पास खड़े थे, तलवारों और बंदूकों की गोलियों से संहार किया गया। डेरे के लोगों में से कुछ तो तोप के गोलों से मारे गये और कुछ भाग गये। तदनन्तर चारों सरदारों के सिर कटवाकर अमीरखां ने महाराजा के पास भिजवाये, जिसपर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई। नागोर में इस घटना की खबर पहुंचने पर वहां रहे हुए सरदारों को निराशा हो गई। ठाकुर ज़ालिमसिंह (हरसोलाव), प्रतापसिंह (लीब-सर), भाटी छत्रसिंह, तथा तंवर मदनसिंह बीकानेर चले गये। अन्य लोग जहां-जहां सुविधा हुई वहां गये और कई सरदार माफ़ी मांगकर पुनः महाराजा मानसिंह के पास उपस्थित हो गये। चैत्र सुदि ४ (ता० ३१ मार्च) को अमीरखां ने मूंडवे से नागोर पहुंच वहां महाराजा मानसिंह का प्रभुत्व स्थापित किया^१।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ४१ तथा ५३-४। मास्कम;

सवाईसिंह के मारे जाने की खबर पोकरण पहुंचने पर उसका पुत्र सालिमसिंह सेना एकत्र कर फलोधी पहुंचा और उधर के गावों का

रिपोर्ट ऑन दि प्रॉक्सि ऑब् मालवा एंड एड्जवाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स; पृ० १४७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८१-१०। वीरविमोद; भाग २, पृ० ८६४।

जोधपुर राज्य की रूखात में लिखा है कि सवाईसिंह आदि के मारे जाने की घटना चैत्र सुदि ३ (ता० ३० मार्च) को हुई। उस समय सवाईसिंह आदि सरदारों के साथ के छ-सात सौ आदमी मारे गये। “वंशभास्कर” में लिखा है कि अमीरखाने ने सरदारों के साथ मंत्रणा करने के लिए एक शिविर तनवाया था, जिसके फ़र्श के नीचे बारूद बिछाया गया था (भाग ४, पृ० ३१७८)। सवाईसिंह आदि के मारे जाने के विषय में नीचे लिखा पद्य प्रसिद्ध है, जिससे पाया जाता है कि यदि अमीरखाने ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता तो उसको उनके बाहुबल का परिचय मिलता—

मियां जो दीधी मीरखां, कमधां बीच कुरान ।

रक्षा भरोसे रामरे, (नहीं तो) पड़ती खबर पठान ॥

रूखातों आदि में ठाकुर सवाईसिंह को प्रत्येक स्थल पर महाराजा मानसिंह के समय होनेवाले उपद्रवों का मूल कारण बतलाया है। वस्तुतः भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी देरावरी राणी के उदर से पुत्र उत्पन्न होने के कारण प्रधान के पद का दायित्व निवाहते हुए वह नवजात शिशु (धोकलसिंह) के राज्य का वास्तविक अधिकारी होने से ही उसके स्वतंत्रों की रक्षा के लिए मानसिंह का विरोधी हुआ होगा। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। मानसिंह के गद्दी बैठने के पूर्व ही भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ होने की बात प्रकट हो चुकी थी, जिसपर मानसिंह ने क्रार किया था कि देरावरी के उदर से पुत्र उत्पन्न होगा तो वही जोधपुर राज्य का स्वामी होगा और मैं जालोर चला जाऊंगा। राजपूत जाति के इतिहास में अपने स्वार्थों की हानि होने की अवस्था में इक्रार को तोड़ देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी अवस्था में भीमसिंह की राणियों का मानसिंह पर, जिसके साथ पहले से ही उनकी शत्रुता थी, विश्वास होना कठिन था। इस प्रकार संदेह के वशीभूत होकर वे चांपासणी के गोस्वामी की शरण में चली गईं और जब वहां से सरदारों के आग्रह से लौटीं तो जोधपुर के दुर्ग में न जाकर नगर के महलों में ठहरीं, जहां मानसिंह की तरफ से कदा प्रबंध कर दिया गया। फिर माघ वदि में देरावरी राणी के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो मानसिंह द्वारा मरवाये जाने के भय से गुप्त रूप से भाटी कुत्रसिंह के

मानसिंह का सवाईसिंह के
उत्तराधिकारी सालिमसिंह को
गांव आदि देकर संतुष्ट
करना

बिगाड़ करने लगा। तब सिंघवी जसवंतराय तथा
पंचोली राधाकिशन ने राजकीय सेना के साथ
जाकर उससे भगड़ा किया, जिसमें दोनों तरफ़ के
बहुत से आदमी मारे गये और कई घायल हुए।

अनन्तर सिंघवी इंद्रराज ने उसको लिखा कि अपनी भलाई चाहते हो तो
पोकरण चले जाओ, नहीं तो वह ठिकाना हाथ से चला जायगा। इसपर
वह पोकरण चला गया और हरियाडाणा के चांपावत बुधसिंह को जोधपुर
भेज उसने रेखबाब, जमीयत के घोड़े आदि भेजने की आग्रह देवनाथ-द्वारा
बातचीत तय की, जिसपर महाराजा ने मजल, दुनाड़ा तथा उधर के कुछ
अन्य गांव भी उस (सालिमसिंह) के नाम लिख दिये^१।

बीकानेर का महाराजा, सवाईसिंह का पक्षपाती था, अतएव उससे
बदला लेने के लिए वि० सं० १८६५ (ई० सं० १८०८) में जोधपुर की
तरफ़ से सिंघवी इन्द्रराज ने एक विशाल सेना^२ के
साथ बीकानेर पर चढ़ाई की। उन्हीं दिनों सिंध,
जैसलमेर, सीकर, घूरू आदि से भी अलग-अलग
सेनाओं ने जाकर बीकानेर में जगह-जगह फ़साद करना शुरू कर

साथ खेतबी भेज दिया गया। सवाईसिंह के क्रमानुयायियों का तो कथन है कि सवाई-
सिंह उस समय जोधपुर में न था और पोकरण में था। अनुमान होता है कि मानसिंह
का अपने राज्याभिषेक के समय भीमसिंह का नाम चारखों की ओर से पढ़ी जानेवाली
आशीष में से हटवाना, भीमसिंह के कृपापात्रों को पदों से हटाकर उन लोगों को,
जिन्होंने भीमसिंह की आज्ञा से सांवतसिंह, शेरसिंह आदि को मारा था, निर्दयता से
मरवाना तथा भंडारी गंगाराम तथा सिंघवी इंद्रराज को, जिन्होंने उसे गद्दी पर बिठलाया
था, कैद करवाना ही इस विरोध का मूल कारण हो सकता है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ५४-५।

(२) दयालदास की ख्यात में इस सेना की संख्या ८० हजार दी है
(जि० २, पत्र ६६)। टॉड केवल बारह हजार सेना लिखता है (राजस्थान,
जि० २, पृ० १०६१)।

दिया^१। इस प्रकार बीकानेर चारों तरफ से शत्रुओं से घिर गया। फलोधी के निकट शत्रु सेना के पहुँचने पर पुरोहित जवानजी तथा मेहता बानजी ने वीरता-पूर्वक उसका सामना कर उसे पीछे हटा दिया। जिस समय जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई हुई उस समय सांडवे का ठाकुर जैतसिंह, साह अमरचंद, दूसरे दुर्जनसिंह आदि सीमाप्रान्त के प्रबंध के लिए नियुक्त थे। उन्होंने शत्रु सेना का सामना कर उसे रोकने का प्रबंध किया। अंत में जोधपुर का बहुत सा माल-असबाब अपने क़ब्ज़े में कर जैतसिंह, अमरचंद आदि बीकानेर चले गये^२। दो मास तक जोधपुर की सेना गजनेर में पड़ी रही और रोज़ छोटी-मोटी लड़ाइयां होती रहीं, परन्तु नगर पर उसका अधिकार न हो सका^३।

जब दो मास बीत जाने पर भी सिंघवी इन्द्रराज बीकानेर पर अधिकार करने में सफल न हुआ तो लोढ़ा कल्याणमल ने मानसिंह से निवेदन किया कि इतने समय में भी इन्द्रराज ने जोधपुर और बीकानेर में संधि होना बीकानेर पर अधिकार नहीं किया है, इससे जान पड़ता है कि वह बीकानेरवालों से मिल गया है। यदि मुझे आज्ञा दी जाय तो मैं जाकर बीकानेर पर अधिकार करने का प्रयत्न करूँ। मानसिंह के मन में भी उसकी बात जम गई और उसने तत्काल उसे जाने की आज्ञा दे दी तथा अपने हाथ का पत्र देकर ४००० फ़ौज के साथ उसे बीकानेर पर भेजा। मार्ग में देशणोक पहुँचने पर उसने करणीजी के सम्मुख जाकर कहा कि सुना जाता है कि तुम बीकानेर राज्य

(१) “वीरविनोद” में भी इस अवसर पर दाऊदपुरी एवं जोहियों आदि का बीकानेर में उत्पात करना लिखा है (भाग २, पृ० ५०-५०८), परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात अथवा टॉड-के ग्रन्थ में इसका उल्लेख नहीं है।

(२) टॉड लिखता है कि बीकानेर का राजा सुरतसिंह फ़ौज लेकर मुक़ाबले को गया, परन्तु बापरी के युद्ध में उसे हारकर भागना पड़ा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६-१००।

की रक्षा करनेवाली हो, मैं बीकानेर खाली करा लूंगा, तुमसे जो हो सके सो कर लेना। जब उसके आने की सूचना इन्द्रराज को मिली तो उसने इस आशय का एक पत्र महाराजा सूरतसिंह के पास भेजा—

“मेरे लिए मानसिंह और आप समान हैं। आपने जो जोधपुर में संधिवाता के समय मेरे प्राणों की रक्षा की थी, वह उपकार मैं भूला नहीं हूँ। अब लोढ़ा (कल्याणमल) मेरी शिकायत कर बीकानेर पर अधिकार करने की प्रतिज्ञा कर आया है। उसे सज़ा देनी चाहिये।”

उपर्युक्त पत्र पाने पर महाराजा सूरतसिंह ने बीकावतों, बीदावतों, कांधलोतों, भाटियों, मंडलावतों तथा रूपावतों में से चुने-चुने बीरों के साथ सुराणा अमरचन्द को चार हज़ार सवार देकर कल्याणमल के विरुद्ध भेजा। उधर कल्याणमल ने गजनेर-स्थित जोधपुर की सेना को शीघ्र आने के लिए लिखा; परन्तु फ़ौज के सैनिकों ने यह विचार किया कि लड़ाई तो हम लड़ेंगे और सारा श्रेय लोढ़ा को मिलेगा, इसलिए उन्होंने ऊपर से तत्परता तो बहुत दिखलाई, परन्तु कूच न किया। तब लोढ़ा कल्याणमल स्वयं गजनेर गया। उसी समय सुराणा अमरचन्द भी सेना-सहित जा पहुंचा। दोनों फ़ौजों का सामना होने पर मारवाड़ के बहुत से सरदार काम आये तथा कल्याणमल अपनी सेना-सहित भाग गया। अमरचन्द ने उसका पीछा कर एक कोस की दूरी पर उसे जा पकड़ा और युद्ध करने पर बाध्य किया। थोड़ी देर की लड़ाई में ही अमरचन्द ने उसे बन्दी कर लिया। उसका सारा सामान लूट लिया गया तथा ढड़ढा शार्दूलसिंह और सुलतानसिंह का भी दो लाख रुपये का माल बीकानेरवालों के हाथ लगा। बाद में लोढ़ा कल्याणमल को महाराजा सूरतसिंह ने मुक्त कर दिया, जो अपमानित होकर लौट गया। यह समाचार मानसिंह को मिलने पर उसने इस कार्य पर पुनः इन्द्रराज को ही नियुक्त कर दिया। अनन्तर महाराजा सूरतसिंह ने भविष्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की। उन दिनों भूकरका का ठाकुर अभयसिंह कैद में था और वहां का अधिकार उसके पुत्र प्रतापसिंह के हाथ में था। उसने कहा कि मैं बीस हज़ार

भाटियों एवं जोड़ियों को सहायतार्थ ला सकता हूँ। बाय के ठाकुर प्रेमसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी। उसने कहा कि भाटियों के देश में आने से राज्य खतरे में पड़ जायगा। सूरतसिंह को भी उसकी बात पसन्द आई, अतएव उसने जोधपुर के सरदारों के साथ मेल के लिए बात-चीत की। फलोधी तथा सिंघ के जीते हुए छः गढ़ और तीन लाख रुपये फ़ौज खर्च देने की शर्त पर परस्पर सन्धि हो गई। उपर्युक्त स्थानों से बीकानेरी सेना के वापस आ जाने पर तथा रुपयों के ओल में कई प्रतिष्ठित सरदारों को साथ ले जोधपुर की सेना वापस लौट गई। पीछे से सुराणा अमरचन्द रुपया भरकर ओल में सौंपे हुए व्यक्तियों को पीछा ले गया'।

(१) ब्यालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १००-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑफ़ दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

जोधपुर राज्य की ख्यात का कथन है कि वि० सं० १८६५ (ई० सं० १८०७) में महाराजा मानसिंह ने सिंघवी इन्द्रराज के साथ बीकानेर पर सेना भेजी। उसमें कर्म-चारियों में मेहता सुरजमल गया था। सरदारों में चांपावत ठाकुर बल्लताबरसिंह (आडवा), इन्द्रसिंह (रोयट), कृपावत ठाकुर केसरीसिंह (आसोप), विशानसिंह (चंदावल), उदावत ठाकुर सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (कांबिया), अमरसिंह (झीपिया), मेड़तिया ठाकुर बिड़दसिंह (रीयां), शिवसिंह (बलूदा), भाटी जसवंतसिंह (खेजवला) तथा ईडवा, चांदाखण, नोखा एवं नीबड़ी के मेड़तिया, आद्राज्य के जोधा और जाबोर की तरफ़ के छोटे-बड़े कई सरदार इस सेना में थे, जिसकी संख्या दस हजार हो गई थी। उनके अतिरिक्त वैतनिक सेना के लगभग दस हजार आदमी थे और कुछ सैन्य-संख्या बीस हजार तक जा पहुँची थी। बीकानेर की सीमा में जोधपुर की सेना के प्रवेश करने पर वहाँ के मुसाहिब और सरदारों ने सात हजार सैनिकों के साथ उदासर में जोधपुर की सेना का मुकाबला किया। दुतरफ़ी तोपखानों की लड़ाई हुई। बीकानेरवालों की तोपों का गोला जोधपुर के सरदार हयावतसिंह (ईडवा) के लगा, जिससे वह मर गया। छापरी का चांदावत पहाड़सिंह भी इसी युद्ध में काम आया और आद्राज्य के सैनिकों में से उदजी उदावत की आंख में गोली लगी। युद्ध का परिणाम बीकानेर के विपक्ष में रहा। बीकानेरवालों ने जोधपुर राज्य की सेना का आगमन होने के पूर्व ही मार्ग में पकनेवाले कुम्हों और नादियों में गधे तथा ऊंट भरवाकर डलवा दिये थे। इसलिये

श्रावणादि वि० सं० १८६५ (चैत्रादि १८६६) के आषाढ मास के आस-पास अमीरखां ने पुनः जोधपुर जाकर उपद्रव करना शुरू किया।

जोधपुर के साथ सन्धि
होना

इसपर सन्धि करने के लिए महाराजा जगतसिंह ने अपना वकील जोधपुर भेजा। मानसिंह को भी इन्द्रराज एवं देवनाथ ने बीकानेर के समान जोधपुर से संधि कर लेने की राय दी। तदनुसार परस्पर कई शर्तें तय होकर दोनों राज्यों के बीच सन्धि हो गई^१।

इसी बीच अमीरखां ने महाराजा मानसिंह से निवेदन किया कि जबतक उदयपुर की राजकुंवरी कृष्णकुमारी जीवित है भगड़े की आशंका

जोधपुर के सेनाध्यक्ष इन्द्रराज की सेना के जहाँ-जहाँ मुक़ाम होते, वहाँ सर्व-प्रथम कुओं और जलाशयों में से इड्डियां निकलवाकर गंगाजल से उन्हें शुद्ध कराना पड़ता। इसके बाद जब वह तथा अन्य प्रमुख सरदार उन कुओं तथा नादियों का जल पी लेते, तब ही सैनिक लोग उस जल को ग्रहण करते थे। जोधपुर की सेना के साथ जल के प्रबंध के लिए जंटों पर एक हज़ार चमड़े की पखालें थीं। उस वर्ष बीकानेर में अच्छी वर्षा होने से क्रस्सल अच्छी पकी थी और मतीरों का बाहुल्य था, जिससे जोधपुरी सैनिक अपनी प्यास बुझाते थे। बीकानेरवालों ने किसी-किसी कुएं में सिंगीमोहरा नामक तेज़ ज़हर के गठुर बंधवाकर डलवा दिये थे। इससे पूरी जांचकर जल पीना पड़ता था। इन्द्रराज के गजनेर तक पहुँच जाने पर बीकानेरवालों ने संधि की बात चलाई, जो स्वीकृत होकर तीन लाख रुपये सेना व्यय के जोधपुरवालों को देना तय हुआ। इसके अतिरिक्त बीकानेर की तरफ़ से एक लाख रुपये इन्द्रराज को और दो-दो हज़ार रुपये सरदारों को मिजमानी के दिये गये तथा पाँच गाँव आयस देवनाथ को भेंट किया गया। गींगोली के युद्ध में हाथी आदि जो सामान बीकानेरवालों के हाथ लगा था, वह भी पीछा जोधपुरवालों को दे दिया गया। उस समय लोढ़ा कल्याणमल और हीरासिंह सेना लेकर गजनेर जा रहे थे, जिनसे बीकानेर की सेना का मुक़ाबला हुआ, जिसमें कल्याणमल और हीरासिंह परास्त हुए। उनका सामान भी बीकानेरवाले ले गये थे। वह भी पीछा दे दिया गया और भविष्य में जोधपुर राज्य के किसी विरोधी को शरण न देने का इक़रा इन्द्रराज और सूरजमल चैत्र मास में जोधपुर लौटे (जि० ४, पृ० ५६-७)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ५७-८।

कृष्णकुमारी का विष
पीकर मरना

बनी रहेगी, अतएव जैसे भी हो उसे मरवा डालना ही ठीक है। महाराजा को भी उसकी बात पसंद आई और उसने उसे ही यह कार्य करने के लिए नियुक्त किया। अमीरखां ने उदयपुर जाकर अजीतसिंह चूडावत के द्वारा, जो उसकी सेना में महाराणा की तरफ से वकील था, महाराणा से कहलाया—“या तो आप अपनी कन्या का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ कर दें या उसे मरवा डालें, नहीं तो मैं आपके देश को बरबाद कर दूंगा।” मेवाड़ की दशा उस समय बड़ी निर्बल हो रही थी, जिससे उल्लेख लाचार होकर अमीरखां की बात पर ध्यान देना पड़ा। उसने जवानदास (महाराणा अरिसिंह द्वितीय का पासवानिया पुत्र) को राजकुंवरी को मार डालने के लिए भेजा। जनानखाने के भीतर जाकर जब उसने राजकुमारी को देखा तो उससे यह कार्य न हो सका। अन्त में सारी बातें ज्ञात होने पर राजकुमारी स्वयं प्रसन्नतापूर्वक विष का प्याला पी गई। इस प्रकार वि० सं० १८६७ आक्ख वदि ५ (ई० सं० १८१० ता० २१ जुलाई) को कृष्णकुमारी के जीवन का अंत हो गया।

(१) वीरबिनोद; भाग २, पृ० १७३८-६। टॉड; राजस्थान; वि० १, पृ० ५३६-४१।

जोधपुर राज्य की कथात में लिखा है कि जोधपुर की बात स्थिर हो जाने के पीछे अमीरखां मेवाड़ गया। जोधपुर से उसके साथ पृथ्वीराज मंदारी और अनोप-राम पंचोली वकील के रूप में गये। अमीरखां मेवाड़ के गांवों को नष्ट-भ्रष्ट करता हुआ उदयपुर के समीप जा पहुंचा। इसपर महाराणा ने अपने कर्मचारियों को अमीरखां आदि के पास भेजकर कहलाया कि मेरा मुल्क क्यों बरबाद करते हो? अमीरखां ने उत्तर दिया कि कृष्णकुमारी मानसिंह से विवाह दी जावे। पृथ्वीराज और अनोपराम ने उत्तर दिया कि राणाजी की तरफ से मानसिंह के नाम खरीता भेजा जावे, उसकी जैसी इच्छा हो, वैसा करेंगे। इसपर मानसिंह के नाम खरीता भेजा गया। मानसिंह ने अमीरखां को लिखा कि भीमसिंह के साथ मंगनी की हुई कन्या को मैं नहीं ब्याह सकता, तुम्हें जैसा ध्यान मैं आवे करो। यह समाचार अमीरखां ने उदयपुरवालों को सुनाया, तब उन्होंने विचार किया कि राजकुमारी के रहते फिर किसी दिन बखेड़ा हो

वि० सं० १८६७-८ (ई० सं० १८१०-११) में जोधपुर राज्य में अकाल सा ही रहा, परन्तु वि० सं० १८६६ (ई० सं० १८१२) में जोधपुर में वर्षा का पूर्ण अभाव हो जाने से अकाल की भयंकरता बहुत बढ़ गई और अनाज तीन सेर तक महंगा बिका^१ ।

जोधपुर राज्य में भयंकर
अकाल पड़ना

महाराजा मानसिंह सिरौही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था । इस दृष्टि से उसने वि० सं० १८६६ (ई० सं० १८१२) में अपनी फ़ौज सिरौही पर भेजी । वह सेना सिरौही तथा अन्य कई इलाक़ों को लूटने के बाद जोधपुर लौट गई^२ ।

उसी वर्ष जयपुर के महाराजा का ख़ास दक्का पहुंचने पर जोधपुर से सिंघवी इन्द्रराज और भंडारी शिवचंद जयपुर गये । इस अवसर पर आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, आडवा का ठाकुर बहतावरसिंह तथा नींबाज का ठाकुर सुरताणसिंह और जोशी श्रीकिशन उनके साथ गये । वैशाख मास से लगाकर भाद्रपद मास तक वे वहां रहे । पहले के निश्चय के अनुसार जयपुर के महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह के साथ और मानसिंह की कुंवरी का विवाह जगतसिंह के साथ होने के विषय में परस्पर सलाह होकर वि० सं० १८७० भाद्रपद सुदि ८ और ९ (ई० सं०

जयपुर में महाराजा का
विवाह होना

सकता है, इसलिए राजकुमारी को विष देकर मार डाला (जि० ४, पृ० ५८) ।

कृष्णकुमारी के सम्बन्ध के बख़्शों को हम महाराजा मानसिंह की अविवेकता का ही परिणाम कहेंगे । मंगनी की हुई कन्या का भावी वर यदि विवाह के पूर्व ही मर जाय तो वह कन्या कुंवारी ही मानी जाती है और उसका विवाह उसके पिता माता की इच्छानुसार कहीं भी हो सकता है । यह शास्त्रीय और व्यावहारिक नियम है । ऐसी दशा में मानसिंह का तत्सम्बन्धी व्यर्थ का हठ उचित नहीं कहा जा सकता ।

(१) जोधपुर राज्य की स्थिति; जि० ४, पृ० ६५ ।

(२) मेरा; सिरौही राज्य का इतिहास; पृ० २७६ ।

१८१३ ता० ३ और ४ सितंबर) को क्रमशः मानसिंह का विवाह जयपुर राज्य की सीमा पर के मरवा गांव तथा जगतसिंह का विवाह किशनगढ़ के रूपनगर क़स्बे में होना स्थिर हुआ। तदनंतर महाराजा मानसिंह नागौर पहुंच महाराजा सूरतसिंह से मिला और वहां से रूपनगर गया। वहां उसकी बरात में किशनगढ़ का महाराजा कल्याणसिंह और मसूदे का ठाकुर देवीसिंह आदि भी शरीक हुए। अनन्तर पहले दिन महाराजा मानसिंह का मरवा गांव और दूसरे दिन महाराजा जगतसिंह का रूपनगर में बड़ी धूमधाम से विवाह हुआ। इस अवसर पर जयपुर के महाराजा के आश्रित हिंदी भाषा के प्रसिद्ध कवि पद्माकर और जोधपुर के कविराजा बांकीदास के बीच काव्यचर्चा भी हुई।

वि० सं० १८७० (ई० सं० १८१३) में सिरोही का महाराव उदय-
भाण अपने छोटे भाई शिवसिंह, राज्य के कुछ अहलकारों एवं सिपाहियों
के साथ सोरों की यात्रा को गया। वहां से लौटते
सिरोही के महाराव से धन वसूल करना समय वह कुछ दिनों के लिए पाली में ठहरा, जहां
नाच-रंग, जिसका उसे बहुत शौक था, होने लगा। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य का कट्टर शत्रु था। पाली के
हाकिम ने अपनी खैरख्वाही जतलाने के लिए महाराव के वहां ठहरने का
हाल गुप्त रीति से महाराजा के पास भिजवा दिया। इसपर इसने तत्काल
कुछ फ़ौज रवाना कर दी। उस सेना ने उस स्थान को, जहां महाराव
ठहरा हुआ था, घेर लिया और महाराव के कुल साथियों सहित उसको
गिरफ्तार कर जोधपुर भिजवा दिया। महाराजा ने तीन मास तक उसे
अपने यहां रक्खा और गुप्त रीति से उससे जोधपुर की अधीनता स्वीकार
करने के संबंध में एक तहरीर लिखवा ली। अनन्तर एक लाख पचीस
हज़ार रुपये देने की शर्त पर महाराजा ने सदा के व्यवहार के अनुसार
उससे मुलाक़ात की, जिसके बाद महाराव अपने साथियों-सहित सिरोही

चला गया' ।

उमरकोट पर जोधपुर राज्य का कब्ज़ा स्थापित होने का उल्लेख ऊपर आ गया है^२ । जोधपुर राज्य में वि० सं० १८६६ (ई० स० १८१२)

में भीषण अकाल हो जाने से उमरकोट के प्रबंध
 उमरकोट पर पुनः टाल-
 पुरियों का अधिकार होना के लिए धन न भेजा जा सका और वहां की व्य-

वस्था में शीथिलता आ गई । इसका पता पाते ही टालपुरियों ने सेना एकत्र कर उमरकोट पर आक्रमण कर दिया । उस समय वहां का हाकिम भंडारी शिवचंद शोभाचंदोत था और कर्मचारी मोदी अजबनाथ । जोधपुर की सेना टालपुरियों का मुकाबला न कर सकी और वहां उनका पुनः अधिकार स्थापित हो गया^३ ।

आवणादि वि० सं० १८७१ (चैत्रादि १८७२ = ई० स० १८१५) के वैशाख (मई) मास में नवाब मुहम्मदशाह^४ की फौज रुपया वसूल करने के लिए जोधपुर गई और मेड़ते में ठहरी । उसने मेड़ते का बड़ा बिगाड़ किया, जिसपर वहां के हाकिम पंचोली गोपालदास का चाचा अभयमल, जो उस समय वहां था, भागकर जोधपुर चला गया । अनन्तर मुसलमान सेना जोधपुर की तरफ गई । तब सिंघवी इन्द्रराज ने तीन लाख रुपया देने का इक़रार कर उसे वापस लौटाया^५ ।

उसी वर्ष भाद्रपद (सितंबर) मास में अमीरखां भी जोधपुर पहुंचा ।

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २७६-८० ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है, परन्तु उसमें ५०-६० हजार रुपयों का रुक़ा लिखा जाना दिया है । उसके अनुसार जोधपुर की फौज के अध्यक्ष छोटेखान और कलंदरखान नामक परदेशी थे (जि० ४, पृ० ६६) ।

(२) देखो ऊपर पृ० ७२८-३३ ।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ११८ ।

(४) संभवतः यह अमीरखान का पुत्र रहा हो, जो वज़ीरमुहम्मदखान के नाम से प्रसिद्ध था ।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७०-१ ।

उसने मार्ग में पड़नेवाले स्थानों को लूटा तो नहीं, परन्तु जगह-जगह रुपया लेना अवश्य स्थिर किया । जोधपुर में उन दिनों अमीरखां का देवनाथ और इन्द्रराज को मरवाना सिंघवी इन्द्रराज तथा आयस देवनाथ की बहुत चलती थी और मानसिंह एक प्रकार से उन्हीं के कहने में था, जिससे अन्य सरदार उनसे अप्रसन्न रहते थे । अमीरखां के जोधपुर पहुंचने पर उन सरदारों ने उसकी मारफ़्त दोनों को मरवाने का विचार किया । शेखावतजी के तालाब पर अमीरखां का डेरा होने पर अलैचंद तथा खानमल ने, जो इन्द्रराज के विरोधी थे, सरदारों की मारफ़्त उसे इन्द्रराज के विरुद्ध भड़काया और उससे कहलाया कि यदि आप देवनाथ और इन्द्रराज को मरवा दें तो हम आपको खर्च दें । तब अमीरखां ने भी उन्हें मारने का निश्चय किया । उसने इन्द्रराज से अपनी रकम की मांग की । इस बीच इन्द्रराज को इस गुप्त अभिसंधि का पता लग गया, जिससे उसने तलहटी में जाना ही छोड़ दिया । ऐसी दशा में अमीरखां ने अपने सरदारों से रायकर यह तय किया कि पांच-पच्चीस आदमी गढ़ में जाकर उन दोनों पर चूक करें । इसपर आश्विन सुदि ८^१ (ता० १० अक्टोबर) को प्रातःकाल के समय सत्ताइस आदमी गढ़ में गये और उन्होंने महाराजा के शयनागार में, जहां आयस देवनाथ, सिंघवी इन्द्रराज और मोदी मूलचंद सलाह कर रहे थे, प्रवेशकर कड़ाबीन से गोलियां चला देवनाथ और इन्द्रराज को मार डाला । मोदी मूलचंद तथा पुरोहित गुमानसिंह (तिबरी) आदि कई व्यक्ति भी मारे गये । महाराजा मानसिंह उस समय निकट ही मोतीमहल में था । ज्योंही उसे सब हाल मालूम हुआ, उसने सब उपद्रवकारियों को मार डालने की आज्ञा दी, पर अमीरखां के साथ मिले हुए लोगों ने उसके-द्वारा नगर लूटे जाने का भय दिखलाकर महाराजा से पहले का हुक्म स्थगित कराया और उन्हें निकल जाने दिया । अन्त में साढ़े नौ लाख रुपये फ़ौज खर्च के अमीरखां

(१) "वीरबिनोद" में इस घटना का समय वि० सं० १८७३ वैशाख सुदि ८ (ई० सं० १८११ ता० ५ अप्रेल) दिया है (भाग २, पृ० ८१४) ।

को देना तय हुआ, जिसमें से आधा मेहता अलैचंद और आधा सेठ राजाराम तथा जोशी श्रीकृष्ण ने देना स्वीकार कर उसका प्रबंध कर दिया। तब वहां से रुपये लेकर अमीरखां ने प्रस्थान किया^१। आयस देवनाथ और इन्द्रराज के मारे जाने का महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य करना और बाहर आना-जाना तक छोड़ दिया^२।

अनन्तर आसोप के ठाकुर केसरीसिंह, नींबाज के ठाकुर सुरताण-सिंह, आडवा के ठाकुर बरूतावरसिंह, चंडावल के ठाकुर विशनसिंह, कंटालिया के ठाकुर शंभूसिंह आदि की सलाह सिंघवी गुलराज का दीवान बनाया जाना से राज्यकार्य-संचालन का भार मेहता अलैचंद को सौंपा गया एवं बरूथीगीरी का कार्य भंडारी चतुर्भुज करता रहा। वे जो कुछ करते, महाराजा को उसका ज्ञान तो रहता, पर वह मुख से कुछ भी न कहता। सिंघवी गुलराज उस समय सोजत की तरफ था। वह यह खबर पाकर गांव कोट के ढाणा नामक स्थान में चला गया। वहां से उसने महाराजा के पास अर्जी लिखी कि यह कार्य यदि आप की इच्छा के विरुद्ध हुआ हो तो मुझको आश्वा दी जावे कि मैं दुश्मनों से बदला लूं। महाराजा ने इस विषय में गुलराज से गुप्तरूप से अपनी सहमति प्रकट की। तब उसने दो हजार आदमियों के साथ जोधपुर में प्रवेश किया और माघ सुदि ३ (ई० स० १८१६ ता० १ फरवरी) को बह राई का बाग में ठहरा। इसपर बरूतावरसिंह, सुरताणसिंह, केसरीसिंह, विशनसिंह, शंभूसिंह आदि तथा भंडारी चतुर्भुज अपनी-अपनी हवेलियों से निकलकर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७०-४। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६५। टोंड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१।

(२) टोंड लिखता है कि महाराजा को लोगों की तरफ से इतना सन्देह हो गया था कि वह केवल अपनी राणी के हाथ का बनाया हुआ भोजन ही खाता था। उसने सब कार्य करना छोड़ दिया था। लोगों ने उसे बहुत समझाया, परन्तु व्यर्थ। वह ईश्वर-प्रार्थना और देवनाथ की मृत्यु पर शोक करने के अतिरिक्त और कुछ न करता (था राजस्थान; जि० २, पृ० ८२६)।

चांदपोल पहुंचे और वहां से अखयराज के तालाब से होते हुए चौपासखी-
(चांपासखी) चले गये। अखयचंद गढ़ में आत्माराम की समाधि में जा द्रिया।
दूसरे दिन गुलराज गढ़ पर गया तब दीवानगी की मोहर और बख्शीगीरी
का कार्य गुलराज को सौंपा गया। उपर्युक्त आसोप, नौबाज, आडवा आदि
के सरदार चौपासखी से चंडावल गये। महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी
चैनकरण उनके पीछे चंडावल गया, जिसके दबाव डालने पर वे (सरदार)
अपनी-अपनी जागीरों में चले गये'।

सिरोही के महाराव के क़ैद किये जाने और उसके सवा लाख रुपये
देने का शर्तनामा लिख देने का उल्लेख ऊपर आ गया है^१। महाराव ने

जोधपुर की सेना का
सिरोही इलाके में लूट-मार
करना

शर्तनामा तो लिख दिया था, परन्तु उसकी दिली
मंशा रुपये चुकाने की न थी। इसीसे जब कुछ
समय बाद जोधपुर की तरफ़ से रुपयों की
मांग की गई तो सिरोही के मुसाहिबों ने उसपर कोई ध्यान न दिया।
फलतः वि० सं० १८७३ (ई० सं० १८९६) में महाराजा मानसिंह ने मेहता
साहबचंद की अध्यक्षता में सिरोही पर सेना भेजी, जो भीतरोट परगने
को लूट और दूसरे कई ठिकानों से रुपये वसूलकर जोधपुर लौटी^३।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि महाराजा को आयस देवनाथ
और सिंघवी इन्द्रराज के मारे जाने का इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-

महाराजा मानसिंह का
अपने कुंवर छत्रसिंह को
राज्याधिकार देना

कार्य से हाथ खींच लिया, तो भी सिंघवी
कृतहराज और गुलराज निराश न हुए और राज्य-
कार्य पूर्ववत् चलाते रहे। उस समय आत्माराम
की समाधि की शरण में रहते हुए मेहता अखैचंद ने महामन्दिर के कार्य-
कर्ता मेहता उत्तमचंद को अपनी तरफ़ मिलाकर आयस देवनाथ के भाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७३-४। वीरविनोद; भाग २,
पृ० ८६५-६।

(२) देखो ऊपर पृ० ८१५।

(३) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८०।

भीमनाथ, कुंवर छत्रसिंह और उसकी माता को अपने पक्ष में कर लिया। उनके सिवाय उसने कई प्रमुख राजकर्मचारियों को भी अपने पक्ष में किया। अनन्तर भीमनाथ और उत्तमचंद गढ़ में गये। भीमनाथ ने महाराजा से कहा कि आप तो उदासीन रहते हैं, हमारी रक्षा कौन करेगा; अतएव अच्छा हो कि आप राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंप दें। महाराजा इसके विरुद्ध था, पर उसने उस समय सम्मति-सूचक उत्तर दे दिया। फिर श्रावणादि वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४) वैशाख वदि ३ (ई० सं० १८१७ ता० ४ अप्रैल) को जब गुलराज महाराजा से मुलाक़ात करने के लिए किले पर गया तो अखैचंद के इशारे पर उसके आदमियों ने, जिन्होंने पहले से ही सारा प्रबंध कर रक्खा था, उस- (गुलराज) को महाराजा के पास से लौटते समय कैद कर लिया और रात्रि के समय मार डाला। फ़तहराज को यह समाचार मिलने पर जब वह किले पर जाने के लिए तैयार हुआ तो अमीरखां के आदमियों ने खर्च मांगने के बहाने उसको वहीं अटक दिया। मेड़ता के हाकिम पंडित गोपालदास ने पांच हजार रुपया देना ठहराकर जब उसको छुड़ाया तब वह अपने परिवार-सहित कुचामण चला गया। उधर इस घटना के तीसरे दिन अखैचंद के बुलाने पर भीमनाथ गढ़ पर गया। महाराजा ने यह देख-कर कि विरोध करने का समय अब नहीं रहा, छत्रसिंह को युवराज का पद देना स्वीकार कर लिया और वैशाख सुदि ३ (ता० १६ अप्रैल) को अपने हाथ से उसके तिलक कर दिया।

इसके दूसरे दिन बड़े समारोह के साथ छत्रसिंह को राज्याधिकार मिलने का उत्सव मनाया गया। सारा नगर सजाया गया और पूरे लवाज़मे के साथ छत्रसिंह की सवारी निकाली गई। भीमनाथ के करने का सारा कार्य वल्लभ संप्रदाय के गुसाईं वजाधीश ने किया। अखैचंद कुल काम का

राज्य में नये अधिकारियों की नियुक्ति

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७५-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६। टोंड राजस्थान; जि० २, पृ० ८२६।

मुस्तार और उसका पुत्र लक्ष्मीचंद दीवान बनाया गया, भंडारी शिवचंद का पुत्र अंगरचंद बरूही एवं पोकरण का ठाकुर सालिमसिंह प्रधान मंत्री के पद पर नियत हुआ। आहोर का ठाकुर अनाइसिंह, जो उस समय कोटे में था, बुलाये जाने पर उपस्थित हो गया। इसी प्रकार अन्य ओहदों पर भी अलैचंद की मर्जी के मुताबिक दूसरे लोग नियुक्त किये गये^१।

सिंधवी गुलराज पर चूक होने के पीछे सिंधवी चैनकरण काणाणा के ठाकुर श्यामकरण करणोत की हवेली में छिप रहा था। जालोर में रहते समय चैनकरण महाराजा भीमसिंह के पक्ष में रहा था। उसकी याद दिलाकर सरदारों ने छत्रसिंह को उसके विरुद्ध भड़काया। फिर उन्होंने श्यामकरण से इस विषय में राय पक्की की, जिसके अनुसार छत्रसिंह स्वयं जाकर चैनकरण को काणाणा की हवेली से ले आया और वह (चैनकरण) सिंवाची दरवाजे पर तोप से उड़ा दिया गया^२।

अनन्तर राजकीय सेना ने जाकर कुचामण के ठाकुर से चालीस हजार रुपये वसूल किये। इसी प्रकार मेड़ते का हाकिम गोपालदास कैद किया जाकर उससे पैंतालीस हजार रुपये देने का क़रार कराया गया। व्यास चतुर्भुज वि० सं० १८७२ से ही कैद में था। उसपर दंड का एक लाख रुपया ठहराकर वह छोड़ दिया गया^३।

उस समय महाराजा की तरफ़ से आसोप, विशनराम अंग्रेज़ों के पास वकील की हैसियत से रहता था। भारत के दशरी राज्यों

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८१-२

अंग्रेज सरकार के साथ
संधि होना

को अपने संरक्षण में लेने की ईस्ट इंडिया कम्पनी और उसकी तरफ से भारत में रहनेवाले गवर्नर जनरल लॉर्ड हेस्टिंग्स ने नीति स्वीकार कर ली थी। तदनुसार जोधपुर राज्य की तरफ से भी ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ संधि की बात चलाई गई। उसके तय होते ही निम्नलिखित दस शर्तों का एक सन्धिपत्र लिखा गया—

अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से श्रीमान् गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स-द्वारा दिये हुए पूरे अधिकारों के अनुसार मि० चार्ल्स थिया-फ़िलास मेटकाफ़ के द्वारा तथा जोधपुर राज्य के महाराजा मानसिंह बहादुर-द्वारा अधिकार प्राप्त युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह बहादुर, व्यास विश्वनराम एवं व्यास अभयराम-द्वारा किया हुआ अहदनामा।

शर्त पहली—ईस्ट इंडिया कम्पनी और महाराजा मानसिंह तथा उसके वंशजों के बीच मैत्री, सहकारिता तथा स्वार्थ की एकता सदा पुश्त दर पुश्त क़ायम रहेगी और एक के मित्र तथा शत्रु दोनों के मित्र एवं शत्रु होंगे।

शर्त दूसरी—अंग्रेज़ सरकार जोधपुर राज्य और मुल्क की रक्षा करने का ज़िम्मा लेती है।

शर्त तीसरी—महाराजा मानसिंह तथा उसके उत्तराधिकारी अंग्रेज़ सरकार का बहूपपन स्वीकार करते हुए उसके अधीन रहकर उसका साथ देंगे और दूसरे राजाओं अथवा रियासतों से किसी प्रकार का संबंध न रखेंगे।

(१) एक्सिस; टीटीज़, एंजेमेंट्स एण्ड सनदज़; जि० ३, पृ० १२८-३०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ४, पृ० ८२-४) तथा बीरविनोद (भाग २, पृ० ८८८-११) में इस अहदनामे का अनुवाद छपा है।

इसके पूर्व वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में भी एक अहदनामा तैयार हुआ था, परन्तु महाराजा के अस्वीकार करने के कारण वह रद्द कर दिया गया (देखो ऊपर पृ० ७७१-८०)।

शर्त चौथी—अंग्रेज़ सरकार को जतलाये बिना और उसकी स्वीकृति प्राप्त किये बिना महाराजा और उसके उत्तराधिकारी किसी राजा अथवा रियासत से कोई अहद-पैमान न करेंगे; परन्तु अपने मित्रों एवं संबंधियों के साथ उनका मित्रतापूर्ण पत्रव्यवहार पूर्ववत् जारी रहेगा।

शर्त पांचवीं—महाराजा और उसके उत्तराधिकारी किसी पर ज्यादाती न करेंगे। यदि दैवयोग से किसी से कोई भगड़ा खड़ा हो जायगा तो वह मध्यस्थता तथा निर्णय के लिए अंग्रेज़ सरकार के सम्मुख पेश किया जायगा।

शर्त छठी—जोधपुर राज्य की तरफ़ से अबतक सिंधिया को दिया जानेवाला खिराज, जिसका विस्तृत व्योरा साथ में नथी है, अब सदा अंग्रेज़ सरकार को दिया जायगा और खिराज-सम्बन्धी जोधपुर राज्य का सिन्धिया के साथ का इक़रार ख़त्म हो जायगा।

शर्त सातवीं—चूँकि महाराजा का कथन है कि सिंधिया के अतिरिक्त और किसी राज्य को जोधपुर से खिराज नहीं दिया जाता और चूँकि उपरिलिखित खिराज अब वह अंग्रेज़ सरकार को देने का इक़रार करता है, इसलिए यदि अब सिंधिया अथवा अन्य कोई खिराज का दावा करेगा तो अंग्रेज़ सरकार उसके दावे का जवाब देगी।

शर्त आठवीं—मंगाये जाने पर अंग्रेज़ सरकार की सेवा के लिए जोधपुर राज्य को पन्द्रह सौ सवार देने पड़ेंगे और जब भी आवश्यकतम पड़ेगी राज्य के भीतरी इन्तज़ाम के लिए सेना के कुछ भाग के अतिरिक्त शेष सब सेना महाराजा को अंग्रेज़ी सेना का साथ देने के लिए भेजनी होगी।

शर्त नवीं—महाराजा और उसके उत्तराधिकारी अपने राज्य के खुद-मुक़्तार रहेंगे और उनके राज्य में अंग्रेज़ी हुकूमत का दख़ल न होगा।

शर्त दसवीं—दस शर्तों की यह संधि, जिसपर मि० चाटर्स थिया-फिलास मेटकाफ़ और व्यास विशनराम एवं व्यास अभयराम के इस्ताद्वर तथा मुहर हैं, दिल्ली में लिखी गई। श्रीमान् गवर्नर जेनरल तथा महाराजा मानसिंह और युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह इसकी स्वीकृति कर आज

की तारीख से छः सप्ताह के भीतर एक दूसरे को सौंप देंगे ।

दिल्ली ता० ६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष वदि अमावास्या वि० सं० १८७४) ।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़-

- „ व्यास विशनराम.
- „ व्यास अभयराम.
- „ युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह बहादुर.
- „ महाराजा मानसिंह बहादुर.
- „ हेस्टिंग्स.

ता० १६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष सुदि १० वि० सं० १८७४)
को ऊंचार में श्रीमान् गवर्नर जेनरल ने इसकी तसदीक की ।

(हस्ताक्षर) जे० एडम.

गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी.

खिराज सम्बन्धी इफ़रारनामा

अजमेर के रुपये १८००००)

बाद २० प्रतिशत के हिसाब से ३६०००)

जोधपुरी रुपये १४४०००)

इसमें से आधा नक़द ७२०००)

आधे का माल ७२०००)

जोड़ १४४०००)

नुक़सानी ३६०००)

जोधपुरी रुपये १०८०००)

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़.

(मुहर) वकील.

(हस्ताक्षर) जे० पंडम.

गवर्नर जनरल का सेक्रेटरी'.

जोधपुर की सेना के सिरोही इलाके में लूट-मार करने से तंग आकर वहां के महाराज और उसके मुसाहिबों ने जोधपुर इलाके में लूट-मार करने का निश्चय किया। तदनुसार गुसाईं रामदत्तपुरी

जोधपुर की सेना का
सिरोही में लूट-मार करना

और बड़वा प्रेमा ने ससैन्य जाकर जालोर के का-

डूरा, बागरा, आकोली, धानपुरा, तातोली, सांड,

नून, मांक, देलाद्री, बीलपुर, बुडतरा, सवरसा, सिपरवाड़ा, माडोली और भूतवा गांवों को लूटा और वहां से ३८५६ रुपये फ़ौजबाब (खर्च) के वसूल किये। इसी तरह उन्होंने गोड़वाड़ इलाके के कानपुरा, पालड़ी, कोरटा, सलोद्विया, ऊंदरी, धनापुरा, पोमावा और शानपुरा गांवों को लूटा और वहां से १७८८ रुपये १४ आने फ़ौजबाब के लिये। जब इस लूट की खबर जोधपुर पहुंची तो सिरोही को बरबाद करने के लिए वहां से मेहता साहबचंद एक बड़ी सेना के साथ भेजा गया। इस फ़ौज ने सिरोही पहुंचकर वि० सं० १८७४ माघ वदि ८ (ई० स० १८१८ ता० २६ जनवरी) को सिरोही शहर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस संधि के साथ-साथ जोधपुर की तरफ से और भी कई विषयों पर अंग्रेज़ सरकार से लिखा पढ़ी हुई थी, जिनमें गोड़वाड़ और उमरकोट के सम्बन्ध के दावे उल्लेखनीय हैं। गोड़वाड़ के सम्बन्ध में जोधपुर की तरफ से कहा गया कि यह इलाका महाराणा अरिसिंह ने महाराजा विजयसिंह को सेना रखने के एवज़ में दिया था और इसको छत्रसिंह तक चार पीढ़ी हो गई है, अतएव महाराणा की तरफ से यदि इसके बारे में दावा किया जाय तो अंग्रेज़ सरकार उसकी सुनाई नहीं करेगी। इसके जवाब में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि जो मुल्क पीढ़ी-दर-पीढ़ी जोधपुर के कब्जे में है, वह उसी राज्य का समझा जायगा। उमरकोट के बारे में जोधपुर की तरफ से कहा गया कि यह इलाका तीन साल हुए नौकरों की नमकहरामी की वजह से टालपुरियों के कब्जे में चला गया है, यदि वहां महाराजा अपनी सेना भेजे तो अंग्रेज़ सरकार किसी प्रकार का उज्र न करे। इसके उत्तर में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि यदि महाराजा अपनी तरफ से फ़ौज भेजेंगे तो अंग्रेज़ सरकार को कोई उज्र न होगा (जि० ४, पृ० ८४-५)।

पर आक्रमण कर दिया। महाराव ने इसपर शहर छोड़कर पहाड़ों में शरण ली। जोधपुर की सेना ने दस दिन तक शहर को लूटा और वहाँ से ढाई लाख रुपये का सामान लेकर बह लौटी। इसी सेना ने सिरोही राज्य का दफ्तर भी जला दिया, जिससे वहाँ के सब पुराने पत्र आदि नष्ट हो गये। इस प्रकार मुल्क को बरबाद होता देखकर महाराव ने इधर-उधर से रुपया बसूल करना शुरू किया। इससे वहाँ और अव्यवस्था फैली। मीनों आदि के उपद्रव से पहले ही सिरोही निवासी तंग हो रहे थे, अब यह नई विपत्ति खड़ी हुई। ऐसी परिस्थिति देख सब सरदार महाराव उदयभाण के भाई शिवसिंह के पास गये और उन्होंने उससे राज्य के प्रबंध के विषय में बातचीत की। शिवसिंह ने उन्हें आश्वासन देकर विदा किया और स्वयं सिरोही जाकर महाराव (उदयभाण) को नज़रबन्द कर उसने राज्य-कार्य अपने हाथ में ले लिया। महाराजा मानसिंह ने महाराव को लुढ़ाने के लिए अपनी सेना रवाना की, परन्तु उसे सफलता न मिली।

अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि स्थापित होने के बाद अधिक दिनों तक कुंवर छत्रसिंह जीवित न रहा और उपदंश रोग से वि० सं० १८७४ चैत्र वदि ४ (ई० सं० १८१८ ता० २६ मार्च) को उसका देहांत हो गया। प्रथम दिन तो यह खबर छिपाई गई और यह प्रयत्न किया गया कि छत्रसिंह की शकल-सूरत का कोई व्यक्ति मिल जाय तो उसे ही राजा बना दें, पर यह युक्ति न चलने पर अगले दिन उसकी उत्तर क्रिया की गई। महाराजा को यह समाचार मिलने पर उसको रंज तो बहुत हुआ, परन्तु उसने ऊपर से अपना भाव पूर्ववत् रक्खा।

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८०-१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८२-६। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०११। टॉड लिखता है कि छत्रसिंह की मृत्यु के कई कारण कहे जाते हैं। कुछ का कहना है कि वह बहुत दुराचारी था, जिससे शीघ्र ही शारीरिक शक्ति क्षीय हो जाने के कारण वह मर गया और कुछ का

तदनन्तर सरदारों ने यह प्रकट किया कि छत्रसिंह की चौहान राणी के गर्भ है, पर थोड़े समय बाद ही जब उसका भी देहांत हो गया तो

महाराजा से मिलने के लिए अंग्रेज सरकार का एक अधिकारी भेजना

उन्होंने ईडर से गोद लाने का विचार किया। इस संबंध में महाराजा से निवेदन किये जाने पर उसने उसपर कोई ध्यान नहीं दिया। अन्य लोगों ने

भी परिस्थिति की गम्भीरता बतलाकर उसे बाहर आकर कार्य संभालने के लिए कहा, परन्तु उसे किसी व्यक्ति पर भी भरोसा न था, जिससे वह मौन ही साथे रहा। यह खबर जब दिल्ली पहुंची तो वहां के अंग्रेज अफसरों की तरफ से 'मुंशी बरकतअली' महाराजा से मिलने के लिए भेजा गया। आश्विन मास में बरकतअली जोधपुर पहुंचा। मुसाहब, कार्यकर्ता आदि उसे साथ लेकर महाराजा के पास गये, पर उस दिन महाराजा कुछ भी न बोला। दूसरे दिन जब बरकतअली अकेला महाराजा के पास गया तो उसने उससे कहा कि सरदारों की मनमानी और मुझे मारने के षड्यंत्र से घबराकर ही मैंने यह हालत बना रखी है। यदि अंग्रेज सरकार मेरी सहायता करे तो मैं राज्य-प्रबंध हाथ में लेने को प्रस्तुत हूं। इसपर बरकतअली ने उसकी पूरी-पूरी दिलजमई कर उससे कहा कि आप प्रसन्नता से राज्य करें और बदमाशों को सज़ा दें। यहां सरकारी खबर-नवीस रहा करेगा, आपको जो भी कहना हो उससे कहें। अनंतर सरकार में भी रिपोर्ट होकर वहां से इस संबंध में खरीता आ गया। तबतक राज्य-कार्य पूर्ववत् होता रहा। इस बीच सरदारों ने पोकरण के कार्यकर्ता बुद्धसिंह को महाराजा के पास भेजकर यह जानना

कहना है कि एक राजपूत ने, जिसकी पुत्री का उसने सतीत्वहरण करने का प्रयत्न किया था, उसे मार डाला (राजस्थान; भाग २, पृ० ८२६-३०) ।

(१) टैंड-कृत "राजस्थान" में मुन्शी बरकतअली का नाम नहीं है। उसमें मि० वाइल्डर नाम दिया है (जि० २, पृ० १०६३ टि० २)। संभव है दोनों को ही अंग्रेज सरकार ने महाराजा मानसिंह के पास भेजा हो। उसी पुस्तक से पाया जाता है कि उस समय अंग्रेज सरकार ने महाराजा को सैनिक-सहायता देनी चाही थी, परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया।

चाहा कि महाराजा की वास्तविक दशा ही वैसी है अथवा वह बना हुआ है, परन्तु कुछ भी निर्णय न हो सका^१।

जोधपुर की राजकुमारी का विवाह जयपुर होने पर व्यास फौजीराम उसके साथ जयपुर भेजा गया था। धीरे-धीरे उसपर महाराजा जगतसिंह की सिंघवी फ़तहराज का जयपुर विशेष कृपा हो गई और वह वहां का मुसाहब हो गया। उससे बातचीतकर सिंघवी फ़तहराज कुचामण से जयपुर गया और वहां का शासन-प्रबन्ध अपने हाथ में लेने का प्रयत्न करने लगा। इसपर जयपुरवालों को उसकी तरफ़ से शङ्का हो गई। उन्होंने इस सम्बन्ध में महाराजा जगतसिंह से कहा, जिसपर उसने फ़ौजीराम को क्रौंद करवा दिया। इसपर फ़तहराज भागकर कुचामण गया और वहां से जोधपुर की अव्यवस्था से लाभ उठाने के लिए वह अपने सारे साथियों और कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह के साथ वि० सं० १८७५ (ई० सं० १८१८) के श्रावण मास में जोधपुर जाकर बाल-समंद पर ठहरा^२।

जोधपुर के सरदार आदि बहुत पहले से ही महाराजा मानसिंह से एकान्तवास छोड़कर राज्य-कार्य अपने हाथ में लेने का अनुरोध कर रहे थे। बहुत समय तक तो उसने उधर कोई ध्यान नहीं दिया, फिर वि० सं० १८७५ कार्तिक सुदि ५ (ई० सं० १८१८ ता० ३ नवंबर) को उसने एकान्तवास का परित्याग करने के अनन्तर क्षीर-कर्म, स्नान आदि कर दरबार किया, जिसमें सरदारों ने उपस्थित होकर नज़रें आदि पेश कीं। फ़तहराज गङ्ग में जाया करता था पर उसका कार्य सधा नहीं^३।

(१) जोधपुर राज्य की ल्यात; जि० ४, पृ० ८६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

(२) जोधपुर राज्य की ल्यात; जि० ४, पृ० ८७-८।

(३) जोधपुर राज्य की ल्यात; जि० ४, पृ० ८८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

उसी वर्ष माघ मास में महाराजा की अनुमति प्राप्तकर अखैराज ने राज्य के आय-व्यय का मीज़ान ठीक करने के लिए सरदारों से एक-एक गांव देने के लिए कहा। इसपर नींबाज, आउवा, चंडावल, आसोप, खेजड़ला, कुचामण, रायपुर, पोकरण, भाद्राजूण आदि के ठाकुरों ने एक-एक गांव देना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार आमदनी में तीन लाख रुपये की वृद्धि हुई। उन्हीं दिनों राजकीय सेना ने जाकर बूडसू पर अधिकार कर लिया, जिसपर वहां का स्वामी ढूंढाड़ चला गया। उसी समय के आस-पास पोकरण का ठाकुर सालिमसिंह राज्य का प्रधान नियत हुआ^१।

जब प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता कर्नल टॉड पश्चिमी राजपूताने का पोलिटिकल एजेंट नियत हुआ तो उदयपुर, हाड़ोती, कोटा, बूंदी, सिरोही, जैसलमेर तथा जोधपुर आदि रियासतों का प्रबंध भी उसी के सुपुर्द किया गया। ई० स० १८१६ (वि० सं० १८७६) के अन्तिम दिनों में उसने जोधपुर का दौरा किया। ता० ११ अक्टोबर (कार्तिक वदि ८) को उदयपुर से प्रस्थान कर पलाणा, नाथद्वारा, केलवाड़ा, नाडोल, पाली, कांकाणी तथा भालामंड होता हुआ नवंबर मास में वह जोधपुर पहुंचा। ता० ४ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि २) को महाराजा मानसिंह उससे मिला। महाराजा ने उसका बड़ी शानोशौकत के साथ स्वागत किया। टॉड लिखता है कि जोधपुर का स्वागत दिल्ली के शाही ढंग का था। महाराजा ने उसे एक हाथी, एक घोड़ा, आभूषण, ज़री का थान, दुशाला आदि भेंट में दिये। ता० ६ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि ४) को वह पुनः महाराजा से मिला और उसने उससे राज्यशासन संबंधी बातचीत की^२।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८६-६० ।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ८२२ तथा ८२४ ।

एकान्तवास का परित्याग करने के बाद महाराजा ने क्रमशः अपने पक्ष के लोगों की संख्या बढ़ाई। सिंघवी इन्द्रराज तथा आयसदेवनाथको मर-
महाराजा का अपने विरो- खाने के षड्यन्त्र में शामिल रहने के कारण महाराजा
धियों को निवेद्यतापूर्वक अखैचंद तथा उसके साथियों से नाराज़ तो था ही,
मरवाना एक दिन उपयुक्त अवसर देख उसने मेहता लक्ष्मी-
चन्द, किलेदार नथकरण देवराजोत, व्यास विनोदीराम, मुन्शी पंचोली
जीतमल, धांधल मूला, जीया, हरजी आदि ८४ आदमियों को कैद करवा
दिया। यह घटना श्रावणदि वि० सं० १८७६. (चैत्रादि १८७७) वैशाख
सुदि १४ (ई० स० १८२० ता० २७ अप्रैल) को हुई। उसी समय अखैचंद
भी गिरफ्तार हुआ। इसके बाद द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३ (ता० २४ जून)
को परिवार-सहित मेहता सूरजमल, व्यास चतुर्भुज के पुत्र शिवदास
एवं लालचन्द, जोशी श्रीकिशन और पंचोली गोपालदास कैद किये गये।
इस एकड़ा-धकड़ी से नींबाज का सुलतानसिंह बड़ा चिंतित हुआ और
उसने द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १५ (ता० २६ जून) को इस सम्बन्ध में पोकरण
के ठाकुर सालिमसिंह से बातचीत की। उसी रात राजकीय सेना के नींबाज
पर आक्रमण करने की खबर पाकर सुलतानसिंह वहां से पोकरण की
हवेली जाने के लिए निकला, परन्तु मार्ग में ही मोनीचोक में उसका राज-
कीय सेना से सामना हुआ, जिससे वह पीछा अपनी हवेली में चला गया।
इसपर राज्य की सेना ने हवेली को घेर लिया। भीतर प्रवेश करने के लिए
सुरंग खोदी गई। यह देखकर सुलतानसिंह अपने छोटे भाई सूरसिंह और
दूसरे १८ आदमियों-सहित बाहर निकला, परन्तु तोपों के छुरों की मार
से आषाढ वदि १ (ता० २७ जून) को अपने सब साथियों-सहित मारा

(१) टॉड लिखता है कि अखैचंद ने ४० लाख रुपये की जापदाद की सूची
बनाकर दी, जिसमें से अधिकांश ले लेने के बाद महाराजा ने उसे मरवा डाला। उससे
बढ़ भी पाया जाता है कि महाराजा राज्य-कार्य हाथ में लेने के बाद से ही उससे नाराज़
था और उसे मरवा देने के लिए उपयुक्त अवसर की तलाश में था। साथ ही वह सारे
राजकीय मामले अच्छी तरह समझ लेना चाहता था (राजस्थान; जि० २, पृ० ८३१-२)।

गया^१। यह समाचार मिलने पर ठाकुर सालिमसिंह अपने अनेक आदमियों सहित महामंदिर होता हुआ पोकरण चला गया^२। आसोप के ठाकुर केसरी-सिंह को जब इस घटना की खबर मिली तो वह देशणोक (बीकानेर) में जा रहा और वहीं पौष मास में उसकी मृत्यु हुई। इसपर आसोप की सारी जागीर उस समय खालसा कर ली गई। इसी प्रकार पोकरण के कुछ गांव तथा रोहट, चंडावल, खेजड़ला, नींबाज आदि के पट्टे भी ज़ब्त कर लिये गये^३।

उपरिलिखित क्रैद किये हुए व्यक्तियों के साथ, महाराजा ने बड़ा निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया। वह मानो सिंधवी इन्द्रराज एवं आयस देवनाथ की मृत्यु का बदला लेने के लिए अन्धा हो रहा था। वह उन्हें केवल क्रैद करके ही सन्तुष्ट न हुआ, बल्कि नगजी क्रिलेदार तथा धांधल मूला को विष का प्याला पीने पर मजबूर किया गया और उनके मृत शरीर फ़तहपोल के नीचे फेंक दिये गये^४। जीवराज,

(१) टॉड-कृत “राजस्थान” में सुरताणसिंह के साथ मरनेवालों की संख्या ८० दी है (जि० २, पृ० १०६६)।

(२) टॉड के अनुसार पोकरण का सालिमसिंह अपनी रक्षा के लिए रेगिस्तान में चला गया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६६)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६०-६२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७८। ख्यात के अनुसार उपर्युक्त स्थानों के सरदार पड़ोसी राज्यों में जा बसे। टॉड के अनुसार भी महाराजा के क्रूर व्यवहार से घबराकर उसके कितने ही प्रमुख सरदार पड़ोस के राज्यों में चले गये। (राजस्थान; जि० २, पृ० ११०१)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ४, पृ० ६२-३) में निम्नलिखित पांच व्यक्तियों को प्रथम ज्येष्ठ सुदि १४ (ता० २६ मई) को विष देकर मरवाने का उल्लेख है—

१. क्रिलेदार नथकरण २. मेहता अखैचन्द ३. व्यास विनोदीराम ४. सुंशी पंचोली जीतमल और ५. जोशी फ़तहचन्द।

“वीरविनोद” (भाग २, पृ० ८६७) में भी ये पांच नाम ही दिये हैं, पर उसमें से किसी का मृत शरीर गढ़ से नीचे फेंके जाने का उल्लेख नहीं है।

बिहारीदास खीची' एवं एक दूसरे व्यक्ति को उनके सिर मुंडवाकर गढ़ के नीचे फेंकवाया गया। इससे मिलता-जुलता व्यवहार व्यास शिवदास तथा जोशी श्रीकिशन^१ के साथ भी हुआ^२।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार खीची बिहारीदास तलहटी में था। वह खेजबूला के ठाकुर शार्दूलसिंह एवं साथीय के ठाकुर शक्तिदान के साथ खेजबूला की हवेली में चला गया। महाराजा को मालूम होने पर उसने माटियों से कहा परन्तु बिहारीदास पकड़ा न गया। तब कलंदरखाना भेजा गया, जिससे लड़ता हुआ बिहारीदास मारा गया (जि० ४, पृ० ६२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जोशी श्रीकिशन तथा मेहता सूरजमल विष देकर मारे गये (जि० ४, पृ० ६६)। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने कुंवर छत्रसिंह की माता अर्थात् अपनी चावडी राणी को एकान्त महल में कैद करवा दिया, जहां अन्न-जल न मिलने से उसका देहांत हो गया। “वीरबिनोद” में भी ऐसा ही लिखा है (भाग २, पृ० ८६८)।

(३) राजस्थान; जि० २, पृ० १०६७-८। एक दूसरे स्थल पर टॉड लिखता है कि नित्य कुछ आदमी मारे अथवा कैद किये जाते अथवा उनका धन अपहरण कर लिया जाता था। कहा जाता है कि इस प्रकार महाराजा ने एक करोड़ रुपया जम्मा किया (राजस्थान; जि० २, पृ० ८३२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में कैद किये हुए व्यक्तियों के साथ ऐसा निर्दयतापूर्ण व्यवहार करने का उल्लेख तो कहीं नहीं है, परन्तु उसमें भी कई व्यक्तियों की नाक काटकर उनका मुक्त किया जाना लिखा है (जि० ४, पृ० ६६)। जो भी हो महाराजा का इस प्रकार का आचरण अवश्य निंदनीय था। केवल कुछ व्यक्तियों के अपराध के कारण इतने आदमियों को बुरी तरह मरवाना किसी भी दशा में उचित नहीं कहा जा सकता। अपने ई० स० १८२० ता० ७ जुलाई (वि० सं० १८७७ आषाढ वदि १२) के अंग्रेज़ सरकार के नाम के पत्र में टॉड ने लिखा था—

“अब तो यह है कि अपनी सफलता से उत्साहित होकर वह (भागसिंह) न्याय-पालन अथवा अपनी स्थिति बढ़ करने के लिए सीमा से आगे न बढ़ जाय। यदि वह ई० स० १८०६ (वि० सं० १८६३) के पञ्चयन्त्र में माग लेने और उसके पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनानेवाले पोकरण के सरदार अथवा एक दो दूसरे निम्न श्रेणी के सरदारों एवं राज्य के कुछ ओहदेदारों को सज़ा देकर ही बस कर दे तो लोगों के विचार उसके चरित्र के सम्बन्ध में ऊंचे ही बने रहेंगे, परन्तु यदि उसने आठवा के सर-

मेहता अखैचन्द का घर लूटने से एक लाख उनतीस हजार रुपये का सामान राज्य के कब्जे में आया। उसके पुत्र और पौत्र (क्रमशः लक्ष्मी-चन्द तथा मुकुन्दचन्द) से तीस हजार रुपये दंड के ठहराकर महाराजा ने वि० सं० १८७६ में उन्हें मुक्त कर दिया और उसके भतीजे फ़तहचन्द पर सत्ताइस हजार रुपये दंड के लगाये। अखैचन्द की हवेली ज़ब्त कर बाभा (अनौरस पुत्र) लालसिंह को दे दी गई। इसी प्रकार मेहता सूरजमल के पुत्र बुद्धमल से ५५०००, व्यास विनोदीराम के पुत्र गुमानीराम से १५०००, किलेदार नथकरण के पुत्र अमलदार कंडीर से ४०००, पंचोली गोपालदास से २५००० तथा अन्य कई आदिमियों से इसी हिसाब से रुपये ठहराये गये^१।

उन्हीं दिनों महाराजा ने नये सिरे से अपने ओहदेदारों की नियुक्ति की। सिंघवी फ़तहराज दीवान के पद पर नियुक्त हुआ और जालोर, पाली, परबतसर, मारोठ, नागोर, गोड़वाड़, फलोधी, नये हाकिमों की नियुक्ति डीडवाणा, नावां, पचपदरा आदि में नवीन हाकिम नियुक्त किये गये। जोधपुर का प्रबंध करने के लिए निम्नलिखित पांच व्यक्ति मुसाहब बनाये गये—

१. दीवान फ़तहराज, २. भाटी गजसिंह, ३. छागाणी कचरदास, ४. धांधल गोरधन तथा ५. नाज़र इमरतराम^२।

अनंतर नौबाज पर पुनः राज्य की तरफ़ से सेना भेजी गई। सुर-ताणसिंह के पुत्र ने धीरतापूर्वक गढ़ की रक्षा की। अन्त में महाराजा के

द्वार अथवा अन्य प्रमुख सरदारों को भी सजाएं दीं, तो ऐसे असन्तोष की उत्पत्ति होगी कि वह भी घबरा उठेगा। न्याय के लिए उसने अब तक जो किया वह काफ़ी है और प्रतिशोध की दृष्टि से भी। क्योंकि सुरताणसिंह की मृत्यु (जिसका मुझे आन्तरिक खेद है) एक निरर्थक बलि के समान है।”

राजस्थान; जि० २, पृ० १०६६ टि० १।

(१) जोधपुर राजब की ख्यात; जि० ४, पृ० ६६-७।

(२) वही; जि० ४, पृ० ६७-८।

नींबाज पर पुनः राजकीय
सेना जाना

हस्ताक्षर-सहित माफ़ी और जागीर बहाल होने का परवाना मिलने पर उसने आत्मसमर्पण कर दिया। उसके पेसा करते ही महाराजा के अनुयायियों ने महाराजा का दूसरा परवाना दिखाकर उसे गिरफ्तार करना चाहा। जोधपुर का सेनापति उनके इस आचरण से बहुत अप्रसन्न हुआ, क्योंकि उसके बचन देने पर ही उसने आत्मसमर्पण करना स्वीकार किया था; अतएव उसने उसे हिफाज़त के साथ अर्बली की पहाड़ियों में भिजवा दिया, जहाँ से वह मेवाड़ में जा रहा^१।

वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१८) में जोधपुर की अंग्रेज़ सरकार के साथ जो संधि हुई थी, उसमें एक शर्त यह भी थी कि महाराजा पन्द्रह सौ सवार अंग्रेज़ सरकार की सेवा में भेजेगा^२। तदनुसार वि० सं० १८७८ (ई० स० १८२१) में महाराजा ने बक़्शी सिंघवी मेघराज, धांधल गोरधन, ठाकुर बक़्तावरसिंह (भाद्राजूण) आदि के साथ १५०० सवार दिल्ली भेजे। वे लोग कई मास तक दिल्ली में रहने के बाद वि० सं० १८७६ (ई० स० १८२२) में वापस जोधपुर लौटे^३।

देवनाथ के मारे जाने के बाद महामन्दिर का अधिकार उसके भाई भीमनाथ ने अपने हाथ में ले लिया था और वह देवनाथ के पुत्र लाडूनाथ को बहुत तंग करता था। इसपर लाडूनाथ ने महामन्दिर की स्थापना राजा के पास जाकर इस विषय में कहा तो उसने उसे महामन्दिर में रक्खा और भीमनाथ के लिए इमरतराम नाज़र के द्वारा उदयमन्दिर बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा भी महामन्दिर के समान ही रक्खी^४।

(१) टॉड; सजस्थान; जि० २, पृ० ११०० ।

(२) देखो ऊपर पृ० ८२४ ।

(३) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० ४, पृ० ६८ । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८१८ ।

(४) जोधपुर राज्य की क्वात; जि० ४, पृ० ६८ । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८१८ ।

जोधपुर के प्रबन्ध के लिए नियुक्त मुसाहिबों ने कुछ दिनों तक तो एकत्र रहकर ठीक-ठीक कार्य किया, परन्तु पीछे से उनमें दो दल हो गये और वे महाराजा से एक दूसरे की शिकायत करने लगे। इसपर महाराजा ने उन सबसे अलग-अलग कई लाख रुपये वसूल किये।

महाराजा के अत्याचारपूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार दूसरे राज्यों—कोटा, मेवाड़, बीकानेर, जयपुर आदि—में जा रहे थे और वहीं से अपने-अपने ठिकानों को पीछा प्राप्त करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी कर रहे थे। वि० सं० १८८०

(१) जोधपुर राज्य की रियासत; जि० ४, पृ० २८-६। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६८।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११०१। टॉड ने एक स्थल पर मारवाड़ से भागे हुए सरदारों की अंग्रेज़ सरकार के पश्चिमीय राजपूत राज्यों के पोलिटिकल एजेंट के नाम लिखे हुए एक प्रार्थनापत्र का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है—

प्रणामोपरान्त [निवेदन]

हम लोगों ने आपकी सेवा में एक विद्यासपात्र मनुष्य भेजा है, जो आपसे हम लोगों के विषय में निवेदन करेगा। सरकार कम्पनी हिन्दुस्तान की बादशाह है और आप हम लोगों की दशा अच्छी तरह जानते हैं। यद्यपि हमारे देश के विषय में ऐसी कोई बात नहीं है, जो आपसे छिपी हुई हो, फिर भी हमारे सम्बन्ध की एक विशेष बात है, जिसका [आप पर] प्रकट करना आवश्यक है।

श्रीमहाराजा और हम लोग सब एक ही राठोड़ कुल के हैं। वे हम लोगों के मालिक और हम उनके सेवक हैं। परन्तु अब वे क्रोधवश हो गये हैं और हम लोग अपने देश से बेदखल कर दिये गये हैं। जागीर, हमारी पैतृक भूमि और हमारे घर-बार में से कई एक खालसा कर लिये गये हैं। वे लोग भी, जो अलग रहने का पत्र करते हैं, अपनी वही पुर्दशा होने की बात देख रहे हैं। कुछ लोगों को, उनकी रक्षा की धर्मपूर्वक प्रतिज्ञा कर, धोका दिया और मार डाला तथा बहुतों को कैद कर दिया है। मुत्सद्दी, राजा के प्रधान कर्मचारी, देशी और विदेशी लोग पकड़े गये

(ई० स० १८२३) में आसोप का कार्यकर्ता कृपावत हरिसिंह, आडवा का पंचोली कानकरण, चंडावल का कृपावत दौलतसिंह और नौबाज का कार्य-

हैं, और उनके साथ ऐसे कठोरता एवं निर्दयता के व्यवहार किये गये हैं, जो कभी सुने तक नहीं गये थे तथा जिनको हम लोग लिख भी नहीं सकते हैं। महाराजा के हृदय में ऐसा भाव उत्पन्न हुआ है, जैसा जोधपुर के किसी महाराजा में पहले देखा नहीं गया। उनके पूर्वजों ने पीढ़ी-दर पीढ़ी राज्य किया है। हम लोगों के पूर्वज उनके मंत्री और सलाहकार रहे हैं एवं जो कुछ किया जाता था, हमारी सरदारों की सभा की सम्मति से होता था। उनके पूर्वजों ने एवं हमारे पूर्वजों ने औरों के प्राण लिये और अपने दिये हैं तथा बादशाहों की सेवा कर जोधपुर राज्य को, जैसा वह इस समय है, बनाया है। जहां कहीं मारवाड़ के विषय का कार्य पड़ा वहीं हमारे पूर्वज पहुंचे और उन्होंने अपनी जान बेकर देश की रक्षा की। कभी-कभी हम लोगों के स्वामी नाबाजिदा भी रहे। उस समय भी हमारे पूर्वजों की बुद्धिमानी, और सेवा से देश हमारे पैरों तले दबा रहा तथा इसी प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी वह भूमि [हमारे अधिकार में] चली आई है। इन्हीं महाराजा की आंखों के आगे हम लोगों ने अच्छी-अच्छी चाकरी की है। उस खतरनाक समय में, जब कि जयपुर की सेना ने जोधपुर को घेर लिया था, हम लोगों ने चौके खेत में उनपर आक्रमण किया और अपने प्राण एवं धन जोखिम में डाले। ईश्वर ने हमको सफलता प्रदान की। इसका साक्षी सर्वशक्तिमान परमेश्वर है। अब छोटे-छोटे मनुष्य महाराजा की हाज़िरी में रहते हैं। इसका ही यह उलटा फल है। जब हमारी सेवा स्वीकार की जाय तो वे हमारे स्वामी हैं। ऐसा न हो तो फिर हम लोग उनके भाई और संबंधी हैं, दावेदार हैं तथा भूमि का दावा रखते हैं।

वह हम लोगों को [हमारी जायदाद से] बेदखल करना चाहते हैं, परन्तु क्या हम लोग अपने को बेदखल होने देंगे ? अंग्रेज़ सम्पूर्ण भारत के मालिक हैं। --- के सरदार ने अजमेर में अपना एजेंट भेजा था, उसे दिल्ली जाने को कहा गया। इसलिए ठाकुर..... वहां गया, परन्तु कोई भी रास्ता नहीं बताया गया। यदि अंग्रेज़ हाकिम हम लोगों की न सुनंगे तो कौन सुनेगा ? अंग्रेज़ लोग किसी की भूमि को छीनने नहीं देते। हम लोगों की जन्मभूमि मारवाड़ है। मारवाड़ से ही हम लोगों को रोटी मिलनी चाहिये। एक लाख राठोड़ हैं, वे कहां जावें ? हम लोग केवल अंग्रेज़ों के अदब को दृष्टि से ही चुप हैं और यदि आपकी सरकार को हम अपने विचारों की सूचना न दें तो पीछे से आप [हमको] दोष लगावेंगे; अतएव हम लोग इसको प्रकाशित करते हैं और इस तरह आपके सामने निर्दोष हो जाते हैं। जो कुछ

कर्ता आदि अजमेर में बड़े साहब के पास गये और उन्होंने उससे ठिकानों को वापस दिला देने के सम्बन्ध में निवेदन किया। उसने उन्हें महाराजा के पास जाने के लिए कहा तो उन्होंने उत्तर दिया कि यदि हम महाराजा के पास जायेंगे तो वह हमें निश्चय मार डालेगा। इसपर पोलिटिकल एजेंट ने उनको आश्वासन दिया कि हमारे भेजे हुए आदमियों के साथ वह ऐसा व्यवहार नहीं करेगा। तब वे जोधपुर की तरफ रवाना हुए। वहां इसकी खबर पहुंचने पर पंचोली जोगालाल २०० आदमियों के साथ उन्हें गिरफ्तार करने के लिए भेजा गया। गांध चोपड़ा के तालाब पर जाकर उसने उन्हें घेर लिया। उस समय कुंपावत कानकरणा बाहर गया हुआ था, जिससे वह तो भागकर अजमेर चला गया और शेष वहां गिरफ्तार कर सलेम-कोट में रक्खे गये। जब यह समाचार अजमेर पहुंचा तो पोलिटिकल एजेंट ने इस सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी की, जिसपर वे छोड़ दिये गये। अनन्तर महाराजा ने लाचार होकर सरदारों के ठिकाने वापस कर दिये।

हम लोग मारवाड़ से लाये थे, खा चुके, जो कुछ उधार भिन्न सकता था वह भी ले चुके और अब जब भूखों ही मरना पड़ेगा तो हम सब कुछ करने को तैयार हैं और कर सकते हैं।

अंग्रेज़ हमारे शासक और स्वामी हैं। श्रीमानसिंह ने हमारी भूमि ज़बर्दस्ती छीन ली है। आपकी सरकार के बीच में पड़ने से ये विपत्तियां दूर हो सकती हैं। आपकी मध्यस्थता और बीचबचाव के बिना हम लोगों को कुछ भी विश्वास न होगा। हमको हमारी अज़्मी का उत्तर मिले। हम उसकी प्रतीक्षा धैर्य के साथ करेंगे; परन्तु यदि हमको कुछ भी उत्तर न मिला तो फिर हमारा कुछ दोष न होगा, क्योंकि हमने सर्वत्र सूचना दे दी है। भूख मनुष्य को उपाय ढूंढने पर मजबूर करेगी। इतना अधिक समय हुआ, हम केवल आपकी सरकार के गौरव के लिहाज़ से ही चुपचाप बैठे हैं। हमारी सरकार हम लोगों की पुकार नहीं सुनती, परन्तु कबतक हम आसरा देखते रहेंगे? हमारी आशाओं की ओर ध्यान दीजिये। संवत् १८७८ आश्विन सुदि २ (ई० स० १८२१ ता० ३१ जुलाई)।

राजस्थान; जि० १, पृ० २२८-३०।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६३-१००। वीरघिनोद; भाग २, पृ० ८६८-६। इस अवसर पर महाराजा के शासन में हस्तक्षेप न करने के सम्बन्ध में

वि० सं० १८७४ (ई० सं० १८१७) में महाराव उदयभाण को नज़रक़ैद कर सिरोही राज्य का प्रबन्ध उसके छोटे भाई नांदिया के स्वामी शिवसिंह ने अपने हाथ में ले लिया था। उसके बाद उसने जोधपुर की सेना का सिरोही में बिगाड़ करना राज्य की भीतरी दशा का सुधार करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से संधि-वार्ता आरम्भ की। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था, इसलिए उसने सिरोही राज्य के साथ अंग्रेज़ सरकार की संधि होने की जो कार्रवाई चल रही थी उसमें बाधा डालनी चाही। उसने गवर्नमेंट के साथ इस आशय की लिखा-पढ़ी की कि सिरोही का इलाक़ा पहले से ही जोधपुर के आधीन है, इसलिए सिरोही के साथ अलग अहदनामा न होना चाहिये। इसपर अहदनामा होने की बात रुक गई और जोधपुर के दावे की तहक़ीक़ात का काम कप्तान टॉड के सुपुर्द हुआ, जो उन दिनों जोधपुर का पोलिटिकल एजेंट भी था। टॉड महाराजा मानसिंह का मित्र था, जिससे उसे अपना कार्य पूरा होने की पूरी आशा थी और जोधपुर का वकील उसके लिए बड़ी कोशिश कर रहा था; परन्तु टॉड ने, जो बड़ा ही निष्पक्ष अफ़सर था, पूरे सबूत के बिना जोधपुर का दावा स्वीकार करना न चाहा। जोधपुर के वकील ने यह बतलाने की कोशिश की कि महाराजा अभयसिंह के समय से ही सिरोहीवाले जोधपुर की चाकरी करते और खिराज देते हैं, जिसपर टॉड ने, जो दोनों राज्यों के इतिहास से परिचित था, यही उत्तर दिया कि महाराजा अभयसिंह बादशाही फ़ौज का सेनापति था और सिरोही की सेना भी बादशाही भंडे के नीचे रहकर लड़ती थी। इसी प्रकार उसने खिराज की बात भी निर्मूल सिद्ध कर दी। तब जोधपुर की तरफ़ से सिरोही के महाराव उदयभाण के हस्ताक्षरवाली एक तहरीर पेश की गई, जिसमें उसने कितनी-एक शतों के साथ जोधपुर

पोलिटिकल एजेंट ने अपनी तरफ़ से लिखा-पढ़ी कर दी (एचिसन; ट्रीटीज़, एंग्लोमेंट्स एंड सनक्ज़; जि० ३, पृ० १३०-१)।

की मातहत स्वीकार की थी, परन्तु वह तहरीर जबरन उक्त महाराज को कैद कर लिखाई गई थी, अतएव वह भी स्वीकार न की गई। इस प्रकार जोधपुरवालों के सब प्रमाणों को निर्मूल बतलाकर उसने उनका दावा खारिज कर दिया। इससे महाराजा मानसिंह बड़ा अप्रसन्न हुआ, परन्तु उसकी परवाह न करते हुए ई० स० १८२३ ता० ११ सितम्बर (वि० सं० १८८० भाद्रपद सुदि ७) को सिरोही में अंग्रेज़ सरकार और सिरोही राज्य के साथ अहदनामा हो गया। यह अहदनामा मानसिंह की इच्छा के प्रतिकूल हुआ था, जिससे वि० सं० १८८० कार्तिक वदि ४ (ई० स० १८२३ ता० २३ अक्टोबर) को जालोर के हाकिम पृथ्वीराज भंडारी ने उसकी आज्ञा से सिरोही राज्य के खारल परगने के तलेटा गांव पर चढ़ाई कर दस गांवों को उजाड़ डाला और अनुमान ३१००० रुपये का नुकसान किया। इसका दावा अंग्रेज़ सरकार में होने पर इसका फैसला सिरोही के पक्ष में हुआ^१।

उन दिनों मेरवाड़ा में मेर और मीने बहुत उपद्रव किया करते थे। उनका नियन्त्रण करना अत्यन्त आवश्यक था, अतएव महाराजा ने वि० सं० १८८० (ई० स० १८२४) में मेरवाड़ा के चांग और महाराजा का प्रबन्ध के लिए मेरवाड़ा के गांव अंग्रेज़ कोटकिराना परगनों के २१ गांव आठ वर्ष के लिए सरकार को देना अंग्रेज़ सरकार को सौंप दिये। वहां के प्रबन्ध के लिए रक्खी जानेवाली सेना के खर्च के लिए महाराजा ने पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक देना स्वीकार किया^२।

इस घटना के दूसरे वर्ष महाराजा की छोटी पुत्री स्वरूपकुंवरी का विवाह बूंदी के रावराजा रामसिंह के साथ निश्चित हुआ। तदनुसार

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८३-२९।

(२) एचिसन; ट्रीटीज़, एंजेमेंट्स एंड सनदज़; जि० ३, पृ० ११५।

उक्त पुस्तक में आगे चलकर (पृ० १३१-२ में) वह एकरारनाम दिया है, जो इस सम्बन्ध में दोनों तरफ से लिखा गया था।

महाराजा की पुत्री का बूंदी
के रावराजा से विवाह

वि० सं० १८८१ फाल्गुन वदि ७ (ई० सं० १८२५
ता० ६ फरवरी) को वहां से बारात जोधपुर गई।

इसके अगले दिन विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर बीकानेर और किशनगढ़ से क्रमशः पांच हज़ार और दो हज़ार रुपये तथा हाथी दहेज में दिये जाने के लिए आये। विवाह के खर्च के लिए रावराजा रामसिंह ने कोटा से दो लाख रुपया लेकर उस सम्बन्ध में एक रुक़ा लिख दिया था। वह रुक़ा रुपये चुकाकर महाराजा मानसिंह ने कोटा से मंगवा लिया और विवाह के समय बूंदीवालों को हथलेवे में दे दिया। रावराजा रामसिंह की एक सगाई सूरजगढ़ बिसाऊ के शेखावतों के यहां भी हुई थी। दुबारा बारात ले जाने का व्यय बचाने के लिए रावराजा ने वहां विवाह करने के लिए जाने की शीघ्र आज्ञा चाही। महाराजा को यह बात बहुत बुरी लगी; परन्तु अन्त में उसने बारात को सीख दे दी। तदनुसार चैत्र वदि ६ (ता० १३ मार्च) को बारात जोधपुर से विदा हुई। महाराजा स्वयं बारात को मेड़तिया दरवाज़े तक पहुंचाने गया। उसने नाज़िर इमरतराम तथा व्यास जेठमल को बहुत से आदमियों के साथ रावराजा के संग कर दिया, जिन्होंने उसके आदेशानुसार उसका विवाह बिसाऊ में उस समय न होने दिया^१।

गत पांच वर्षों से सिंघवी फ़तहराज बड़ी अच्छी तरह राज्य-कार्य कर रहा था। इससे कई व्यक्ति उससे नाराज़ रहते थे। भंडारी गंगाराम के पुत्र भानीराम के कहने पर जालोर के महाजन वागा ने जो बड़ा जालसाज़ था, महाराजा के हस्ताक्षरयुक्त एक जाली चिट्ठी तैयार की और उसके सहारे कुचामण के फ़ौजराज से पांच हज़ार रुपये वसूल कर दोनों खा गये। अनन्तर उन्होंने फ़तहराज के हस्ताक्षर-सहित महाराजा के नाम इस आशय का पत्र बनाकर भेजा कि खर्च का रुपया भेजा है सो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १००-१। वीरबिबोद; भाग २, पृ० ८६६।

पहुंचेगा। महाराजा को यह जाली पत्र मिलते ही फ़तहराज पर शुबहा हो गया। फलतः वि० सं० १८८१ (चैत्रादि १८८२) चैत्र सुदि १६^१ (ई० स० १८२५ ता० २८ मार्च) को महाराजा ने छुल से उसे अपने पास बुलवाकर सपरिवार कैद कर लिया और उन्हें सलेमकोट में रक्खा तथा राज्य-कार्य चलाने का भार भंडारी भानीराम एवं फ़ौजराज के सुपुर्द किया गया। जालसाज़ी का भेद अधिक समय तक छिपा न रहा। दुबारा फिर जब भानीराम ने वही चाल चली तो सारा भेद खुल गया। इसपर महाराजा ने भानीराम और बागा दोनों को कैद करवा दिया। दस हजार रुपया देने पर भानीराम छोड़ दिया गया और बागा का दाहिना हाथ कटवा दिया गया^२। इसके कुछ समय बाद दस लाख रुपया लेना ठहराकर महाराजा ने फ़तहराज को भी मुक्त कर दिया^३।

भानीराम के हटाये जाने पर राज्य-कार्य फ़ौजराज करता रहा। उसका कार्यकर्ता माणिकचंद था, परन्तु दोनों मिलकर भी राज्य-कार्य ठीक-ठीक नहीं करने पाते थे। तब महाराजा ने जोशी शंभुदत्त को उसकी मदद के लिये नियुक्त किया, लेकिन जब फिर भी कार्य ठीक न चला तो फ़ौजराज की माता के निवेदन करने पर सिंघवी इन्द्रमल दीवान के पद पर नियुक्त किया गया^४।

वि० सं० १८८२ (ई० स० १८२५) से ही जोधपुर के राज्य-कार्य में महामंदिर के पक्षवालों का प्रभुत्व बढ़ गया और प्रत्येक काम में आयस महाराजा का डीबवाणे से लाडूनाथ की आज्ञा प्रधान मानी जाने लगी। धौकलसिंह का अधिकार वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में महामन्दिर के कार्यकर्ताओं की सलाह के अनुसार आउवा

(१) “वीरविनोद” में सुदि १४ (ता० २ अग्रेल) दी है (भाग २, पृ० ८६६)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०१-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०३)।

(४) वही; जि० ४, पृ० १०३।

पर राजकीय सेना भेजी गई, पर उसका कोई विशेष नतीजा नहीं निकला। तब पंचोली कालूराम भेजा गया। उसने जाते ही आक्रमण किया, परन्तु इससे भी कोई खास फायदा नहीं हुआ और जोधपुर की तरफ के कई व्यक्ति काम आये। इस चढ़ाई के कारण राज्य का खर्च बहुत बढ़ गया था, जिसकी पूर्ति करने के लिए महामंदिर के कार्यकर्ताओं ने प्रति घर चार रुपया कर (बाब) लगाया। उधर अपने गढ़ की मज़बूती कर आउवा का ठाकुर बरतावरसिंह नींबाज के ठाकुर सावंतसिंह के पास गया। तब उसने तथा रास के ठाकुर भीमसिंह आदि ने एकत्र होकर धोंकलसिंह को डीङवाणा बुलाया और वहां उसका अधिकार करा दिया। महाराजा को इसका समाचार मिलने पर उसने आउवा से सेना वापस बुला ली और नींबाज, रास आदि के ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। ऐसी परिस्थिति में धोंकलसिंह के पक्ष की सेना बिखर गई।

नागपुर में बहुत पहले से ही उदयपुर के राजवंश से निकले हुए भोंसलों का राज्य था। ई० स० १८१६ (वि० सं० १८७३) में वहां के स्वामी राघोजी (दूसरा) का देहांत होने पर उसका पुत्र परसोजी (दूसरा) उसका उत्तराधिकारी हुआ। वह बहुत कमज़ोर था। उसको उसके चाचा व्यंकोजी का पुत्र आपा साहब (मुधोजी) मारकर स्वयं नागपुर का स्वामी हो गया। उसने अंग्रेजों से सुलह की। ई० स० १७६६ (वि० सं० १८५६) से ही नागपुर में अंग्रेज़ रेज़िडेंट रहने लगा था। ई० स० १८१७ (वि० सं० १८७४) में अंग्रेजों और पेशवा के बीच लड़ाई छिड़ जाने पर उस(भोंसला)ने पेशवा का पक्ष लेकर अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया, परन्तु सीताबल्दी और नागपुर की लड़ाइयों में उसकी हार हुई, जिससे बरार का शेष भाग एवं नर्मदा के दक्षिण का प्रदेश उसे अंग्रेजों को सौंपना पड़ा। फिर वह नागपुर की गद्दी पर बिठाया गया, परन्तु अंग्रेजों के विरुद्ध षड्यन्त्र

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरबिनोद; भाग २, पृ० ८६६।

रचने के अपराध में वह गद्दी से हटाया जाकर इलाहाबाद भेजा जानेवाला था, किन्तु मार्ग से ही भागकर महादेव की पहाड़ियों में होता हुआ वह पंजाब की तरफ चला गया^१। वहां से वि० सं० १८८४ (ई० सं० १८२७) में वह दो-चार व्यक्तियों के साथ गुप्त रूप से जोधपुर पहुंचकर महामन्दिर में ठहरा। इसकी खबर मिलने पर महाराजा ने उसको अपनी शरण में ले लिया और महामन्दिर के महलों में उसका डेरा कराया। अंग्रेज़ों सरकार को इस घटना की खबर मिलने पर उसकी तरफ से उसे सुपुर्द कर देने की महाराजा को लिखा गया, परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। कई वर्ष बाद वहाँ उसकी मृत्यु हो गई^२।

वि० सं० १८८५ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई० सं० १८२८ ता० १६ मई) को दिल्ली के रेज़िडेंट के पास से बीकानेर आदि राज्यों के पास इस आशय का खरीता भेजा गया कि वे जोधपुर राज्य में उत्पात करनेवाले धोंकलसिंह से किसी प्रकार का सम्पर्क न रखें। तदनुसार उन्होंने अपने अपने सरदारों को उसे राज्य में प्रवेश न करने देने की हिदायत कर दी^३।

वि० सं० १८८५ (ई० सं० १८२८) के आश्विन मास में आयस लाडूनाथ गिरनार की यात्रा करने के लिए गया। महाराजा की आज्ञानुसार इस अवसर पर उसके साथ कई सरकारी आदमी आयस लाडूनाथ की मृत्यु गये। वहां से लौटते समय गांव बामनवाड़ा में वह ज्वर से पीड़ित हुआ और उसी रोग से वहाँ

(१) मेरा; उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० १०८३-४। प्रयागदत्त शुक्ल; मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले; पृ० १६३-७२। हम्पीरियल गैज़ेटियर ऑव् इंडिया; जि० १८, पृ० ३०७-८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०४। प्रयागदत्त शुक्ल; मध्य-प्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले; पृ० १७२ और टिप्पण। धीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पृ० ११४।

उसका देहांत हो गया। उसके बाद उसकी गद्दी का स्वामी उसका पुत्र भैरोंनाथ बनाया गया, जिसकी अवस्था उस समय केवल दो-तीन वर्ष की ही थी। लगभग छः मास बाद ही उसका भी देहांत हो गया। तब सूरतनाथ का पौत्र चन्नणनाथ गद्दी का वारिस करार दिया गया; परन्तु उसको हटाकर भीमनाथ ने अपने पुत्र लक्ष्मीनाथ की नियुक्ति कराई। फलस्वरूप उस समय से राज्य में भीमनाथ का हुकम चलने लगा^१।

वि० सं० १८८७ (ई० सं० १८३०) के आश्विन मास में महामन्दिर के कार्यकर्ताओं की मारफत दीवान के पद पर पुनः सिंघवी फ़तहराज की नियुक्ति हुई। उसी समय परबतसर और मारोठ में भी नये हाकिम नियुक्त किये गये। उन्होंने बड़, बोरवड़ और आलणियावासवालों से क्रमशः बीस हज़ार, आठ हज़ार और सात हज़ार रुपये वसूल किये^२।

वि० सं० १८८८ (ई० सं० १८३१) की शरद ऋतु में भारत का वाइसराय लॉर्ड विलियम बेंटिंक अजमेर गया। उस समय उसने मुलाकात करने की गरज़ से राजपूताना के नरेशों को अजमेर बुलाया। तदनुसार उदयपुर, जयपुर, भरतपुर, कोटा, बूंदी वगैरह के नरेश तो अजमेर में उपस्थित हुए; परन्तु महाराजा मानसिंह नहीं गया। उसके इस आचरण से अंग्रेज़ सरकार की उसपर अप्रसन्नता तो हुई, परन्तु स्पष्ट रूप से नाराज़गी प्रकट नहीं की गई^३।

किशनगढ़ के महाराजा कल्याणसिंह की इच्छा फ़तहगढ़ की द्बानों की बहुत दिनों से थी, क्योंकि किशनगढ़ से अलग माने जाने का अपना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०५।

(२) वही; जि० ४, पृ० १०८।

(३) वही; जि० ४, पृ० १०८-९।

किशनगढ़ के महाराजा का
जोधपुर जाना

दावा अंग्रेज़ सरकार-द्वारा खारिज किये जाने के कारण वहां का स्वामी उपद्रव करने लग गया था। अन्य सरदार भी उक्त राज्य के खिलाफ़ हो रहे थे, जिनका दमन करना आवश्यक था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से कल्याणसिंह को शीघ्र उधर का प्रबंध करने को कहा गया। इसपर उसने दिल्ली से पांच-छः हज़ार विदेशियों की सेना साथ ले ली। राज्य के ज़मींदार तथा कार्यकर्ता किशनगढ़ में एकत्र हुए। अनन्तर दूसरे दिन वे रूपनगर चले गये। तब कल्याणसिंह ने रूपनगर पर फ़ौज भेजी और दुतरफ़ा मोलों की लड़ाई हुई। अनन्तर कल्याणसिंह अजमेर गया। इस बीच विरोधियों का उपद्रव बढ़ गया। अंग्रेज़ सरकार ने उनका समुचित प्रबंध कर रूपनगर खाली करा लिया। महाराजा और ज़मींदारों में कई दिन तक बातचीत होती रही, परन्तु अन्त में जब कुछ तय न हुआ और कल्याणसिंह ने अंग्रेज़ सरकार की बात नहीं मानी तो सरदारों को राज्य का प्रबंध करने को कहा गया, जिन्होंने राज्यकार्य अपने हाथ में ले लिया तथा कुंवर मोहकमसिंह को कर्ता-धर्ता नियत किया। ऐसी दशा में वि० सं० १८८५ (ई० सं० १८२८) के भाद्रपद मास में महाराजा कल्याणसिंह, जिसका किशनगढ़ नगर एवं सरवाड़ के क़िले पर अधिकार रह गया था, जोधपुर चला गया और वहां वि० सं० १८८८ (ई० सं० १८३१) तक रहा। महाराजा मानसिंह ने उसे उदयमन्दिर में रखकर उसके आतिथ्य का समुचित प्रबंध कर दिया। वि० सं० १८८८ में जब वाइसरॉय अजमेर गया तो जोधपुर से वहां जाकर कल्याणसिंह ने उसके सामने अपनी अर्ज़ी पेश की। तब किशनगढ़ राज्य की तरफ़ से उसका सौ रुपया रोज़ाना मुक़रर कर उसे उक्त राज्य से बाहर रहने को कहा गया। इसपर वह दिल्ली जा रहा और वहीं वि० सं० १८९६ (चैत्रादि १८९७ = ई० सं० १८३०) के वैशाख मास में उसकी मृत्यु हुई।

(१) जोधपुर राज्य की क़्यात; जि० ४, पृ० १०६-७। “वीरविनोद” में महाराजा कल्याणसिंह के जोधपुर जाकर रहने का उल्लेख नहीं है, परन्तु उसमें भी

इसके कुछ समय बाद अजमेर-स्थित एजेंट डू वि गवर्नर जनरल कर्नल लॉकेट जोधपुर होता हुआ जैसलमेर गया। उस समय जोधपुर से व्यास कचरदास और मेहता हरखचंद उसे तिंवरी के डेरे तक पहुंचाने गये।

कर्नल लॉकेट का जोधपुर होते हुए जैसलमेर जाना

वि० सं० १८७५ (ई० सं० १८१८) में मेड़तिया अखैसिंहों से बूड़सू का अधिकार छीन लिया गया था। कई वर्ष तक उक्त ठिकाना बगड़ी और बूड़सू के उपद्रवी सरदारों को सजा देना खालसा रहने के बाद वि० सं० १८८५ में वहां का अधिकार जसूरी के मेड़तिया सार्दूलसिंह रतनसिंह पहाड़सिंहों को दे दिया गया। इससे अप्रसन्न होकर अखैसिंहों देश में इधर-उधर लूट-मार करने लगे। वि० सं० १८८८ (ई० सं० १८३१) में बगड़ी का ठाकुर जेतावत शिवनाथसिंह केसरीसिंहों अपना ठिकाना छोड़कर चला गया। तब बगड़ी को खालसे रखकर जोशी शंभुदत्त वहां का हाकिम नियत किया गया। इसपर बगड़ी-वाले भी अखैसिंहों के शामिल होकर देश में उत्पात करने लगे। वि० सं० १८८९ (ई० सं० १८३२) में उन्होंने भावी, जेतारण और बगड़ी को लूटकर बहुत सा माल प्राप्त किया। तब श्रावणादि वि० सं० १८८९ (चैत्रादि १८८०) आषाढ वदि ३ (ई० सं० १८३३ ता० ५ जून) को सिंघवी कुशलराज को उनका दमन करने के लिए जाने की आज्ञा दी गई। आषाढ वदि १० (ता० १२ जून) को वह केलवाद पहुंचा। पीछे से परबतसर से सिंघवी सुखराज आदि भी उसके शामिल हो गये। उस समय बगड़ीवाले और अखैसिंहों खोड़िया के पहाड़ में थे। राज्य की सेना के केलवाद पहुंचने की खबर मिलते ही वे भागकर मेवाड़ में चले

सरदारों के विरोध करने, पोलिटिकल एजेंट के बीच में पड़ने, मोहकमसिंह के राजा बनाये जाने और महाराजा कल्याणसिंह की पेंशन नियत होकर उसके किशनगढ़ से बाहर जाकर रहने का उल्लेख मिलता है (भाग २, पृ० ५३५-६)।

(१) जोधपुर राज्य की ह्वात; जि० ४, पृ० १०६।

गये। रात्रि के समय चीवड़ा (मेवाड़ का) गांव में सिंघवी ने उनपर आक्रमण किया, जिसमें बगड़ी के और अखैसिंहों के बहुत से आदमी मारे गये। इस झगड़े में रायपुर का ठाकुर माधोसिंह राज्य की सेना के साथ था। आषाढ वदि ११ (ता० १४ जून) को राजकीय सेना विजयकर वापस केलवाद् गई। इस विजय की खबर महाराजा के पास पहुंचने पर उसने कुशलराज के नाम कोसाणे का पट्टा लिख दिया^१।

उसी वर्ष सारे मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ा, जिसके कारण खाद्य पदार्थ बहुत महंगे हो गये और घास की कमी के कारण पशु मर गये। यह दशा लगभग एक वर्ष तक रही। मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ना वि० सं० १८६१ (ई० स० १८३४) में अच्छी वर्षा हो जाने से हालत बहुत-कुछ सुधर गई^२।

उसी वर्ष अंग्रेज़ सरकार की मंशा के अनुसार आसोपा अनूपराम जोधपुर की तरफ से वकील मुक़रर हुआ। अनन्तर अंग्रेज़ सरकार द्वारा १५०० सवार सेवा के लिए बुलवाये जाने पर लोढ़ा रिधमल एवं मुहणोत राम-दास उन्हें लेकर अजमेर गये^३।

आसोपा अनूपराम की मृत्यु होने पर उसका पुत्र सवाईराम उसके स्थान में वकील नियुक्त हुआ। अनूपराम के समय में ही अजमेर के पत्रों का जवाब राज्य से नहीं दिया जाता था। इस तरह कितने ही मामले अपूर्ण पड़े रह गये थे, जिससे पो० एजेंट की पूरी नाराज़गी थी। उसकी दिलजमई करने के लिए जोधपुर से सिंघवी फ़ौजराज, भंडारी लक्ष्मीचंद, जोशी शंभुदत्त, सिंघवी कुशलराज तथा धांधल केसर वि० सं० १८६१ भाद्रपद सुदि १४ (ई० स० १८३४ ता० १६ सितम्बर) को अजमेर भेजे

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०६-१०।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११०-११।

(३) वही; जि० ४, पृ० १११।

गये। महाराजा का खास रुक्का प्राप्त होने पर कुचामण का ठाकुर रणजीत-सिंह भी अजमेर गया। वह तथा अन्य जोधपुर के व्यक्ति पो० एजेंट से मिले। महाराजा के दरबार के समय उपस्थित न होने, खतों के जवाब बाक़ी रह जाने और नागपुर के राजा को जोधपुर में आश्रय दिये जाने के सम्बन्ध में उसने शिकायत की तो उन्होंने भरसक उसका समाधान कर दिया। अनन्तर खिराज एवं फ़ौज-खर्च की बक्राया रकम के बारे में बातचीत होने पर उन्होंने पांच लाख रुपया देना ठहराया और भविष्य में महाराजा के ठीक आचरण करने के सम्बन्ध में भी उसे आश्वासन दिया। उक्त रकम की पूर्ति तक के लिए सांभर और नावां की आमद अंग्रेज़ सरकार को मिलना तय हुआ। इस प्रकारनामे के विषय में पूरा वृत्त ज्ञात होने पर महाराजा को ज़रा भी प्रसन्नता न हुई^१।

भीमनाथ ऊपर आये हुए पांचों कार्यकर्ताओं से नाराज़ था और वह उनकी शिकायतें महाराजा से किया करता था। जोशी शंभुदत्त, लक्ष्मी-

भाद्राजूण पर फ़ौजकशी
करना

चन्द एवं केसर पर महाराजा की विशेष रुपा होने से वे तो बच गये, परन्तु फ़ौजराज, कुशलराज एवं सिधवी सुमेरमल फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १८३५ ता० ७ मार्च) को गिरफ़्तार कर लिये गये। फ़ौजराज का कुचामण तथा भाद्राजूणवालों के साथ अच्छा सम्बन्ध था। फ़ौजराज की गिरफ़्तारी से भाद्राजूण के ठाकुर बस्तावरसिंह के मन में सन्देह उत्पन्न हो गया और वह तलहटी के मइलों में आयस लक्ष्मीपाव (लक्ष्मीनाथ) की शरण में जा रहा। तब फ़तहराज के कहने से भाद्राजूण का पट्टा ज़प्त कर वहाँ पंचोली छोगजी की अध्यक्षता में राज्य की सेना भेजी गई। ऐसी परिस्थिति में ठाकुर बस्तावरसिंह भाद्राजूण चला गया। तब राज्य की सेना ने भाद्राजूण पर घेरा डाला तथा दोनों ओर से लड़ाई शुरू हुई। भाद्राजूणवालों ने बम्बई से आती हुई फ़तहपुरियों की फ़तार को लूट लिया, जिससे डेढ़ लाख रुपये का माल उनके हाथ लगा। फ़तहपुरियों ने इसकी शिकायत अजमेर के पो० एजेंट

से की। भाद्राजूणवालों ने कहलाया कि भीमनाथ हमें बेकसूर निकाल रहा है, इसीलिए हमको ऐसा करना पड़ा है। इसपर अंग्रेज़ सरकार की तरफ से जोधपुरवालों को कहा गया कि या तो फ़तहपुरियों का रुपया जोधपुर के खज़ाने से दिलाया जाय या भाद्राजूण से फ़ौज हटाई जाय, जिससे वहाँ-वाले लूटी हुई सम्पत्ति वापस कर दें। तब भाद्राजूण से सेना हटा ली गई और वहाँ का पट्टा वापस ठाकुर बख़्तावरसिंह के नाम कर दिया गया, जिसपर भाद्राजूणवालों ने लूटा हुआ सारा सामान फ़तहपुरियों को वापस दे दिया^१।

वि० सं० १८८० (ई० स० १८२४) में मेरवाड़ा इलाक़े के खांग और कोटकिराना परगने आठ वर्ष के लिए अंग्रेज़ सरकार को सौंपे गये थे, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है^२। वि० मेरवाड़ा के गाँवों के संवध
के अहदनाम की अवधि
बढ़ना
सं० १८६२ (ई० स० १८२४) में उक्त अहदनाम की अवधि नौ साल और बढ़ाकर सात दूसरे गांव अंग्रेज़ सरकार के मातहत कर दिये गये^३।

राठोड़ राव सलखा के चार पुत्र हुए, जिनमें मल्लीनाथ (माला) ज्येष्ठ था। उसने त्रिभुवनसी को मारकर महेवा का राज्य प्राप्त किया, जो अंग्रेज़ सरकार का मालानी पीछे से उसके नाम पर मालानी कहलाया। उसने का इलाक़ा अपने अधिकार अपने छोटे भाई वीरम को सात गांवों के साथ में लेना गुढ़ा की जागीर दी थी। राव मल्लीनाथ के पुत्रों के साथ वीरम की नहीं बनी, जिससे वह पीछे से जोधियावाटी में जा रहा। उसका पुत्र चूंडा हुआ, जिसने मंडोवर का राज्य प्राप्त किया। उसके वंश में जोधपुर के स्वामी हैं। राव जोधा के समय उक्त राज्य की राजधानी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११२-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७०।

(२) देखो ऊपर पृ० ८४०।

(३) एचिसन; ट्रीटीज़ एंग्लोमेंटूस एण्ड सनदज़; जि० ३, पृ० ११६, ११२-३।

जोधपुर स्थिर हुई और वह राज्य जोधपुर राज्य कहलाने लगा । उसके वंशजों ने समय-समय पर उसकी वृद्धि की^१ ।

मालानी का इलाक़ा स्वतन्त्र था, पर जोधपुरवालों का प्रभुत्व बढ़ने पर मालानी कभी उनके अधीन और कभी स्वतन्त्र रहा तथा वहां के स्वामी जोधपुर को खिराज भी देते रहे । विगत कई शताब्दियों से मालानी के इलाक़े में बड़ी अव्यवस्था हो रही थी और वहां के स्वामी मनमाना आचरण कर बाहर के पड़ोसी इलाक़ों में लूट-मार किया करते थे । जब जोधपुर-दरबार से अंग्रेज़ सरकार ने वहां का प्रबन्ध करने को कहा, तो वहां से इस सम्बन्ध में असमर्थता प्रकट की गई । ऐसी दशा में मालानी के निवासियों के विरुद्ध स्वयं अंग्रेज़ सरकार को अपनी सेना भेजनी पड़ी । उस सेना का सारा व्यय भी अंग्रेज़ सरकार को उठाना पड़ा, क्योंकि जोधपुर-दरबार ने जो थोड़ी-बहुत मदद पहुंचाने का वायदा किया था वह भी नहीं पहुंचाई । अंग्रेज़ सरकार ने मालानी इलाक़े पर क़ब्ज़ा करने के बाद वहां के प्रमुख सरदारों^२ को कैद कर कच्छ भिजवा दिया, जहां से पीछे से मविध्य में अच्छा आचरण करने की ज़मानत देने पर वे मुक्त कर दिये गये । बाड़मेर के सरदारों के साथ किए हुए एकरार के अनुसार अंग्रेज़ सरकार ने सब सरदारों को आश्वासन दिया कि जब तक उनका आचरण ठीक रहेगा, वे अंग्रेज़ सरकार के विशेष संरक्षण में समझे जायेंगे । यद्यपि जोधपुर दरबार ने मालानी के उपद्रव करनेवालों का दमन करने में कोई सहायता नहीं पहुंचाई थी^३ तथापि अंग्रेज़ सरकार के मालानी

(१) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० १८४-२४१ ।

(२) मालानी इलाक़े के अन्तर्गत बाड़मेर, जसोल, नगर और सिन्दरी नामक चार प्रमुख ठिकाने हैं ।

(३) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस अवसर पर अंग्रेज़ सरकार द्वारा जोधपुर से सेना बुलवाई जाने पर वहां से लाइश के जोधा प्रतापसिंह तथा जालोर के हाकिम की अध्यक्षता में सेना भेजी गई (जि० ४, पृ० ११३); परन्तु ख्यात का यह कथन माननीय नहीं है, क्योंकि मेजर मॉलकम की रिपोर्ट में स्पष्ट

पर अधिकार करते ही जोधपुर की तरफ से उस इलाके का दावा पेश किया गया। अंग्रेज़ सरकार ने वह दावा तो स्वीकार किया, परन्तु साथ ही यह स्पष्ट कर दिया कि जब तक सन्तोषजनक रीति से यह साबित न हो जायगा कि जोधपुर दरबार वहाँ का प्रबन्ध करने के योग्य है तब तक वहाँ से अंग्रेज़ सरकार का अधिकार हटाया न जायगा^१।

इस प्रकार ई० स० १८३६ (वि० सं० १८६३) में मालानी पर क़ब्ज़ा करने के बाद, अंग्रेज़ सरकार ने वहाँ के प्रबन्ध के लिये एक सुपरिन्टेन्डेन्ट (कप्तान जैक्सन) नियुक्त किया, जिसके नीचे बम्बई और गायकवाड़ की पलटनें रक्खी गईं। ई० स० १८४४ (वि० सं० १९०१) में उक्त सेनाएं वहाँ से हटाई जाकर वहाँ जोधपुर लिजियन (पेरनपुरा) की पैदल सेना और मारवाड़ के सवार रक्खे गये। ई० स० १८४६ (वि० सं० १९०६) में कप्तान जैक्सन के विलायत चले जाने पर वहाँ का प्रबन्ध मुस्तक़िल तौर पर मारवाड़ के पोलिटिकल एजेंट के सुपुर्दे कर दिया गया। ई० स० १८५४ (वि० सं० १९११) से वहाँ केवल दरबार की सेना ही रही^२।

वि० सं० १८६२ (ई० स० १८३५) में लेफ़्टिनेंट ट्राविलियन बाइमेर से अजमेर लौटता हुआ जोधपुर में ठहरा। उसके वहाँ रहते समय सवारों के एवज़ में राज्य की तरफ़ से अंग्रेज़ सरकार को एक लाख पन्द्रह हजार रुपया सालाना देना निश्चित हुआ^३।

लिखा है कि जोधपुर से किसी प्रकार की सहायता नहीं मिली, जैसा कि ऊपर मूल में बतलाया गया है।

(१) राजपूताना गैज़ेटियर; जि० २, पृ० २६६-७ (लेफ़्टिनेंट कर्नल वाक्टर-संगृहीत “जोधपुर और मालानी” के अंश में दी हुई मेजर मालकम की ई० स० १८४६ की रिपोर्ट)।

(२) वही; जि० २, पृ० २६७-८ (लेफ़्टिनेंट कर्नल वाक्टर-संगृहीत “जोधपुर और मालानी” के अंश में दी हुई मेजर हम्पी की ई० स० १८६८ की रिपोर्ट)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११३। मेरा सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० ५६-७।

सिरोही, गोड़वाड़ और जालोर में चोरियां बहुत हुआ करती थीं । इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के निकट शिकायत होने पर नीमच की ऐरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ से छावनी स्थापित होना छावनी से कर्नल स्पीयर्स सरहद पर गया । उस समय सिरोही से दीवान मयाचंद, जालोर से भंडारी लालचंद तथा गोड़वाड़ से जोशी सावंतराम उसके पास उपस्थित हो गये । कर्नल स्पीयर्स ने चोरी का बन्दोबस्त करने के लिए जोधपुर एवं सिरोही की सरहद पर उक्त राज्यों की सेनाएं रखने को कहा । सेना-व्यय से बचने के लिए उदयमन्दिरवालों ने वहां सेना न रखी । तब ऐरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ से छावनी रखी गई । वहां पर जो सेना रखी गई उसका नाम "जोधपुर लीजियन" रखा गया^१ ।

वि० सं० १८६२ (ई० सं० १८३५) की ग्रीष्म ऋतु में पाली में सैंग की भयंकर बीमारी फैली, जिसका ज़ोर कई मास तक रहा । उससे वहां के हजारों नर-नारी अकाल ही काल-कवलित हो गये । उसके अगले साल ही जोधपुर में भी इस बीमारी का ज़ोर हुआ, जिससे वहां भी बहुत से आदमी मरे^२ ।

जोशी शंभुदत्त आदि की गिरफ्तारी के बाद दीवान और मुसाहब का कार्य मेहता उत्तमचंद हरखचंद करता था । आचणादि वि० सं० १८२२-

(१) यह स्थान सिरोही राज्य में है । छावनी बनाने का निश्चय होने पर अंग्रेज़ सरकार ने सिरोही राज्य से उसके लिए जगह मांगी, जो निर्विरोध दी गई । वहां रखी जानेवाली सेना के अक्रसर मेजर डाउनिंग ने अपनी जन्मभूमि के टापू "एरन" के नाम पर उस जगह का नाम ऐरनपुरा रखा और क्रमशः वहां बड़ी बस्ती हो गई । अब वहां की छावनी उठ गई है ।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११३-४ ।

(३) वही; जि० ४, पृ० ११५ ।

भीमनाथ का दीवान
उत्तमचंद को मरवाना

(चैत्रादि १८६३ = ई० स० १८३६) के वैशाख मास में एक दिन जब उत्तमचंद ख्याबगाह के महल की सीढ़ियों पर बैठा हुआ था, भीमनाथ ने क्रतु महल से अपने सेवकों को भेजकर उसे कैद करवाया और उदयमन्दिर में रक्खा। उससे जब दो-तीन लाख रुपयों की मांग की गई तो उसने एक भी पैसा न दिया। तब कठोर यातना देकर वह मार डाला गया और भंगियों-द्वारा बाहर फेंकवाया गया। चार दिन पश्चात् नगर के महाजनों ने भीमनाथ की आखा प्राप्तकर उसका अंतिम संस्कार किया^१।

उसी वर्ष आषाढ मास में भीमनाथ की आखा से कितने ही अधिकारियों एवं जागीरदारों से रुपये वसूल किये गये; परन्तु अधिक रुपये वसूल न हो सके, क्योंकि भीमनाथ के जुल्मों से तंग आकर सरदार आदि दूसरे स्थानों में चले गये थे। आचणादि वि० सं० १८६३ (चैत्रादि १८६४) ज्येष्ठ वदि १० (ई० स० १८३७ ता० २६ मई) को सलेमकोट में जोशी शंभुदत्त का देहांत हो गया^२।

इसके बाद आयस भीमनाथ भी अधिक समय तक जीवित न रहा। आचणादि वि० सं० १८६४ (चैत्रादि १८६५) आषाढ वदि अमावस्या (ई० स० १८३८ ता० २२ जून) को उदयमन्दिर में आयस भीमनाथ की मृत्यु उसका देहांत हो गया। तब उसका कार्यकर्ता मेहता हरखचन्द आहोर की हवेली में चला गया और आयस लक्ष्मीनाथ, जो बीकानेर के गांव पांचू में था, आकर महामन्दिर में रहने लगा। तब से राज्य में उसकी आखा चलने लगी^३।

आयस लक्ष्मीनाथ के हाथ में अधिकार जाते ही उसने नये सिरे से कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की। भाद्रपद सुदि ६ (ता० २६ अगस्त) को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११४।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११४-५।

(३) वही; जि० ४, पृ० ११४। बीरबिनोद; भाग २, पृ० ८७०।

आयस लक्ष्मीनाथ का राज्य
के ओहदों पर अपने
आदमी नियत करना

जब वह गढ़ में गया तो उसने सिंघवी मेघराज, कुशलराज एवं सुखराज को अपने पास बुलाकर उन्हें भाद्रपद सुदि १३ (ता० २ सितंबर) को परबतसर एवं मारोठ की हाकिमी प्रदान की । साथ ही उसने अपने विरोधियों (भीमनाथ के पक्षपातियों) में से खोची जुझारसिंह, धांधल पीरदान, आसोपा उत्तमराम, भानीराम, सवाईराम तथा व्यास गुमानीराम के पुत्रों आदि को कैद करवा दिया एवं उनके स्थान में अपने पक्ष के व्यक्तियों को नियुक्त किया ।

महाराजा की आस्था नाथों पर विशेष रूप से होने के कारण राज्य-कार्य उन्हीं की देख-रेख में होता था । इसके फलस्वरूप राज्य के खज़ाने में धन का अभाव तथा हर तरफ़ अव्यवस्था और अत्याचार का दौर-दौरा था । लोगों को तरह-तरह से सताकर ज़बर्दस्ती रुपये वसूल किये जाते थे । राज्य के कितने ही कर्मचारियों को वेतन तक नहीं मिलता था । फलस्वरूप लोग जहां-तहां लूट-मार करने लगे । इन घटनाओं की शिकायतें अजमेर में अंग्रेज़ अधिकारियों के पास होने पर वे जोधपुर लिखते, परन्तु कोई बन्दोबस्त न होता । स्वयं अंग्रेज़ सरकार को मिलनेवाली खिराज की रकम भी कई वर्षों से बाक़ी रह गई थी । ऐसी दशा में साथीण के ठाकुर भाटी शक्तिदान ने अन्य सरदारों से सलाह-मशविरा किया कि आखिर इस प्रकार कब तक चलेगा और हम लोग भूखे मरेंगे । अन्त में पोकरण आउवा, रास, नींबाज, चंडावल, हरसोलाव आदि के सरदारों के कार्यकर्ताओं को साथ लेकर वह अजमेर गया और वहां रहनेवाले वकील-नेर के वकील हिन्दूमल मेहता से बातकर गवर्नर जेनरल के एजेंट कर्नल सदरलैंड और पोलिटिकल एजेंट कप्तान लडलो से मिला । उनकी शिकायतें सुनकर सदरलैंड ने कहा कि हम जोधपुर आते हैं, आप सब सर-

द्वारों को वहां पहुंचने के लिए लिखें^१।

श्रावणादि वि० सं० १८६५ (चैत्रादि १८६६ = ई० सं० १८३६) के प्रारम्भ में कर्नल सदरलैंड और कप्तान लडलो दो सौ सवारों एवं पांच सौ पैदल सिपाहियों के साथ जोधपुर गये। उनके साथ कर्नल सदरलैंड का जोधपुर जाना

राजपूताने की प्रायः सब रियासतों के वकील थे। कई सरदार मार्ग में भी उनके शामिल हुए। उनका स्वागत करने के लिए दीवान सिंघवी गंभीरमल, बक्शी सिंघवी फ़ौजराज तथा कुचामन, भाद्राजूण आदि के सरदार गांव डीगाडी तक गये। दोनों का डेरा राह का बाग एवं सोजतिया दरवाजे के बीच के मैदान में हुआ। उस अवसर पर पोकरण से बभूतसिंह भी जोधपुर जा पहुंचा। चैत्र सुदि ६ (ता० २० मार्च) को कर्नल सदरलैंड ने महाराजा से मुलाकात की। महाराजा लखणापोल तक उसका स्वागत करने के लिए गया। दूसरे दिन महाराजा सदरलैंड के डेरे पर जाकर उससे मिला। फिर राज्य का ठीक-ठीक प्रबंध करने, चोरी-धाड़ों का बन्दोबस्त करने, बक्राया पड़े हुए मुकदमों का फ़ैसला करने, नाथों का जुल्म रोकने आदि के संबंध में उस (सदरलैंड) ने महाराजा से बातचीत की। अन्य बातें तो महाराजा ने स्वीकार कर लीं, परन्तु नाथों का प्रबंध करने की बात उसे पसंद न हुई, जिससे सदरलैंड अप्रसन्न होकर वापस लौट गया और ज्येष्ठ मास के प्रारम्भ में गांव भाला-मंड पहुंचा। महाराजा ने वहां जाकर उसे प्रसन्न करने की इच्छा प्रकट की, परन्तु मेहता जसरूप आदि के कहने से उसने वहां जाना स्थगित रक्खा और दूसरे कई कार्यकर्ताओं को कर्नल सदरलैंड के पास भेजा, परन्तु उसने उनकी बातों पर विशेष ध्यान न दिया^२।

महाराजा की भटियाणी राणी से श्रावणादि वि० सं० १८६४ (चैत्रादि १८६५) वैशाख सुदि ७ (ई० सं० १८३८ ता० १ मई) को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११६-७।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११७-८।

महाराजा के कुंवर सिद्ध-
दानसिंह की मृत्यु

एक पुत्र का जन्म हुआ था, जिसका नाम सिद्ध-
दानसिंह रक्खा गया था, परन्तु वह अधिक समय
तक जीवित न रहा और श्रावणादि वि० सं० १८६५
(वैशाख १८६६) वैशाख सुदि ७ (ई० सं० १८३६ ता० २० अप्रैल) को
उसका देहांत हो गया^१ ।

कर्नल सदरलैंड पालासणी, कापरडा, बीलाड़ा और नींबाज होता
हुआ अजमेर पहुंचा । इस बीच आसोप के ठाकुर बल्लतावरसिंह का
देहांत हो गया । उसके कोई सन्तान नहीं थी,
जिससे गांव वासणी के कृपावत कर्णसिंह ने
अपने भाई को सेना देकर वहां अधिकार करने के
लिए भेजा । उसके आसोप पहुंचने पर दुतरफ़ा लड़ाई हुई । तब पोकरण
के ठाकुर वभूतसिंह, आउवा के खुशहालसिंह और रास के भीमसिंह ने
सदरलैंड को इसकी हतिला देकर उसके पास से सेना बुलवाई और उस
सेना को अपनी सेनाओं के साथ आसोप का घेरा उठाने के लिए भेजा ।
महाराजा ने भी अपनी सेना भेजी । इन सब सेनाओं के वहां पहुंचते ही
घेरा उठ गया और हिंगोली के कृपावत मोहनचतसिंह के पुत्र शिवनाथसिंह
का गोद लिया जाना तय होकर वहां का बखेड़ा मिट गया^२ ।

वि० सं० १८६६ श्रावण वदि २ (ई० सं० १८३६ ता० २८ जुलाई)
को कर्नल सदरलैंड ने अजमेर में दरबार किया । उसमें उसने जोधपुर के
सरदारों से कहा कि सरकारी फ़ौज जोधपुर
जाकर नाथों को पकड़ेगी और महाराजा से क़िला
ख़ाली करा उसे गद्दी से पृथक् करेगी । आप सब
इस मौक़े पर किधर रहेंगे ? इसपर भाटी शक्तिदान ने उत्तर दिया कि
प्रथम तो ऐसी परिस्थिति उत्पन्न ही नहीं होगी, क्योंकि चढ़ाई होने पर
महाराजा लड़ेगा नहीं और नाथ भाग जावेंगे; लेकिन कदाचित् जैसा आप

महाराजा के विरुद्ध सर-
कारी विभूति प्रकाशित
होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११६ तथा ११८ ।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११६ ।

कहते हैं वैसा ही हुआ और महाराजा पर संकट पड़ा, तो जो सबेरा राजपूत हैं वे अपने स्वामी के लिए ही प्राण देंगे। इस बातचीत की खबर जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने शक्तिदान की प्रशंसा की, किन्तु धावण बदि ११ (ता० ५ अगस्त) को शक्तिदान का अजमेर में ही देहांत हो गया। महाराजा यह नहीं चाहता था कि जोधपुर राज्य पर अंग्रेज़ सरकार की सेना का नियंत्रण रहे। इसलिए उसने अंग्रेज़ अधिकारियों के पास निम्न-लिखित आशय का खरीता भेजा—

“आपके अकस्मात् प्रस्थान कर जाने से शासन-व्यवस्था के परिवर्तन संबंधी जो विचार थे वे अपूर्ण रह गये हैं। पांच वर्ष के अंग्रेज़ सरकार के खिराज के पांच लाख ब्यालीस हजार रुपये आपके अजमेर पहुंचने पर चुकाना तय हुआ था और सेना-व्यय के तीन लाख पैंतालीस हजार रुपये इसके एक वर्ष पीछे; किन्तु आपकी रवानगी से महाजनो के दिल में संदेह हो गया, जिससे नक़्द का प्रबंध न हो सका और समय समीप आ जाने से रत्न-जटित आभूषण कार्यकर्ताओं के साथ आपके पास मैंने भिजवाये, परन्तु आपने उन्हें स्वीकार न किया। अब प्रबंध कर रोकड़ रुपयों की हुंडियां बनवाली हैं, जो आपका उत्तर आने पर भेजी जावंगी और भविष्य में दरीबा घौरह की आमदनी खिराज आदि के अदा करने में लगा दी जायगी, ताकि फिर आपस में किसी प्रकार की खींचतान न हो। आपके कथनानुसार ठाकुरों को साढ़े पांच लाख रुपयों के पट्टे लिख दिये हैं और फिर जो कुछ इस मामले में करना मुनासिब हो वह भी लिखें। ठाकुरों में से कई आसामियों ने मारवाड़ के मुल्क में लूट-मार मचा दी है, उसका कारण मैं आपका दबाव न होना समझता हूं। मारवाड़ में अव्यवस्था होने और खिराज आदि के बाक़ी रह जाने का कारण मेरे शरीर की अस्वस्थता तथा अकाल आदि है। आपकी सहायता से इन सारे मामलों का बंदोबस्त होगा। मैंने तो पहले ही वि० सं० १८७४ में राज्य कार्य से हाथ खींच लिया था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से मुंशी

बरकतअली के आश्वासन देने पर ही मैंने पीछा राज्य-कार्य हाथ में लिया है। मैं तो केवल अंग्रेज़ सरकार के भरोसे निश्चित हूँ। इस राज्य की प्रतिष्ठा और उन्नति अंग्रेज़ सरकार की कृपा और आपकी सहायता पर ही निर्भर है। अभी मुझे मालुम हुआ है कि मारवाड़ पर सेना भेजने की तैयारी हो रही है। इससे मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। फ़ौजकशी तो उस व्यक्ति पर होनी चाहिये जो मुक़्तबले का इरादा रखता हो। मैं तो सरकार का कदीमी मित्र हूँ और किस की शक्ति है जो अंग्रेज़ सरकार का मुकाबला कर सके? इसलिए इतना व्यय और कष्ट अंग्रेज़ सरकार क्यों उठाती है? ऐसी ही इच्छा हो तो एक अंग्रेज़ अधिकारी दस-बीस आदमियों के साथ मय सनद के भेज दें, ताकि मैं राज्य उन्हें सौंप दूँ। इस बात की मुझको चिंता नहीं है। अंग्रेज़ सरकार से अलग रहकर मैं राज्य नहीं कर सकता। अंग्रेज़ सरकार की पूरी कृपा और आपकी सहायता रहेगी तभी मैं राज्य का तथा शिकायतों का बन्दोबस्त कर सकूँगा।”

उसके इस पत्र का अंग्रेज़ अधिकारियों पर कोई असर न हुआ और आश्विन सुदि १५ (त० २४ अगस्त) को सदरलैंड ने एक इशतिहार जारी किया, जिसमें महाराजा के विरुद्ध निम्नलिखित शिकायतें दर्ज की गई थीं—

(१) इस पत्र में लिखे हुए आभूषणादि भिजवाये जाने की पुष्टि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी होती है (जि० ४, पृ० ११६)। यह पत्र वि० सं० १८६६ आषाढ़ वदि १४ (ई० सं० १८३६ ता० ८ अगस्त) का है और इसकी नक़ल मुझे अजमेर नगर के केसरीमल लोढ़ा के यहां से प्राप्त हुई है। इसका ऊपरी भाग नष्ट हो गया है, फिर भी आशय स्पष्ट है। केसरीमल का पूर्वज कनकमल जुहारमल उस समय अजमेर का प्रतिष्ठित व्यापारी था, जिसके पूर्वजों को जोधपुर के महाराजाओं की तरफ़ से सावर का आधा महसूल मालूम था। इस सम्बन्ध के महाराजा मानसिंह और तख़्तसिंह के परवाने और ख़ास रुक़े केसरीमल के पास मैंने देखे। महाराजा मानसिंह के परवानों में बड़ी गोला-कार मुद्रिका लगी है, जिसमें “श्रीसिद्धेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणशरण राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीमानसिंह कस्य मुद्रिका” लेख अंकित है। महाराजा तख़्तसिंह की मुद्रिका चौरस है। उसमें “श्रीसिद्धेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणशरण राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीतख़्तसिंहजी कस्य मुद्रिका” लेख अंकित है।

(१) महाराजा मानसिंह ने क्ररीष पांच वर्ष के अर्से से अपने वे अहद-पक्रार, जो अंग्रेज़ सरकार के साथ उसने किये थे, तोड़ दिये हैं और जोधपुर के सवाल-जवाब का तदारुक और बदला भी नहीं दिया है ।

(२) अहदनामे की लिखावट के अनुसार सरकार के हक के दो लाख तेइस हजार रुपये वार्षिक मुकर्रर हैं, जिसके आजतक के दस लाख उनतीस हजार एक सौ छियासी रुपये दो आने हुए । ये आज तक अदा नहीं हुए ।

(३) मारवाड़ की अव्यवस्था के कारण दूसरे इलाक़ों में रहनेवालों का लाखों का नुक़सान हुआ, परन्तु उसका भी हरजाना वसूल नहीं हुआ ।

(४) जो प्रजा को पसन्द हो, जिससे मारवाड़ में सुख और चैन हो और दूसरे इलाक़ों में प्रबन्धकर्ताओं-द्वारा व्यापारियों के माल एवं मुसाफ़िरों पर जो जुल्म और ज्यादती होती है उसका बचाव हो ऐसा प्रबन्ध करने के लिए महाराजा से कहा गया, पर वह नहीं हुआ । ऐसी दशा में गवर्नर जनरल ने यह उचित समझा कि अपने हक़ों और दावों की रक्षा के लिए मारवाड़ में फ़ौज भेजी जाय । अतएव अंग्रेज़ सरकार की तीन फ़ौजें तीन तरफ़ से मारवाड़ में प्रवेश कर जोधपुर जायेंगी । अंग्रेज़ सरकार का भगड़ा महाराजा मानसिंह और उसके कार्यकर्ताओं से है, मारवाड़ की प्रजा से नहीं । मारवाड़ की प्रजा दिलजमई रखे । जब तक वहां की प्रजा अंग्रेज़ी फ़ौज से दुश्मनी नहीं करेगी तब तक सरकार उसके जान-माल की रक्षा करेगी और हर एक फ़ौज में सरकार की तरफ़ से ऐसा प्रबंध होगा कि प्रजा के सुख-चैन में उससे बाधा नहीं पड़ेगी ।

इस चढ़ाई के समय लड़ाई का सामान आदि ले जाने के लिये अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से दो हजार ऊंट मांगे जाने पर एक हजार ऊंट तो बीकानेर के वकील हिंदूमल ने मंगवा दिये और शेष एक हजार मारवाड़ के सरदारों ने । अनन्तर अंग्रेज़ी सेना का अजमेर से कूच हुआ । हुचामण का ठाकुर रणजीतसिंह तथा भाद्राजून का ठाकुर बस्तावरसिंह

भी, जो जोधपुर से सदरलैंड के साथ गये थे, अंग्रेज़ी फ़ौज के साथ थे, परन्तु उनका डेरा दूर ही दूर रहता था। उन्हीं दिनों जोधपुर में कई परदेशी मार डाले गये, जिसकी सूचना यथासमय एजेंट गवर्नर जेनरल के लश्कर में पहुंच गई। पुष्कर, मेड़ता तथा पीपाड़ होती हुई अंग्रेज़ी सेना दांतीबाड़ा पहुंची। इसपर महाराजा ने भी गांव घणाड जाकर उसके सामने डेरा किया। सदरलैंड के पास अपना वकील भेजने के बाद महाराजा स्वयं जाकर उससे तथा कप्तान लडलो से मिला। अनंतर सदरलैंड के उसके पास जाने पर महाराजा जोधपुर का गढ़ खाली करने तथा वहां अंग्रेज़ी थाना रखने को राज़ी हो गया। तदनुसार गढ़ में से राणियां आदि हटाई जाकर अन्य स्थानों में भेज दी गईं तथा खज़ाना एवं अन्य सामान आदि कोठार में रखा जाकर मोहरें लगा दी गईं। महाराजा ने रायपुर के ठाकुर माधोसिंह को गढ़ के प्रबंध के लिए नियुक्त किया था। उसने महाराजा के गढ़ में गये बिना वहां से हटने से इनकार कर दिया। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उसे समझाया और उसे उसके आदमियों सहित गढ़ से नीचे हटाया। किला खाली हो जाने की सूचना मिलने पर सदरलैंड तथा कप्तान लडलो पांच-सात सौ फ़ौज के साथ गढ़ में गये। महाराजा ने स्वयं साथ जाकर अंग्रेज़ों के आदमियों को जगह-जगह नियुक्त करने के साथ उनका अपने आदमियों से परिचय कराया। इसके बाद सदरलैंड और महाराजा गढ़ से नीचे गये तथा कप्तान लडलो ३०० सैनिकों के साथ प्रबंध के लिए वहीं रहा। उस समय जोधपुर के गढ़ के एक कार्यकर्ता—गांव भटनोया के करमसोत राठोड़ भोमजी—ने अपने मन में विचार किया कि आज गढ़ का प्रबंध बदल रहा है, अतएव मरना लाज़िम है। ऐसा निश्चय कर सूरजपोल के सामने उसने कप्तान लडलो पर तलवार का चार किया, जो मामूली ही लगा। इसपर कप्तान लडलो और उसके आदमियों ने हमलाकर आक्रमणकारी को घायल कर दिया, जिससे चार-पांच दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना के संबंध में महाराजा ने अपने वकील की मारफ़त कर्नल सदरलैंड से खेद प्रकट किया।

अनंतर अंग्रेज़ सरकार और महाराजा मानसिंह के बीच निम्नलिखित शर्तों का नया अहदनामा हुआ—

अंग्रेज़ सरकार और जोधपुर की सरकार के बीच मुद्दत से मैत्री चली आती है और वि० सं० १८७५ (ई० सं० १८१८) का अहदनामा हो जाने से यह मैत्री और भी दृढ़ हो गई है तथा भविष्य में भी रहेगी।

अब अहदनामे की नीचे लिखी शर्तें अंग्रेज़ सरकार और जोधपुर के महाराजा मानसिंह के बीच कर्नल सदरलैंड की मारफ़त तय पाई गई हैं—

शर्त पहली—अब मारवाड़ के प्रबंध के बारे में आपस में विचार कर यह निश्चय किया गया है कि महाराजा, कर्नल सदरलैंड, राज्य के सरदार, अहलकार, ख़वास और पासवान एकत्र होकर देश के प्रबंध के लिए नियम बनावेंगे, जिनका पालन अब और भविष्य में हुआ करेगा। राज्य के जागीरदारों, सरकारी अफ़सरों और अन्य राज्याश्रित व्यक्तियों के हक़ प्राचीन नियमानुसार वे ही निर्धारित करेंगे।

शर्त दूसरी—पोलिटिकल एजेंट और जोधपुर राज्य के अहलकार आपस में मशविरा कर उक्त नियमों के अनुसार महाराजा से परामर्श लेकर राज्य का प्रबंध करेंगे।

शर्त तीसरी—उक्त पंचायत सारा राज्य-कार्य प्राचीन प्रथा के अनुसार करेगी।

शर्त चौथी—कर्नल (सदरलैंड) के कथनानुसार महाराजा ने भी स्वीकार कर लिया है कि जोधपुर के क़िले में एक अंग्रेज़ी फ़ौज रहेगी। राजस्थान की दूसरी रियासतों में जहां पोलिटिकल एजेंट रहते हैं, फ़ौजें शहर के बाहर रहती हैं। क़िले के भीतर केवल रहने योग्य मकान बने हैं और जगह की कमी है। इस सबब से कठिनाई है, परन्तु अंग्रेज़ सरकार को ख़श रखने के निमित्त क़िले में फ़ौज रक्खी जाने की बात तय कर ली गई है और एक उपयुक्त जगह निर्धारित होते ही फ़ौज वहां रक्ख दी

जायगी । महाराजा को अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से किसी प्रकार का अंदेशा नहीं है ।

शर्त पांचवीं—श्रीजी का मंदिर^१, स्वरूप^२ और जोगेश्वर^३ चाहे वे इस देश के हों चाहे विदेशी, उनके अनुगामी तथा साथी, उमरावों^४, कीकों^५, कुत्सहियों^६, खवासों, पासवानों तथा दूसरे व्यक्तियों के सम्मान, इज्ज़त और क़तबे में किसी प्रकार की कमी न होगी । वह जैसी अब है वैसी ही कायम रहेगी ।

शर्त छठी—कार्यकर्ता अपना-अपना कार्य नव-निर्धारित नियमों के अनुसार करते रहेंगे, परन्तु यदि उनके कार्य में किसी प्रकार की असावधानी अथवा सुस्ती पाई जायगी तो महाराजा से मशखिरा करने के बाद वे निकाल दिये जायेंगे तथा उनके स्थान में दूसरे योग्य व्यक्ति रख लिये जायेंगे ।

शर्त सातवीं—जिनके हक़ छीन लिये गये हैं, उनके हक़ न्याया-नुसार बहाल कर दिये जायेंगे और वे दरबार की चाकरी करेंगे ।

शर्त आठवीं—अंग्रेज़ सरकार की दृष्टि इस बात की तरफ़ है कि मारवाड़ का स्वार्थ और महाराजा का हक़, मान तथा ख्याति पूर्ववत् स्थिर रहे; अतएव उक्त सरकार की तरफ़ से उनमें कमी न होगी और न दूसरों के हाथ से ही ऐसा होने पायगा । उक्त सरकार इस बात का ज़िम्मा लेती है ।

शर्त नवीं—अंग्रेज़ सरकार का एजेंट और मारवाड़ के अहलकार आपस में राय कर महाराजा के परामर्शानुसार, उन नये क़ानूनों के

(१) अर्थात् नाथों के मन्दिर ।

(२) अर्थात् लक्ष्मीनाथ, प्रयागनाथ तथा उनके सम्बन्धी ।

(३) अर्थात् नाथ ।

(४) अर्थात् राज्य के ठाकुर ।

(५) अर्थात् महाराजा के अनौरस पुत्र ।

(६) अर्थात् कुशखराज, क़ौजराज आदि ।

अनुसार, जो अब बनेंगे, अंग्रेज़ सरकार के बकाया खिराज तथा सवार-खर्च की नियमित अदायगी के लिए उपयुक्त प्रबंध करेंगे। नुक़सान की भरपाई उस पक्ष को करनी होगी, जिसपर कि वह साबित होगा और दूसरे राज्यों से मारवाड़ को जो कुछ लेना है, वह भी तभी वसूल होगा, जब कि पूरा-पूरा साबित हो जायगा।

शर्त दसवीं—महाराजा ने जिन सरदारों को जागीरें देकर उनसे चाकरी का वायदा कराया है और उन्हें पिछले अपराधों के लिए माफ़ कर दिया है, अंग्रेज़ सरकार भी उन्हें अपनी तरफ़ से क्षमा प्रदान करती है, यथा स्वरूप, जोगेश्वर, उमराव तथा अहलकार।

शर्त ग्यारहवीं—राजधानी में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से पो० एजेंट की नियुक्ति हो जाने के कारण अब किसी भी व्यक्ति के प्रति अन्याय और अत्याचारपूर्ण व्यवहार न किया जायगा तथा धर्म के षट् दर्शनों में बाधा डालने का कोई कार्य न किया जायगा और न मारवाड़ के अन्तर्गत पवित्र माने जानेवाले पशुओं की हत्या ही की जायगी।

शर्त बारहवीं—महाराजा के राज्यशासन का सुप्रबंध यदि छः मास, एक वर्ष अथवा डेढ़ वर्ष में हो गया तो एजेंट तथा अंग्रेज़ी फ़ौज जोधपुर के गढ़ से हटा ली जायगी। यदि यह कार्य इससे भी जल्दी हो गया तो अंग्रेज़ सरकार को बड़ी खुशी होगी, क्योंकि इससे उसका सम्मान बढ़ेगा।

शर्त तेरहवीं—ऊपरलिखित अहदनामा, जैसा कि ऊपर कहा गया है, जोधपुर में ता० २४ सितंबर ई० स० १८३६ (आश्विन वदि १ वि० सं० १८६६) को तय होकर लेफ़्टनंट कर्नल सदरलैंड-द्वारा माननीय गवर्नर जेनरल ऑफ़ इंडिया के पास स्वीकृति के लिए पेश किया जायगा और इस अहदनामे के संबंध का महाराजा के नाम का खरीता श्रीमान् गवर्नर जेनरल से प्राप्त किया जायगा।

उपर्युक्त अहदनामा भारत के गवर्नर जेनरल श्रीमान् लॉर्ड जॉर्ज ऑकलैंड, जी० सी० बी० से अधिकार प्राप्त कर्नल जॉन, सदरलैंड ने

क्रार पाया' ।

रिधमल का हस्ताक्षर
और मुहर

प्रौजमल का हस्ताक्षर
और मुहर

उपर्युक्त अहदनामा हो जाने के बाद राज्यकार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए सदरलैंड के कथनानुसार राज्य के जागीरदारों और ओह-देदारों की एक सूची तथा अन्य आवश्यक कार्यों के संबंध में खास-खास बातों की लिखावट गढ़ के भीतर रखे जानेवाले अंग्रेज़ अधिकारी के सुपुर्दे की गई। साथ ही राज्यकार्य करने के लिए निम्नलिखित व्यक्तियों की एक पंचायत मुक्रर की गई—

- | | |
|---|--------------|
| १. ठाकुर बभूतसिंह चांपावत | पोकरण का |
| २. ठाकुर कुशालसिंह चांपावत | आडवा का |
| ३. ठाकुर सवाईसिंह ऊदावत | नींबाज का |
| ४. ठाकुर शिवनाथसिंह मेड़तिया | रीयां का |
| ५. ठाकुर बल्लुवरसिंह जोधा | भाद्राजूण का |
| ६. ठाकुर जीतसिंह मेड़तिया | कुचामण का |
| ७. ठाकुर भीमसिंह ऊदावत | रास का |
| ८. आसोप के ठाकुर शिवनाथसिंह की नाबालिग अवस्था के कारण उसकी तरफ से कंटालिया का ठाकुर शंभुसिंह कृपावत | |

उनके अतिरिक्त किलेदार, दीवान आदि पदों के लिए पांच अहलकार भी चुने गये। इस प्रकार सारा प्रबंध ठीक हो जाने पर वि० सं० १८६६ पौष सुदि १४ (ई० सं० १८४० ता० १७ जनवरी) को सदरलैंड

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२०-२८। वीरबिनोद; भाग २, पृ० ८७१-२ तथा ८६६-८। पृथिसन; टीटीज़ एंगेजमेंट्स एण्ड सनदज़; जि० ३, पृ० ११६ तथा १३५-७।

अजमेर के लिए रवाना हुआ। उस समय उसने महाराजा को विश्वास दिलाया कि मैं कलकत्ते पहुंचकर लाट साहब से आपको शीघ्र गढ़ वापस दिलाने के संबंध में सिक्रारिश करूंगा।

राज्य का यह प्रबंध केवल कुछ मास तक ही रहा। उसी वर्ष फाल्गुन वदि १२ (ई० स० १८४० ता० २६ फ़रवरी) को गढ़ वापस दिये जाने

महाराजा को पीछा राज्या-
धिकार मिलना

के संबंध में लाट साहब का आह्वापत्र लेकर सदर-लैंड जोधपुर पहुंचा। फाल्गुन सुदि ५ (ता० ८ मार्च) को गढ़ से अंग्रेज़ी थाना हटा लिया गया

और अंग्रेज़ अधिकारियों के साथ महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया। महाराजा ने दरबार के अवसर पर वकील रिधमल को आभूषण आदि देने के साथ ही “रावराजा बहादुर” के खिताब से विभूषित किया। अनन्तर सदरलैंड तो वापस अजमेर गया और अपने अइलकारों के साथ महाराजा राज्यकार्य करने लगा।

इतना होने पर भी राज्य से नाथों का प्रभुत्व हटा नहीं। उनकी तथा कुचामण, रायपुर और भाद्राज़ूण के ठाकुरों की जागीरों में कमी करने

नाथों आदि का राज्य में
उपद्रव करना

के संबंध में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से लिखावट आने पर महाराजा ने उनमें कमी की। नाथ इस

बात के लिए राज़ी न हुए और उनके जुल्मों में भी किसी प्रकार की कमी न हुई। इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के पास शिकायतें होने पर वहां से इसका प्रबंध करने के लिए कई बार ताकीद की गई। वि० सं० १८६७ (ई० स० १८४०) के आश्विन मास में उपद्रवी सरदार आदि सिवाणा परगने की भीष्मा की पहाड़ी में एकत्र हुए और उन्होंने थोकलसिंह का पत्त लेकर उपद्रव करने का प्रयत्न किया; परन्तु ठीक समय

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२८-२०७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २०७-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७२।

पर सिंघवी फ़ौजराज सेना-सहित पहुंच गया, जिससे वे भाग गये' ।

उसी वर्ष नाथों के प्रबंध में महाराजा और कर्नल सदरलैंड के बीच पत्रव्यवहार हुआ, जो कई मास तक जारी रहा, परन्तु कोई परिणाम न निकला । अगले वर्ष भाद्रपद मास में कर्नल सदरलैंड आबू से पाली होता हुआ जोधपुर गया, जहां केवल कुछ समय तक रहकर ही वह अजमेर लौट गया^१ ।

उसी वर्ष पौष मास में जोगेश्वरों के पट्टे के गांव ज़भ्त किये गये तथा अंग्रेज़ अधिकारियों के आदेशानुसार आयस लक्ष्मीनाथ, आयस प्रयागनाथ, आयस रघुनाथ आदि राज्य के विभिन्न नाथों और कतिपय विरोधी सरदारों का प्रबंध होना पदों से हटाये गये । इसके एक मास बाद पोकरण का ठाकुर वभूतसिंह राज्य का प्रधान नियुक्त हुआ और नौबाज के ठाकुर के चाचा तथा कृपावत कर्णसिंह (वासणी) को जागीर में गांव मिले । उन्हीं दिनों कर्नल सदरलैंड ने तीन लाख की जागीर जोगेश्वरों को दिलाने के लिए प्रस्ताव किया, पर उन्होंने उसे स्वीकार न किया । सिंघवी कुशलराज कंटालिया में था । वहां से लौटने पर उसने ठाकुर कुशलसिंह (आडवा), भीमसिंह (रास), हिम्मतसिंह (खेजड़ला) आदि से महाराजा की मर्जी के मुताबिक़ आचरण करने का वचन ले उन्हें वापस लौटाया^२ ।

वि० सं० १८६६ भाद्रपद वदि १२ (ई० सं० १८४२ ता० २ सितंबर) को पोखिटिकल एजेंट की सिफ़ारिश पर सिंघवी सुल्तराज राज्य का दीवान बनाया गया, जो मार्गशीर्ष मास तक उस पद पर रहा । उससे भी नाथों का प्रबन्ध न हो सका और नाथों को राज्य-कोष से पूर्ववत् धन

(१) जोधपुर राज्य की क्यात; जि० ४, पृ० २०८ ।

(२) वही; जि० ४, पृ० २०६-१० ।

(३) वही; जि० ४, पृ० २११ ।

मिलता रहा, जिसकी शिकायत पो० एजेंट के पास होने पर उसने महाराजा को सुखराज को दीवान के पद से अलग करने के लिये कहलाया। इसपर मार्गशीर्ष वदि ८ (ता० २५ नवंबर) को सुखराज ने दीवानगी की मोहर महाराजा को सौंप दी। अनन्तर महाराजा धन ले-लेकर लोगों को ओढ़दे देने लगा। उस समय बड़े-बड़े नाथ—लक्ष्मीनाथ, प्रयागनाथ आदि—तो बाहर थे, परन्तु छोटे-छोटे नाथों का, जो जोधपुर में थे, जुलूम बहुत बढ़ा हुआ था। प्रतिदिन नये-नये व्यक्ति कानफड़ाकर नाथ बनते थे, जिनके भोजनादि का सब प्रबंध राज्य की तरफ से होता था। इससे राज्य में खर्च की बड़ी तंगी रहती थी और धन संग्रह करने के लिए प्रजा पर कर लगाया जाता था। इससे अंग्रेज़ अधिकारियों की महाराजा पर नाराज़गी थी। पो० एजेंट उन दिनों सिरोही की तरफ गया हुआ था। फाल्गुन मास में वहां से लौटने पर उसने खज़ाने का चार लाख रुपया नाथों को दे-देने आदि के संबंध में महाराजा से शिकायत की। अनन्तर अजमेर से डेढ़ सौ सवार बुलाकर उसने वैशाख वदि में सोजतिया दरवाज़े के बाहर नवनाथ, चौरासी सिद्धों के मन्दिर में गोरखमंडी के मेहरनाथ तथा चांदपोल दरवाज़े के बाहर होशियारनाथ के जेले शीलनाथ को गिरफ्तार कर अजमेर भिजवा दिया^१।

(१) नाथों के जुलूमों के सम्बन्ध में “वीरखिनोद” का कर्ता कविराजा श्यामब-वास लिखता है कि नाथ लोग ज़बर्दस्ती भले आदमियों के लड़कों को पकड़ लेते और चेला बनाते, अच्छे घराने की बहू-बेटियों को पकड़कर घरों में डाल लेते तथा लोगों का माल छीन लेते, जिनकी पुकार कोई नहीं सुनता था। जब वे लोग रुपये की मांग करते और देने में देर होती तो वे ज़मीन में ज़िन्दा गढ़ने को तैयार हो जाते। तब महाराजा रुपये देकर उन्हें खुश करता। वि० सं० १६०० (ई० स० १८४३) में दो नाथों ने एक ब्राह्मण की लड़की को पकड़ लिया और कहा कि रुपया दो तो छोड़ें। यह खबर कप्तान लडलो को मिलने पर उसने उन दोनों को गिरफ्तार करा अजमेर भिजवा दिया (भाग २, पृ० ८७३-४)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१२-३।

इसपर महाराजा ने अपने वकील रिधमल को एजेंट के पास भेजा, परन्तु वह बहुत नाराज़ था, जिससे कोई परिणाम न निकला और वकील भी महाराजा के पास वापस न गया। तब महाराजा ने, लाङ्गण के जोधा प्रतापसिंह को बुलाकर उससे स्वरूपों को छुड़ा लाने को कहा, परन्तु रिधमल ने इस कार्य की विफलता बतलाकर उसे रोक दिया। नाथों की गिरफ्तारी से महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य में भाग लेना छोड़ दिया। यही नहीं शेरअरा वल्लु धारणकर और शरीर में भभूत (भस्मी) लगाकर वह स्वयं भी साधुओं की तरह बन गया और मेड़दिया दरवाज़े के बाहर की बावड़ी के निकट जा बैठा। एक रात वहाँ रहकर वह शेखावत राणी के बनवाये हुए तालाब पर गया। इस बीच उसके कई कार्यकर्ताओं ने भी भगवे मल्ल पहन लिये, परन्तु रिधमल ने अंग्रेज़ सरकार का भय दिखलाकर उन्हें उनके निश्चय से हटाया। उस समय पोकरण, नौबाज़, खींसर आदि के ठाकुरों के कार्य-कर्ताओं ने महाराजा को समझाकर गढ़ में ले जाने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया, परन्तु उसने उनकी न सुनी और श्रावणादि वि० सं० १८६६ (जैत्रादि १६००) वैशाख सुदि १३ (ई० सं० १८४३ ता० १२ मई) को ज़ालंधरनाथ का दर्शन करने के लिए वह पाल गांव गया। जिस दिन से महाराजा ने साधु-वेष धारण किया उसी दिन से उसने एक प्रकार से खाना-पीना त्याग दिया था। वह केवल एक पेड़ा और दो पैसे भर दही खाता था।

इसके पाल गांव में रहते समय ही वहाँ हैजे की भयंकर बीमारी फैली, जिससे प्रतिदिन अनेक व्यक्ति अकाल में ही काल-कवलित होने लगे।

पाल गांव में हैजे का प्रकोप होना

भाद्राजून के ठाकुर बस्तावरसिंह का उसी रोग से वहीं देहांत हुआ। महाराजा का इरादा आबू जाने का था, परन्तु एजेंट के समझाने-बुझाने पर उसने

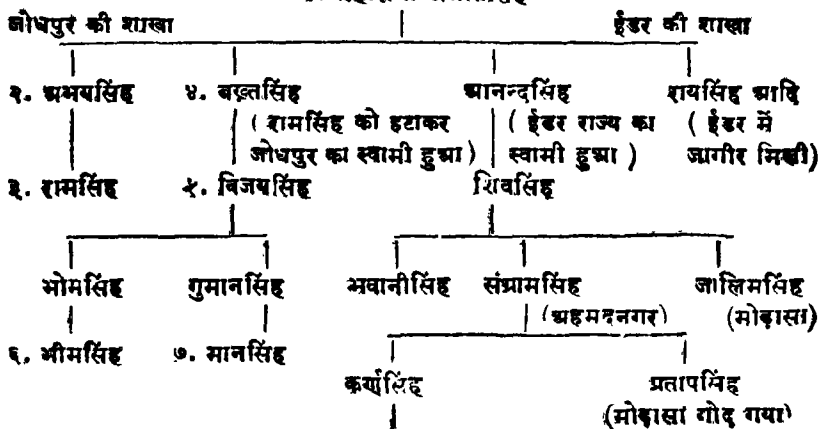
उसी वर्ष आषाढ वदि ४ (ता० १६ जून) को महाराजा पाल गांव से जोधपुर जाकर राइका बाग में ठहरा । महाराजा की दशा दिन दिन

उत्तराधिकारी के विषय में
महाराजा का एजेंट से कहना
बिगड़ती जा रही थी। ऐसी अवस्था देखकर पो०
एजेंट ने उससे अपना उत्तराधिकारी नियत करने
को कहा। इसपर महाराजा ने उत्तर दिया कि
अहमदनगर के राजा कर्णसिंह के दो पुत्रों—पृथ्वीसिंह, एवं तक्षसिंह—में
से पृथ्वीसिंह तो मर गया और तक्षसिंह अभी जीवित है। मेरी मर्जी
तक्षसिंह को अपना उत्तराधिकारी बनाने की है और मैं चाहता हूँ कि मेरे
बाद वही जोधपुर का स्वामी हो। पो० एजेंट ने महाराजा को आश्वासन
दिया कि आप जैसा चाहते हैं वैसा ही होगा। ईडर और मोड़ासावालों से
नाराज़गी होने के कारण ही महाराजा ने उक्त दोनों घरानों से अपने लिए
उत्तराधिकारी न चुना^२।

(२) वही; जि० ४, पृ० २१४-५ ।

नीचे ग्रहमदनगरवालों का वंशवृक्ष दिया जाता है, जिससे महाराजा मानसिंह का उनके साथ क्या सम्बन्ध था यह स्पष्ट हो जायगा।

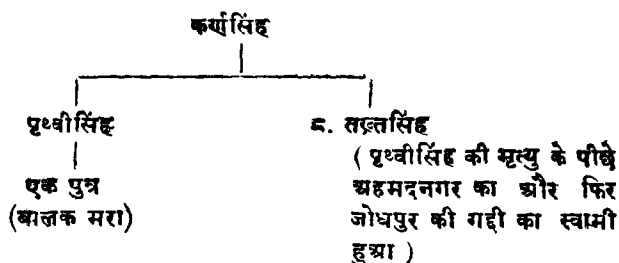
१. महाराजा अजीतसिंह



भावण सुदि ३ (ता० २६ जुलाई) को महाराजा पीनस में बैठकर सूरसागर के पास से होता हुआ मंडोवर में दाखिल हुआ। वहाँ से आश्वा प्राप्तकर ठाकुर बभूतसिंह पोकरण महाराजा की मृत्यु गया। मंडोवर पहुँचने के कुछ समय बाद ही भाद्रपद वदि ३० (ता० २५ अगस्त) को महाराजा को एकांतरा ज्वर आने लगा और उसी बीमारी से भाद्रपद सुदि ११ (ता० ४ सितंबर) सोमवार को पिछली रात के समय उसका देहांत हो गया। उसके साथ उसकी देवही राणी^२ सती हुई^३।

महाराजा मानसिंह के तेरह राणियां थीं, जिनसे उसके आठ पुत्र और तीनों पुत्रियां हुईं। पुत्रों में से सभी उसके जीवन-काल में मर गये। पुत्रियों में से एक जयपुर के महाराजा और दूसरी बूंदी के महाराज को ब्याही गई^४।

राणियां तथा संतति



(१) 'वीरविनोद' से पाया जाता है कि अपनी बीमारी के समय महाराजा ने सब आदमियों को अपने पास से हटाकर केवल सुबह के समय ब्राह्मणों को आकर संभालने की आज्ञा दी थी, जिसका उसके अन्तकाल तक पालन हुआ (भाग २, पृ० ८७४)।

(२) देवही राणी सेलवार गंव के जवानसिंह अलैसिंहोत की पुत्री ऐजन-कुंवरी थी। उसके विषय में जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि वह भी महाराजा के समान ही आहार रखती थी (जि० ४, पृ० २१५-२२३)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७४।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २२२-३१। सुंशी देवीप्रसाद-दास संगृहीत जोधपुर के राजाओं, राणियों, कुंवरो, कुंवरीयों आदि की नामावली; पृ० ७०-१।

महाराजा मानसिंह का राज्यकाल आन्तरिक कलह से परिपूर्ण रहा और उसे निरन्तर बखेड़ों में फंसा रहना पड़ता था, परन्तु इतना होने पर भी

महाराजा का विषामेव वह साहित्यिकों का सम्मान करने में सदा तत्पर रहता था। वह कवियों, विद्वानों और गुणीजनों

को पूरा-पूरा आदर करता था। यही कारण था कि उसके दरबार में उच्च-कोटि के विद्वान् और कवि बने रहते थे। वह स्वयं भी विद्याव्यसनी और ऊँचे दर्जे का कवि था। उसका रचा हुआ “कृष्णविलास” नामक काव्य-ग्रन्थ राज्य की तरफ से प्रकाशित हो गया है। “मान-पद्य-संग्रह” नामक एक दूसरा काव्यग्रन्थ भी छप गया है, जो उसी का बनाया हुआ माना जाता है। महाराजा के रचे हुए कितने ही पद्यों का उल्लेख “जोधपुर राज्य की ख्यात” तथा अन्यत्र भी मिलता है। महाराजा की नाथों पर विशेष आस्था थी, जिससे उसने उक्त सम्प्रदाय से संबंध रखनेवाले कई ग्रन्थों का निर्माण किया था। उनमें “जलंधरनाथजी रो चरित्र”, “नाथचरित्र”, “श्रीनाथजी रो दुहा”, “श्रीनाथजी”, “नाथप्रशंसा”, “नाथजी की वाणी”, “नाथकीर्तन”, “नाथमंदिम”, “नाथपुराण”, “नाथसंहिता” आदि उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त उसने “रागां रो जीलो”, “बिहारी सेतेंसई टीका”, “रागसार”, “कृष्णविलास”, “महाराजा मानसिंह की वंशावली”, “राम-विलास”, “संयोग शृंगार का दोहा”, “कवित्त सवैया दोहा”, “सिद्धकाल” आदि विभिन्न विषयों की कितनी ही पुस्तकें रची थीं। उसे इतिहास से भी बड़ा अनुराग था। उस समय मिलनेवाली प्राचीन बहियों, राजकीय पत्र-व्यवहारों, ख्यातों, सनदों आदि के आधार पर उसने अपने राज्य का एक बृहत्

(१) इस ग्रन्थ की प्रकाश में लाने का श्रेय बाँकानेर के परम साहित्यानुसारी, दानवीर सेठ रामगोपाल मोहता को है। इसमें संगृहीत पद्य एक साधु की कंठस्थ थे, जिससे सुनकर ये प्रकाशित किये गये हैं। इसके अधिकांश छन्द नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं और कितने ही बड़े सुन्दर हैं।

(२) रायबहानुर श्यामसुन्दरदास; हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० १२१। मिश्रबन्धु विनोद; भाग २, पृ० १२१-२।

इतिहास तैयार कराया था, जिसका “जोधपुर राज्य की ख्यात” के नाम से मैंने इस ग्रन्थ में उल्लेख किया है। सुप्रसिद्ध इतिहास लेखक कविराजा बांकीदास उसका कृपापात्र था। वि० सं० १८७७ (ई० सं० १८२०) में जब टॉड जोधपुर गया, उस समय वह महाराजा के इतिहास-प्रेम से बड़ा प्रभावित हुआ था। महाराजा न केवल अपने देश के बल्कि सारे भारतवर्ष के इतिहास की अच्छी जानकारी रखता था। उसका अध्ययन विशाल था। उसने कर्नल टॉड को अपने वंश के इतिहास की छः कविता-बद्ध पुस्तकों की नकलें करवाकर दी थीं, जिनके आधार पर उसने जोधपुर राजवंश का इतिहास लिखा था और जो उसने पीछे से रायल एशियाटिक सोसाइटी को प्रदान कर दीं। महाराजा का हिन्दी और अपने देश की भाषा का ज्ञान तो बड़ा चढ़ा था ही, साथ ही उसको फ़ारसी भाषा का भी अच्छा ज्ञान था। ऊपर कही हुई छः पुस्तकों के पत्रों में कर्नल टॉड ने “तारीख़ फ़रिश्ता” और “खुलासतुत्तवारीख़” की नकलें कराकर महाराजा को

(१) वह इतिहास चार बड़ी बड़ी जिल्दों में है। इसमें दिनां हुआं वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त अधिकांश विश्वास के योग्य नहीं है, क्योंकि कितनी ही घटनाओं के साथ साथ उसमें दिये हुए संवत् आदि बहुधा कल्पित हैं। राव जोधा की पुत्री शृङ्गारदेवी का विवाह मेवाड़ के महाराणा कुंभकर्ण (कुंभा के पुत्र रायमल के साथ हुआ था, ऐसा शृङ्गारदेवी की बनवाई हुई घोंसुंड़ी गांव की बावड़ी की प्रशस्ति से पाया जाता है, परन्तु इस ख्यात में अथवा अन्य किसी ख्यात में उस (शृङ्गारदेवी) का नाम तक नहीं है। इसी प्रकार कोइमदेसर तालाब बनवानेवाली राव जोधा की माता कोइमदे का नाम भी इस ख्यात में नहीं है। उसका पता कोइमदेसर तालाब की प्रशस्ति से मिलता है। इससे स्पष्ट है कि वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त इसमें केवल जनश्रुति के आधार पर लिखा गया है। आगे का वृत्तान्त किसी क्रूर ठीक है, परन्तु वह भी अतिशयोक्ति से डाली नहीं है। कहते हैं कि लोगों ने मारवाड़-नरेशों द्वारा मुसलमानों को बेटियां दी जान की बात इससे से हटा देने के लिए महाराजा मानसिंह से निवेदन किया तो उसने इसके उत्तर में कहा कि छोटी मोटी शादियों का जिक्र तो निकाल दिया जाय, परन्तु जो विवाह सम्बन्ध शाही घराने के साथ हुए उनका उल्लेख अवश्य रहे; क्योंकि उससे हमारे वंश का गौरव प्रकट होता है। साथ ही उससे हमारे वंशजों को यह मालूम होगा कि हमें भूमि रखने के लिए क्या-क्या करना पड़ा है।

ही थीं।

उसके आश्रित कवियों में घागीराम और गाड़ाराम-कृत “जसभूषण” तथा “जससरूप”; मनोहरदास-कृत “जसआभूषण चंद्रिका” तथा “कूल-चरित्र”; उत्तमचंद-कृत “अलंकार आशय”, “नाथचंद्रिका” तथा “तारकनाथ धंधियों की महिमा”; शंभुदत्त-कृत “राजकुमार प्रबोध” तथा “राजनीति-उपदेश” और सेवग दौलतराम-कृत “जलंधरनाथजी रो गुण” तथा “परि-चयप्रकाश” के नाम मिलते हैं। उनके अतिरिक्त अम्य कई विद्वानों, पंडितों, कवियों आदि ने भी कितने ही संस्कृत और भाषा के ग्रंथों की रचना की थी। उसके आश्रय में कई उच्च कोटि के संगीताचार्य भी रहते थे। उसकी भटियाणी राणी विदुषी होने के साथ ही उच्च कोटि की कवियित्री थी। उसके बनाये हुए “ज्ञानसागर”, “ज्ञानप्रकाश”, “प्रताप-पञ्चीसी”, “प्रेमसागर”, “रामचंद्रनाम महिमा”, “रामगुणसागर”, “रघुबर स्नेहलीला”, “रामप्रेम सुखसागर”, “रामसुजस पञ्चीसी”, “रघुनाथजी के कवित्त”, और “भजन पद हरजस” ग्रंथ मिलते हैं, जो अब

(१) डॉ. राजस्थान; जि० २, पृ० ८२४-२ तथा ८३३।

(२) ये दोनों भाई एक साथ कविता करते थे। हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग पृ० १८ तथा ३४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६१४ तथा १००४।

(३) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० ११६। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६४७।

(४) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ० १४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६२१।

(५) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ० १६४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६२२।

(६) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ० ७०। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६४६।

(७) मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ११०४-६।

पुस्तकाकार एक संग्रह के रूप में प्रकाशित हो गये हैं। उसकी एक उप-पत्नी तुल्यद्वारा के रत्ने हुए भगवद्भक्तिपूर्ण पद भी मिलते हैं।

महाराजा को पुस्तकों, चित्रों आदि के संग्रह करने का भी बड़ा शौक था। उसके समय की संगृहीत पुस्तकें और चित्र राज्य में अबतक मौजूद हैं, जो उसके साहित्य और कला-प्रेम का परिचय देते हैं।

महाराजा मानसिंह ने चालीस वर्ष तक राज्य किया था, परन्तु इतनी लम्बी अवधि में भी राज्य के भीतरी भूगर्हों और अन्यवस्था के कारण वहां कोई विशेष उन्नति न हो सकी। उसके

महाराजा का व्यक्तित्व

राज्य-काल में राज्य-कोष में धन का अभाव रहा।

इसका कारण राज्य में नाथों का प्रभुत्व था, जिससे प्रायः उन्हीं के कुल-पात्र राज्य के उच्च पदों पर रहते थे। नाथों के भी दो फिर्कें थे—एक महा-मंदिर का और दूसरा उदयमन्दिर का। इससे भी राज्य-प्रबंध में हमेशा गड़बड़ी रहती थी। जब कभी आवश्यकता होती तो प्रजा अथवा सम्पन्न अधिकारियों से ज़बर्दस्ती रुपये वसूल किये जाते थे। इस कार्य के लिए लोगों को तरह-तरह से कष्ट दिये जाते थे। राज्य का अधिकांश धन राज्य-कार्यों में व्यय न होकर नाथों को दे दिया जाता था।

राज्य के कितने ही सरदारों और कर्मचारियों के साथ उसका अंत तक विरोध बना रहा। उनमें से कितनों की ही उसने जागीरें ज़ूत कर लीं। यही नहीं, जिन लोगों ने उसे जालोर से लाकर जोधपुर की गद्दी पर बैठाया उनकी उस सेवा को भुलाकर उसने उन्हें मरवावे की आज्ञा निकाली, जो पीछे से अखंडसिंह के समझाने पर उसने रद्द की। महाराजा अपने विरोधियों से बड़ी बुरी तरह बदला लेता था। उसने कई व्यक्तियों को बड़ी सज़ायाँ देकर मरवाया। इससे उसके क्रूर स्वभाव का परिचय

(१) मिश्रबन्धु विनोद, भाग २, पृ० १०३२।

(२) महाराजा की क्रूरता के संन्यस में एक कथा प्रसिद्ध है। उसने ऐसी आज्ञा दे रखी थी कि जिले के भीतर कोई पुरुष किसी की से बात न करे। एक बार जब उसने एक पुरुष को एक स्त्री से बातें करते देखा, तो उसने उसी समय उस

मिलता है। यह ज़िन्दी, काब का कच्चा, कुतल और अविश्वेकी नरेश था। अपनी अविश्वेकता के कारण ही उसने जयपुर से विरोध खड़ा कर लिया, जिसका परिणाम दोनों राज्यों के लिए हानिकर ही हुआ। इन सब बखेड़ों का फल यह हुआ कि पीछे से सरदारों आदि की तरफ से विशेष दबाव बढ़ने पर उसे राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंपना पड़ा।

नाथों पर महाराजा की विशेष आस्था होने से उसने उन्हें लाखों रुपयों की जागीरें दे रखी थीं। वे भी मन-माना आचरण किया करते थे। बड़े-बड़े सम्पन्न घरानों के बालकों को चेला बना लेने तथा भले घर की बहू-बेटियों को अपने घर में डाल लेने से भी वे नहीं चूकते थे। महाराजा को नाथों के इस आचरण का पता था, पर उनको अपना गुरु मान लेने के कारण वह उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं करता था। नाथों के प्रति उसकी अन्ध-भक्ति कितनी बढ़ी हुई थी, यह इसीसे स्पष्ट है कि आयस देवनाथ के मारे जाने पर उसने राज्य-कार्य से पूर्ण उदासीनता ग्रहण कर ली।

आलसिंह के समय उसके कुंवर छत्रसिंह के उद्योग से जोधपुर राज्य और अंग्रेज़ सरकार के बीच संधि स्थापित हुई, जो राज्य के लिए बड़ी हितकर सिद्ध हुई, क्योंकि आगे चलकर अंग्रेज़ सरकार के हस्तक्षेप करने पर नाथों एवं उपद्रवी सरदारों का दमन होकर राज्य में सुप्रबंध, शान्ति और सुख का प्रादुर्भाव हुआ। महाराजा अंग्रेज़ों के साथ की मैत्री का बहुत महत्व समझता था और उसने कभी अंग्रेज़ सरकार को नाराज़ करने का कोई कार्य नहीं किया। नाथों का प्रबंध

पुरुष को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। दीवान को जब इस का पता चला तो उसने तुरन्त महाराजा के पास जाकर उससे निवेदन किया कि आपने जो आज्ञा दी वह ठीक है; परन्तु यदि ऐसा हुआ तो इसका परिणाम ठीक न होगा क्योंकि बाहरी राज्य-वाले यही समझेंगे कि जनाने में कुछ गड़बड़ हुई होगी। यह बात महाराजा की समझ में आ गई और उसने अपनी आज्ञा रद्द कर दी।

यह बात मैंने कविराजा मुसरीदान से सुनी थी।

करने के लिए जब अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से राज्य में सेना भेजी गई तो उसने अविलंब गढ़ खाली कर दिया ।

इन सब बातों के होते हुए भी महाराजा में कई प्रशंसनीय गुण थे । वह वीर, स्वाभिमानी, विद्वान्, दानी^१, गुणग्राहक^२ और उदार नरेश था ।

(१) महाराजा की दानशीलता के संबंध में एक बात मुझे “राजस्थान”-सम्पादक मुंशी समर्थदान ने सुनाई थी, जो इस प्रकार है—

महाराजा का अपने सरदारों के साथ बहुधा विरोध ही रहता था । उसके समान ही उसके कितने ही विरोधी सरदारों के यहां भी चारण, कवि आदि रहा करते थे । एक दिन जब एक विरोधी सरदार के यहां महाराजा की दानशीलता के संबंध में बातें चल रही थीं, उस समय वहां उपस्थित किसी कवि ने महाराजा के जालोर में रहते समय उसके पास रहनेवाले कवि केसर की, जिसने उस समय महाराजा की अच्छी सेवा की थी, चर्चा करते हुए निम्नलिखित पद्य कहा—

केसरो हुतो मोटो कवि, गाम गाम करतो मुओ ।

महाराजा को जब यह बात ज्ञात हुई तो उसे केसर की सेवा का स्मरण आया और उसने उसी समय उसके पुत्र की तलाश में अपने आदमी भिजवाये । पुत्र का पता चलते ही महाराजा ने उसे अपने पास बुलवाया और दरबार कर दो गांव दिये । दो गांव देने के बारे में महाराजा ने कहा कि मेरे शत्रु के कवि ने अपने पद्य में दो बार गांव शब्द का व्यवहार किया, इसलिए मैंने दो गांव दिये ।

(२) महाराजा की गुणग्राहकता के विषय में एक बात यह भी सुनी है कि एक बार काशी का एक बड़ा पंडित उसके दरबार में गया और एक महाजन की हवेली के नीचे के भाग में ठहरा । उसका छः वर्ष का पुत्र भी उसके साथ था । महाजन के भी उतनी ही अवस्था का पुत्र था; परन्तु अंधा । जब पंडित अपने पुत्र को पढ़ाने बैठता तो महाजन का अंधा लड़का भी पास जा बैठता । तीन-चार वर्ष बाद पंडित को यह अनुभव हुआ कि जहां उसके पुत्र को सब पाठ याद नहीं हुए थे वहां उस अन्धे बालक को सब कुछ याद हो गया था । उसने जब परीक्षा ली तो उसे मालूम हुआ कि महाजन का पुत्र एक बार सुनकर ५०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश याद कर लेता है । उसे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई और प्रसंगवशात् उसने महाराजा से उस बालक की आश्चर्यजनक प्रतिभा के बारे में जिक्र किया । महाराजा ने परीक्षा लेने के लिए उस बालक को दरबार में बुलवाया । उन दिनों महाराजा भाषा का एक ग्रंथ लिख रहा था । उसने ५०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश उसमें नशान कर अपने एक दरबारी को उसे

कई अवसरों पर उसने चारणों तथा अन्य व्यक्तियों को लाख पसाव दिये थे। उसकी देखा-देखी महामन्दिर के नाथ भी लाख-पसाव दिया करते थे। महाराजा की विद्वत्ता और साहित्यानुराग का उल्लेख ऊपर आ गया है। शरणागत की रक्षा करना राजपूतों का अटल नियम है। नागपुर के राजा को, उसके अंग्रेज़ सरकार का विरोधी होते हुए भी, उसने अपने यहां शरण देकर साहस का कार्य करने के साथ ही यह दिखा दिया कि राजपूत अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करने में कितने तत्पर रहते हैं।

वि० सं० १८७६ (ई० सं० १८१६) में कर्नल टॉड स्वयं जोधपुर जाकर महाराजा से मिला था। वह उसके संबंध में लिखता है—

“महाराजा साधारण व्यक्ति से कद में लम्बा है। उसके आचरण में शिष्टता है, परन्तु उसमें रूखापन विशेष रूप से है। उसकी चाल-ढाल प्रभावोत्पादक तथा राजसी है, पर उसमें उस स्वाभाविक गौरव और प्रभुता का अभाव है, जो उदयपुर के महाराजा में पाई जाती है। उसकी शक्त-सुरत अच्छी है और उसकी आंखों से बुद्धिमानी टपकती है। उसकी मुखाकृति से उदारता का संदिग्ध भाव प्रकट होता है। उसके मस्तक की बनावट विचित्र है, जो उसकी द्वेष-भावना सूचित करती है। मानसिंह की जीवनी के अध्ययन से उसकी सहनशीलता, दृढ़ता और धैर्य का अभूतपूर्व परिचय मिलता है। वह बड़ा अत्याचारी है और अपने मनोभावों को छिपाना खूब जानता है। उसमें बाध जैसी भयंकरता तो नहीं है, परन्तु उसका सबसे बड़ा अवगुण धूर्तता उसमें विद्यमान है।”

सुनाने के लिए दिया। महाराज ने अन्धे बालक ने सारा अंश सुनने के बाद ज्यों का त्यों सुना दिया। इससे महाराजा उसपर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांगो। उस बालक ने उत्तर में निवेदन किया कि मुझे पंडितों की समा के समय एक कोने में बैठने की आज्ञा प्रदान की जाय। महाराजा ने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार करने के साथ ही उसके विदा होने पर ४००० रुपये उसके घर भिजवाये।

यह बात मैंने कविराजा मुरारीदास से सुनी थी।

(१) राजस्थान; जि० २, पृ० ८२३।

महामहोपाध्याय रायबहादुर

साहित्यवाचस्पति

डॉ० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, डी० लिट्०, अजमेर

रचित

राजपूताने के इतिहास की प्रकाशित और यन्त्रस्थ जिल्दे

नाम	मूल्य
राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द (दूसरा संस्करण)— इसमें चार अध्याय हैं, जिनमें से पहले में भूगोल सम्बन्धी वर्णन, दूसरे में राजपूत जाति-सम्बन्धी विवेचन, तीसरे में प्राचीन राजवंशों का इतिहास और चौथे में मुसलमानों, मरहटों तथा अंग्रेजों के राजपूताने से सम्बन्ध का इतिहास है। ... रु० ७]	
दूसरी जिल्द— उदयपुर राज्य का इतिहास—पहला भाग (द्वितीय संस्करण) यन्त्रस्थ उदयपुर राज्य का इतिहास—दूसरा भाग (प्रथम संस्करण) रु० ११]	
तीसरी जिल्द— पहला भाग—डूंगरपुर राज्य का इतिहास ... रु० ४] दूसरा भाग—दामावाड़ा राज्य का इतिहास ... रु० ४॥] तीसरा भाग—प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास ... रु० ७]	
चौथी जिल्द— जोधपुर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड ... रु० ८] जोधपुर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड ... रु० ६॥] जोधपुर राज्य का इतिहास—तृतीय खंड ... यन्त्रस्थ	
पांचवीं जिल्द— बीकानेर राज्य का इतिहास—प्रथम खंड ... रु० ६] बीकानेर राज्य का इतिहास—द्वितीय खंड ... रु० ६]	
संपादित पृथ्वीराज विजय महाकाव्य (संस्कृत टीका सहित) ... रु० ५]	

